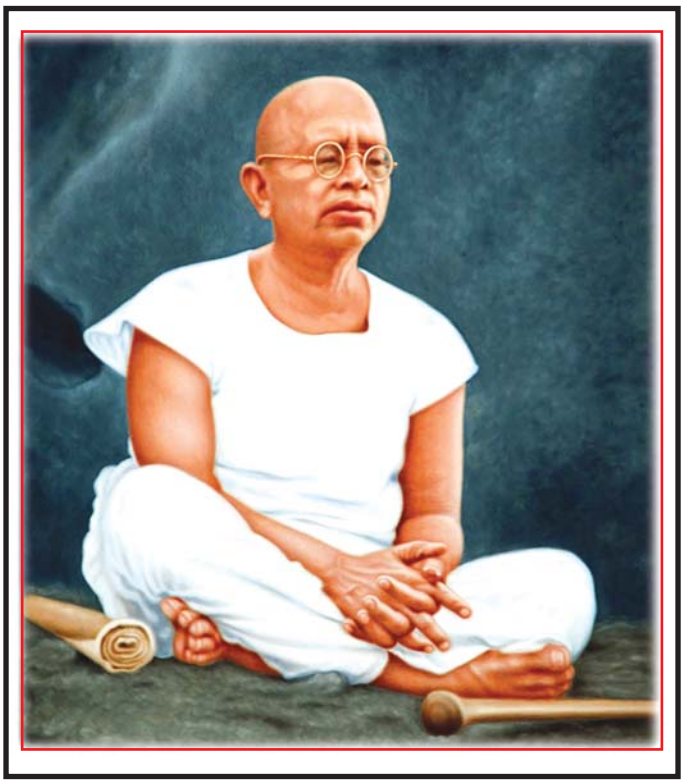

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

श्रीमद् राजचंद्र ज्ञान मंदिर, बांधणी (पूज्यश्री ब्रह्मचारीजीकी जन्मभूमि)

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

देहोत्सर्ग अर्धशताब्दी संवत् २०१० से २०६०

कूल्लढी ह्वङ्कचर्यीजी

सचित्र जीवन दर्शन

संयोजक

श्री पारसभाई जैन

प्रकाशक

श्रीमद् राजचंद्र ज्ञान मंदिर, बांधणी

प्रकाशक एवं प्राप्तिस्थान

: प्रकाशक :	श्रीमद् राजचंद्र ज्ञानमंदिर	श्रीमद् राजचंद्र ज्ञानमंदिर	श्रीमद् राजचंद्र जन्मभुवन
श्रीमद् राजचंद्र ज्ञानमंदिर	श्रीमद् राजचंद्र मार्ग	आकाशवाणी रोड,	ववाणिया
पो. बांधणी - ३८८ ४१०	आर.बी.मेता रोड,	राजकोट	तालुका–माळीया मिंयाणा
ता. पेटलाद, जिल्ला खेडा,	घाटकोपर (ईस्ट)	(गुजरात)	जिल्ला–राजकोट
फोन (०२६९७) २४७७१३	मुंबई–४०० ०७७	पीनकोड ३६० ००१	पीनकोड ३६३ ६६०

प्रथमावृत्ति, प्रत १०००, ईस्वी सन् २०२२

लागत किंमत ४५०/- रू. बिक्री किंमत ५०/- रू.

संपादकीय निवेदन

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजीके निर्वाण अर्ध शताब्दी महोत्सवके निमित्त यह 'सचित्र जीवन दर्शन प्रकट करते हुए आनंदका अनुभव होता है ।

आर्य भारत देशमें, सो सालमें ये तीन महापुरूषोने जन्म लेकर भगवान महावीर द्वारा उपदिष्ट मूल वीतराग मोक्षमार्गको प्रकट करके, उसका विस्तार करके चले गये । ये अपने महाभाग्यके परम उदयका सूचन है । सबसे पहले संवत् १९१० में प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी का जन्म, फिर संवत् १९२४ में ज्ञानावतार परमकृपालुदेवका जन्म और संवत् १९४५ में प.उ.प.पू. ब्रह्मचारीजीका जन्म हुआ और प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजीका जन्म संवत् १९१० और प.उ.प.पू. ब्रह्मचारीजीका देहविलय संवत् २०१० में होनेसे बराबर सो सालमें ये तीन सत्पुरुषोका सुमेल होनेसे वीतराग मार्गका परम उद्योत हुआ ।

ऐसे महापुरुषोके पवित्र जीवनको जानकर, उसमें श्रद्धा कर उसके अनुसार जीवन जीकर अपना कल्याण करे यह इस ग्रन्थको प्रकट करनेका मुख्य उद्देश्य है । इस ग्रन्थमें पू. श्री ब्रह्मचारीजीका जीवन चरित्र दिया गया है ।

इस सचित्र जीवन चरित्रमें सब मिलाकर कुल ४०१ दर्शनीय फोटोका समावेश है ।

इसके अलावा जो मुमुक्षु पूज्यश्रीके समागममें आए, उनके द्वारा दिये गये प्रसंगोको भी चित्र सहित दिये गये है । जिससे (पठन करनेवाले) वांचनारको वह प्रसंग तादृश्य नजर आये । तादृश्य चित्रोकी असर मनुष्यके जीवनमें बहुत गहरी पडती है, जो लम्बे समय तक बनी रहती है ।

इस्वीसन् २००१ में परमकृपालुदेवका जीवन दर्शन प्रकट किया तब मुमुक्षुओने ऐसी भावना प्रदर्शित की कि पू.श्री ब्रह्मचारीजीका भी एसे कलरोमें सचित्र जीवन दर्शन और प्रसंग प्रकाशित हो तो बहुत लोगोको लाभका कारण हो सकता है । ऐसा जानकर इस जीवन दर्शनका काम शुरू किया । उसकी पुर्णाहूतिमें करीबन दो वर्षका समय बीत गया ।

पू.श्री ब्रह्मचारीजीका साहित्य सर्जन विभाग भी बहोत बडा है । उनके द्वारा लिखे हुए ग्रंथोका संक्षिप्त वर्णन दिया गया है । इन पुस्तकोके अध्ययनसे वचनामृत समझनेमें बडी आसानी रहती है ।

'पूज्यश्री ब्रह्मचारीजीके बोध वचन' नामक विभागमें परमकृपालुदेवके प्रति परमभक्ति, नित्यनियमके तीन पाठ, स्मरणमंत्रका अद्‌भुत माहात्म्य, सात व्यसन, सात अभक्ष्यके बारेमें, सत्पुरूषकी आज्ञा, सत्संग सर्व सुखका मूल है, समाधिमरण पोषक अलौकिक तीर्थ श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास आदि विषयोका समावेश किया गया है ।

पू.श्री ब्रह्मचारीजीकी दिनचर्या कैसी थी उसको भी चित्रके साथ लिखनेका प्रयास किया है ।

हे प्रभु, यमनियम के अर्थ भी दिये गये है । पू.श्री ब्रह्मचारीजी जिन तीर्थोमें यात्रार्थ पधारे थे उन तीर्थोके चित्रपट भी साथमें दिये गये है ।

जिन बहनोने यह हिन्दी अनुवाद किया है और जिन बहनोने इस अनुवादको सुधारा एवं प्रुफको तपासनेका श्रम उठाया है वे सभी धन्यवादके पात्र है ।

पू.श्री ब्रह्मचारीजीने परमकृपालुदेवका शरण दृढ कराके उनकी भक्तिमें हमको जोडनेसे उनका उपकार कभी भी भुला नहीं जा सकता । ऐसे महापुरूषको हमारा कोटीशः प्रणाम हो ।

—आत्मार्थ इच्छक, पारसभाई जैन

ग्रंथ प्रकाशनमें भाग लेनेवाले दाताओकी यादी

“ प्रश्न :– पैसोको किस शुभ कार्यमें लगाना चाहिए ?

उसके उत्तरमें कहना है कि जिससे धर्म प्राप्ति और धर्म आराधनामें अपनेको और दूसरोको भी मदद मिले ऐसे कार्यमें उपयोग करना चाहिए । पैसे खर्चनेसे पहले उसका विचार करनेसे ही धर्मध्यान होता है ।” -नया बोधामृत भाग-३ (पत्रांक ४२५)

“वास्तविक रूपमें तो लोभ का त्याग करने हेतु दान करना है । जन्ममरणका कारण मोह और उसमें मुख्य लोभ है । उस लोभके कारण जीव अनेक प्रकारके पाप करके संसार बढाता है.....उस कारण दान, तप, शील और भाव करना योग्य है ।” -(नया बोधामृत भाग-३, पत्रांक ६६४)

“दान है वह लोभ को कम करनेका, सन्मार्गके प्रति प्रेम बढानेका और आत्माकी दया खानेके लिये करना है । अनंतकालसे लोभके कारण जीव अनेक भवोमें भटकता है । देशविदेशमें भी लोभके वश होकर जाता हे, कर्म बांधता है । लोभका अंश भी कम हो तो आत्मा कर्मभारसे हलका होता है, पवित्र बनता है” -(नया बोधामृत–३, पत्रांक १२६६)

“मेरा इतना लोभ कम हुआ ऐसी भावना करने जैसी है । मिला हुआ सबका उपयोग में करुं ऐसी अनादिकी टेव दूर करनेके लिये दान आदि शुभ प्रवृत्ति करता हूं । परन्तु इसके फलकी इच्छा मुझे नहीं रखनी है । आत्मार्थे अब सभी प्रवृत्ति करना है ऐसा लक्ष मुमुक्षु जीवके हृदयमें सहज रीतसे होता है । -(नया बोधामृत भाग-३, पत्रांक ४२०)

–पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

५,००,५०१	श्री ठाकोरभाई माधवभाई पटेल	बारडोली (हाल अमेरिका)
५,००,०००	श्री छीतुभाई (मनहरभाई) वल्लभभाई पटेल तथा परिवार	आस्ता
३०,०००	श्री स्व. मणीबहन शनाभाई तथा श्री स्व. विनोदभाई शनाभाई मास्तरके स्मरणार्थ हस्ते श्री कमुबेन, श्री चांदनीबेन, तथा परिवार	अगास आश्रम
११,०००	श्री भावनाबेन पारसभाई जैन	अगास आश्रम
५,०००	श्री मीकुबेन रीखबचंदजी तथा पुत्र श्री पुरणकुमार नाहटा	गढ सिवाना
५,०००	श्री मुमुक्षुबहन	अगास आश्रम
२,०००	श्री सुवासबहन रघुनाथमलजी	रमणिया
१,१०१	श्री गौरवकुमार अशोकजी टीमरेचा	भीवंडी
१,१०१	श्री प्रेमलताबहन नवरतनभाई महेता	सुरत
१,१०१	श्री शांतिलालजी हस्तीमलजी हुंडिया	बेंगलोर
१,१०१	श्री सूरजबहन शांतिलालजी हुंडिया	बेंगलोर
१,००१	श्री मंजुबहन दिनेशभाई	मुंबई
१,००१	श्री राजेशकुमार शांतिलालजी हुंडिया	बेंगलोर
१,००१	श्री शिल्पाबहन राजेशकुमार हुंडिया	बेंगलोर
१,००१	श्री कविताबहन राजेन्द्रकुमार मुथा	अमेरीका
१,००१	श्री रेखाबहन मनीषकुमार कुहाड	बेंगलोर
१,००१	श्री बिन्दुबहन अभयकुमार मुथा	जलगाँव
१,००१	श्री स्वीटीबहन शांतिलालजी हुंडिया	बेंगलोर

अनुक्रमणिका

क्रम	विषय	पृष्ठ
१.	परम पूज्य श्री ब्रह्मचारीजीका जीवन चरित्र लेखक - श्री पारसभाई जैन	१
२.	ब्रह्मचारी भाई-बहनोंको पालन करनेकी नियमावली लेखक - पू.श्री ब्रह्मचारीजी	४०
३.	मुमुक्षुओं द्वारा निर्दिष्ट पू.श्री ब्रह्मचारीजीके प्रेरक प्रसंग	४१
	(१) श्री मनहरभाई गोरधनदास कडीवाला, सुरत	४२
	(२) श्री अंबालालभाई जेसींगभाई पटेल, बोरीआ	४६
	(३) श्री ॐकारभाई, अगास आश्रम	४८
	(४) श्री सुमेरभाई फूलचंदजी बंदा, सुरत	५३
	(५) श्री छीतुभाई डाह्याभाई पटेल, भुवासण	५६
	(६) श्री नेमिचंदजी फूलचंदजी बंदा, आहोर	६०
	(७) श्री मणीभाई फूलाभाई पटेल, सुणाव	६१
	(८) श्री दयालजीभाई लल्लुभाई पटेल, सुरत	६४
	(९) श्री शनाभाई मथुरभाई पटेल, अगास आश्रम	६६
	(१०) श्री हीराभाई पटेल, व्यारा	६७
	(११) श्री ठाकोरभाई माधवभाई पटेल, बारडोली	६७
	(१२) श्री नरसीभाई भगाभाई पटेल, सडोदरा	६८
	(१३) श्री भुलाभाई वनमाळीदास पटेल, आस्ता	६९
	(१४) श्री नरोत्तमभाई प्रभुदास पटेल, आस्ता	७१
	(१५) श्री डाह्याभाई नारणभाई पटेल, सीमरडा	७४
	(१६) श्री मोरारजीभाई लल्लुभाई पटेल, नवसारी	७७
	(१७) श्री डाह्याभाई नाथुभाई पटेल, धामण	७८
	(१८) श्री मगनभाई शंकरभाई पटेल, सुणाव	८०
	(१९) श्री दिनुभाई मूळजीभाई पटेल, वडोदरा	८७
	(२०) श्री नाथाभाई भीखाभाई सुथार, सुणाव	८४
	(२१) श्री रावजीभाई छगनभाई देसाई, अगास आश्रम	८५
	(२२) श्री चीमनलाल गोरधनदास देसाई, नडियाद	८६
	(२३) श्री गोविंदजी जीवराज लोडाया, मुंबई	८७
	(२४) श्री ओटरमलजी के. साटिया, शिवगंज	८८
	(२५) श्री धर्मचंदजी जोराजी, शिवगंज	९०
	(२६) श्री पारसभाई जैन, अगास आश्रम	९१
	(२७) श्री निर्मलाबेन फूलचंदजी बंदा, आहोर	१००
	(२८) श्री रतनबेन पुनशीभाई शेठ, मुंबई	१०३
	(२९) श्री सुवासबेन घेवरचंदजी, शिवगंज	१०८
	(३०) श्री कमलाबेन निहालचंदजी डगली, बोटाद	११०
	(३१) श्री सविताबेन रावजीभाई पटेल, भादरण	१११
	(३२) श्री वीमुबेन शनाभाई पटेल, काविठा	११२
	(३३) श्री रमुबेन आदितराम, सुरत	११२
	(३४) श्री मणीबेन भाईलालभाई, धुलिया	११२
	(३५) श्री मणीबेन शनाभाई मास्तर, अगास आश्रम	११३
	(३६) श्री अंबालालभाई पटेल, संदेसर	११४
	(३७) श्री रमणभाई पटेल, काविठा	११४
	(३८) श्री शिवबा कल्याणभाई पटेल, काविठा	११४
	(३९) श्री डाहीबेन शंकरभाई पटेल, सीमरडा	११४
	(४०) श्री शांतिलालजी वरदीचंदजी, शिवगंज	११५
	(४१) श्री प्रेमराजजी पोखराजजी, यवतमाल	११६
	(४२) श्री मूळचंदभाई शाह, मुंबई	११८
४.	पूज्यश्री ब्रह्मचारीजीका विशाल साहित्य लेखक - श्री पारसभाई जैन, अगास आश्रम	११९
५.	पूज्यश्री ब्रह्मचारीजीका ६५ वर्षका विहंगावलोकन लेखक - श्री अशोकभाई जैन, अगास आश्रम	१२९
६.	पूज्यश्री ब्रह्मचारीजीके बोध वचन लेखक - पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी	१३३
	(१) परमकृपालु प्रति परम भक्ति	१३५
	(२) नित्यनियमके तीन पाठ विषयक	१३६
	(३) स्मरण-मंत्रका अद्‌भुत माहात्म्य	१३७
	(४) सात व्यसन और सात अभक्ष्य विषयक	१४०
	(५) सत्पुरुषकी आज्ञा	१४१
	(६) सत्संग ही सर्व सुखका मूल	१४३
	(७) श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास	१४५
	(८) श्री सद्‌गुरू भक्ति रहस्य (अर्थ)	१४६
	(९) कैवल्य बीज यानी क्या ? (अर्थ)	१४९
	(१०) वचनामृत विवेचन (विविध शब्दार्थ)	१५१
	(११) वचनामृत विवेचन (पत्रांक ७८१)	१५५
	(१२) वचनामृत विवेचन (पत्रांक ८१९)	१५६
	(१३) पू.श्री ब्रह्मचारीजीका अप्रगट बोध	१५७
७.	पू.श्री ब्रह्मचारीजीके तीर्थयात्राके संस्मरण संयोजक - श्री भावनाबेन पी. जैन	१६३
८.	पू.श्री ब्रह्मचारीजी देहोत्सर्ग अर्ध शताब्दी महोत्सवके निमित्त अगास आश्रममें हुई शोभायात्राके दृश्य	१९५

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

पूज्यश्री

ब्रह्मचारीजी

जन्मोत्सव पद

जनम्या जनम्या गोवर्धन गिरधारी,
गुरुराजनी आणा शिरधारी,
अेना रोमे रोमे गुरुराय...गोवर्धन गिरधारी,
उपकारो अेना न भुलाय...गोवर्धन गिरधारी-१
गुरुमंत्र दई अम दुःख टाळ्या,
आत्मार्थे जीवन अजवाळ्या,
गुरुभक्तिमां अमने वाळ्या,
अे तो कृपातणो अवतार...गोवर्धन गिरधारी-२
मळ्या मळ्या गोवर्धन गिरधारी,
प्रभुश्रीअे नाम आप्युं ब्रह्मचारी,
गुरुराज नी वाणी अवधारी,
अे तो रमे सदा ब्रह्ममांय...गोवर्धन गिरधारी-३
मळ्या संत सलुणा उपकारी,
अेनी शिक्षा आत्माने हितकारी,
गुरुभक्ति बतावी कल्याणकारी,
अे तो खरो मोक्ष उपाय...गोवर्धन गिरधारी-४
प्रभु परम कृपालुने नमुं,
वळी नमुं संत लघुराज रे,
उपकारी गोवर्धन गुण नमुं,
मारा मोक्ष काजे भवि आज...गोवर्धन गिरधारी-५

(श्री पारसभाई जैन)

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

जन्म

"उपकारी को नहीं वीसरीअे, ये ही धर्म अधिकार"

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का जन्म विक्रम संवत् १९४५ की सावन वदी ८ (अष्टमी) के दिन गुजरात मे चारुतर प्रदेश में बांधणी नामक गाँव में, जन्माष्टमी के शुभ दिन हुआ था। जन्माष्टमी, महात्मा श्रीकृष्ण का जन्म दिन है। उस दिन जन्म होना यह भी एक शुभ संकेत था। श्रीकृष्ण ने एक बार 'गोवर्धन नाम के पर्वत को उठाया था, इसलिए उनका दूसरा नाम 'गोर्वधनधर' भी था। उसके अनुसार इनका नाम भी 'गोवर्धन' रखा गया।

श्री शांतिभाई पटेल द्वारा रचित 'जीवन रेखा' के आधार पर 'पू.श्री ब्रह्मचारीजी का सचित्र जीवन दर्शन' लेखक श्री पारसभाई जैन, अगास आश्रम।

पिताश्री का भक्तिमय जीवन

उनके पिताश्री का नाम श्री कालिदास द्वारकादास था। वे महात्मा श्रीकृष्ण के परम भक्त थे। वे तीन तीन बार गोकुल मथुरा की तीर्थ यात्रा कर आए थे। पहली बार की यात्रा पैदल की थी। उनका व्यक्तित्व उदार था। मंदिर के जीर्णोद्धार वगैरह कराने में पैसे खर्च करते थे। लोभ कषाय की मंदता के कारण अंतिम यात्रा के दौरान में धन की मर्यादा कर ली। जिसके फलस्वरूप उनकी यह दान प्रवृत्ति त्याग के रूप में परिवर्तित हो गई। आयुष्य अब थोड़ा ही बाकी है ऐसा जानकर जागृत हो गये और आत्म कल्याण करने के प्रयोजन से दूर जाकर बस गये। वहाँ उन्होंने भगवत् भक्ति में शेष आयुष्य पूर्ण की।

आपका नंदन तो महापुरुष है

उनकी माताश्री का नाम जीताबा था। वे भी भक्त हृदयी थी। अब उन्हें एकमात्र अपने लाड़ले पुत्र में ही बालकृष्ण के दर्शन होने लगे। जन्माष्टमी के दिन पुत्र का जन्म, उस पर जन्म से ही परम शांत, आनंदी और मुस्कुराता चेहरा यह देखकर माता का मन परम आनंदित रहता और उन्हें ऐसा महसूस होता कि यह तो कोई दिव्य पुरुष है। एक बार प्रसंगवश उनकी मुलाकात एक ज्योतिष से हुई। ज्योतिष उनके दायें पैर के घुटने पर पैदायशी निशान को देखकर, आनंदित हो कर उमंग से बोल उठे की माजी, यह आपका नंदन तो कोई महापुरुष है। माता के मन में वैसी मान्यता तो थी ही और अब उन ज्योतिष की ज्योतिषी विद्या से विशिष्ट दृढ़ हो गयी।

बाल्यावस्था

जैसे-जैसे आनंदपूर्वक बालक की उम्र बढ़ती गई वैसे वैसे उनका विशाल कपाल, गालो में खंजन (डिंपल), कान की भरी हुई बालियाँ और गोरे मुख पर निर्दोष हँसी, सभी के लिए आनंद का कारण बनती तथा उसमे उनके भावी सौम्य व्यक्तित्व की झलक दिखाई देती थी।

शिक्षा काल

उनका विद्यार्थी जीवन शांत, सरल, विनयी तथा आज्ञांकित होने से और साथ ही समझदार होने से वे स्वजन समुदाय में बहुत प्रिय होने लगे । किसी से लड़ाई झगड़ा करने जैसी प्रकृति का अंश भी उनमें नहीं था ।

पढ़ाई करने के लिए उन्हें प्रतिदिन ४ कोस पैदल चलकर नजदीक के शहर पेटलाद में जाना पड़ता था । उस समय गाड़ियों की सुविधा नहीं थी । बालक होने के बावजूद भी उन्हें अपने कर्तव्य का भान बहुत था । उन्हें अंतरंग में ऐसा लगता कि अकेले बड़ेभाई नरसिंहभाई पर घर की पूरी जिम्मेदारी कैसे छोड़ी जा सके ? मुझे भी यथाशक्ति मदद करनी चाहिए । इसीलिये विद्यालय से लौटकर सीधे घर के काम में जुट जाते । जाती से जमींदार होने से खेती का कामकाज भी रहता । घर के कामकाज में समय अधिक व्यतीत होने से पढ़ाई में नुकसान हुआ और वे नापास हो गये । परिणाम स्वरूप पढ़ाई छोड़नी पड़ी ।

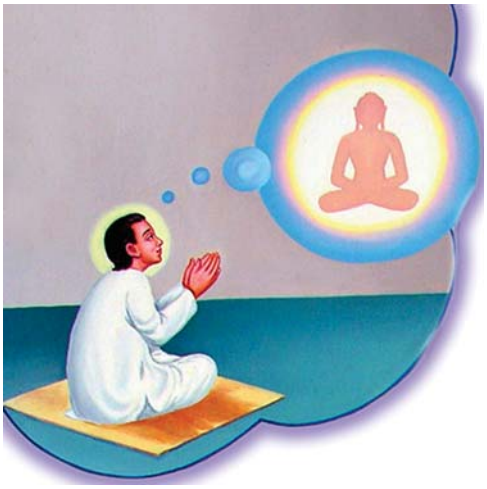

हे भगवान ! आप मुझे खूब पढाए

उनके पिताजी का स्वर्गवास होने के एक वर्ष पश्चात्, मात्र १३ वर्ष की आयु में ही उनका विवाह हो गया । अब उन्हें अपने फर्ज और कर्तव्य का अहसास और ज्यादा होने लगा । घर के बुजुर्गों को बैल के साथ पशुओं की तरह मेहनत मजदूरी करते देख, कुटुंब के भविष्य की जिम्मेदारी के विचार से उनके अंत:करण में बहुत दु:ख होता । उसका एकमात्र उपाय शिक्षा है, ऐसा उन्हें स्पष्ट महसूस होता । परंतु शर्मीले स्वभाव के कारण वे अपने बड़े भाई से कुछ कह न पाते । लेकिन भगवान से प्रतिदिन प्रार्थना करते के हे भगवान ! मुझे खूब पढ़ाइये, मुझे खूब पढ़ना है ।

जैसा भाव वैसा फल

अंत में उनकी प्रार्थना सफल हुई । किसी प्रसंग वश एक बार दूसरे गाँव से कुछ संबंधी उनके घर पधारे । बातों बातों में उन्होंने पूछा–क्यों गोवर्धन पढ़ना नहीं है ? तब इन्होंने पढ़ाई करने की अपनी इच्छा दर्शायी ।

यह जानकर संबंधीयों ने नरसिंहभाई से कहा कि गोवर्धन को पढ़ाओ ना ! नरसिंहभाई को भी यह बात हितकारी लगी । इसलिए फिर से पेटलाद में अंग्रेजी प्रथम कक्षा में दाखिला करवाया । उनकी अंग्रेजी अच्छी थी इसलिए परीक्षा लेकर दूसरी कक्षा में तरक्की कर दी गई । उस समय पेटलाद बोर्डिंग में रहने की व्यवस्था होने से वे वहीं रहे । वहाँ सेवाभावी मोतीभाई अमीन के मार्गदर्शन में मन लगाकर खूब पढ़ाई की, और दूसरी तीसरी कक्षा की परीक्षा में एक साथ उत्तीर्ण कर गंवाये हुए डेढ़ दो वर्षों की भरपाई कर ली ।

पेटलाद बोर्डिंग

सतत पुरुषार्थी विद्यार्थी जीवन

छात्रावास में घर की अपेक्षा, अधिक समय मिलने से उन्हें वांचन-विचार द्वारा स्वयं की योग्यता विकसित करने का अच्छा मौका मिला । श्री मोतीभाई अमीन जैसे प्रेरणामूर्ति के मिलने से उनका सरल, कर्तव्यपरायण तथा निर्दोष स्वभाव का शीघ्र विकास हुआ । श्री मोतीभाई अमीन ने पैसे कमाने के लालच को ठुकराकर एक आदर्श शिक्षक बनना स्वीकार किया था । अपने आप को योग्य बनाने के लिए जो परिश्रम उन्होंने उठाये थे उसका अनुभव, वे विद्यार्थीयों के समक्ष खुल्ले दिल से कहते थे और उन्हें मार्गदर्शन भी देते । उनके एक प्रसंग का उल्लेख पुज्यश्री ने बोधामृत भाग-३ (पत्रसुधा) के पत्र ४२२ में किया है :–

जैसा संग वैसा रंग

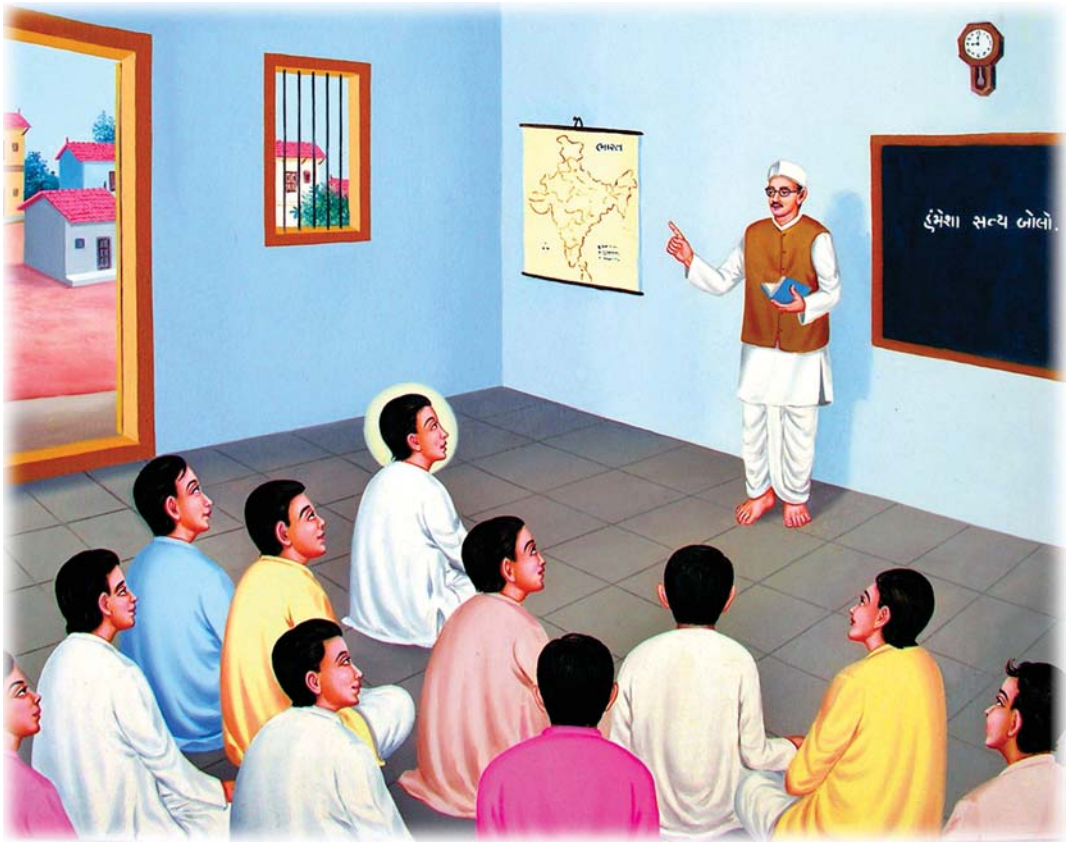

"पहले जब पू.मोतीभाई साहेब पेटलाद में हेडमास्टर हुए और हमें मणिलाल नभुभाई की "चारित्र" (का अनुवाद) नामक पुस्तक का गुजराती पीरियड में अध्ययन कराया, उस वक्त सत्य संबंधी चर्चा करते हुए कहा कि आज तक मैंने कभी एक भी शब्द असत्य नहीं बोला है । पूरी किताब की अपेक्षा उनके इस एक वचन का प्रभाव विशेष हुआ और तब से आज तक उनके प्रति सन्मान बढ़ता ही रहा ।

वे स्वयं समय का सदुपयोग करते और खूब चिंतनमग्न रहते । ऐसे शिक्षक के संग से उनके जीवन में भी खूब दृढ़ता आई । बेंजामीन फ्रैंकलीन की तरह टाइम टेबल बनाकर समय की नियमितता को बनाये रखा । साथ ही नेपोलियन बोनापॉर्ट के जीवन की एकाग्रता और काम में तल्लीन रहने की वृत्ति को उन्होंने अपने व्यवहार में इस तरह ग्रहण किया कि जिस समय तक जो कार्य खत्म करने का तय करते वह कार्य उस समय तक बराबर पूर्ण करते । ऐसी निश्चितता उनके जीवन में आ गई थी ।

करुणामय स्वभाव

वे सद्‌गुणों और दुर्गुणों को भी एक सारणी बनाकर रखते थे तथा प्रतिदिन इस विचार और प्रयास में रहते थे कि कैसे सद्‌गुणों का विकास करना और दुर्गुणों को दूर करना। खुद उपवास आदि करके घर से मिले पैसों को बचाते तथा नोटबुक, पेन्सिल और प्रवास आदि में होने वाले खर्च के लिये रखतें। पढ़ने में होशियार होने के कारण उन्हें जो भी पुरस्कार एवं छात्र वृत्ति मिलती, उनका उपयोग गरीब विद्यार्थीओं की सहायता करने में लगाते। ऐसा करुणामय स्वभाव उनका बाल्यावस्था से ही था।

काव्यकला और साहित्य प्रेम

कवि श्रीकांत के प्रबल प्रभाव से उनकी काव्य शक्ति का विकास हुआ और उन्होंने स्वयं भी सुंदर कविताएं लिखनी शुरू कर दी।

श्री करुणाशंकर मास्टर की प्रेरणा और मार्गदर्शन से उनके कोमल तथा भावुक उर्मिशील स्वभाव में साहित्य के प्रति प्रेम जागृत हुआ और जीवन में उच्च आदर्शों का समावेश सुगम हुआ।

क्षण क्षण का सदुपयोग

मेट्रिक की परीक्षा में पास होकर वे अब बरोड़ा आर्ट्स कॉलेज में दाखिल हुए। वहाँ भी वे अपने काम में इतने मशगूल रहते कि उनके नियमित जीवन की छाप अन्य विद्यार्थीयों पर भी पड़ती। वहाँ भी समय का सदुपयोग करके अपनी पढ़ाई के अलावा उन्होंने खूब वांचन तथा विचार किया। उनके मन में रहता था कि विद्यार्थी जीवन का एक पल भी व्यर्थ कैसे जाने दें ? क्योंकि समय अमूल्य है।

जनसेवा तथा देशोद्धार की भावना

बरोड़ा से इंटर पास करने के बाद वे पेटलाद छात्रावास के अपने पुराने मित्रों से मिले। उनमें भीखुभाई मुख्य थे। श्री भीखाभाई की भावना विद्यानगर में स्वाधीन जनपद महाविद्यालय की स्थापना करने की थी। पेटलाद बॉर्डिंग के दिनों से पूज्यश्री के मन में भी जनसेवा और देशोद्धार की भावना थी। उस भावना को सफल करने के लिए उच्च शिक्षा प्राप्त करके देशभर में स्वतंत्रता का जोश जगाने व शिक्षा का विकास और प्रचार करने का विचार किया। इस कार्य के लिए सर्वत्र अंग्रेजी का महत्त्व अधिक होने से "बॉम्बे प्रेसिडेंसी" में प्रसिद्ध हुए विद्वान, स्कॉट से उच्च स्तर का अंग्रेजी ज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से, मुंबई के विल्सन कॉलेज में अध्ययन करने का निर्णय लिया।

उनके कठिनाई तथा भारी खर्च उठाने के बाद श्री भीखाभाई के साथ मुंबई में दो साल अध्ययन और इस्वी सन १९१४ में बी.ए. पास हुए। बी.ए. में भी मुख्य विषय अंग्रेजी साहित्य होने से अंग्रेजी भाषा पर अच्छा प्रभुत्व प्राप्त किया जिससे "टाइम्स ऑफ इंडिया" में उनके लेख प्रकाशित होने लगे। उन्होंने उस समय संयुक्त परिवार (Joint Family) पर बहुत सुंदर लेख लिखा था।

विल्सन कॉलेज, मुंबई

अजब सहनशक्ति

उनकी सहनशक्ति भी गजब की थी। बी.ए. की परीक्षा पास करने के बाद मुंबई से ट्रेन में आ रहे थे। वडोदरा स्टेशन पर अपने मित्रों और प्रियजनो को मिलने के लिये डिब्बे के आधे खुले दरवाजे पर हाथ रखकर खड़े थे। तभी किसीने अचानक दरवाजा बंद कर दिया। जिससे उनके हाथ का अंगूठा कट गया और अंगूठे का एक हिस्सा दरवाजे पर अटक गया। परन्तु न ही उनके मुख से कोई आवाज़ निकली और न ही उन्होंने उस आदमी से कुछ कहा।

पूरा विश्व कुटुंबरूप

वे अब ग्रेज्युएट हो गए थे इसलिए माताजी और बड़े भाई को लगा कि वे अब बड़े अफसर (अधिकारी) बनेंगे। परन्तु उनके मन में तो, सरकार की नौकरी करना विदेशी सरकार की गुलामी करने के समान था। वैसे भी देशोद्धार तथा जनसेवा की भावना पहले से ही मन में बस गई थी। उन्हें तो, "वसुधैव कुटुम्बकम्" अर्थात् पूरा विश्व अपने कुटुंब के समान लगता था।

"अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानाम् तु वसुधैव कुटुंबकम्॥"

अर्थ :–यह मेरा है, यह पराया है, इस प्रकार की गिनती तो जिसका मन छोटा होता है वही करता है। परन्तु जिसका मन उदार है, विशाल है, उसके मन में तो पूरा विश्व कुटुंब रूप ही है।

शिक्षा क्षेत्र में भी स्वयंसेवक

उसी वर्ष दिसंबर महीने में पेटलाद बॉर्डिंग के पूर्व छात्रों का सम्मेलन बांधणी गाँव में आयोजित करने का तय हुआ। सम्मेलन में यह नियुक्त हुआ कि यदि चरोतर की उन्नति हेतु श्री मोतीभाई साहब के नेतृत्व में चरोतर एज्युकेशन सोसायटी की स्थापना हो तो वे स्वयं, श्री भीखाभाई तथा श्री अंबालाल ये तीनो मित्र, संस्था स्वावलंबी हो तब तक, वहाँ स्वयंसेवक के रूप में सेवा देंगे। उसी मीटिंग में संस्था की स्थापना करना निश्चित हुआ और इ.सन १९१५ के जनवरी महीने से श्री भीखाभाई और श्री अंबालालभाई बोरसद में सेवा से जुड़ गये और वे स्वयं वसो में सेवा से जुड़े। वसो में अंग्रेजी विद्यालय की छट्ठी कक्षा की जिम्मेदारी उन्हें सौंपी गयी। इसी के साथ, मोतीभाई साहब की प्रेरणा एवं कार्यदक्षता से वसो क्षेत्र में गुजरात के प्रथम बालमंदिर की स्थापना हुई। वहाँ भी, उन्होंने मोन्टेसरी (शिशु शिक्षण) पद्धति से शिक्षा देना शुरु किया और नए शिक्षकों को भी स्वयं प्रशिक्षित किया। यह प्रयोग देश में नवीन होने से, दूर दूर से लोग स्वयं निरीक्षण करने हेतु आते थे। इस प्रयोग को खूब सफलता मिली और श्री गिजुभाई बधेका आदि ने पूरे गुजरात में इसका प्रचार करने की जिम्मेदारी उठाई।

इसके उपरांत एक-दो साल में चरोतर एज्युकेशन सोसायटी ने आणंद में अपने केन्द्र की स्थापना की और स्वतंत्र शैक्षणिक संस्था चलाना आरंभ किया। उस संस्था का नाम दादाभाई नवरोजी हाईस्कूल (डी.एन.) रखा गया।

दादाभाई नवरोजी हाईस्कूल (डी.एन.) आणंद

पू.श्री ब्रह्मचारीजी की हेड मास्टर पद पर नियुक्ति

आणंद में स्वयंसेवको की अधिक आवश्यकता होने से, वे वसो छोड़कर इ.सन. १९१९ में आणंद आये। आणंद में ई. सं. १९२०-२१ में दादाभाई नवरोजी हाईस्कूल में दो वर्ष तक प्रधान अध्यापक के रूप में सेवा दी। दोनों वर्ष मेट्रिक कक्षा का परिणाम शत प्रतिशत आया।

विद्यार्थीयों को पढ़ाने में लीन पूज्य श्री ब्रह्मचारीजी

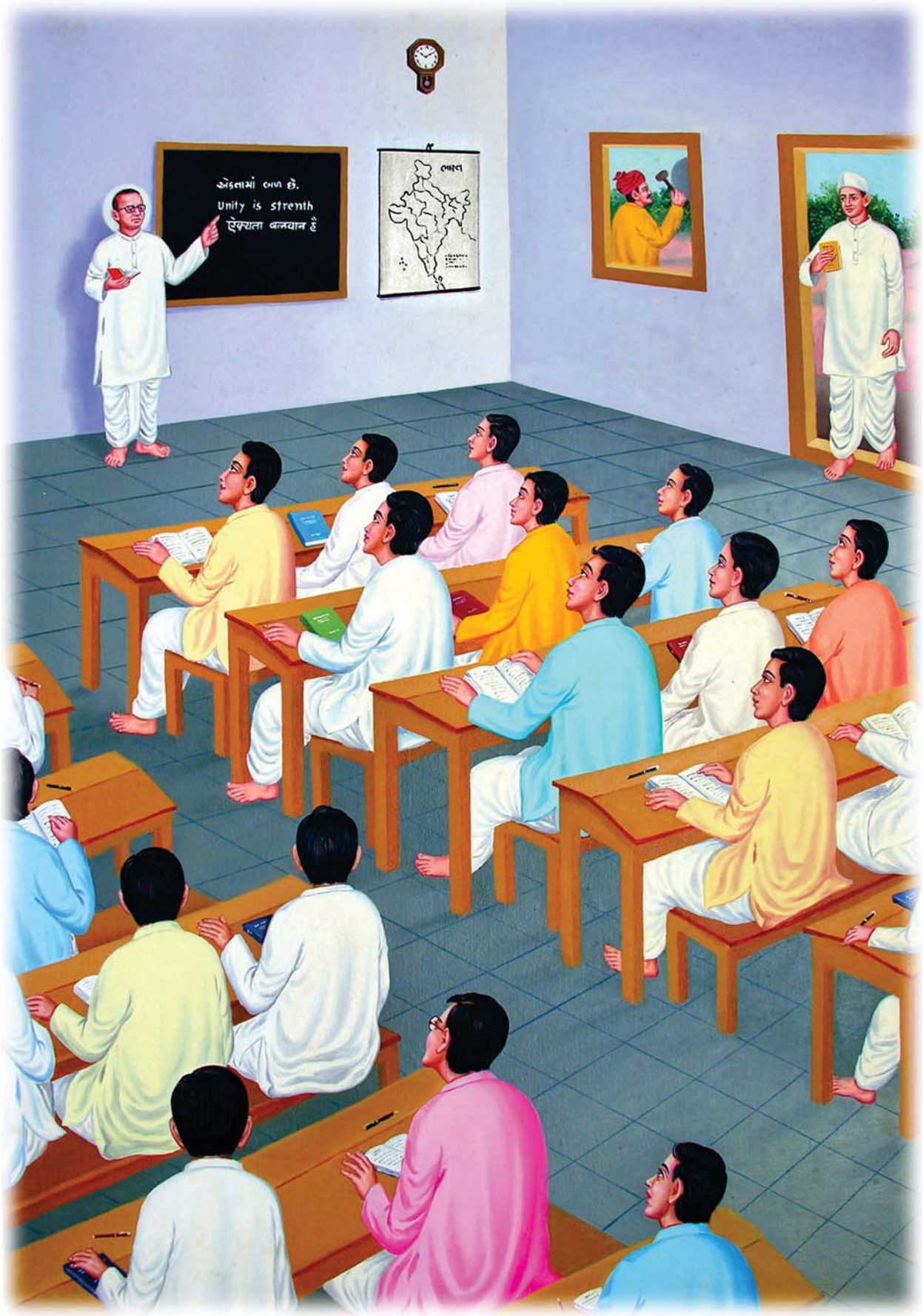

आदर्श शिक्षक

विद्यार्थीयों के प्रति उनका व्यवहार हमेशा प्रेममय था। अन्य शिक्षकों को भी यही सलाह देते कि विद्यार्थीयों का चाहे जेसा भी गुनाह हो, तो भी तत्काल सजा नहीं देना; परंतु अगले दिन देना। ऐसा करने से शिक्षकों का तात्कालिक आवेश थम जाता और विद्यार्थीयों को भी सुधरने का मौका मिलता। कभी-कभी तो अन्याय होने से भी बच जाते और शिक्षकों तथा विद्यार्थीयों के बीच के संबंध भी मीठे बनते।

वे अक्सर विद्यार्थीयों को पढ़ाने में इतने लीन हो जाते कि कितनी ही बार पीरियड के अंत में बजने वाली घंटी की आवाज़ तक उन्हें सुनाई नहीं देती। परन्तु दरवाजे पर खड़े शिक्षक को देख वे समझ जाते और फिर चलने लगते।

विद्यार्थीयों को सुधारने की निराली रीत

विद्यार्थीयों की आदतें सुधारने की उनकी पद्धति भी अनोखी थी। छात्रावास में छात्रों के लिए प्रभात में उठकर अपने सब काम पूर्ण करने का नियम था। कितने ही विद्यार्थी कुँए पर नहाकर अपने कपड़े धोए बगैर वहीं रख देते थे। यह सब उनकी दृष्टि से छिपा नहीं था। कई दिन इस तरह बीत गए। अंत में छात्रों की इस आदत को सुधारने के लिए एक दो बार स्वयं कपड़े धोकर उन्होंने छात्रों के कमरे में सुखा दिए। विद्यार्थीयों को इसकी जानकारी हो गई और शर्म के मारे उन्होंने अपनी इस आदत को सुधार लिया।

उस समय देश को आजाद कराने के लिए पूरे भारत में असहयोग आंदोलन की प्रवृत्ति चलती थी। गांधीजी ने राष्ट्रीय विकास के उद्देश्य से अहमदाबाद में गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की थी। उसमें गुजरात की कई हाईस्कूलों को विद्यापीठ की मान्यता मिली। आणंद की दादाभाई नवरोजी हाइस्कूल के मेट्रिक वर्ग को भी विद्यापीठ की मान्यता प्राप्त हुई थी।

आचार्य बनने के लिए सम्यक्ज्ञान और उत्तम आचरण की आवश्यकता है

अब डी.एन.हाईस्कूल के "विनय मन्दिर" बनते ही वे प्रधान अध्यापक के बदले आचार्य कहलाने लगे। आचार्य पदवी ने उन्हें सावधान कर दिया। उनके मन में यह स्पष्ट था कि 'आचार्य' होने के लिए सच्चा ज्ञान और उत्तम आचरण की आवश्यकता है; इसके अतिरिक्त मन, वचन, वाणी एवं वर्तन की एकता चाहिए। इसके बगैर 'आचार्य' कहलवाना उचित नहीं। इस तरह आचार्य पद उन्हें खटकने लगा। फलस्वरूप उनकी यह भावना हुई कि श्री अरविंद या रमण महर्षि जैसे किसी महापुरुष के पास जाकर अपने जीवन की उन्नति करें। पहले की देशोद्धार की भावना अब आत्मोद्धार की ओर मुड़ने लगी।

श्रीमद् लघुराज स्वामी के बारे में प्रथम जानकारी

पू.श्री ब्रह्मचारीजीके गाँवमें आया हुआ घर-जन्मस्थल

संवत् १९७७ की दिवाली की छुट्टियों में उनका बांधणी आना हुआ। तब गाँव के भगवानभाई के पास से श्रीमद् लघुराजस्वामी के बारे में जानने को मिला। उनके अंतरंग में महात्मा की खोज तो थी ही उस पर यह निमित्त मिला तो अगास आश्रम जाने का निश्चय किया। दशहरे के दिन सुबह सुबह घर से निकलते वक्त भगवान से प्रार्थना की, कि हे प्रभु ! अब मुझे मार्ग दिखाये।

महापुरुष के मिलन से हुआ अपार आनंद

आश्रम के द्वार पर कदम रखा तो वहाँ परम पूज्य प्रभुश्रीजी रायण के वृक्ष के नीचे विराजमान थे। मुक्ति का मार्ग क्या है यह जानने की इनकी विनंती को मानो सुन लिया हो और वह बताना चाहते हों, इस तरह प्रभुश्रीजी ने एक युवक को "मूल मारग सांभलो जिननो रे" यह पद गाने को कहा। उसे सुनकर उन्हें अपार आनंद हुआ।

प.पू. प्रभुश्रीजीके साथ पू.श्री ब्रह्मचारीजीका प्रथम मिलन

प.पू.प्रभुश्रीजी की अनंत कृपा

उस प्रथम मिलन की स्थिति का वर्णन प्रज्ञावबोध के एक काव्य में उन्होंने स्वयं इस तरह किया है :–

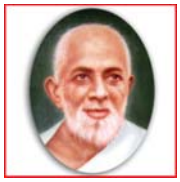

"हुं द्रमक सम हीनपुण्य पण तुझ द्वार पर आवी चढ्यो,
सुस्थित श्रीमद् राजचंद्र तणी कृपा नजरे पड्यो;
त्यां संत श्री लघुराज स्वामी प्रेमसह सामे मळ्या,
मुझ दृष्टिरोग मटाडवा जाते परिश्रममां भळ्या।"

अर्थ :– उपमिति भवप्रपंचमें अलंकारी भाषा में हीनपुण्य ऐसे द्रमक की कथा है। उसके समान मैं भी आपके द्वार पर आ पहुँचा हूँ। वहाँ सुस्थित महाराजा जैसे परमकृपालुदेव की कृपा नजर मुझ पर पडी। तथा धर्म बोधरूप मंत्री समान संत श्री लघुराजस्वामी, आश्रम के द्वार पर प्रवेश करते ही, रायण वृक्ष के नीचे सामने मिले। तथा मेरे अनादि के आत्मभ्रांतिरूप मल को दूर कर सम्यक् ज्ञानरूपी क्षीरभोजन करवाया। इस तरह स्वयं प्रभुश्रीजी ने परिश्रम करके मुझ पर अनंत कृपा की।

प.पू.प्रभुश्रीजी की सेवा मिले तो जीवन धन्य

प.पू.प्रभुश्रीजी के दर्शन मात्र से पूर्व संस्कार के कारण उन्हें ऐसा लगा कि पिताश्री की सेवा करने का अवसर तो नहीं मिला, परन्तु यदि इस महापुरुष की सेवा मिल जाये तो जीवन सफल हो जाये। तभी प्रभुश्रीजी ने उनसे पूछा "टाळी स्वच्छंद ने प्रतिबंध" का अर्थ क्या है ? स्वच्छंद का अर्थ अपनी मति कल्पना से वर्तन करना ऐसा किया परन्तु प्रतिबंध शब्द का अर्थ नहीं जानते थे। तब पूज्यश्री प्रभुश्रीजी ने स्पष्ट किया कि कल्याण करने में जो जो विघ्न आते हैं, वो सब प्रतिबंध है। उसी समय उन्होंने मन में तय किया कि प्रभुश्रीजी की सेवा में रहने के लिए मुझे आज से ही "स्वच्छंद" और "प्रतिबन्ध" को दूर करने का प्रयत्न करना है।

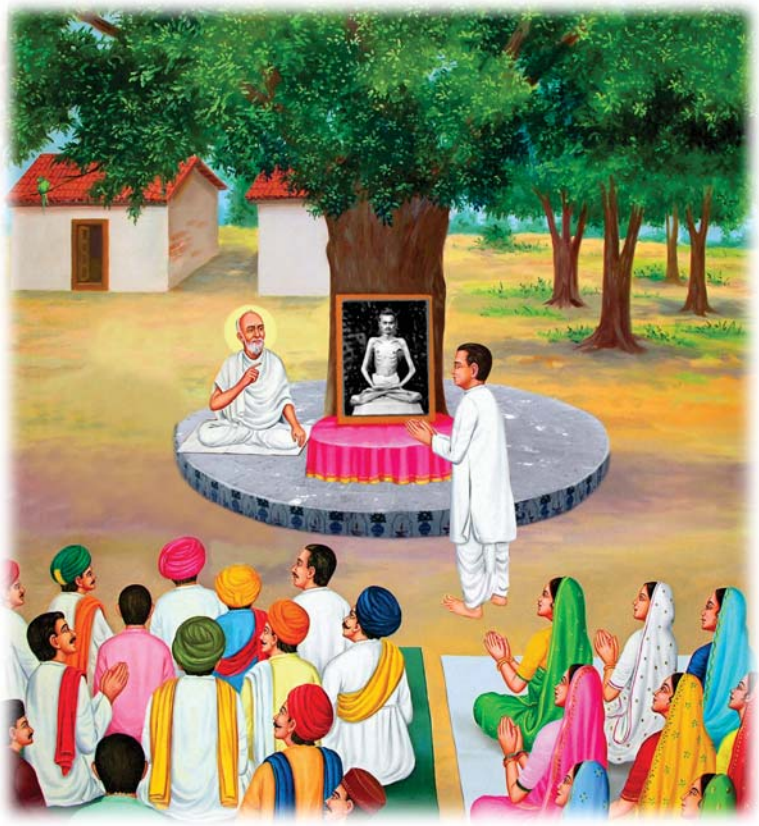

मंत्रदीक्षा

परमपूज्य प्रभुश्रीजी ने उन्हें उसी काली चौदश रविवार के दिन उनको ऐसे अपूर्व वात्सल्यभाव से मंत्र दिया और अपनी सेवा में रहनेवाले भगतजी को स्वयं प्रभुश्रीजी ने उल्लासित होकर बताया कि ऐसा स्मरणमंत्र आज तक हमने किसी को नहीं दिया वास्तव में ! "पवित्र पुरुषों की कृपादृष्टि वही सम्यक्दर्शन है।"

पूज्यश्री भी परम पूज्य प्रभुश्रीजी द्वारा दिए गए "**तत्त्वज्ञान**" में अलौकिक उल्लास से स्वयं सूचित करते है–

"**मंत्रदीक्षा**" ! कालीचौदस जैसे सिद्धियोग के दिन ऐसे महापुरुष के हाथों "**मंत्रदीक्षा**" मिलना यह भी कैसी अपूर्व घटना है, कहा जाता है कि–

"फरी फरी मळवो नथी,
आ उत्तम अवतार;
काली चौदस ने रवि,
आवे कोईक ज वार।"

प.पू.प्रभुश्रीजी द्वारा पू.श्री ब्रह्मचारीजी को दिया गया तत्त्वज्ञान

इस तत्त्वज्ञानमें प.कृ.देवका चित्रपट

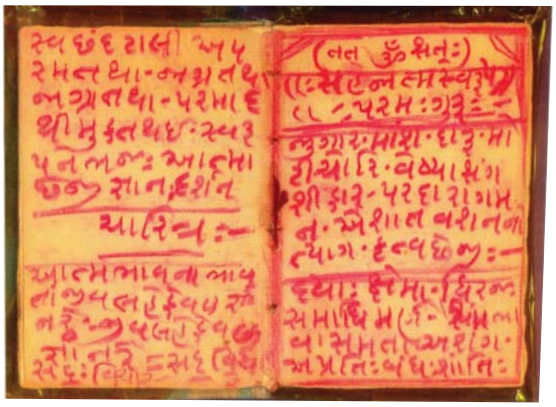

पू.श्री ब्रह्मचारीजीको प.पू. प्रभुश्रीजीने तत्त्वज्ञानमें अपने हस्ताक्षरमें दिया हुआ मार्गदर्शन

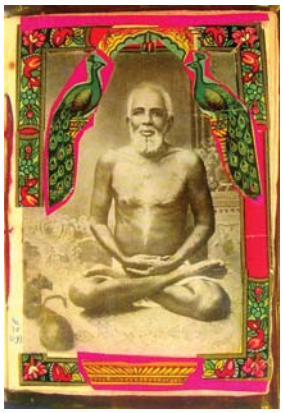

तत्त्वज्ञानमें प.पू. प्रभुश्रीजीका चित्रपट

स्वच्छंद और प्रमाद को दूर कर स्वरूप की उपासना करने की आज्ञा

प.पू.प्रभुश्रीजी ने उन्हें **"तत्त्वज्ञान"** में मंत्र के अलावा कितने ही भिन्न-भिन्न वचन लाल पेन्सिल से लिख कर दिए थे । वे है :

"स्वच्छंद को छेदन कर अप्रमत्त हो, जागृत हो, जागृत हो । प्रमाद से मुक्त होकर, स्वरूप को भज = आत्मा है जी-ज्ञान दर्शन चारित्र :- आत्मभावना भावतां जीव लहे केवलज्ञान रे, जीव लहे केवलज्ञान रे=सद्विचार, सद्विचार ।

तत् ॐ सत्

सहजात्मस्वरूप परमगुरु

जुआ, मांस, शराब, बड़ी चोरी, वेश्यासंग, शिकार, परदारागमन ये सात व्यसन का त्याग कर्तव्य है जी ।

दया, क्षमा, धीरज, समाधिमरण, समभाव, समता, असंग, अप्रतिबंध, शांतिः"

इत्यादि वचनों ने उन्हें खूब जागृत किया । फिर आत्मसिद्धि में **"प्रत्यक्ष सद्गुरु योगथी स्वच्छंद ते रोकाय"** आदि वचनों का विचार आने पर प.पू. प्रभुश्रीजी के सिवाय और कहीं अच्छा नहीं लगता था । जिससे, व्यवहार कार्य के बाद जितना समय मिलता वे भक्ति में व्यतीत करते थे । भक्ति की ऐसी लगन लग गई थी । सोसायटी के मित्रों के बीच तो वे गोवर्धनभाई भगत के नाम से पहचाने जाने लगे । छुट्टी के दिन अथवा समय मिलते ही वे आश्रम में आ जाते थे । अब जीवन में उन्हें क्या निश्चय करना है इस विषय का भान हो गया । इसलिए "तत्त्वज्ञान" में अपना निश्चय अपने हाथों से उन्होंने सात वाक्यों में नोट कर रखा था । तथा सात भाव व्यसन की भी यादी बनाई थी जो इस प्रकार है :–

जीवन का निश्चय

श्री सद्गुरुदेवकी जय

१. प्रभुश्री के दर्शन की, सेवा की सदैव इच्छा रखना । (प्रत्यक्ष अथवा चित्रपट में)
२. श्री गुरुदेव की आज्ञा (राग-द्वेष का त्याग) का स्मरण ।
   अ) अहो श्री सत्पुरुष के वचनामृत, आ) क्षमापना
   ई) हे प्रभु ! हे प्रभु ! का नित्य पठन
   (सहजात्मस्वरूप की प्राप्ति - स्वच्छंद और प्रतिबंध का त्याग कर श्रीमद् राजचंद्रजी के वचनामृत का वांचन । प्रभुश्रीजी के लेखों का मनन । ५ माला फेरना । किसी से कहना नहीं ।)
३. स्वयं के लिये कभी दूसरों को तकलीफ देने की इच्छा नहीं करुँ ।
४. अच्छी तरह विचार करके किसी भी कार्य की शुरुआत करुँ ।
५. अहंभाव को दूर करने के लिए हो सके उतना प्रयत्न करुँ ।
६. अत्यंत सूक्ष्म विचार करके ही किसी से वादा करुँ अथवा करुँ ही नहीं ।
७. व्यवहार कार्य से जितना समय मिले उसे भक्ति में व्यतीत करुँ ।

सात भाव व्यसन

सात व्यसन का त्याग कर्तव्य है ।

१. जुआ :- शुभ कर्म के उदय में हर्ष तथा अशुभ कर्म के उदय में खेद करना-यह हार जीत रूप भाव जुआ है ।
२. मांस :- देह पर (स्व-पर की) प्रीति रखना यह भाव मांस भक्षण है ।
३. मदिरा :- मोहनीय कर्म से स्व-पर विवेक को भूल जाना यह भाव मदिरापान-शराब का व्यसन है ।
४. बड़ी चोरी :- धन पर प्रीति और उसे प्राप्त करने की इच्छा रहा करे यह भाव चोरी है ।
५. वेश्या संग :- कुबुद्धि के वश होकर वर्तन करना ।
६. शिकार :- निर्दय परिणाम भाव रखना ।
७. परदारागमन :- काया पर ममता (स्नेह) रखकर वर्तन करना ।

ऐसा उत्तम निश्चय उनके अंतरंग में बसता था ।

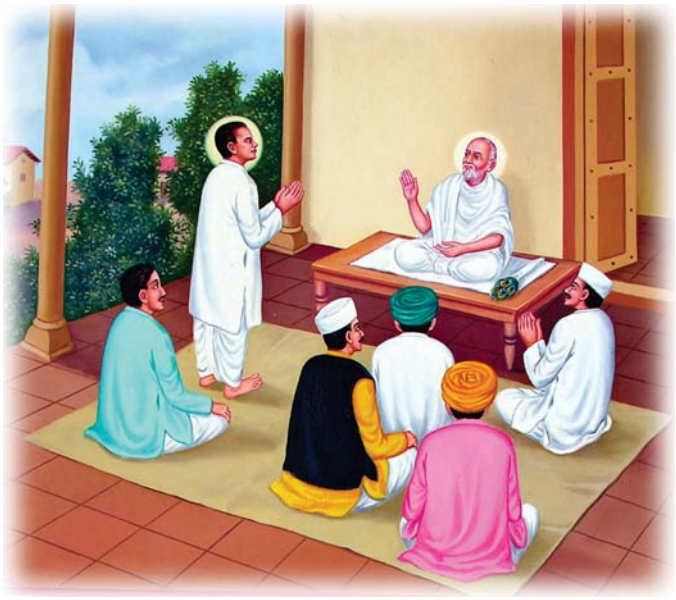

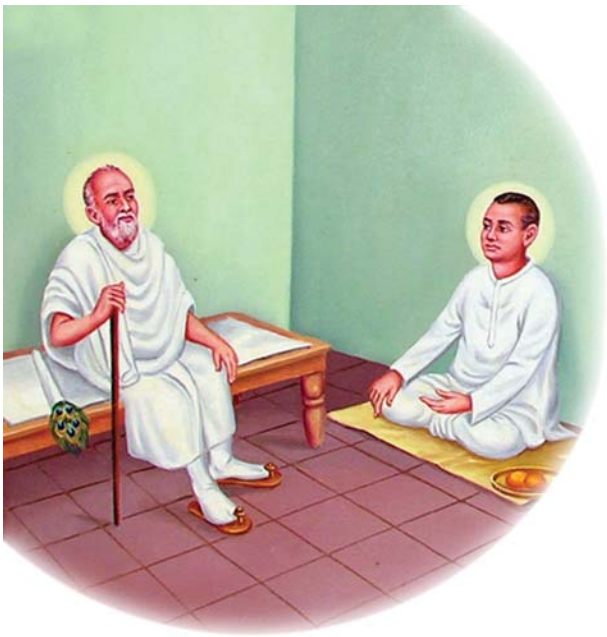

तब प्रभुश्रीजी ने कहा : "प्रभु ! पधारो !"

तब अपने आप को सेवा में रखने की जरा भी विनती किए बिना "आज्ञा गुरुणाम् अविचारणीया" की तरह प्रभुश्रीजी की आज्ञा को फूल समान मस्तक पर धारणकर, वंदन करके वहाँ से लौट गये। किराए के पैसे न होने से अहमदाबाद से पूरी रात चलकर सुबह आणंद अपने घर वापस आ पहुँचे। उनके मन में "आणाए धम्मो आणाए तवो" अर्थात् "आज्ञा ही धर्म है और आज्ञा ही तप है" ऐसा था। उसकी पूरी कसौटी हुई।

"आज्ञा ही धर्म है, आज्ञा ही तप है"

कभी-कभी तो प्रभुश्रीजी की विरहाग्नि में रहना कठिन हो जाता था। प्रभुश्रीजी अहमदाबाद होते तो किराए के पैसों की गिनती किये बगैर, वे अहमदाबाद की ओर निकल पड़ते। एक बार तो चल कर ही आणंद तक आए। **"टाळी स्वच्छंद ने प्रतिबंध"** यह वचन तो मानो रामबाण जैसे हृदय में अंकित हो गए थे, इसलिए प्रभुश्रीजी की चरण सेवा में ही बैठे रहने की आतुरता रहती थी।

एक बार तो घर वापस लौटकर न आने की भावना से, किराए के पैसों की पूरी गिनती किए बगैर, प्रभुश्रीजी के पास अहमदाबाद आ पहुँचे। प्रभुश्रीजी सेनेटोरियम के लंबे बरामदे में खाट पर बैठे थे। उन्हें वंदन कर वे खड़े रहे।

वहाँ प्रभुश्रीजी ने उन्हें प्रसाद दिलाया। वे सामने के छोर पर बैठे प्रसाद ले रहे थे। इतने में प्रभुश्रीजी की छड़ी की खड़खड़ाहट सुनकर उनका ध्यान उस ओर गया। प्रभुश्रीजी ने पहले मोजा पहना और फिर पादुका पहनने का प्रयत्न करके उसे छोड़ दिया। इससे वे यह समझे की पादुका के जैसे चरणसेवा करने में मोजा प्रतिबंधरूप रुकावट डालता है। फिर प्रसाद ग्रहण करके वे प्रभुश्रीजी के पास आए।

कर्तव्य का भान और त्याग वैराग्य की तीव्र वृत्ति

उनके पुत्र जशभाई (बबु) की ढाई वर्ष की उम्र में ही उनकी पत्नी का स्वर्गवास हो गया । जशभाई के संस्कार सिंचन के इस महत्वपूर्ण समय में उसका लालन-पालन किसी अन्य को सौंपना, यह उन्हें योग्य न लगा इसलिए वे अपने ससुर के साथ आणंद में रहने लगे ।

प्रभुश्रीजी ने बताया था कि यह मार्ग उतावल का नहीं है तथा आचरण में आने के लिए प्रथम "दया" गुण का होना आवश्यक है । इसलिए "बबु" के प्रति अपना कर्तव्य समझ कर वे आणंद में रह पाते थे और धीरज भी रखते थे । स्वजनों की ओर से फिर से विवाह कराने की तैयारी हो गई थी परन्तु प्रभुश्रीजी के सेवा में यह प्रतिबंधरूप हो जाएगा इसलिए पुनर्विवाह न करने का अपना निश्चय उन्होंने दृढ़ रखा ।

एक ओर अपने कर्तव्य का तीव्र भान था और दूसरी तरफ त्याग वैराग्य की वृत्ति भी प्रबल थी । उनके ज्येष्ठ भाई को लिखे गये पत्र से यह हम सहज अनुमान लगा सकते हैं । इसलिए उसे यहाँ बताते हैं :-

संसार छोड़कर भाग जाने का प्रयत्न

"इस बबु के जन्म से पूर्व उसका बड़ा भाई विठ्ठल था । उस वक्त मेरी आत्मकल्याण की भावनाओं ने...एक या दो बार संसार छोड़ कर भाग जाने के लिए प्रेरित किया । एक बार तो रात के तीन बजे बांधणी से लोटा लेकर निकल गया । वह इस विचार से की चलते चलते कोई जंगल आ जाए तो उस में छिपकर रहुँ और उत्तम जीवन की तैयारी करुँ । परन्तु दो घण्टे गाँव की सीमा में इधर-उधर घूमते घूमते सुबह हो गई । तब...लगा कि अभी तक तो बांधणी के पास ही हूँ और किसी के हाथों पकड़े जाना आसान है; इसलिए...अपने मन की वृत्तियों को दबाकर वापस लौट आया । ऐसी त्यागवृत्ति तो अनेकबार उमड़ आती । पर संसार भोगने का कर्म उतनी ही गति से या उससे अधिक गति से जीव खत्म कर रहा था ।

निमित्ताधीन वृत्ति

बड़ा बेटा केवल तीन वर्ष जीवित रहा; परन्तु आप एक पुत्र को पाल पोस कर तीस वर्ष तक बड़ा करो तब तक जो जो चिंता करते हो उतनी चिंताएं उसने मुझे करवाई । उसके प्रशिक्षण के लिए क्या-क्या करना, कैसी व्यवस्था करनी, कैसी तैयारी करनी, इतने सब विचार किए थे । दुनिया के किसी भी पदार्थ से अधिक मोह उस पर किया था । फिर भी वह क्षणभंगुर है इतना भी समझ में नहीं आया - यही है दीपक के होते हुए भी अंधेरा - हम संसारियों के सभी कार्यों में यही गड़बड़ होती है; बातें बड़ी बड़ी करते हैं परन्तु मन ही स्वच्छ नहीं होता । पुत्र को विरासत में क्या दे कर जाऊँ उसका विचार तक मैंने कर लिया था । पिता स्वयं उत्तम जीवन जिए यह पुत्र के लिए जितना उत्तम है उससे अधिक उत्तम विरासत कोई भी पिता अपने पुत्र को दे नहीं सकता; यह मेरे मन में स्वाभाविक रीत से पूर्व के किसी कर्म के बल से उत्पन्न हुआ और वह जागृत रहा । इसलिए वह धनवान हो ऐसे स्वप्न मैंने कभी देखे नहीं, क्योंकि जिसे मैंने अच्छा माना ऐसा उत्तम जीवन ही उसे विरासत में मिले ऐसी मेरी इच्छा थी । मेरा अधूरा रहा काम वह पूर्ण करे ऐसा पुत्र हो ऐसी इच्छा मैंने रखी । इस अनुसार, मुझे भी हमारे पिताजी जो काम अधूरा छोड़ गए है उसे पूर्ण करना, ऐसा भी मन में था और अभी भी है...।"

ऐसे कोई कोई कुछ काम कर जायेंगे

उनके मन में तो सदा यही था कि परमार्थ ही एकमात्र जीवन का कर्तव्य है इसलिए जशभाई ५-६ वर्ष के हुए तब सप्ताह में एक बार आश्रम में आने की बजाए अब पास बनवाकर रोज रात को आश्रम में आकर सुबह आणंद लौटने का नियम बना लिया । आश्रम में देर रात तक वांचन तथा लिखने का कार्य करते और प्रातः काल तीन बजे उठकर प्रभुश्रीजी के समक्ष वांचन करते । नींद न आए अथवा प्रमाद न हो इसलिए सायंकाल का भोजन भी ना के बराबर लेते थे । इस विषय में एक बार प्रभुश्रीजी ने बताया कि **"यह गिरधरभाई पास लेकर रोज आते हैं, वांचन करते हैं उनमें भी पहले की तुलना में कितना परिवर्तन ? सब कुछ त्याग किया है । इस तरह तो कोई विरला अपना प्रयोजन सिद्ध कर लेगा ।"**

एक मुमुक्षु पर इस बात का इतना प्रभाव हुआ कि अगले ही दिन प्रभुश्रीजी से पूछा–"जी प्रभु, किसी जीव को त्याग करना हो, परन्तु नहीं कर पाता हो, समझ में नहीं आता हो कि किस तरह छोड़ना, तो उसका क्या ?"

प्रभुश्री ने कहा –"कुछ ऐसा ही है । जो छोड़ना है वह कहाँ स्पष्ट दिखता है जैसे नाखून बढ़ गया है और उसे काटना है ? परन्तु ज्ञानी की दृष्टि में जो सत् नहीं उसे सत् मानना नहीं । फिर सब कुछ भले ही पड़ा रहे । वह सब तो अपने कालानुसार चला जायेगा । **ममता कम हो ऐसा करना ।** सिर पर मोत सवार है ।"

स्वच्छंद तथा प्रतिबंध दूर करने की आतुरता

इस तरह प्रतिदिन आणंद से आना और जाना वह दूध और दहीं दोनों में कदम रखने जैसा प्रतीत होता था । जिससे स्वयं को भी पूर्ण रुप से संतोष नहीं होता था । परंतु उनके मन में तो **'मूळ मार्ग'** पद के वचन **'टाळी स्वच्छंद ने प्रतिबंध'** से कब मुक्ति मिले ऐसी गूँज चलती रहती थी । इसलिए प्रतिबंध रहित होकर प.पू. प्रभुश्रीजी की सेवा में संपूर्ण जीवन व्यतीत करने की उत्कृष्ट इच्छा को प्रदर्शित करता हुआ लगभग पच्चीस पन्ने का पत्र अपने जयेष्ठ भाई नरसिंहभाई को लिखा । उस पत्र के कुछ अंश देखते ही उनकी स्व-पर हित की विशाल भावना, गहरी समझ और घर-बार छोड़कर हृदय से सच्चे त्यागी होने की भावना हमें स्पष्ट दिखाई देती है । वे बोधामृत भाग-३ पत्र १ में कहते हैं कि :-

मात्र मोक्ष अभिलाष

"संक्षेप में कहूँ तो आज तक विद्या ग्रहण करके, दुनिया का अनुभव लेकर, अनेक लेखकों ने अपना अनुभव पुस्तकों में व्यक्त किया हैं । उसे समझकर, जीते जागते प्रत्यक्ष सत्पुरुष की दशा मेरी क्षमता अनुसार समझकर, मुझे जो समझ में आया है वह संक्षिप्त में, इस पत्र में, मेरे अपने अनुभव का सारांश आपके समक्ष, आपके आशीर्वाद के लिए प्रस्तुत करता हूँ, भेंट करता हूँ । उसके द्वारा आपका चित्त-आत्मा सच्ची बात को समझकर, आपका और मेरा कल्याण किस रास्ते से हो उसका विचार कर...उसमें सहमति तथा सहयोग दे इसी हेतु से यह पत्र लिखता हूँ ।

परमार्थ प्राप्त करने हेतु चित्त आतुर

मै... परमार्थकी शोधमें और उसे प्राप्त करनेके प्रयत्नमें जीता हूँ । ..और उसके लिये सर्वस्व अर्पण करके भी संपूर्ण उन्नतिकी साधना हो सके तो तैयार रहनेके लिये मेरा चित्त तड़प रहा है ।.... (उपदेशामृत पृ. [७६]) धर्म हेतु जो अनुकूल संजोग (निस्पृही एवं आत्मानुभवी प्रभुश्रीजी की सेवा और सत्संग) अगास आश्रम के वातावरण में है, ऐसे संजोगो में कुछ वर्ष रहने से मैं सोसायटी, कुटुम्ब, बबु तथा अपने देह संबंधी चिंताओ की धारा को रोक सकूँगा । अर्थात् एक बार उन सब की चिंता छोड़ने का निश्चय हो जाने के पश्चात् किसी काल में वह फिर स्मृति में नहीं आएगी, ऐसी स्थिति सद्गुरुकृपा से होनी संभवित है । भविष्य में मुझ पर चाहे जितनी तकलीफ आ जाए तो भी सांसारिक अनुकूलता एवं सुख की इच्छा दुबारा नहीं जागेगी वैसा अभी प्रतीत होता है । परन्तु एक मुश्किल बात यह है कि यदि आज की अवस्था से अधिक सांसारिक सुख के घेरे में आने का उदय आ जाए तो क्या ? तो भी सद्गुरु की कृपा से और सद्गुरु के शरण में रहने से तथा इन संत महापुरुषों के हाथो वैसी तालीम लेने की इच्छा है, जिससे कि ऐसे सांसारिक अनुकूल संजोगो में भी चलित नहीं होऊँ, ऐसी स्थिति होना संभव लगता है ।

दीक्षा लेने की उत्कंठा

मैं खास इसलिए शीघ्र दीक्षा लेने की इच्छा रखता हूँ, ताकि अभी के अगास के संजोगो में, मैं संपूर्ण वैराग्य से रहना सीख लूँ । इससे बड़े महाराजश्री के निमित्त से मेरी वृत्तियों को स्थिर होने का उत्तम योग मिलेगा ऐसा मुझे लगता है । कुटुंबको सदाके लिये छोड़कर पूरे संसारको कुटुंब मानकर अपने प्रारब्ध पर भरोसा रखकर इस भवके शेष वर्षोको परमकृपालुदेवके चरणकमलमें अर्पण करनेको तत्पर हुआ हूँ - मुझे संसार छोड़कर आश्रममें रहनेकी आज्ञा न मिले तो मुझे कुछ कथित साधु बनकर नहीं घूमना है । पर उस योग्यताको प्राप्त करनेके लिये जो-जो उपाय दीर्घदृष्टिसे बतायें वे मुझे मान्य होनेसे, पहले मैं अन्य जिम्मेदारियोंसे - मुक्त होकर, स्वच्छ होकर फिर उनसे (प्रभुश्रीसे) बात करनेकी सोचता हूँ । ....चाहे मुझे काशी जाकर शास्त्राभ्यास करनेकी आज्ञा मिले या आश्रममें झाडू लगाने या घण्टा बजाने जैसा हलका काम सौंपे तब भी मुझे तो पूर्ण संतोष होगा ऐसा अभी लगता है, क्योंकि मेरा कल्याण उस पुरुषकी आज्ञापालनके लिये ही जीने में है एसा मुझे समझमें आ रहा है । (उपदेशामृत पृ. [७६])

आज ही मृत्यु हो गई ऐसा जानकर शेष जीवन आत्मार्थ में

मुझे शीघ्र मर जाना है अर्थात् जो चिंता मृत्यु के पश्चात् होती है वह पहले ही होनी हो तो हो जाये और फिर जो उम्र के जो वर्ष बचे हैं वो मेरे आत्माकी कहो, आश्रम की कहो या संसारकी कहो, पर जिसमें सबकी सच्ची सेवा निहित हो वैसी फर्ज अदा करनेके लिए मैं घरबार छोड़कर अणगार बनना चाहता हूँ... संत महंत या गद्दीपति बननेकी गंध भी मेरी इच्छामें नहीं है । किन्तु सबका सेवक और आत्मार्थी बननेकी इच्छा लम्बे समयसे निश्चित कर रखी है, वैसा बनना है ।'' (उपदेशामृत पृ. [७६])

अन्य को भी कल्याण का मार्ग बताने की भावना

''न ही सोसायटी के कार्यों से मैं ऊब गया हूँ और न ही सोसायटीवालों ने मुझे निकालने का विचार किया है जिससे मुझे अन्य स्थल की खोज करनी पड़े । यदि वैसा हो तो आज भी दोसो-पांचसो रुपए वेतन मिले ऐसी नौकरी मैं ढूँढ सकता हूँ, इतना विश्वास और इतनी शक्ति मुझ में है । चूँकि वे सभी, गुलाम बनानेवाले कारखाने है, मात्र स्वतंत्र जीवन को समझना, स्वतंत्र बनना तथा जो कोई स्वतंत्र जीवन जीने की इच्छा रखता हो उसे भी योग्य मार्गदर्शन देने को तैयार रहूँ; इतना कार्य यदि मुझसे हो सके तो इस अल्प जीवन में यह भी कुछ कम नहीं, ऐसा अभी लगता है । जिस वस्तु का कोई मोल नहीं उस वस्तु के विचारों में उलझे रहना वह अब असहनीय लगता है । उसमें जीना तो साक्षात् मृत्यु समान लगता है । जिसके लिए जीना है वह यदि न हो सके तो चलते फिरते मुर्दे जैसी स्थिति में जीने के समान है ।''

सेवा का उत्कृष्ट भाव

दूसरी ओर प्रभुश्रीजी को पत्रों द्वारा बिनती करते है :–

''किसी भी क्षण यदि आपकी ओर से यह निर्देश प्राप्त होता है कि मुझे सेवा में रहना है, तो दुनिया की कोई भी चीज अपनी थी ही नहीं इस प्रकार सब छोड़कर आपकी सेवामें हाज़िर रहने का लंबे समय से मेरा निश्चय है ।''

.....कभी-कभी ऐसा विचार आ जाता है कि जैसे काविठा के वृद्ध कल्याणजी तथा स्टेशन मास्टर मगनभाई को आप स्पष्ट शब्दमें जंजाल छोड़कर सत्पुरुष के आश्रय में आने के लिए कहते हो, वैसे मुझसे भी कहोगे, ऐसी आशा रखकर में भी बैठा हूँ; और जब आज्ञा मिलेगी तब बिना विलंब किए आपकी सेवा में हाजिर रहूँ, ऐसा निश्चय कर रखा है, क्योंकि आपकी आज्ञा हुई फिर किसी प्रकार का कोई विचार करने की आवश्यकता नहीं ऐसा मैंने सीखा है । ''आज्ञा गुरुणाम् अविचारणीया'' अर्थात् गुरु की आज्ञा मिले फिर वह योग्य है कि नहीं ऐसा विचार भी नहीं आना चाहिए, केवल उसको अमलमें लेना चाहिए ।

''पवित्र सेवा का, या वह न हो तो परम सत्संग का या जो आज्ञा मिले उसका पालन करने का प्रसंग प्राप्त करना ऐसा प्रयत्न करने के लिए तत्पर इस दीनदास का सविनय साष्टांग नमस्कार पवित्र सेवा में प्राप्त हो ।''

सर्वस्व त्याग करके प्रभुश्रीजी की सेवा में जुड़ गए

ऐसी सर्वार्पणता की भावना होने पर भी पूज्यश्री के मन में यह रहता था कि आश्रम में बगैर किसी काम के बोझरुप बनकर कैसे रह सकते है ? प्रभुश्रीजी ने उनके मन के भाव जान लिए और कहा कि यहाँ ढेरों काम हैं । फिर तो उनसे रहा नहीं गया । प्रभुश्रीजी की आज्ञा लेकर, घर से बड़े भाई की सहमति लेकर और चरोतर एज्युकेशन सोसायटी में इस्तीफा देकर जून १९२५ में प्रभुश्रीजी की सेवा में जुड़ गए ।

ब्रह्मचर्य दीक्षा

''सर्व चारित्र वशीभूत करने हेतु, सर्व प्रमाद दूर करने के लिए, आत्मा में अखंड वृत्ति रहने के लिए, मोक्ष संबंधी सर्व प्रकार के साधन के जय के लिए, 'ब्रह्मचर्य' अद्‌भूत, अनुपम सहायकारी है, अथवा मूलभूत है ।'' ऐसी परमकृपालुदेव की शिक्षा जानकर उन्होंने प्रभुश्री के पास ब्रह्मचर्य दीक्षा अंगीकार की । फिर तो अन्य ब्रह्मचारियों के होने के बावजूद प्रभुश्री उन्हें ही 'ब्रह्मचारी' ऐसे नाम संबोधित करते जिससे यह सामान्य नाम विशिष्टता को प्राप्त हुआ और गोवर्धनदासजी 'श्री ब्रह्मचारीजी' के नाम से सर्वत्र पहचाने जाने लगे ।

तारीख ११-१-२६ की रात के दस बजे प्रभुश्रीजी स्वयं वांचन कर रहे थे वहाँ मुनि मोहनलालजी भक्ति में से प्रभुश्रीजी के पास आये । तब प्रभुश्रीजीने कहा : **''हमारी तो अब कृपालुदेवने बताया है तदनुसार जिनकी उनपर दृष्टि हो उन्हें संभाल लेनी चाहिये'' अैसे बताया है वैसे करना योग्य है ।** (उपदेशामृत पृ. २८३) जैसे नन्हे बालक की-लघु की देखभाल करते है वैसी देखभाल इस 'लघुराज' की करनी योग्य है । अब क्या बोल सकते हैं ? नहीं तो साहस भी करते । पर पहले से हमारी तो भावना ही ऐसी है कि कुछ सुने; कोई सुनाये, सुनते ही रहें ऐसा ही भाव रहता था और अभी भी है । समय तो बीत ही रहा है न ? अब और क्या करना है ।'' प्रभुश्रीजी के ऐसे उद्‌गार सुनकर अंतरमें रोना आ गया ।

'निशदिन नैन में नींद न आवे नर तब ही नारायण पावे !'

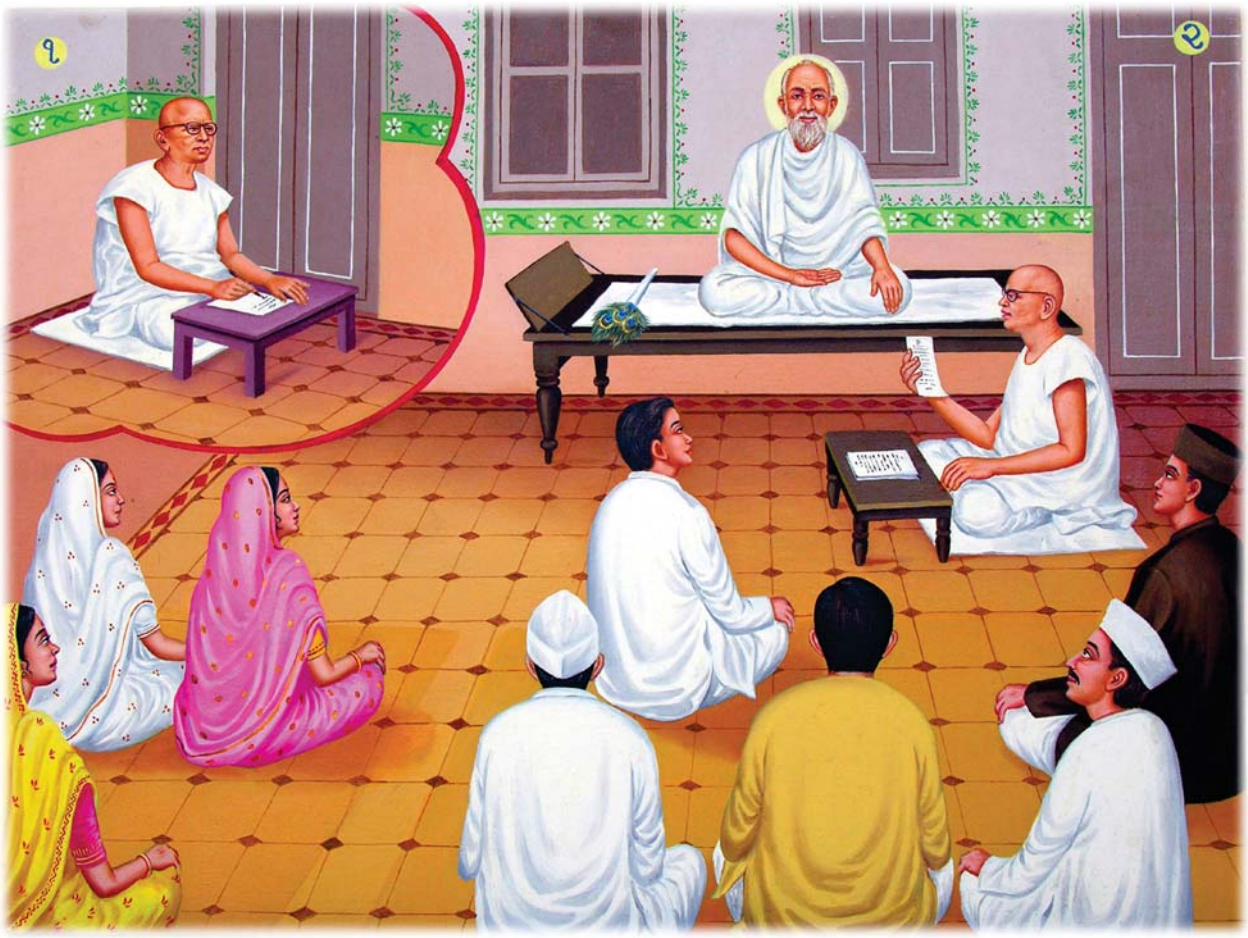

(१) अब परम पूज्य प्रभुश्रीजी की सेवा में जुड़े तब से रातदिन संतसेवा के कार्य में ही लगे रहते। रात को भक्ति, फिर ग्यारह बजे तक प्रभुश्रीजी के पास बैठकर वांचन करना, बारह-दो बजे तक डायरी लिखना, उतारा करना, पुस्तकों की संकलना करना, अनुवाद करना, प्रश्नों के जवाब देना इत्यादि कार्य करते, फिर सुबह तीन बजे उठकर प्रभुश्रीजी के पास गोम्मटसार आदि ग्रंथो का वांचन करते। फिर भक्ति तथा दिनभर प्रभुश्रीजी की सेवा। इस तरह प्रबल पुरुषार्थ प्रारंभ किया था। नींद और आराम के लिए नहि के बराबर ही समय निकालते। मजबूत शरीर, उत्तम नैष्ठिक ब्रह्मचर्य, मन की अद्‌भुत स्वस्थता, उपयोग की तीक्ष्णता तथा संयममय नियमित जीवन होने से अत्यंत श्रम करने के बावजूद भी मुख पर सदैव प्रसन्नता झलकती थी। 'निशदिन नैन में नींद न आवे नर तब ही नारायण पावे !' इस आदर्श वाक्य को अपूर्व उल्लास के बल से चरितार्थ कर रहे हा ऐसा लगता था।

जीवन परिवर्तन

(२) परम पूज्य प्रभुश्रीजी की छत्रछाया में रात दिन स्वाध्याय भक्ति में अनेक शास्त्रों का वांचन, मनन, निदिध्यासन, चर्चा तथा उनके अवगाहन में ही उनका समय व्यतीत होता था। उसी तरह श्रवण, मनन कर सब आत्मसात् कर लेते। कभी भी उस ज्ञान को व्यर्थ नहीं जाने दिया। विक्रम की तीन पुतलियों में से एक की तरह कान से सुनकर अंतरमें ही उस ज्ञान को समा लिया। उनको पत्र लेखन आदि करने पड़ते वह तो सिर्फ प्रभुश्रीजी की आज्ञा से ही करते। 'मैं कुछ हूँ ही नहीं' ऐसे भाव से मानो स्वयं को परमकृपालुदेव में ही आत्मविलोप कर दिया। पूरा जीवन पलट दिया। अंग्रेजी भाषा पर सुंदर प्रभुत्व था वह भी विस्मृत जैसा हो गया।

परमकृपालुदेव ने पत्र २९९ में बताया है :- **"चाहे जिस क्रिया, जप, तप अथवा शास्त्राध्ययन करके भी एक ही कार्य सिद्ध करना है; वह यह की जगत की विस्मृति करना और सत् के चरण में रहना ।"** उसी प्रकार उन्होंने सिद्ध कर बताया।

परम पूज्य प्रभुश्रीजी कभी उनके बारे में बताते थे "यह तो कुंदन जैसा है; 'वाल्यो वले जेम हेम' इतना सरल है, जैसा घाट घडना वैसा घडा जा सकता है ।"

गुरुगम की प्राप्ति

संवत् १९८२ में परम कृपा करके प्रभुश्रीजी ने पूज्यश्री को **'समाधिशतक'** स्वाध्याय के लिए दीया । छः छः वर्ष स्वाध्याय करके पूज्यश्री ने उसे खूब आत्मसात् किया । उसके फलस्वरूप प्रभुश्रीजी ने प्रसन्न होकर एक ऐसी अपूर्व वस्तु भेंट दी कि जिसकी याचना उत्तम गिने जाने वाले मुमुक्षु भी करते थे, लेकिन योग्यता के बिना प्रभुश्री उन्हें नहीं देते थे; और कहते थे कि योग्यता के बिना वस्तु प्राप्त नहीं होती । ज्ञानी पुरुष तो ऐसे करुणामय होते हैं कि यदि योग्यता हो तो राहगीर को भी सामने से बुला कर दे देते हैं । और प्रभुश्री कहते थे कि **"बेटा बनकर खा सकता हैं बाप होकर नहीं खा सकता" "उपमिति भवप्रपंच में कितनी बात आती है ? उसमें तो बहुत कहा है ! एक सत्पुरुष पर दृष्टि रखनेकी ही बातें आती हैं । में तो यही देखता रहता हूँ कि इसने क्या लिखा है ! किन्तु योग्यताके बिना कैसे समझमें आ सकता है ?"** (उपदेशामृत पृ. ३१३) इस तरह योग्यता बिना अच्छे अच्छें को भी न मिले ऐसी अपूर्व वस्तु वह "गुरुगम", परम पूज्य प्रभुश्रीजीने पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी को संवत् १९८८ के जेठ सुदी नवमी के दिन दी ।

एक प्रसंग पर पू.श्री ब्रह्मचारीजी के बारे में प.पू.प्रभुश्रीजी ने कहा कि **"सम्यक्दर्शन है यही उसकी छाप है । छाप की जरूरत नहीं ।"**

नित्य नियम, व्रत, मंत्रादि देने के कार्य को सोंपना

परमपूज्य प्रभुश्रीजी कई बार अपनी उपस्थिति में भी मुमुक्षुओं को नित्यनियम, व्रत, मंत्रादि देने का कार्य पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी को ही सौंपते थे । सं.१९९२ महा सुदी पूर्णिमा से तो प्रभुश्रीजी की तबियत नरम होने लगी । मानो अपनी जीवनलीला को समेटना चाहते हो वैसे सं.१९९२ के चैत्र वदी पांचम के पवित्र दिनको, परमकृपालुदेव द्वारा उद्धार किया हुआ सत्यधर्म खुद के द्वारा प्रर्वताये हुये मार्गकी जिम्मेदारी पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी को ट्रस्टियों की उपस्थिति में सौंप दी :-

मुख्य ब्रह्मचारीजी को सौंपना

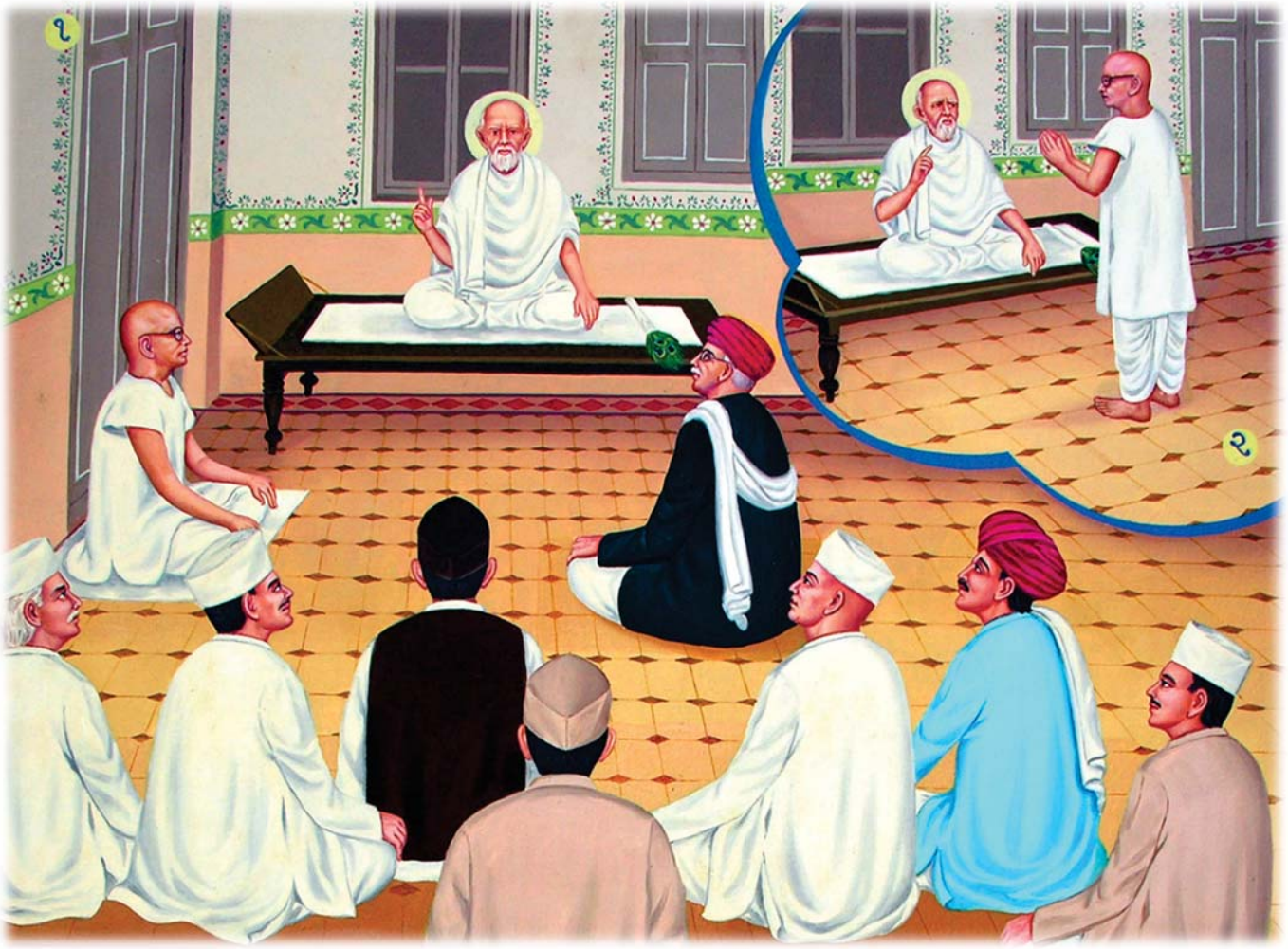

(१) "यह सब आश्रम खाता है, सेठ चुनीभाई, मणिभाई – दालके साथ ढोकली । कहा नहीं जा सकता । मणिभाई, सेठ, ब्रह्मचारी बहुत समय बाद, यद्यपि शरीर है तब तक कुछ कहा नहीं जा सकता, पर मुख्य ब्रह्मचारीको सोंपना हैं । **(ब्रह्मचारीजीसे) कृपालुदेवके समक्ष जाना प्रदक्षिणा कर, स्मरण लेने आये तो गंभीरतासे ध्यान रखकर लक्ष्य रखना, पूछना । कृपालुदेवकी आज्ञासे और शरणसे आज्ञा मान्य कराना ।**" (उपदेशामृत पृ. [८५]) यह मंगलमय प्रसंग आश्रमवासियों को परम बांधवरूप, परम आनंद का कारणरूप बन गया । अगले दिन परम पूज्य प्रभुश्रीजी मृत्यु महोत्सव, धर्म तथा आज्ञा के विषय में बताते है :-

आज्ञा यही धर्म

"आत्मा का, मृत्यु महोत्सव है । एक मृत्यु महोत्सव है ।" आत्मा धर्म-आज्ञा में धर्म । कृपालुदेव की आज्ञा... आणाए धम्मो आणाए तवो... परमकृपालुदेव का शरण ही मान्य है...सभी एकतासे मिलकर रहें ।"

गुप्तरूप से भी धर्म का सौंपना

(२) परम पूज्य प्रभुश्रीने श्री ब्रह्मचारीजीको पुनः व्यक्तिगतरूपसे भी इस 'सौंपने' के संबंधमें बताया उस समय "प्रभुश्रीकी वीतरागता, असंगता, उनकी मुखमुद्रा, आँख आदिके फेरफारसे स्पष्ट झलक रही थी कि मानो वे बोल नहीं रहे हैं, पर दिव्यध्वनीके वर्णन के समान हम सुन रहे हैं एसा लगता था : "मंत्र देना; बीस दोहे, यमनियम, क्षमापनाका पाठ, सात व्यसन, सात अभक्ष्य बताना । तुम्हें धर्म सौंपता हूँ ।" (उपदेशामृत पृ. [८५])

धर्म अर्थात् क्या ?

"आत्मपरिणाम की सहज स्वरूप से परिणति होना उसे श्री तीर्थंकर 'धर्म' कहते हैं ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (वचनामृत पत्र ५६८)

"जीव को धर्म अपनी कल्पना से अथवा कल्पना प्राप्त अन्य पुरुष से श्रवण करने योग्य, मनन करने योग्य या आराधने योग्य नहीं है । मात्र आत्मस्थिति है जिनकी ऐसे सत्पुरुष से ही आत्मा अथवा आत्मधर्म श्रवण करने योग्य है, यावत् आराधने योग्य है ।" (श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत पत्र ४०३)

"मुमुक्षुको तो सत्पुरुषके गुणगान करने चाहिये, पर धर्म तो सत्पुरुषसे ही सुनना चाहिये । कुछ सयानापन किया तो विषभक्षणके समान दु:खदायी है ।" (उपदेशामृत पृ. २६०)

"'धर्म' यह वस्तु बहुत गुप्त रही है । यह बाह्य शोधन से मिलनेवाली नहीं है । अपूर्व अंत:शोधन से यह प्राप्त होती है। यह अंत:शोधन किसी महाभाग्य जीव को सद्गुरु के अनुग्रह से प्राप्त होता है ।" (श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत पत्र ४७)

ऐसा **"धर्म"** जो गुप्त है वह इस दुषमकाल में महा प्रभावशाली ऐसे परम उपकारी प.पू. प्रभुश्रीजी को परम इष्टदेव परमात्मस्वरूप परमकृपालु श्रीमद् राजचंद्र प्रभु द्वारा प्राप्त हुआ । वही **"गुप्त धर्म"** परम उपकारी प.पू.प्रभुश्रीजी ने अपने संपूर्ण आज्ञांकित शिष्य पू.ब्रह्मचारीजी को उनकी सत्पात्रता एवं योग्यतानुसार अनंत कृपा करके सौंपा ।

सं.१९८० में जब प्रभुजी आश्रम से विहार करके पूना जा रहे थे तब उनके दर्शन हेतु कितने ही मुमुक्षु आणंद गए थे। उन्होने निराशासे अश्रु सहित नयनों से उदगार निकाले : "प्रभु, अब हमारे आधार कौन ?" प्रभुश्रीजी ने आश्वासन देते हुए कहा था कि **"हमारी सेवा में, जिसकी साख से जमुनाजी मार्ग दे ऐसा एक कृष्ण जेसा बाल ब्रह्मचारी आयेगा । उसे आश्रम में रखकर जायेंगे ।"**

सेवा में ग्यारह वर्ष

दूसरे एक अवसर पर भी श्री माणेकजी शेठ, श्री जीजीकाका और श्री कल्याणजीकाका आदि मुमुक्षुओं ने आश्रम के भविष्य के हित के लिए चिंता व्यक्त की तब परम पूज्य प्रभुश्रीजी ने कहा की–"एक ब्रह्मचारी को पीछे रखकर जायेंगे, जो हमारी सेवा में ग्यारह वर्ष रहेगा ।" उनके अतिशय वचन के अनुसार ही पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

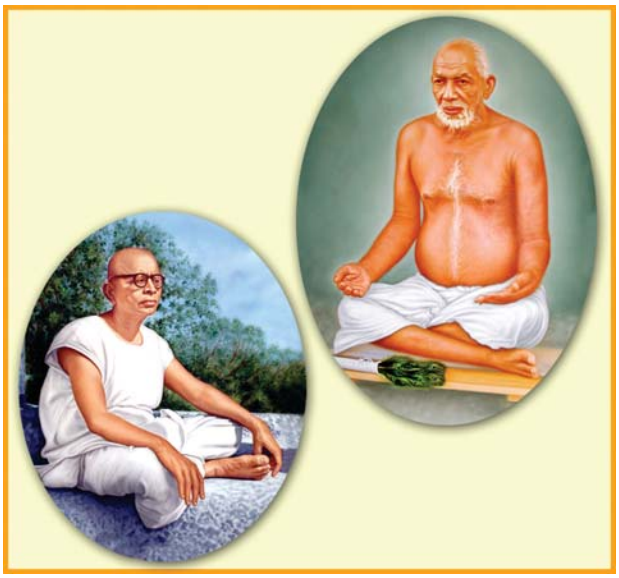

११ वर्ष निरंतर सेवा में रहे और उसके पश्चात भी १८ वर्ष परम पूज्य प्रभुश्रीजी की आज्ञानुसार धर्म की मशाल संभाली और परमकृपालुदेव के मार्ग का परम उद्योत किया ।

एक बार प.पू.प्रभुश्रीजी की अंतिम विशेष बीमारी की अवस्था को देखते हुए आश्रम के उपप्रमुख श्री पुनशीभाई सेठ की धर्मपत्नी श्रीमती रतनबेन ने प.पू.प्रभुश्रीजी से पूछा : **"प्रभु ! आप के पश्चात् हमारा आधार कौन ?" तब प्रभुश्रीजी ने (पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का हाथ पकड़कर उन्हें बताकर बोले "हम इनको रख के जा रहे हैं । गद्दी खाली नहीं है। हमारे सामने जैसे बेझिझक होकर बात करती हैं वैसे ही सब बात इसे करना । यह (ब्रह्मचारीजी) कुंदन समान हैं । जैसे मोड़ें वैसे मुड़ जाते हैं ।"** यह सुनकर उनके मन को शांति हुई ।

महा मुनियों को दुर्लभ ऐसी समाधि

अंतिम दिनो में प्रभुश्रीजी अपनी समाधि-आराधना में लीन हो गये । इस संबंध में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी बताते हैं :- "अंतिम समय में प्रभुश्रीजी की दशा अवधूत जैसी थी । राग-द्वेष जैसा कुछ नहीं था । शरीर पर कपड़ा तक रखते नहीं थे । इसलिए दरवाजा बंद रखना पड़ता था । जब दर्शन कराने होते थे तभी वस्त्र डाला जाता था । बाकी समय दिगंबर अवस्था में ही रहते थे ।" सं.१९९२ वैशाख सुदी आठम के पवित्र दिन रात को **'महान मुनियों को दुर्लभ ऐसी निश्चल असंगता से निज उपयोगमय दशा रखकर'** वे महाप्रभु समाधि को प्राप्त हुए ।

विरहाग्नि

परमपूज्य प्रभुश्रीजी का देहोत्सर्ग हाने से अब सारे संघ की जिम्मेदारी पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के सिर पर आ पड़ी। दूसरी ओर प्रभुश्रीजी का विरह भी उनके लिए असहनीय होने लगा।

"ज्यां ज्यां नजर मारी ठरे, यादी भरी त्यां आपनी;
आपनी प्रभु आपनी, उपकारी प्रभुजी आपनी। ज्यां ज्यां १
आ पाट जोती वाट प्रभुनी, मुमुक्षु मनमां वसी;
घड़ियाल, पालु, श्रुतियंत्रो, स्मृति हे प्रभु आपनी।" ज्यां ज्या० २

उस विरह को कम करने के लिए, उन्होंने परम पूज्य प्रभुश्रीजी का जीवनचरित्र लिखना प्रारंभ किया। और प्रभुश्री जिन-जिन तीर्थों में विचरे थे, उन-उन तीर्थ स्थानों की यात्रा शुरु की; परन्तु ऐसा करने से तो परम पूज्य प्रभुश्रीजी की स्मृति विशेष ताजी होने लगी तथा विरहाग्नि और अधिक जलने लगी। आखिर में परमकृपालुदेवने लिखा हैं वैसे उसका फल सुखद आया **"हरिकी विरहाग्नि अतिशय जलने से साक्षात् उसकी प्राप्ति होती है। उसी प्रकार संत के विरहानुभव का फल भी वही है।"** (श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत पत्र २४६) उसी प्रकार यात्रा की अंतिम रात्रि में संवत् १९९३ जेठ वदी ८ के दिन पूज्यश्री को (**अपूर्व ब्रह्म-अनुभव**) (आत्म-अनुभव) हुआ। वह अपनी डायरी में **"धर्म रात्रि"** नाम के काव्य में लिखते है :

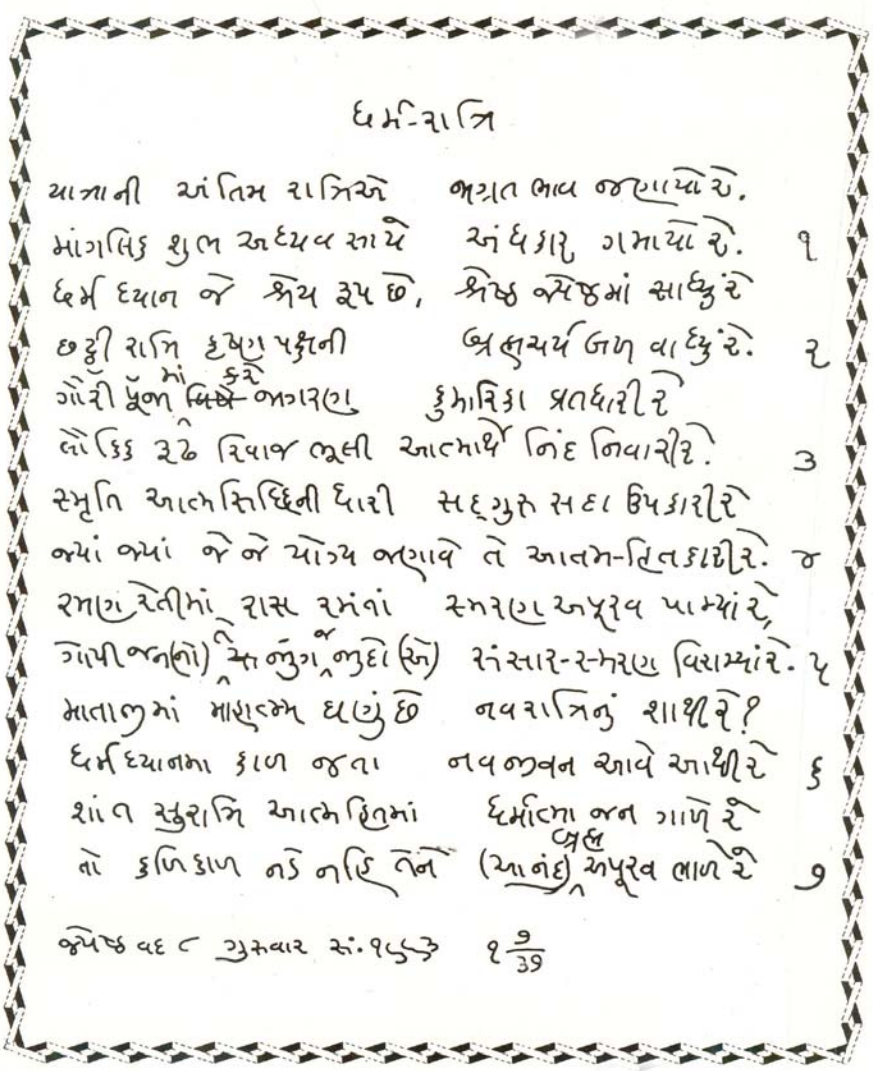

ધર્મ-રાત્રિ

યાત્રાની અંતિમ રાત્રિએ જાગ્રત ભાવ જણાયો રે.
માંગલિક શુભ અધ્યવસાયે અંધકાર ગમાયો રે. ૧
ધર્મ ધ્યાન જે શ્રેય રૂપ છે, શ્રેષ્ઠ જ્યેષ્ઠમાં સાધ્યું રે
છઠ્ઠી રાત્રિ કૃષ્ણપક્ષની બ્રહ્મચર્યબળ વાધ્યું રે. ૨
ગૌરી પૂજામાં કરે જાગરણ કુમારિકા વ્રતધારી રે
લૌકિક રૂઢ રિવાજ ભૂલી આત્માર્થે નિંદ નિવારી રે. ૩
સ્મૃતિ આત્મસિદ્ધિની ધારી સદ્ગુરુ સદા ઉપકારી રે
જ્યાં જ્યાં જે જે યોગ્ય જણાવે તે આતમ-હિતકારી રે. ૪
રમણ રેતીમાં રાસ રમંતાં સ્મરણ અપૂરવ પામ્યાં રે,
ગોપીજન(નો) તે જુગ જ જુદો(એ) સંસાર-સ્મરણ વિરામ્યાં રે. ૫
માતાજીમાં માહાત્મ્ય ઘણું છે નવરાત્રિનું શાથી રે?
ધર્મધ્યાનમાં કાળ જતા નવજીવન આવે આથી રે ૬
શાંત સુરાત્રિ આત્મહિતમાં ધર્માત્મા જન ગાળે રે
તો કળિકાળ નડે નહિ તેને (આનંદ) બ્રહ્મ અપૂરવ ભાળે રે ૭

જ્યેષ્ઠ વદ ૮ ગુરુવાર સં.૧૯૯૩ ૧ 7/37

धर्म - रात्रि

यात्रानी अंतिम रात्रिए जागृतभाव जणायो रे,
मांगलिक शुभ अध्यवसाये अंधकार गमायो रे।१
धर्मध्यान जे श्रेयरूप छे श्रेष्ठ जयेष्ठमां साध्युं रे,
छट्ठी रात्रि कृष्णपक्षनी, ब्रह्मचर्यबल वाध्युं रे।२
गौरी पूजामां करे जागरण कुमारिका व्रतधारी रे,
लौकिक रुढ रिवाज भूली आत्मार्थे नींद निवारी रे। ३
स्मृति आत्मसिद्धिनी धारी सद्‌गुरु सदा उपकारी रे,
ज्यां ज्यां जे जे योग्य जणावे ते आतम-हितकारी रे।४
रमण रेतीमां रास रमंता स्मरण अपूरव पाम्यां रे,
गोपीजन(नो) ते जुग ज जुदो(अे) संसार-स्मरण विराम्यां रे।५
माताजीमां माहात्म्य घणुं छे नवरात्रिनुं शाथी रे?
धर्मध्यानमां काल जता नवजीवन आवे आथी रे।६
शांत सुरात्रि आत्महितमां धर्मात्मा जन गाळे रे,
तो कळीकाळ नडे नहि तेने (आनंद) ब्रह्म अपूरव भाळे रे।७

(ज्येष्ट वद ८ गुरुवार, सं.१९९३, १-७-३७ कुँ)

थोड़े समय पश्चात् उन्होंने **''मोक्षमार्ग प्रकाशक''** ग्रंथ पर से अपने अनुभव ज्ञान के साक्षीरूप स्व-पर के विचार की प्रेरणा देनेवाले **''विवेक बावनी''** नामक काव्य की रचना की। और **''ज्ञानसार''** तथा **''ज्ञानमंजरी''** जैसे गहन ग्रंथो का अनुवाद भी उस दौरान किया।

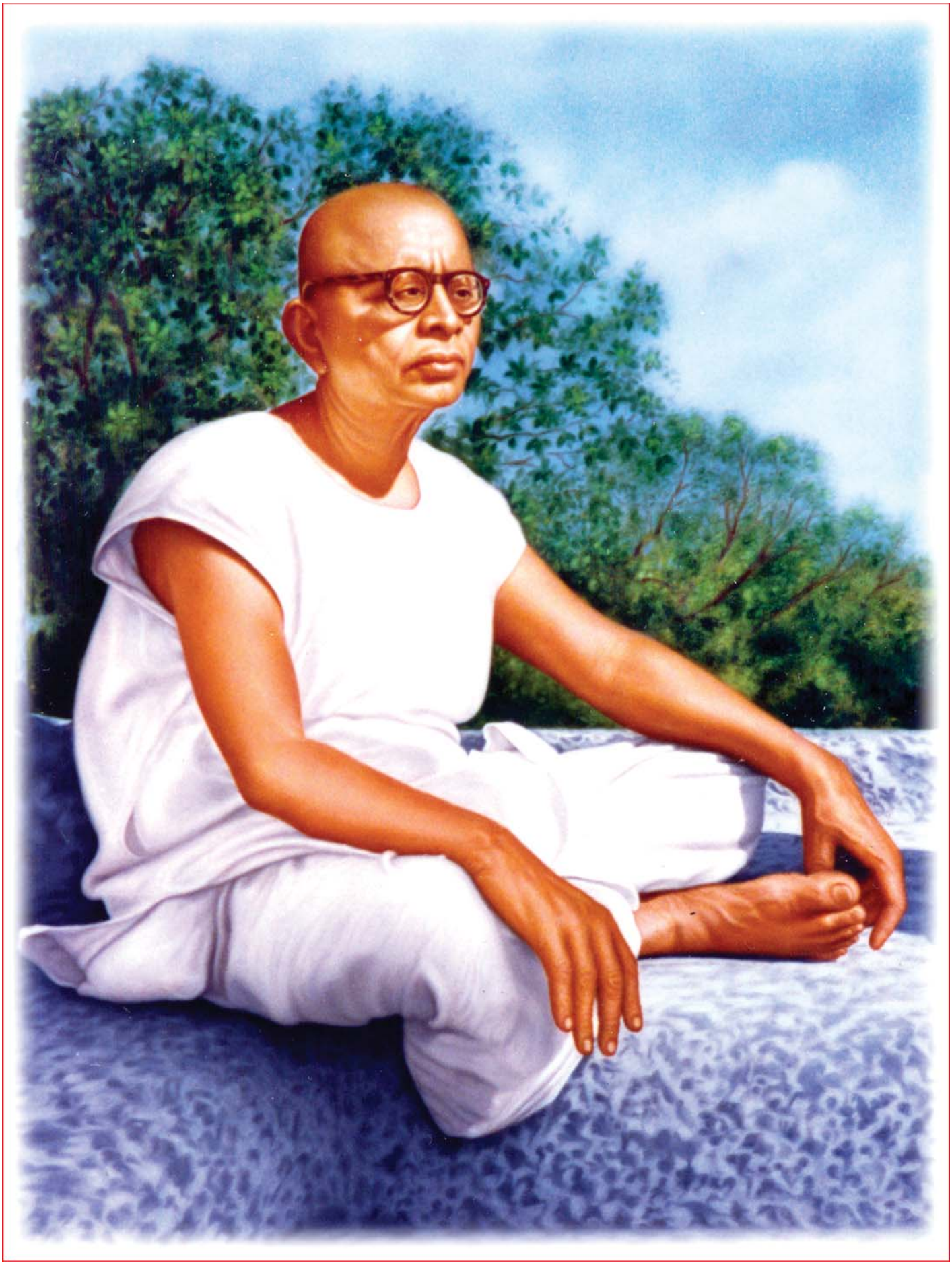

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

"उस की प्राप्ति के लिये सबसे सुगम और अचूक उपाय इस कालमें एक मात्र परमकृपालुदेवकी भक्ति है ।"

अनन्य गुरुभक्ति

पूज्यश्री के विशाल अध्यात्मज्ञान, स्वभाव में परमशांति, साथ ही तीव्र सत् पुरुषार्थ के पीछे अखूट आंतरिक बल क्या था ? तो वह थी उनकी **अनन्य गुरुभक्ति** । वे कहते थे कि "ज्ञान ज्ञानी में है । वह तो अमाप है, अनंत है, पुस्तकों से उसका पार आये एसा संभव नहीं है । वे स्वयं तो सदैव मानो परमकृपालुदेव की भक्ति में हीं खोये हुए हो, ऐसी उनकी मुद्रा, वाणी तथा वर्तन से प्रतीत होता था ।

पूज्यश्री एक काव्य में लिखते हैं :–

"नथी नाथ जगमां सार कांई, सार सद्गुरु प्यार है ।"

उनके मन तो सद्गुरु परमकृपालुदेव की परम भक्ति यही 'सहजात्मस्वरूप' प्रगट करने का सच्चा उपाय था ।

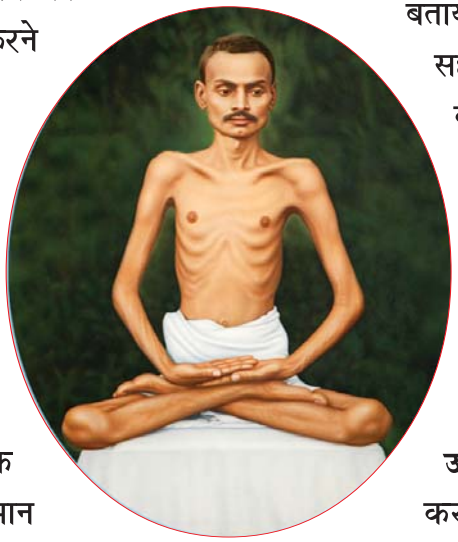

एक की उपासना से सर्व की उपासना

बोधामृत भाग-३ (पत्रसुधा) में, मुमुक्षुओ पर लिखे गये पत्रों में पूज्यश्री, परमकृपालुदेव की भक्ति के बारे में बताते हैं कि :–

"एक परमकृपालुदेव के प्रति जितनी भक्ति होगी उतनी आत्महितकारी है...एक की उपासना करने से सर्व सिद्ध एवं वर्तमान अरिहंत आदि की भक्ति होती है ।" (पत्र १२२)

"प.उ.प्रभुश्रीजी ने परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्र प्रभु की भक्ति हमें बताकर हम पर अत्यंत उपकार किया है । वे परमपुरुष भक्ति करने योग्य, स्तवना करने योग्य, उपासना करने योग्य, गुणगान करके पवित्र होने योग्य है ।" (पत्र १३५)

इस काल में परमकृपालुदेव अपवादरूप

"दूषमकाल में भी ज्ञानी की आज्ञा पानेवाला भाग्यशाली होगा और उसका कल्याण परमकृपालुदेव की भक्ति से होगा क्योंकि **इस काल में ऐसी उत्तम दशा वाला उनके जैसा पुरुष प्राप्त होना असंभव है । इस काल में परमकृपालुदेव अपवादरूप है । हजारों वर्षों के पश्चात् ऐसे पुरुष दिखते हैं । अनेक अच्छी दशा वाले महात्मा भी परमकृपालुदेव के ज्ञान और उनकी वीतराग दशा की तुलना में आने योग्य नहीं ।** इसलिए 'एक मत आपडी ने उभे मार्ग तापडी' की कहावत के जैसे (अर्थात् एक सच्चे और सही मार्ग में शीतलता है बाकी भटकने से ताप ।) इसलिए आँख बंद करके उनकी शरण में रहकर पुरुषार्थ करना ही जीव का कर्तव्य है जी ।" (पत्र ९९२)

हमारे गुरु परमकृपालुदेव

"प्रत्येक कार्य करते हुए परमकृपालुदेव स्मृति में रहें, एक क्षण के लिए भी उनको भूले नहीं, ऐसा करने की बिनती है जी । परमकृपालुदेव का परम उपकार है । उन्होंने आत्मा को प्रगट किया, आत्मा का उपदेश दिया, म्यान से जैसे तलवार भिन्न है वैसे देह से भिन्न आत्मा बताया, और दूसरे गलत मार्गों से छुड़ाकर हमें सही आत्मा के मार्ग पर ले कर आये, मोक्ष का मार्ग बताया ! इसलिए उनके जैसा उपकार हम पर किसी ने नहीं किया है । इसलिए **परमकृपालेदेवजी हमारे गुरु है, वे ही पूजा करने योग्य हैं । उन पर ही परम परम प्रेम करना योग्य है ।"** (पत्र ७६७)

"परमकृपालुदेव के अलावा कोई उद्धार करे वैसा नहीं है । ऐसा दृढ़ निश्चय करने की सलाह है जी । **जहाँ आत्मज्ञान नहीं वह पानी बगैर का कुँआ है ।** वहाँ रहट लेकर जायें, कुँअे से पानी निकालने का प्रयत्न करें तो वहाँ **दलदल के सिवाय हमारे हाथ कुछ नहीं लगेगा, परिश्रम व्यर्थ जायेगा ।**

भूले हुए लोगोके पीछे भटकना नहीं

बीस दोहों का वारंवार विचार, अनुप्रेक्षा करके एक **"सद्गुरु संत स्वरूप तुज ए दृढ़ता करी देज"** इस भाव में आत्मा को लाओगे और अन्य लोगों के व्रतो और परमकृपालु प्रभुश्रीजी के हाथों मिले हुए व्रतो में आसमान जमीन का अंतर है, ऐसा विचार कर, बाह्य आश्चर्य भूलकर, **जो खुद भूले हुए हैं ऐसे लोगों के पीछे भटकना छोड़कर घर बैठे बैठे मंत्र की माला गिनने का पुरुषार्थ करेंगे तो जल्दी ही अंजाम आयेगा ।"** (पत्र १०००)

"एक परमकृपालुदेव की श्रद्धा ही सुखदायक है । जिसे यह श्रद्धा हो गयी वह दुःखी नहीं होता, दुःख आ जाये तो भी दुःख नहीं मानता । उसे एक प्रकार का आधार मिला है ।" (पत्र ५५६)

भक्ति से आत्मशुद्धि

पूज्यश्री बताया करते थे कि जितनी आत्मा की शुद्धि होगी उतना ज्ञान प्रगट होगा; और आत्माकी अथवा हृदय की शुद्धि के लिए भक्ति यह सर्वोत्तम उपाय है तथा सुगम मार्ग है । ज्ञानी के प्रति पूर्ण अर्पणबुद्धि हो जाए, अपना अहंभाव मिट कर सत्पुरुष के प्रति अभेद बुद्धि हो जाए तो ज्ञानी का ज्ञान वह अपना हो जाय । परमकृपालुदेव से भिन्न न मुझे कुछ करना है न कहना है - ऐसा रहना चाहिए ।

पूज्यश्री का अलौकिक पुरुषार्थ देखकर ऐसा लगता था कि **भक्ति यह कोई सामान्य चीज़ नहीं है । परंतु जीव में से शिव बनने का एक सच्चा उपाय है ।** वैसे ही आध्यात्मिकता यह केवल निश्चयनय के शब्दों का प्रयोग कर बताया जाये वैसा शुष्कज्ञान नहीं परंतु अत्यंत जागृति पूर्वक पुरुषार्थमय जीवन है ।

भाव वहाँ भगवान

परमकृपालुदेव के प्रति परम प्रेम होने से उनकी दशा में ऐसी सहजता आ गयी थी कि किसी भी कार्य के लिए उन्हें प्रयत्न करना पड़ता हो वैसा लगता नहीं । सब कुछ सहज आनंद से हो जाता हो ऐसा लगता । मानो इन सबके पीछे कोई अखूट, अचिंत्य महाशक्ति काम करती हो ऐसा भासित होता था । उनके सानिध्य में परमकृपालुदेव की विद्यमानता का अनुभव होता । उनके वचनों की भी ऐसी गूंज थी । वे स्वयं भी कहते कि **"कृपालुदेव के योगबल से सब हो रहा है । उनकी आज्ञा लेकर ही सब कुछ करना ।"** तब एक मुमुक्षु ने प्रश्न किया कि - "परमकृपालुदेव क्या कुछ कहने आयेंगे ?" पूज्यश्रीने कहा - "हाँ, कहे भी सही । प्रभुश्री कहते थे कि कृपालुदेव हाज़िर ही है; ज्ञानी उनके साथ वार्तालाप करते हैं ।"

हरिरस अखंडरूप से गाया

श्रीमद् राजचंद्र महात्मा व्यासजी के संबंध में लिखते हैं कि : **"आत्मदर्शन प्राप्त करने पर भी व्यासजी आनंद संपन्न नहीं हुए थे, क्योंकि उन्होंने हरिरस अखंडरूप से नहीं गाया था ।"** (वचनामृत पत्र २८२) यह घटना मानो इस महापुरुष के जीवन में घटित न हुई हो वैसे इन्होंने आनंद संपन्न बनने हेतु **'प्रज्ञावबोध'** नामक ग्रंथ की रचना करके उसमें हरिरस अखंडरूप से गाया । उसमे परमकृपालुदेव की अनेक अलौकिक दशाओं का दिग्दर्शन किया । शांतरस में परिणमित हुआ हो ऐसा हरिरस 'प्रज्ञावबोध'

श्रीमद् राजचंद्र

के प्रत्येक पुष्प की पहली गाथा में विविधस्वरूप से परमकृपालुदेव की भक्ति के रूप में प्रगट होता है । परमकृपालुदेव के प्रति उनकी कैसी अलौकिक निष्काम प्रेमभक्ति थी उसका दर्शन इसमें (प्रज्ञावबोध में) देखने को मिलता है ।

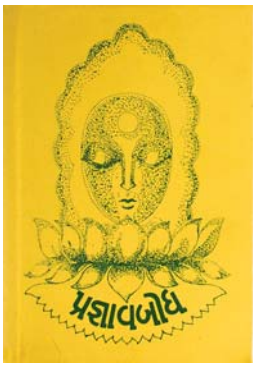

उस 'प्रज्ञावबोध' की कुछ गाथाएँ यहाँ देखते हैं :–

(राग : लावणी । हे नाथ भूली हुँ भवसागरमां भटक्यो...)

"श्री राजचंद्र-प्रभु चरणकमळमां मूकुँ,
मुज मस्तक भावे, भक्ति नहीं हूँ चूकुँः
आ कळिकाळमां मोक्षमार्ग भुलायो,
अविरोधपणे करी तमे प्रगट समझाव्यो ।"

(राग : वामानंदन हो प्राण थकी छो प्यारा)

"देवानंदन हो राजचंद्र प्रभु प्यारा,
आ कळिकाळे हो अमने उद्धरनारा ।
वंदन-विधि ना जाणुं तो ये, चरणे आवी वळगुं;
अचल चरणनो आश्रय आपो, मन राखुं ना अळगुं." देवा०

(राग : हरिनी माया महा बलवंती, कोणे जीती न जाय जो ने...)

"वंदु श्री गुरु राजप्रभुने, अहो ! अलौकिक ज्ञान जोने,
तीव्र ज्ञानदशामां क्यांथी अविरति पामे स्थान जोने ?
भान भुलावे तेवी भीडे जागृत श्री गुरुराज जोने.
बीजा राम समा ते मानुं सारे सौनां काज जोने."

(राग : हां रे मारे धर्म जिणदंशु लागी पूरण प्रीत जो...)

"हां रे व्हाला राजचंद्र गुरु ज्ञानीमां मन जाय जो,
त्रिभुवन-जननुं श्रेय उरे जे धारता रे लो ।
हां रे तेने चरणे नमतां कळिमळ पाप कपाय जो,
शरणागतना कारज सघळां सारता रे लोल ।"

(राग : विहरमान भगवान सुणो मुज विनंती...)

"राजचंद्र भगवान अध्यात्म - युगपति,
तव चरणे स्थिर चित्त रहो मुज विनती;
प्रणमुं धरी उल्लास हृदयमां आपने,
आपनी भक्ति अमाप हरे भव-तापने ।"

अद्‌भूत संयम

उनकी सेवा में रहनेवाले एक मुमुक्षुभाई ने बताया कि पूज्यश्री अधिकतर रात को 'प्रज्ञावबोध' लिखते और देर रात तक जागते थे । कभी थोड़े समय के लिए सो जाते, फिर उठकर लिखते, फिरसे उन्हीं विचारों में सो जाते । फिर विचार आते तो उठकर लिखते । इस तरह तीन वर्षों तक उसकी रचना का कार्य चला । फिर और एक वर्ष तक लगभग उसका पुनः निरीक्षण किया । फिर भी किसी ने भी उनके मुख से एक भी पंक्ति का स्वर तक नहीं सुना । इससे उनके अद्‌भुत संयम का पता चलता है । परम निःस्पृह पुरुष ही इस प्रकार वर्तन में रह सकते हैं ।

परम निःस्पृहता

इस 'प्रज्ञावबोध' के बारे में परमकृपालुदेव ने 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथ में पृष्ठ ६७५ पर भविष्यवाणी की है "इसका प्रज्ञावबोध' भाग भिन्न है उसे कोई रचेगा" और उसमें कौन से विषय रखने हैं उनका संकलन भी परमकृपालुदेव ने उस श्रीमद् राजचंद्र ग्रंथ के पृष्ठ ६६८ पर दिया है । तदानुसार इस ग्रंथ की रचना भिन्न-भिन्न गेय रागो में, छंदो में करने में आयी है। उसमें यथायोग्य स्थानो पर परमकृपालुदेव के पत्रों को भी काव्यरूप में समेटा गया है । उसे गाते हुए परमकृपालुदेव की भक्ति में मन झूम उठता है । क्योंकि प्रत्येक पाठ की पहली कड़ी कृपालुदेव की स्तुतिरूप होती है और उस स्तुति की पहली पंक्ति पाठ में अनेकबार ध्रुव पद में आती है । ऐसी भावपूर्ण शैली से भरपूर विस्मयकारी रचना करने पर भी पूज्यश्री ने कहीं पर अपना नाम तक नहीं लिखा । यह कैसी परम निःस्पृहता !

यह तो अनुभवी का काम

एक भाई एक नोटबुक में 'प्रज्ञावबोध' की रचना कर पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी से मिले और कहा : "अभी तक प्रज्ञावबोध प्रकाशित नहीं हुई इसलिए यह विचार आया कि जैसा आये वैसा लिखते हैं । यह लिखा है उसमें कुछ सुधार करने योग्य सूचना हो तो बतायें ।"

पूज्यश्री ने उसे सामान्यरूप से देखा और खूब आत्मीयता से बताया कि **"यह तो अनुभवी का काम है;** स्वाध्याय के लिए विचार करना वह अलग बात है, परंतु **परमकृपालुदेव ने जिस संकलन की योजना की है उस प्रकार लिखना वह तो अनुभवी का काम है; बाकी वाणी और हवा पानी ।"**

'जीवनकला' की शुरुआत में 'मंगल-वचन' शीर्षक के नीचे पूज्यश्री ने लिखा है कि–**"सर्वतो भद्र-स्वपरहितकारी कार्यकी प्रतीति होने के पश्चात् यह कलम पकड़ी है ।"** इस तरह ज्ञानी पुरुष के वचनों का अंतर्‌आशय तो निरंतर ध्यान स्वाध्याय में लीन रहनेवाले ऐसे ज्ञानी ही समझा सकते है; वह अन्य किसी का काम नहीं ।

सद्गुरु स्वरूप की अभेदरूप से प्राप्ति

इस तरह रात-दिन निःस्पृहता से ध्यान एवं स्वाध्याय ऐसे सतत पुरुषार्थ के फलस्वरूप पूज्यश्री की आत्मदशा वर्धमान हुई और **विशिष्ट अनुभव** प्रगट हुआ ।

वह संवत् १९९६ के वैशाख वदी ९ ता. ३०-४-४० के दिन गुरुवार को पूज्यश्री अपनी डायरी में लिखते हैं :–

"आज उग्यो अनुपम दिन मारो,
तत्त्वप्रकाश विकासे रे;
सद्गुरु स्वरूप अभेद अंतरे,
अति अति प्रगट प्रभासे रे।"

अर्थ–आत्मतत्त्व का प्रकाश विकसित होने से आज का दिन मेरे लिए अनुपम है । सद्गुरु परमकृपालुदेव का सहज आत्मस्वरूप मेरे अंतरंग आत्मा में अभेदरूप से अत्यंत अत्यंत प्रत्यक्ष, प्रकृष्ट रूप से प्रकाशित हुआ है अर्थात् अभेदरूप से अत्यंत अत्यंत प्रगट स्पष्ट अनुभव में आ रहा है ।

उसके बाद तो पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का जीवन आनंद की लहरों से विशेष उभरने लगा । उनका आनंदी, गोलाकार गोरा चेहरा परमात्मा के सच्चिदानंद स्वरूप की झांकी कराता तथा धर्म परम आनंदरूप है, ऐसा जान पड़ता था ।

निर्दोष व्यक्तित्व

निर्दोष स्वभाव के कारण उनके रोमरोम में विश्वबंधुत्व की भावना के सदैव दर्शन होते और हर किसीको उनके प्रति आत्मीयता का अनुभव होता । उनके हृदय में किसी के प्रति भेदभाव की ही भावना नहीं थी । सागर जैसे गंभीर होने के बावजूद एक बालक के जैसे निरभिमानी थे । विशाल शास्त्र-ज्ञान, मानव स्वभाव का गहरा सूक्ष्मज्ञान तथा आत्मा की अधम से अधम स्थिति से लेकर सर्वोत्कृष्ट स्थिति तक की गहरी अलौकिक समझ होने के बावजूद भी वे अपने अंदर ही समाये हुए थे । जाने सब कुछ परमकृपालुदेव के योगबल के प्रताप से है ऐसा वे मानते । कभी भी अपना ज्ञान या महत्ता बताने का प्रयत्न तक नहीं किया । पर सब के साथ सदा सरलता एवं निखालसता से बात करते । उनका यह स्वभाव 'अखा भगत' की एक उक्ति का स्मरण कराता है :-

"ज्ञानी गुरु न थाये केनो,
से'ज स्वभावे वात ज करे,
अखा, गुरुपणुं मनमां नव धरे।"

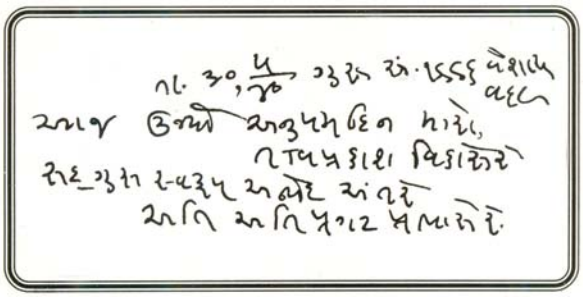

पूज्यश्री अपनी डायरी में लिखते हैं

उनके समागम से मुमुक्षुओं की सात्विकता खिल उठती । स्वयं चाहे जैसे दूषित व्यक्ति के साथ भी अत्यंत करुणा से, मैत्री भाव से वर्तन करते । उनकी निर्दोषता के कारण मुमुक्षुओं को उनके प्रति परम विश्वास था । जिससे बालक के जैसे वे लोग अपने दोष बतलाकर तनाव मुक्त होते और योग्य मार्गदर्शन लेते ।

दोषों का छेदन करवाने के लिए वज्र से भी कठोर

दोषोंको निकलवाने के लिये कभी कभी वज्र से भी अधिक कठोर हृदय का संकेत भी उनकी ओर से मिलता । जिनके स्मरणमात्र से चाहे जैसे होनेवाले प्रसंगसे बच जाते ।

चाहे जैसे दोषित को सुधारने के लिए पूज्यश्री को कभी गंभीर होना नहीं पड़ा । उनकी सहज गंभीरता सामने वाले के लिए पर्याप्त थी । वे जब गंभीर हो जाते तब सत् के पीछे छिपे हुए प्रताप के प्रभाव से लोग कांप जाते । फीर भी उस गंभीरता में एक प्रकार की करुणा बरस रही है ऐसा लगता था ।

हजारों मुमुक्षुओं को उन्होंने परमकृपालुदेव का शरण अंगीकार करवाया । सेंकडो सज्जनो को उनका निकट का परिचय प्राप्त हुआ । सब के प्रति आत्मीयता होते हुए भी पूज्यश्री की उदासीनता - वैराग्य अद्भूत था तथा आँखो में चमत्कार था ।

सूक्ष्मता से देखनेवालों को उनकी आँखे, वे चाहे हँसे, बोले या देखें हर दशा में न्यारी ही लगती । वे संसार के भाव से एकदम अलिप्त परम संयमी थे ।

जिन्हें ज्ञान प्राप्त होगा उन्हें परमकृपालुदेव से होगा

एक बार एक मुमुक्षुभाई ने कहा "कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ हो तो कहियेगा;" तब पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने जवाब में कहा कि - **"जिनको होगा उन्हें यहीं से होगा; क्या कहीं और से होनेवाला है ?"**

वात्सल्यता

प्रत्येक मुमुक्षु के प्रति उनका वात्सल्यभाव, प्रेम उत्पन्न करवाता । वात्सल्यता यह सम्यक्दृष्टि का अंग है । अनेक लोगों को उनके प्रति अपनेपन का अनुभव होता । कोई छः बारह महिनों के बाद आए तो भी जो पत्र आदि पूज्यश्री ने उनको मुखपाठ करने को दिए थे वे उन्हें स्मरण में रहते और फिर उनसे पूछते थे । अपने मन में तो वे एक ही थे परन्तु उनके मन में तो अनेक मुमुक्षु थे; फिर भी सब का ख्याल रखते । पूज्यश्री वात्सल्यता के विषय में बताते है :–

"जो कृपालुदेव की उपासना करते हैं, उनके प्रति वात्सल्यभाव रखना । जिस जीव का कल्याण होना होता है, वही जीव कृपालुदेव की शरण में आता है । प्रभुश्रीजी कहते थे कि कृपालुदेव की शरण में जो आया है हम उनके दास के दास हैं । हमेंसेवा करनी है ऐसी इच्छा रखनी । मुमुक्षु है वो सगे संबंधियों से ज्यादा हितकारी है । **(उसके लिए वात्सल्य अंग तो सर्वप्रथम चाहिए । दूसरा कुछ भी न हो और वात्सल्य भाव रखें तो तीर्थंकर गोत्र तक बांधते हैं । यदि यह गुण हम में नहीं हैं तो इसे लाना है । एसे सम्यक्त्व होने लायक गुण यदि मुझ में नहीं आये तो सब व्यर्थ है ।")** (बो.भा.१ पृ.३३१)

वाणी की विशिष्टता

पूज्यश्री जब बोध देते तब घण्टो तक मुमुक्षु सुनते रहते, थकते नहीं थे । उनकी वाणी में एसी शीतलता थी कि मुमुक्षुओं के रोमरोम में फैलकर आत्मा को परम शांत करती, जिससे मानो सुनते ही रहें ऐसा महसूस होता । वाणी में स्वाभाविक सत्यता थी, जिसमेंसे भूतकाल एवं भविष्य काल की घटनाओ का संकेत मिलता । उसी तरह मुमुक्षुओं के मन में चल रहे अनेक प्रश्नों का समाधान भी अपनेआप हो जाता, ऐसा पूज्यश्री का वचनातिशय था । पूज्यश्री ज्यादातर सूचनात्क बोलते थे आदेशात्मक नहीं ।

उनकी वाणी में ऐसी विशिष्टता थी कि चाहे जैसी व्यावहारिक बात हो वे उसे परमार्थ में ही पलट देते । एक बार पूज्यश्री के पुत्र जशभाई की पत्नी आश्रम में आये थे । पूज्यश्री से मिलने गये तब उनसे कहा कि एक बार घर आकर हम सबके हिस्से बांट दीजिये । तब पूज्यश्री ने कहा - "सब को अपने प्रारब्ध अनुसार हिस्सा मिला हुआ ही । **अब देह और आत्मा दोनों का विवेक करना है; आत्मा को सबसे भिन्न करना है ।"**

मौन की महानता

उनकी वाणी की तुलना में उनके मौन में अधिक सामर्थ्य था । मौनदशा में वे बोधमूर्ति समान ही लगते और उनके दर्शन मात्र से ही संकल्प विकल्प और कषाय मन्द हो जाते थे । स्वास्थ्य के कारण अंतिम वर्ष में तीन महिने जब नासिक रहे तब ऐसी असंगदशा में रहते कि उनके पास जाते ही सब मौन हो जाते और घडी भर के लिए सब कुछ स्वप्न समान लगता ।

काया का संयमन

काया का संयमन उनका अजोड़ था । काया को तो कमान के जैसे रखा था । पर्वतो की ऊँची पहाड़ियों पर अकेले ही निकल पड़ते । मुमुक्षओं के साथ होते हुयें भी चलने में सबसे आगे रहते थे । मुमुक्षुओं को उनके साथ चलना कठिन हो जाता था । चौसठवें वर्ष तक वही जोश और खुमारी थी । ब्रह्मचर्य व्रत लिया तब से नहीं स्नान, नहीं मर्दन (वैद्य के उपचार के लिए कभी-कभार अंतिम वर्षो में हुआ हो) या मालिश फिर भी उनके शरीर की सौम्य कांति ब्रह्मतेज के प्रताप से अति निर्मल और सतेज थी ।

न के बराबर आधार पर रहकर कायोत्सर्ग ध्यान

प.पू.प्रभुश्रीजी की अनन्य कृपा उनपर बरसी हुयी थी । उसी के प्रताप से पूज्यश्री पद्मासन ध्यान अथवा कायोत्सर्ग ध्यान में पूरी पूरी रात गुजारते । स्वयं तो स्वाध्याय, ध्यान, भक्ति में अप्रमत रहते और मुमुक्षुओं को भी योग्यतानुसार धर्म में जोड़ते । शरीर को मात्र एक-दो घण्टे ही आराम देते । चारित्रमोह को दूर करने के लिए वे कभी पीछे नहीं रहे । शरीर को तो जैसे खारिज कर दिया हो ईडर, गिरनार, आबू इत्यादि पहाड़ी स्थलों पर यात्रा के लिए जाते तब **भयंकर वन, गुफाओं में रातभर ध्यान करते ।**

उँचे नहींवत आधार पर अथवा कुँए के किनारे पर खड़े रहकर दिन या रातको कायोत्सर्ग करते । नींद की यदि झपकी आए तो नीचे गिरते ही प्राण छूट जाएँ । सीमरडा निवास के दौरान भी आधारहीन स्थलों पर कायोत्सर्ग मुद्रा में रातें व्यतीत करते । नींद या आराम के लिए कोई पूछने पर कहते कि नींद तो हेय है, उपादेय नहीं ।

शोभायात्रा के समय मधुमक्खीओं का उपद्रव

पर्युषण के अंतिम दिन अगास आश्रम पर शोभायात्रा थी । बड़े दरवाजे से शोभायात्रा के बाहर निकलने पर दरबान ने खाली बंदूक चलाई । दरवाजे के उपर मधुमक्खी का छत्ता था । मधुमक्खियाँ उड़कर मुमुक्षुओं तथा पू.श्री ब्रह्मचारीजी के सिर पर चिपककर डंस मार कर उड़ गयी । सब अपनी अपनी धमाल में थे । पूज्यश्री ने अपने सिर पर हाथ तक नहीं फिराया । शोभायात्रा से लौट कर आने के बाद पूज्यश्री अपने कमरे में आये । वहाँ मुमुक्षुओं ने देखा तो सिर पर मधुमक्खियों के कांटे थे । कांटो को चिमटे से निकाला गया, चेहरा सूज गया था फिर भी पूज्यश्री के मन में संपूर्ण शांति दिख रही थी । उम्र के अंतिम वर्षो में उनकी एक आँख का तेज चला गया था परन्तु लोगों को छः महीने बाद पता चला । उनके पैरों और कमर में भी पीड़ा रहती थी वह भी डेढ़ वर्ष के पश्चात् पूछने पर पता चला ।

शोभायात्रा के
समय मधमक्खीओं
का उपद्रव

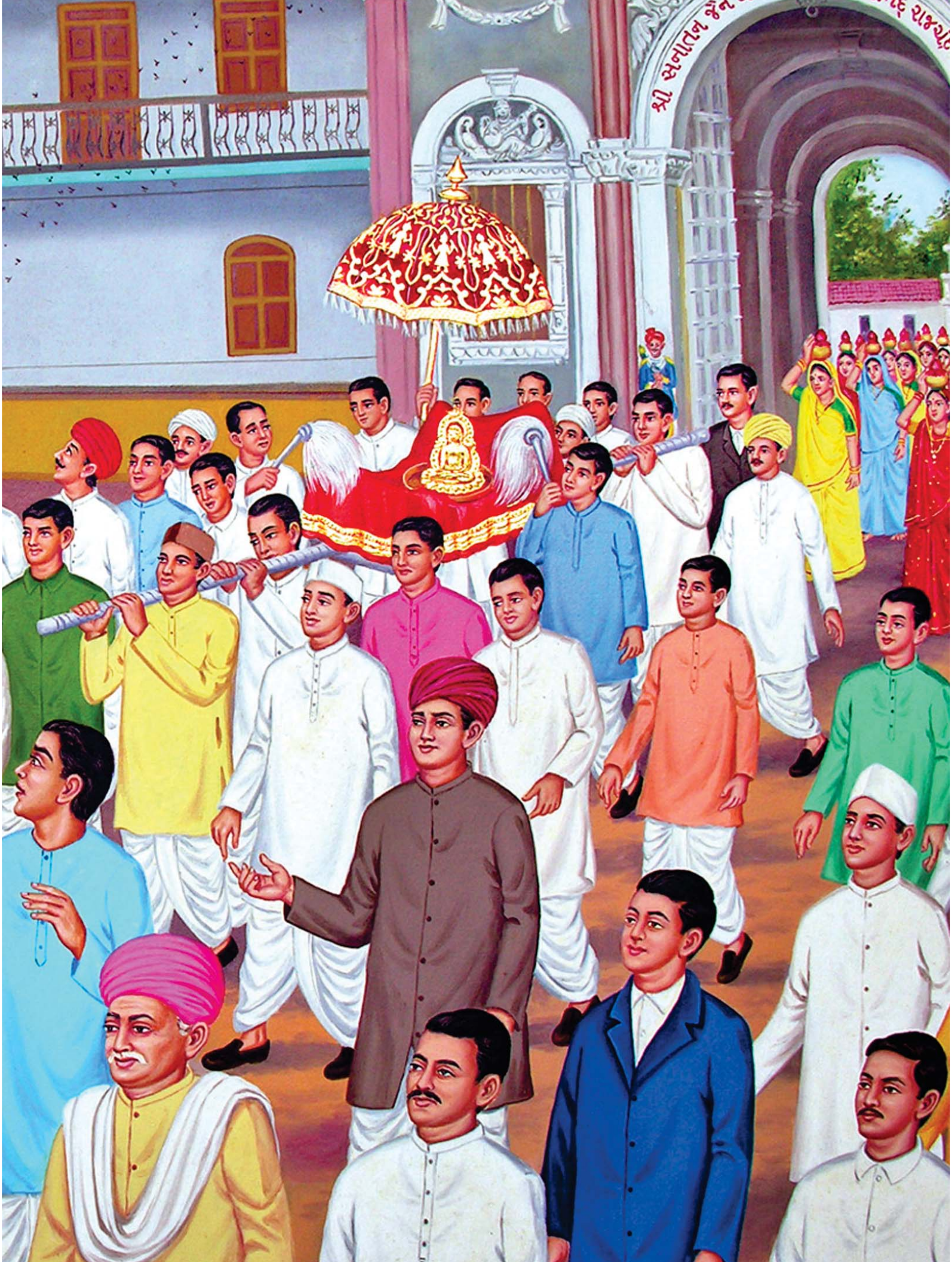

तीर्थयात्रा तथा प्रतिष्ठायें

चरोतर, मारवाड़, धामण वगैरह प्रदेशों में यात्रा करके मुमुक्षुओं को धर्म के प्रति जागृत रखते थे। यात्रा में सौ-दोसौ मुमुक्षुओं का संघ भी साथ जुड़ जाता। समेतशिखरजी, शत्रुंजय, गिरनार आदि की यात्रा में उन तीर्थों का माहात्म्य बताकर चतुर्थकाल का स्मरण करवाते।

पूज्यश्री के सानिध्य में काविठा, धामण, आहोर, भादरण, सडोदरा आदि स्थलों पर श्रीमद् राजचंद्र आश्रमों में चित्रपटो की स्थापना की गयी। और अनेक मुमुक्षुओं के घर पर भी उनके हाथों परमकृपालुदेव तथा प.पू.प्रभुश्रीजी के चित्रपटो की स्थापना हुई है।

उसी तरह श्रीमद् राजचंद्र आश्रम अगास के **राजमंदिर में उनके हस्तकमल से प.पू.प्रभुश्रीजी के रंगीन चित्रपट की स्थापना संवत् २००९ के आसो वदी २ के शुभ दिन पर की हुई है।**

साहित्य सर्जन

पूज्यश्री द्वारा रचे हुये साहित्य में 'श्रीमद् राजचंद्र जीवनकला', 'श्रीमद् लघुराज स्वामी जीवनचरित्र', 'प्रज्ञावबोध', 'समाधिशतक - विवेचन' एवं 'आत्मसिद्धि विवेचन' ये मौलिक रचनाएँ है। तथा 'प्रवेशिका' ग्रंथ का संयोजन किया है। वैसे ही अनुवाद में 'समाधिसोपान' और 'ज्ञानमंजरी' गद्य में तथा 'तत्त्वार्थसार', 'दशवैकालिक', 'बृहद्-द्रव्यसंग्रह', 'विवेकबावनी', 'ज्ञानसार' तथा 'लघुयोगवासिष्ठसार' पद्य में है। उन्होंने आत्मसिद्धि का अंग्रेजी पद्य में भी अनुवाद किया है। मोक्षमाला पर किये गये उनके विवेचन पर से 'मोक्षमाला विवेचन' और परमकृपालुदेव के पद्यों पर किए हुये विवेचन पर से 'नित्यनियमादि पाठ' पुस्तक की संकलता हुई है। आठ दृष्टि की सज्झाय पर किये गये विवेचन पर से 'आठ दृष्टि की सज्झाय' (अर्थ सहित) पुस्तक तैयार हुई है। उन्होंने मुमुक्षुओं को जो बोध दिया उस पर से 'बोधामृत भाग-१' और वचनामृत पर किए गए उनके विवेचन पर से 'बोधामृत भाग-२' (वचनामृत विवेचन) तथा मुमुक्षुओं पर लिखे गए पत्रों के संग्रहरूप 'बोधामृत भाग-३' (पत्रसुधा) ग्रंथ की रचना हुई है।

"आलोचनादि पद संग्रह" में पूज्यश्री द्वरा रचे गये पद्यो में से आलोचना अधिकार, जिनवर दर्शन अधिकार, वैरागमणिमाला, हृदयप्रदीप, स्वदोष दर्शन, योगप्रदीप, कर्तव्य उपदेश, द्वादश अनुप्रेक्षा आदि पद्य प्रकाशित हुए है।

परमकृपालुदेव को प्रगट में लानेवाला कौन ?

एक बार परमकृपालुदेव की सुपुत्री जवलबहन और उनके पुत्र वगैरह आश्रम में आये। तब उन्होंने पूज्यश्री से प्रश्न किया कि - "परमकृपालुदेव के जाने के पचास वर्षो पश्चात् धर्म की उन्नति कौन करनेवाले है ? और उनको प्रगट में लानेवाले कौन है ?"

तब पू.श्री ब्रह्मचारीजी ने बताया कि **"जो परमकृपालुदेव को ईश्वर समान मानकर उनकी भक्ति में जुड़ा होगा वह। बाकी सब तो उन्हें प्रगट में लानेवाले नहीं कहलायेंगे बल्कि ढाँकनेवाले कहलायेंगे।** उनके परमकृपालुदेव के वचनों का चाहे जो अर्थ करते बात करते हो परन्तु **परमकृपालुदेव ने बताया है कि हम महावीर स्वामी के हृदय में क्या था वो जानते है; वैसे ही परमकृपालुदेव के हृदय में क्या था वो जो जानता है वही उन्हें प्रगट में ला सकता है। उनका हृदय सहजता से समझ में आ जाय ऐसा कहाँ है ?"**

श्रीमद् राजचंद्र

प.श्री ब्रह्मचारीजी

श्री जवलबहन

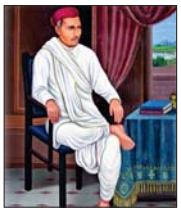
श्री त्रिभुवनभाई

परमकृपालुदेव से मिले हुए श्री त्रिभुवनभाई

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

खंभात के श्री त्रिभुवनभाई का स्वास्थ्य ठीक नहीं था । तब उन्हें एसा अहसास होने लगा कि यह शरीर छूट जायेगा, इसलिए मुझे अब क्या करना ? मुझे सत्संग का योग नहीं, ऐसा महसूस होने लगा । तब मैं वहाँ गया । उन्होंने मुझसे कहा कि मैं क्या करुं ? "परमगुरु निर्ग्रंथ" का जाप करुँ या "आतम भावना भावता जीव लहे केवल ज्ञान रे" का जाप करुँ ? अंत में मुझे क्या करना है ? उनको कृपालुदेव से मंत्र नहीं मिला हुआ था । फिर मैंने प्रभुश्रीजी का बताया हुआ 'सहजात्मस्वरूप परमगुरु' का जपने के लिए कहा । तब उन्होंने कहा कि "ये तो कृपालुदेव मेरे लिए ही लिख कर गए हैं !" मृत्यु पर्यंत उनकी वृत्ति उसी में रही थी । (बो.भा.१ पृ.१८७)

परमकृपालुदेव के शरण में ही जीवन और मृत्यु

पूज्यश्री बारबार कहते कि **अन्य शास्त्रो का अध्ययन करना है वह परमकृपालुदेव के वचनों को समझने के लिए ।** परमकृपालुदेव को समझने के लिए ही जीना है; **परमकृपालुदेव की शरण में ही जीना है और परमकृपालुदेव की शरण में ही इस देह का त्याग करना योग्य है ।**

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी अपने देहोत्सर्ग के तीन दिन पहले अगास आश्रम में संवत् २०१० के कार्तिक सुदी ४ के दिन बोध में कहते हैं कि :–

अपने सिर पर भी मरण है न ?

"क्षमा माँगता हूँ । अब तो किसी से कुछ कहना नहीं । किसी को किसीके दोष नहीं बताने । वह पूछे तो भी नहीं कहना, ऐसा चित्त हो गया है । ...मुझे अब कोई कहनेवाला नहीं । मुझे ही दोषों का छेदन करना है, ऐसा लगे तो ही दोषों को निकाल सकेगा । पुष्पमाला में कृपालुदेव ने अंत में यही लिखा है कि–'दोषको पहचानकर दोष का छेदन करना ।' अभी तो समाधि मरण करना है । अपने माथे पर भी मरण है न ?" (बो.भा.-१ पृ.३३३)

फिर देहविलय के पहले दिन कार्तिक सुदी ६ के दिन बोध में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी फिर से कहते हैं :–

'जिसका आयुष्य पूर्ण होता है उसे जाना पड़ता है'

"रोने से असातावेदनीय कर्मो का बंधन होता है । स्वयं का विचार नहीं आता । **कल क्या होगा यह पता है ? कृपालुदेव का शरण रखना तो सबका कल्याण होगा ।"** किसी का दुःख ले नहीं सकते, अपना सुख किसी को दे नहीं सकते । हम पर भी मृत्यु आयेगी । यदि उस वक्त घबरा जाए तो मृत्यु बिगड़ जाता है । जो होनेवाला है वह तिलभार भी इधर-उधर होगा । अपने मन को दृढ़ करना है । मंत्र में चित्त रखना है । **कृपालुदेव का शरण छोड़ने जैसा नहीं है ।** मनुष्यभव रोने के लिए नहीं मिला है । पूरा जगत हमें कर्म बंधवा कर लूट ले ऐसा है । **जो होनेवाला है वह होगा, रूडे राज की भक्ति करें ।** चाहे जैसा दुःख आ पड़े फिर भी रोना नहीं । रोने से किसी को लाभ नहीं होता । किसी की मृत्यु के बाद रोने से उसे भी लाभ नहीं होता और हम रोये तो हमें भी लाभ नहीं है । चलते फिरते **"सहजात्मस्वरूप परमगुरु"** का जप करें, इससे बल मिलता है । शूरवीर बनेंगे तो कर्म भी आने से डरेंगे । **"खेद न करते हुए शूरवीरता ग्रहण करके ज्ञानी के मार्ग पर चलने से मोक्ष पट्टन सुलभ ही है ।** (वचनामृत पत्र ८१९) **खेद करने से कुछ कल्याण नहीं होता । प्रतिदिन मरण को स्मरण में रखना । मेहमान जैसे हैं । जिसका आयुष्य पूर्ण हो उसे जाना पड़ता है ।"** (बो.भा.१ पृ.३३५)

देहविलय के दिन उपदेशामृत कार्य की पूर्णता

रोज सुबह प.पू. प्रभुश्रीजी के मूल बोध की (उपदेशामृत की) प्रेस कॉपी तैयार करने हेतु वे तीन चार मुमुक्षुओं के साथ बैठते थे । कार्तिक सुदी ५ के दिन उन्होंने कहा कि अभी तो शाम को भी बैठना है, जिससे कि कार्य पूर्ण हो जाए । उस अनुसार संवत् २०१० के कार्तिक सुदी सातम के दिन शाम को **उपदेशामृत की प्रेस कॉपी का कार्य पूर्ण कर के लोटा लेकर वे जंगल में गये ।**

श्री राजमंदिरमें परमकृपालुदेवके समक्ष काउसग्ग मुद्रामें पू.श्री ब्रह्मचारीजीका देहोत्सर्ग

जंगल में से रोज़ की तुलना में थोड़े जल्दी वापस आए। हाथ-पैर धोकर, राजमंदिर में परमकृपालुदेव के चित्रपट के समक्ष ही कायोत्सर्ग ध्यान में खड़े रहे। उस वक्त अमुक प्रश्नों का समाधान पाने के लिए भाईश्री फूलचंदभाई, श्री देवीचंदजी, श्री कुसुमबेन इत्यादि मुमुक्षु श्री राजमंदिर में पूज्यश्री के पीछे आकर खड़े रहे। पूज्यश्री का ध्यान प्रतिदिन ५-७ मिनट में समाप्त हो जाता था। परन्तु आज तो २०-२५ मिनट तक ध्यान चला। जाने अभी ध्यान पूरा होगा ऐसा मानकर सभी विचार में खड़े थे। इतने में तो पूज्यश्री का देह संध्याकाल में ५ बज कर ४० मिनट पर कायोत्सर्ग मुद्रा में २-३ बार दायें-बायें किंचित् डोलते हुए एकदम नीचे गिर पड़ा। श्री फूलचंदभाई को शंका हुई तो उन्होंने हाथ की नाड़ी जाँची, उन्हें अपने अनुभव से ज्ञात हुआ कि पूज्यश्री ने देह छोड़ दिया है। इस तरह प्रत्यक्ष देखकर सभी को आश्चर्य हुआ की अहो ! मृत्यु की कैसी कठिन वेदना, उसे भी उन्होंने कायोत्सर्ग मुद्रा में स्वरूपमग्न होकर सहन किया, परमकृपालुदेव के समक्ष, उनके शरण में खड़े खड़े ही इस नश्वर देह को त्याग कर अपूर्व ऐसा समाधिमरण सिद्ध किया।

पवित्र देह समक्ष पूरी रात भक्ति - स्मरण

पूज्यश्री के शरीर को पानी वगैरह से स्वच्छ कर, राज मंदिर के नीचे के द्वार पर इस पवित्र देह को सुखासन मुद्रा में विराजमान किया गया। वहाँ पूरी रात भक्ति तथा स्मरणमंत्र की धून चली। तुरंत ही अनेक स्थलों में टेलीफोन से अथवा नजदीक के गाँवो में वाहन से देहत्याग के समाचार दिए गये। सुबह नौ बजे तक तो मुमुक्षुओं की भीड़ आश्रम में एकत्रित हो गयी। ग्यारह बजे स्मशानयात्रा निकली। **पूज्यश्री की पालखी सहित पार्थिव शरीर की अंतिम यात्रा आश्रम की प्रदक्षिणा कर एक बजे अग्नि संस्कार के निर्धारित स्थल पर पहुँची।**

चंदन के काष्ट से अग्नि संस्कार

अंत में आश्रम के विद्वान ट्रस्टी श्री अमृतलाल परीख ने आँखो में विरह के अश्रु सहित गुणगान कर अंतिम भाव अंजलि अर्पित कर पंचांग नमस्कार किया। उस समय के दृश्य ने सभी को भावविभोर कर दिया। इसके पश्चात् चंदन के काष्ट से बनी चिता में पूज्यश्री के देह को आदर सहित रखकर, प.पू.प्रभुश्रीजी का अंतिम संस्कार, विधि के अनुसार घी की आहुति देकर अग्नि संस्कार किया गया। उस समय के सभी चित्र यहाँ दिए गए है :—

पूज्यश्री के देहोत्सर्ग पश्चात् पार्थिव देह सुखासन में बिराजमान

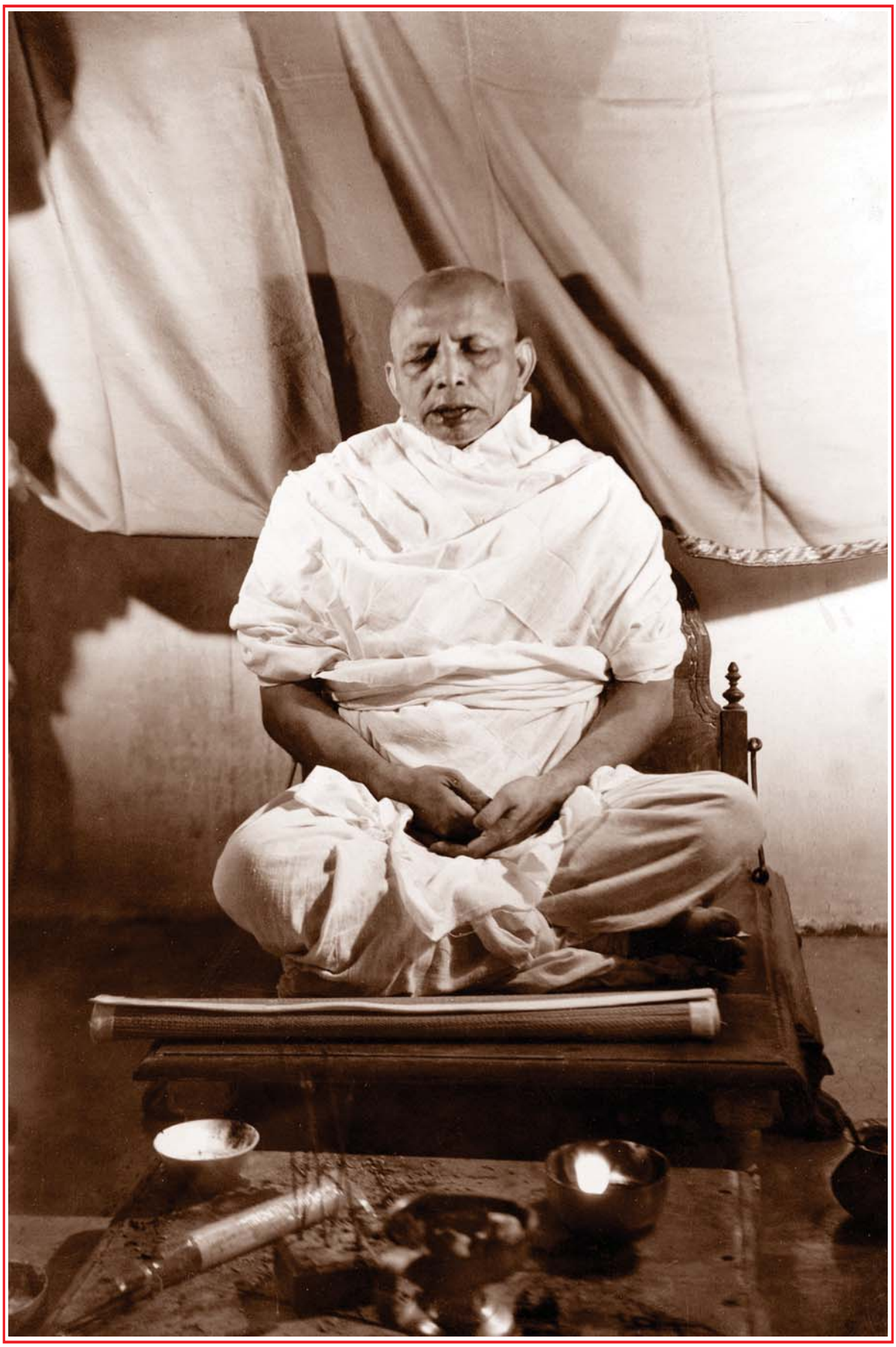

सभामंडप के सामने से निकलती हुई पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी की स्मशान यात्रा

चंदन के काष्ट से अग्नि संस्कार

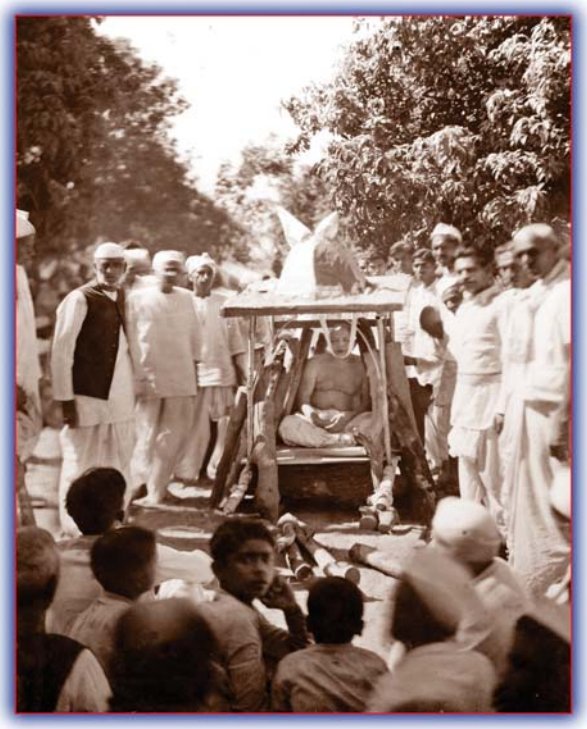

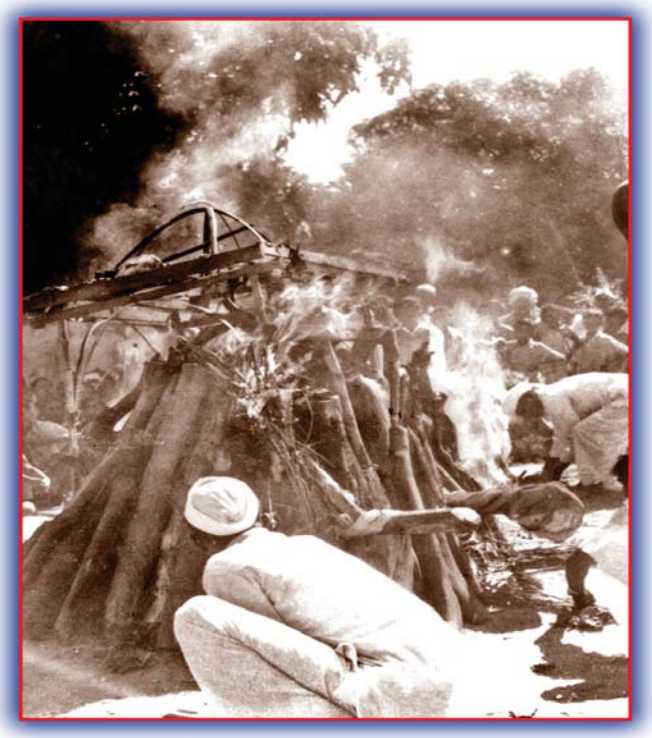

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के चित्रपट की स्थापना

पूज्यश्री के देहविलय के पश्चात् संवत् २०१० के आसो सुदी ८ के दिन उस समय के आश्रम के प्रमुख सेठश्री शांतिलाल मंगलदास के शुभ हाथों से पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के चित्रपट की स्थापना, वे जिस कक्ष में कायम बैठते थे, वहाँ करने में आयी।

पूज्यश्री के अक्षरदेह से आती अपूर्व जागृति

ऐसा अपूर्व समाधिमरण सिद्ध करनेवाले पू.श्री ब्रह्मचारीजी आज देहरूप से तो विद्यमान नहीं, परन्तु उनके जीवन में बुनी हुई परमकृपालुदेव के प्रति परमभक्ति की भावना उनके अक्षर देह-वचनों के द्वारा आज भी मुमुक्षुओं को जागृत करती है; मोक्ष का अपूर्व मार्ग बताकर कल्याण का कारण बनती है।

धन्य है पवित्र पुरुषों के परम उपकार को

धन्य है ऐसे पवित्र पुरुषों के परम उपकार को जिन्होंने परमकृपालु सद्गुरु श्रीमद् राजचंद्र प्रभु का शरण दिलाकर हमारे आत्मा का अनंत हित किया। प्रतिउपकार करने में सर्वथा असमर्थ ऐसे हम, आपके चरणार्विंद में कोटि कोटि प्रणाम करते हैं।

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

૭૯

સં. ૧૯૯૬ કાર્તિક શુ. ૮ 3

त्यागी બ્રહ્મચારી ભાઈઓને પાળવાના
— નિયમો —

૧- ત્યાગી બ્રહ્મચારી ભાઈઓ બ્રહ્મચારીણી આદિ કોઈ સ્ત્રીને અડે નહિ.
૨- ત્યાગી બ્રહ્મચારી ભાઈઓએ બ્રહ્મચારિણી આદિ બેનોને રાંધેલો ખોરાક આપવો નહિ.
૩- ત્યાગી બ્રહ્મચારી ભાઈઓએ બ્રહ્મચારિણી આદિ સ્ત્રીઓને પોતાનાં કપડાં ધોવા ન આપવાં.
૪ ત્યાગી બ્રહ્મચારી ભાઈઓએ અનાજ સાફ કરવાનું વગેરે કામ ત્યાગી બ્રહ્મચારી બેનોને બતાવવું નહિ; તેમજ રસોઈ કરવા કોઈ પણ બેનોને બોલાવવાં નહિ; કપડાં સીવવા વગેરે માટે પણ ત્યાગી બ્રહ્મચારી બેનોને ન આપવાં.

त्यागी બ્રહ્મચારી બેનોને પાળવાના
— નિયમો —

૧- ત્યાગી બ્રહ્મચારી બેનો બ્રહ્મચારી આદિ કોઈ પુરુષને અડે નહિ.
૨- ત્યાગી બ્રહ્મચારી બેનોએ બ્રહ્મચારી આદિ ભાઈઓને રાંધેલો ખોરાક આપવો નહિ.
૩- ત્યાગી બ્રહ્મચારી બેનોએ બ્રહ્મચારી આદિ ભાઈઓને પોતાનાં કપડાં ધોવા ન આપવાં.
૪- ત્યાગી બ્રહ્મચારી બેનોએ કોઈનું તથા આશ્રમનું અનાજ સાફ કરવા, રસોઈ કરવા વગેરે કામ કરવું નહિ. માંહોમાંહે બેનોમાં એક બીજાનું કામ કરવાની છૂટ છે. તેમજ બ્રહ્મચારી ભાઈઓને કપડાં વગેરે ખરીદવા કે સીવડાવવા વગેરેનું કામ ન સોંપવું.

पू. श्री ब्रह्मचारीजी के परिचय में आए गए मुमुक्षुओं द्वारा बताए हुए

प्रेरक प्रसंग

सूरत में प.पू.प्रभुश्रीजी रहते थे उस मकान में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षुओं सहित

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी एक अध्यात्मयोगी पुरुष थे। उनके समागम में आनेवाले को उनके प्रति आश्चर्यभाव सहित पूज्यभाव होता और उनके चारित्र का मन पर अविस्मरणीय प्रभाव पड़ता। उनकी सहज वाणी जीवनभर तथा दुविधा के प्रसंग पर मार्गदर्शकरूप साबित होती। उनके समागम में आये हुए अनेक मुमुक्षुओं ने अपने आत्महित के लिए लिखे गये अथवा किसी की प्रेरणा से लिखे गये ऐसे प्रसंग बताये हैं। वे प्रत्यक्ष समागम के प्रसंग सभी के लिए प्रेरणारूप होने से यहाँ पर दे रहे हैं।

श्री मनहरभाई गोरधनदास कड़ीवाला

सूरत

परमार्थ के सिवाय पूजा सत्कार का भाव नहीं

प.पू. श्री ब्रह्मचारीजी के साथ मेरे लगभग १२ वर्षों के संबंध के बारे में कहना है कि जैसे जैसे उनका परिचय होता गया वैसे वैसे उनके गुण विशेष प्रकार से जानने को मिले। आश्रम के सिवाय अन्य स्थानों पर भी उनका परिचय हुआ था जैसे–

१० दिन ववाणिया में,
३० दिन उभराट दरिया किनारे,
४० दिन आबू में,
१८ दिन डुमस दरिया किनारे,
२३ दिन डुमस दरिया किनारे दूसरी बार

इसके अलावा यात्रा में तथा आश्रम में और सूरत जिले के लगभग हर गाँव में जहाँ मुमुक्षु रहते हैं मैं उनके साथ रहा हूँ। उनके साथ सभी परिचयों में मुझे एक बात स्पष्ट जानने को मिली कि उनको परमार्थ के अलावा दुसरा पूजा, सत्कार आदि का बिलकुल भाव नहीं था। उनके समागम के दौरान जो जो प्रसंग बने हैं उनमें से थोड़े प्रसंग नीचे बताता हूँ :–

पर्व तिथि पर उपवास अन्य दिनों में एकासणा

हमारी विनंती से, पू.श्री ब्रह्मचारीजी संवत् १९९९ के पोष सुदी १३ के दिन शाम को सात बजे की लोकल ट्रेन में हमारे घर में चित्रपटो की स्थापना हेतु पधारे थे। अगले दिन चौदस थी इसलिये उनका उपवास था। **पूज्यश्री दूज, पांचम, आठम, ग्यारस, चौदस वगैरह तिथिओं को उपवास करते और अन्य दिनों में एक बार भोजन लेते-एकासणा करते थे।**

चाहे जैसे प्रसंग में भी धीरज रखना

पूनम के दिन दोपहर में ११.३० बजे स्थापना का मुहूर्त था। जिस कमरे में स्थापना करनी थी वहाँ बीस दोहों का अर्थ मुझे तथा उर्मिलाबहन को समझाया था। उर्मिलाबहन ने उस वक्त स्मरणमंत्र नहीं लिया था इसलिए उन्हें संबोधित करते हुए कहाः **"बीस दोहे, यमनियम, क्षमापना, आत्मसिद्धि तवज्ञान में से पढ़ना, विचार करना, फिर जब मन में रुचि जगे तब नियम लेना।"** और साथ में यह भी कहा कि, **"चाहे जैसा प्रसंग हो फिर भी धीरज रखना।"** उसी पूनम के दिन रात को उर्मिलाबहन के पति श्री अमृतलाल की घोड़ागाड़ी में दुर्घटना हुई और नितंब की हड्डी टूट गयी।

समझ गये ऐसा मानने से अटक जाते हैं

इंदौर वाले भाई के पास वचनामृत पत्र ८१६ पढ़वाया। "ध्यान के अनेक अनेक प्रकार है।" तब उस भाईने पूछा : "समझ में आ जाए तब ही आगे बढ़ सकते हैं न ?"

पूज्यश्री ने कहा - कृपालुदेव लिखते है कि **"यह जीव एक अक्षर भी समझा नहीं है।"** समझ गया हुँ ऐसी बुद्धि रखने से आगे नहीं बढ़ पाते; अटक जाते हैं।

"सत्पुरुष के एक-एक वाक्य में, एक-एक शब्द में अनंत आगम निहित हैं।" (वचनामृत पत्र १६६)

मालिक के बिना पशु सुने

(इन्दोर, सं. २००१)

इंदौर में पूज्यश्री के साथ, सभी मंदिरों के दर्शन किए। दूसरे दिन सुबह श्री...के आमंत्रण से उनके बंगले स्वाध्यायभुवन में गये। श्री...दिगंबर पंडितों के साथ 'समयसार' ग्रंथ का स्वाध्याय कर रहे थे।

शाम को हम सूरत जानेवाले थे इसलिए पूज्यश्री से मिलने गये। पूज्यश्री ने कुछ बोध दिया फिर कहा "श्री...का पुण्य प्रभाव देखा ? सब कुछ करते हैं परन्तु स्वच्छंद हैं। 'मालिक के बिना पशु सुने।' ? धन्य हैं अपने मुमुक्षुओंको कि जिनके सिर पर परमकृपालुदेव जैसे समर्थ नाथ हैं। उनको देवगति तो अवश्य है।" (अगास आश्रम सं.२००१ के पर्युषण में)

श्रीमद् राजचंद्र लिखित पत्रों का अवतरण

श्री मणिभाई कल्याणजी मुंबई से, खंभात के श्री अंबालालभाई के हाथों से नकल किए हुए पत्रों का संग्रह 'श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत' लाये थे, जो कि खंभात के मुमुक्षु मंडल की पुस्तक थी। पूज्यश्रीजी के देखने के बाद वह पुस्तक मुझे देखने के लिए - दर्शन के लिए दी। परमकृपालुदेव की आज्ञा से श्री अंबालालभाई ने सभी मुमुक्षुओं के पास से कृपालुदेव लिखित पत्रों को मंगवाकर उनकी नकल उतारकर वह पुस्तक तैयार की थी। श्री अंबालालभाई के हस्ताक्षर मोती के दानों जैसे एक समान थे। उनमें अनेक पत्रो में परमकृपालुदेव ने स्वयं सुधार किया था; और श्री अंबालालभाई से कहा था कि इस तरह से पुस्तक छपवाना। वह पुस्तक खूब दर्शनीय थी।

अपनी होशियारी त्याग कर ज्ञानी कहें वैसा करना

(अगास आश्रम, आसो सुद १४, सं. २००१)

मैंने, पू.प्रभुश्रीजी के बोध वचन पूज्यश्री की आज्ञा लेकर लिखे फिर उस पुस्तक के शुरुआत के पन्ने पर पूज्यश्री को अपने हस्ताक्षर में कुछ लिखने के लिए कहा, तो उन्होंने निम्न गाथा लिख कर दी ।।

(हरिगीत)

'टळे छे दशा परिभ्रमणनी', विश्वास विण विचार क्यां ?
रे ! श्रवण पण ना ओळखे, भक्ति न भाव विचार ज्यां,
'वाते वडां ना थाय' मंडी पड विनय-भक्ति सजी,
जे जागशे ते छोड़शे, कर समझ निज डहापण तजी ।

'अपूर्व अवसर', पद काउसग्ग में बोलना

संवत् २००२ के कार्तिक वदी सातम को पूज्यश्री संघ के साथ ववाणिया यात्रा पर गये । वहाँ तलावडी वगैरह भिन्न-भिन्न स्थानों पर जाना होता था । अधिकतर वहाँ सब जगह **'अपूर्व अवसर'** का पद बोलते थे । एक दिन शाम को रविमाता के मंदिर में वे 'अपूर्व अवसर' का पद बोले । लौटते वक्त रास्ते में मैंने पूज्यश्री से कहा कि **'अपूर्व अवसर'** की आखरी गाथाएँ याद नहीं रहती, भूल हो जाती है । तब पूज्यश्री ने कहा कि **''वारंवार बोलने से स्मरण में रहेंगी''** और कहा : "किसी दिन **'अपूर्व अवसर'** का पद काउसग्ग में बोलना ।" ऐसा करने से मुझे वह पद उसी समय याद हो गया ।

इससे पहले हमने क्या पढ़ा ? कहो

वहाँ रोज़ वचनामृत का वांचन होता । उसे शुरु करने से पहले रोज़ पूज्यश्री सबसे पूछते कि इससे पहले हमने क्या पढ़ा है ? इसलिए जो वांचन होता उसे सब ध्यान से सुनते और स्मरण में रखते । बहुत अपूर्व बोध चल रहा था । श्री जवलबहन (श्रीमद्जी की सुपुत्री) तथा श्री भगवानभाई वहाँ रोज़ सुनने आते थे ।

रस रहित जो मिले उसे खा लेना

संवत् २००२ के चैत्र सुदी ८ को मैं आश्रम गया । उस वक्त आयंबिल की ओली चल रही थी । पूज्यश्री ने मुझसे पूछा कि "तुमने कोई आयंबिल किया है ?" मैंने कहा "नहीं किया ।" तब उन्होंने कहा : **"बहुत आनंद आता है, खाने की कोई उपाधि नहीं । रस बगैर जो मिले उसे खा लेना ।"** यह सुनने के पश्चात् मैंने तीन दिन आयंबिल किया था ।

अपनी क्षमता पहचान कर कार्य हाथ में लेना

संवत् २००२ के जेठ सुदी ११ के दिन मैं अगास गया था । उस वक्त मेरा, श्री हीराभाई झवेरी के साथ, राजकोट में परमकृपालुदेव का देह जिस मकान में छूटा था, उस मकान को खरीदने के संदर्भ में पत्रव्यवहार चल रहा था । पूज्यश्री से पूछने पर उन्होंने कहा कि **"कार्य अच्छा हो फिर भी अकेले पूरा बोझ उठाना हो तो अपनी क्षमता का विचार कर वह कार्य हाथ में लेना चाहिए ।"** बाद में उस मकान को खरीदने का विचार छोड़ दिया था । (पत्रसुधा - पत्र ६५६ में इसका उल्लेख है ।)

दृढ़ निश्चय

संवत् २००५ के मार्गशीर्ष सुदी ८ के दिन पूज्यश्री, धामण मंदिर मार्गशीर्ष सुदी १० को होने वोले प्रतिष्ठा उत्सव के लिए पधारे थे ।

मार्गशीर्ष वदी बीज के दिन आश्रम लौटते वक्त सूरत आये थे । उस दिन वे आगम मंदिर के दर्शन के लिए गये । वहाँ ४५ आगमों की बड़े अक्षरों में मुद्रित प्रति (मूल ग्रंथ की नकल) थी । वह देखकर पूज्यश्री ने मुझसे कहा कि ऐसी एक प्रति मिले तो आश्रम के लिए लाना । फिर मैंने बहुत तलाश की परन्तु वह मिली नहीं । वहाँ से वे हमारे घर पधारे । सबको यह खबर मिल जाने से अनेक मुमुक्षु भाई-बहन दर्शन हेतु आये थे । पू. गांडाकाका वगैरह सभी ने सूरत में रुक जाने के लिए खूब विनंती की लेकिन पूज्यश्री के जाने का निश्चय दृढ़ था इसलिए किसी की बात मान्य नहीं हुई ।

शीघ्र आश्रम में आ जाना

स्टेशन पर पूज्यश्री ने गांडाकाका से कहा कि, "आप भी हो सके उतना जल्दी आश्रम में आ जाए ।"

पश्चात् पोष सुदी को पू. गांडाकाका आश्रम में गये थे और फागुन सुदी ८ की रात को सवा बजे हृदय थम जाने से मृत्यु हो गयी । उस निमित्त से हम सब अगास आये तब पूज्यश्री ने कहा **"उन्हें स्वयं जो करना था वे कर गये और हमारे हाथ में अभी भी मनुष्य देह है इसलिए पुरुषार्थ करें तो हम उनसे भी अधिक कर सकते हैं, इसलिए पुरुषार्थ करें । खेद न करें ।"**

पू. गांडाकाका के देह अवसान के निमित्त चैत्र वदी ६ के दिन सूरत से मंगुभाई सुखडिया को लेकर हम आश्रम आये । वहाँ घारी बनाकर प्रसाद आदि हुआ । इस अवसर पर मंगुभाई को संबोधित करते हुए पूज्यश्री ने बोध दिया :

अहोभाग्य हो तब दरवाज़े में प्रवेश होता है

"चाहे जिस भी निमित्त से यहाँ आना हुआ यह महत् पुण्य का उदय है। पूरा समय अन्य कार्यों में व्यतीत करते हैं उसमें से थोड़ा समय आत्मकल्याण के लिए निकालें। इनके यहाँ (मेरी ओर संकेत करते हुए) मंदिर है। वहाँ कभी-कभी दर्शन करने हेतु जाना। प्रभुश्रीजी ने कहा है कि जिसका अहोभाग्य होगा वही इस दरवाजे में प्रवेश पायेगा। चाहे जिस भी निमित्त से यहाँ आना हुआ, वह पूर्व के पुण्य के योग से हुआ है।" उस पर फिर एक दृष्टांत बताया :

पूर्व संस्कार के कारण उपदेश में रुचि

कोई दो मित्र थे। सारा समय साथ ही रहते। जहाँ जाते वहाँ साथ में ही जाते। एक बार मुनि के व्याख्यान में गये, वहाँ एक को पसंद आया, दूसरे को नहीं। तब दोनों के मन में विचार आया कि हम दोनों की पसंद एक जैसी होती है फिर यहाँ क्यों अंतर पड़ा ? यह बात मुनि से पूछी। मुनि ने जवाब दिया कि पिछले भव में दो चोर थे। दोनों साथ में चोरी करने जाते। एक बार पकड़े जाने के भय से दोनों भागकर जंगल में छुपने गये। एक चोर गुफा में छुप गया। वहाँ एक मुनि को समाधि में बैठा देख कर ऐसा भाव हुआ कि "यह मुनि कितने शांत और निर्भय हैं ! इसलिए इस भव में उसे मुनि के उपदेश में रुचि जगी और दूसरे के वैसे संस्कार न होने से उपदेश में रुचि नहीं हुई।"

(श्री अगास आश्रम, चैत्र वद १२, सं. २००५)

मोक्ष का उपाय-ज्ञानीपुरुष की आज्ञा से वर्तन करना

वचनामृत पत्र ४६० पढ़ रहे थे :

".....सद्विचार और आत्मज्ञान आत्मगति के कारण हैं।" आत्मगति अर्थात् क्या ? पूज्यश्री ने कहा : मोक्ष।

"उसका प्रथम साक्षात् उपाय ज्ञानी पुरुष की आज्ञा का विचार करना यही प्रतीत होता है। ज्ञानी पुरुष की आज्ञा का विचार करना अर्थात् क्या ? पूज्यश्री ने कहा : "ज्ञानी पुरुष के वचनों पर विचार करके उस अनुसार वर्तन करना यह 'आज्ञा का विचार' किया माना जाता है।

हम उपदेश देने के अधिकारी नहीं

संवत् २००५ के चैत्र वदी १३ के दिन शाम को, देववंदन से पहले, मैं पूज्यश्रीजी के पास सूरत जाने के लिए अनुमति लेने गया। देववंदन का समय था इसलिए अन्य मुमुक्षु वहाँ बैठे थे, वे सब उठकर गये तब तक मैं वहीं खड़ा रहा। पूज्यश्री भी उठे और पानी का उपयोग किया। फिर मेरे पास आकर अत्यंत गंभीर मुद्रा से, शांति से कहा कि "परमकृपालुदेव के वचन पढ़ते हैं, तब ऐसा लगता है कि **हम एक शब्द भी किसी को उपदेश देने के अधिकारी नहीं। जब तक केवलज्ञान न हो तब तक उपदेश दे नहीं सकते। मौन रहना चाहिए।** कृपालुदेव के वचन अत्यंत गंभीर है। गंभीरता से उनपर विचार करना चाहिए।" इस घटना के बाद जब भी धर्म के विषय में बात करने में आये, तब अंतरंग में उस वक्त की उनकी मुद्रा हाज़िर हो जाती और कहती कि 'हम उपदेश देने के अधिकारी नहीं।' इस प्रकार चेतावनी देती थी।

जैसा भक्तिभाव वैसी वचन में श्रद्धा

पूज्यश्री के बोध में से संक्षिप्त नोंध–

उमराट दि. ०५-०६-४७

"परमकृपालुदेव पर जितना प्रेम आता है उतना भक्तिभाव बढ़ता है, उतनी उनके वचनों पर श्रद्धा होती है और आत्मा का विकास होता है (आत्मा की दशा वर्धमान होती है।)

एकाद घण्टा धर्मध्यान अवश्य करना

"मनुष्यभव को सार्थक कर लेना। जितना समय मिले उसका सद्उपयोग कर लेना। दृष्टांत :

एक लड़के को गन्ना खाना था। उसकी माँ ने उसे पैसे दिए। वह बाज़ार से गन्ना लेकर आया। उसकी माँ ने कहा : यह गन्ना खाने लायक नहीं है। उसकी जड़े एकदम कड़क है, इसमें से रस नहीं निकलेगा, उपर फीका लगेगा और मध्य भाग सड़ा हुआ है। वह बुद्धिशाली थी इसलिए गन्ने की गांठ के पासका हिस्सा काटकर जमीन में बो दिया। जिससे कि अगले वर्ष बढ़िया गन्ने हुए।

उसी तरह मनुष्य भव मिला है उसमें बचपन तो खेल-कूद में, नासमझी में और पढ़ाई करने में चला जाता है। जवानी में विवाह और बच्चों की देखभाल करने में, धन कमाने तथा ऐसी दुसरी प्रवृत्तियों में समय निकल जाता है। वृद्धावस्था में रोग हो जाते हैं, इंद्रियाँ काम नहीं कर पाती इसलिये खाट पर सोये सोये परवशता में समय व्यतीत होता है, परन्तु इन सब में भी गन्ने की गांठ की तरह यदि **प्रति दिन एकाद घण्टा धर्मध्यान, वांचन-विचार में सदुपयोग करें तो अगले भव में धर्मसाधन की अनुकूलता मिलती है।"**

अगास आश्रम श्रावण सुदी १४, सं.२००४

'वचनामृत' है वह प्रत्यक्ष कृपालुदेव समान

"श्रद्धा नहीं है इसलिए मानने में नहीं आता। सत्पुरुष पर दृढ़ विश्वास आने से यह श्रद्धा आती है। वह आने के लिए परमकृपालुदेव के वचनामृत का अध्ययन करना, विचार करना। **'वचनामृत' है उसे प्रत्यक्ष कृपालुदेव समान ही समझना।** इतनी श्रद्धा नहीं हुई है इसलिए यह मान्य नहीं होता। ऐसी दृढ़ श्रद्धा रखना। उनके एक-एक वचन को लेकर पूरे दिन उसका रटन करना।" **"आप परिपूर्ण सुखी हैं।" "आत्मा परमानंदरूप ही है।"**

आबू, वैशाख सुदी १५, संवत् २००५

अपनी योग्यता और सत्पुरुष दोनों की आवश्यकता

देलवाड़ा से दो मुनि (कच्छी) आये थे। उनके साथ खूब बातें हुई, चर्चा हुई। मुनियों ने पूछा : अनादिकाल से सब कुछ किया फिर भी सफलता नहीं मिली इसका क्या कारण ?

पूज्यश्री ने कहा : स्वच्छंद के कारण **"रोके जीव स्वच्छंद तो, पामे अवश्य मोक्ष"**

प्रश्न - स्वच्छंद कैसे छूटे ?

उत्तर : **"सद्गुरुना उपदेशथी स्वच्छंद ते रोकाय।"**

प्रश्न : सद्गुरु की क्या परीक्षा ? कैसे पहचान सकेंगे ?

उत्तर : योग्यता चाहिए। बोध प्राप्त करने योग्य भूमिका चाहिए।

प्रश्न : इतना काल व्यतीत हुआ उसमें भूमिका तैयार नहीं हुई होगी ?

उत्तर : परन्तु उस वक्त सद्गुरु का योग न हुआ हो तो अकेली भूमिका क्या करेगी ?

प्रश्न : अनादिकाल में क्या सत्पुरुष नहीं मिले होंगे ?

उत्तर : तब भूमिका तैयार न थी। प्रमाद का प्रवर्तन अधिक था इसलिए विशेष लाभ न ले सके। शिथिलता और ऐसे अन्य कारणों की वजह से भटका।

सद्गुरु की कृपा

वचनामृत पत्र ६७० पढ़ रहे थे। पत्र का शीर्षक था **"ॐ श्री सद्गुरुप्रसाद।"** मुझसे पूछा : 'सद्गुरुप्रसाद' का अर्थ क्या है ?

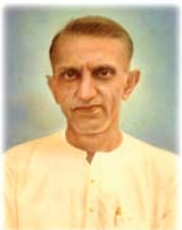

श्री मनहरभाई

मैंने कहा - सद्गुरु के वचनरूपी प्रसाद।

पूज्यश्री ने कहा - सद्गुरु की कृपा।

श्री अंबालालभाई जेसींगभाई पटेल

बोरिया

विषय कषाय की वृत्ति से लाभ में खामी

पू. प्रभुश्रीजी का समागम मुझे हुआ था, परन्तु उस वक्त मेरी उम्र छोटी थी। विषयकसषाय की वृत्तियाँ भी थी। इसलिए उस समागम का यथार्थ लाभ नहीं हुआ। परन्तु पू.श्री ब्रह्मचारीजी के समागम से मुझे अत्यंत लाभ हुआ। पूज्यश्री जो बोध देते वह थोड़ा बहुत नोटबुक में लिखा था। फिर उनके पास से भूल सुधार करवाई। वह बोधामृत के पहले भाग में छपा है।

'आप आराधना क्रम में हैं'

एक बार वह नोटबुक पूज्यश्री के पास रह गई थी। उसके आखिरी पन्ने पर, पूज्यश्री ने लिखा था : "आप आराधना के क्रम में हैं।" इससे अंतरंग एकदम शांत रहता है और उन्ही भावों में रहने की इच्छा होती रहती है। परन्तु कर्म आते हैं। यह व्यवहार और आश्रम के मेनेजमेन्ट के कार्य भी विकल्प का कारण तो बनते हैं। परन्तु पूज्यश्री ने आश्रम की सेवा का निर्देश किया है, इसलिए उस संदर्भ में कोई अन्य विचार नहीं है। मृत्यु पर्यंत सेवा करनी है यही भाव रहता है। (स्व. अंबालालभाई ने जीवन के अंत तक आश्रम के ट्रस्टी के रूप में और अंतिम वर्षों में सहायक व्यवस्थापक ट्रस्टी के रूप में सेवा दी है।)

भाव का अनुसंधान

काम और उसके संबंध में विकल्प भी आते हैं परन्तु विकल्प चले जाने बाद फिरसे भावना का अनुसंधान हो जाता है। जिससे यह प्रतीत होता है वह यथार्थ ही है। जिसे पूर्ण निवृत्ति है, वो बहुत त्वरा से काम कर सकता है।

पू.श्री ब्रह्मचारीजी का बोध -

सम्यक्दर्शन के बाद मोक्षमार्ग की शुरुआत

प्रश्न - सच्चा धर्म कब होता है ?

उत्तर - सम्यक्दर्शन होने के बाद सच्चा धर्म होता है। कषायों की मंदता या तीव्रता से शुभ या अशुभ गति प्राप्त होती है। परन्तु सम्यक्दर्शन होने के बाद मोक्षमार्ग की शुरुआत होती है। उपदेशबोध से आरंभ-परिग्रह के प्रति रही वृत्ति मुड़ जाती है अर्थात् सिद्धांतबोध परिणमित होता है और फिर सम्यक्दर्शन होता है। संसार के स्वरूप तथा देह के स्वरूप का वारंवार विचार करना यह वैराग का कारण है।

भाव का टिकना वही परिणाम

प्रश्न - भाव और परिणाम इन दोनों में फर्क क्या ?

उत्तर - भक्ति में अथवा सत्पुरुष के बोध से भाव होते हैं। वे क्षणिक होते हैं। फिर जीव वहाँ से हटकर अन्य प्रसंगो में व्यस्त हो जाता है इसलिए भूल जाता है। परन्तु यही भाव अन्य प्रसंगो में भी कायम रहें उसे परिणाम कहते हैं।

वचनों पर विचार करें तो उल्लास आए

आठ दृष्टि की सज्झाय पढ़ना। गन्ने के टुकड़े को मुँह में रखकर गोल गोल घुमायें तो मिठास नहीं आती, लेकिन दाँतों से दबायें तो मिठास का अनुभव होता है। वैसे ही ज्ञानी के वचन पढ़ें, उन पर विचार करें तो उल्लास आता है।

जितने कषाय कम हुए उतना आत्मा निर्मल

आठ दृष्टि की सज्झाय है, वह अंतरंग परिणाम के बारे में है। प्रथम चार दृष्टि में जिन गुणों का वर्णन किया है, वह भूमिकारूप है। ऐसे गुण जीव में आयें तो योग्यता आती है, फिर व्रतरूप यमनियम हो या न भी हो। जितने कषाय कम होते हैं आत्मा उतना निर्मल होता है। पाँचवीं दृष्टि में क्षायिक समकित का वर्णन है। उपशम समकित थोड़े समय तक ही रहता है, फिर क्षयोपशम हो जाए तब निर्मलता नहीं रहती। सम्यक्त्व मोहनीय का उदय रहा करता है। जिससे कुछ मलिनता आत्मा में रहती है। जैसे, सोने की थाली हो परन्तु उसमें लोहे को कील मारी हो, इस प्रकार समझना। दोनों ही प्रकार की थालियों से एक जैसा कार्य तो लिया जा सकता है लेकिन लोहे की कील है उतनी एब गिनी जाती हैं। वैसे ही दोनों प्रकार के समकित में होता है। क्षयोपशम समकित कई बार आता है और जाता है। यदि उपयोग नहीं रहा तो इस भव में चला भी जायेगा। अधिक से अधिक वह छियासठ सागरोपम तक रह सकता है। इसलिए सचेत रहना यह ज्ञानी पुरुषों का निरंतर उपदेश रहता है।

आत्मसिद्धि के प्रत्येक वाक्य लब्धिरूप

महावीर स्वामी ने उपदेश में गौतमस्वामी को ये तीन शब्द कहे - उत्पाद, व्यय, ध्रुव और उससे गौतमस्वामी सब समझ गये; उसी तरह परमकृपालुदेव ने आत्मसिद्धि-शास्त्र की रचना की है। इसके प्रत्येक वाक्य लब्धिरूप हैं, ऐसा प्रभुश्री कहते थे। थोड़ा-थोड़ा करके भी कंठस्थ कर लेना। सिर्फ पढ़ लेने की बजाए मुखपाठ किया हो तो अधिक फायदेमंद है; क्योंकि मुखपाठ करने में उपयोग, पढ़ने से ज्यादा अच्छा रहता है। वृद्ध महिलाएं भी प्रतिदिन एक-एक गाथा मुखपाठ करके पूरी आत्मसिद्धि मुखपाठ कर रही हैं।

आज-कल करते करते अपूर्व योग खो बैठतें हैं

ऐसा दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त करके प्रमाद करना योग्य नहीं । परमार्थ साधने में प्रमादवश होकर जो ऐसा विचार करते हैं कि आज नहीं; कल करेगें; और जब कल आता है तो फिर कहते हैं - कल करेंगे । इस तरह कल-कल करते हुए जीवन पूर्ण हो जाता है, फिर भी यह मूढ़ जीव प्रमाद छोड़ नहीं सकता और प्राप्त हुआ यह अपूर्व योग खो बैठता है । जीवन पानी के प्रवाह के समान है । पानी बह जाए फिर वापस नहीं आता । वैसे ही जिंदगी बीत जाने के बाद कुछ नहीं हो सकता । बीते हुए समय में कुछ हो न सका, आनेवाले समय पर भरोसा रखना नहीं परन्तु वर्तमान समय का सदुपयोग कर लेना ।

श्री अंबालालभाई

सम्यक्दर्शन है यही इनकी छाप है

एक बार सीमरडावाले पूज्य मोतीभाई भगतजी ने स्वमुख से मुझे बताया था कि "प्रभुश्रीजी ने मुझ से कहा था कि भगत! इसे (ब्रह्मचारीजी को) सम्यक्दर्शन है यही इनकी छाप है। छाप की आवश्यकता नहीं।

पू. भगतजी ने फिर से मुझे बताया था कि पू. ब्रह्मचारीजी ने देहत्याग के दो-तीन दिन पहले भोजन के वक्त रसोई में आये तब मुझसे कहा था कि भगतजी! **हमें अब बुद्धिपूर्वक दोष नहीं होते। अबुद्धिपूर्वक हो तो हो सकते हैं।** (नाकोड़ा तीर्थ, माघ वद १३, सं. २०००)

वचन प्रत्यक्ष सत्पुरुष समान

पूज्यश्री से मैंने कहा : कृपालुदेव ने जगह-जगह पर लिखा है कि प्रत्यक्ष सत्पुरुष हों तो ही कल्याण है। कृपालुदेव तो अब परोक्ष हैं। तो अब किसे सत्पुरुष मानना?

पूज्यश्री ने कहा : आत्मा जिसे प्रत्यक्ष है। ऐसे प्रत्यक्ष सत्पुरुष के वचन हैं उन्हें प्रत्यक्ष सत्पुरुष समान जानकर उनपर विचार करें, उनका आराधन करें तो समकित की प्राप्ति संभव है।"

मंत्र स्मरण मे और शास्त्र में चित्त को लगाये रखना

एक मुमुक्षु ने पूज्यश्री से प्रश्न पूछा कि बहुत संकल्प-विकल्प होते हैं, इसलिए क्या करना?

पूज्यश्री : संकल्प विकल्प जो होते हैं वो पूर्व कर्म का फल है। उनसे घबराना नहीं परन्तु पुरुषार्थ करके उनको दूर करना। मंत्रस्मरण में अथवा अच्छे पुस्तको में अपने चित्त को जोड़े रखना। संकल्प-विकल्प नहीं करना। संकल्प-विकल्प किस बारे में होते हैं?

मुमुक्षु : "प्रत्यक्ष सद्गुरु और परोक्ष सद्गुरु के विषय में संकल्प-विकल्प होते हैं।"

जिसने आत्मा जाना ऐसे परमकृपालुदेव प्रत्यक्ष ही हैं

पूज्यश्री : "ऐसे कोई संकल्प-विकल्प करना नहीं। जिसने आत्मा को यथार्थ जाना है वैसे परमकृपालुदेव प्रत्यक्ष ही हैं। उनकी शरण में ही रहना। दूसरे किसी विकल्प में पड़ना नहीं। पुणे में जो प्रतिज्ञा ली थी वह याद है? वहाँ प्रभुश्रीजी ने सभी को प्रतिज्ञा दी थी कि 'संत के कहने से मुझे कृपालुदेव की आज्ञा मान्य है।' संत की आज्ञा से मुझे एक कृपालुदेव ही मान्य हैं। अन्य कोई नहीं। हमें प्रत्यक्ष की खोज कहाँ करनी है? **प्रभुश्रीजी ने खूब खोज़ करके अंत में कृपालुदेव को ढूँढ निकाला है और वही हम सबको मान्य करने के लिए कहा है, इसलिए दूसरा कोई संकल्प-विकल्प करना नहीं।** एक परमकृपालुदेव ने जैसे आत्मा जाना है वैसे ही मुझे मान्य है। वही मुझे देखना है और उनकी आज्ञा और वचनों का यथार्थ पालन करना है। **हमारे लिए परमकृपालुदेव प्रत्यक्ष ही है; ऐसा निश्चय रखना क्योंकि यदि वे प्रत्यक्ष होते तो उनके वचनों का ही पालन करना था।** दूसरा क्या करना था। इसलिए उनके वचन जो मिले है उन पर लक्ष्य रखकर वैसा ही प्रवर्तन करना। उन्होंने जो वचन कहे हैं, वे ही वचन कोई और कहे तो उसे सुनना, मान्य करना। परन्तु कोई विकल्प नहीं करना। सभी संकल्प-विकल्पों को छोड़कर एक परमकृपालुदेव सद्गुरु की शरण में रहना योग्य है। परमकृपालुदेव पर सर्व प्रकार से अर्पणबुद्धि रखना। **प्रत्यक्ष परोक्ष का कोई भी विकल्प नहीं करना। एक परमकृपालुदेव के आश्रय में रहकर उनकी आज्ञा का पालन करना है।"**

जैसे भाव होते हैं वैसे स्वप्न आते हैं

एक बार मैंने पूज्यश्री से कहा कि "आपको केवलज्ञान हुआ है ऐसा मुझे कल रात को स्वप्न आया।"

पूज्यश्री : किसे केवलज्ञान हुआ?

मैंने कहा : आपको। आकाश में से इतने सारे फूल बरसे कि मैं खड़ा था तो घुटनों तक फूलों से ढक गया। आकाश में देवदुंदुभि बज रही थी।

पूज्यश्री : (हँसते हुए) सपनों की बात सच्ची नहीं होती। परन्तु अच्छे स्वप्न आयें तो पुण्य बंधता है तथा खराब सपने आयें तो पाप का बंधन होता है। जैसे भाव होते हैं वैसे स्वप्न आते हैं। सपनों पर से यह पता चलता है कि हमारे भाव कैसे रहते हैं।

अगास आश्रम, जेठ सुदी ३, सं.२००८

ज्ञानी के वचनों का संग्रह हो तो विचार आते हैं

मैंने पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी से पूछा : "मैं पढ़ता हूँ परन्तु विचार नहीं आते ।" पूज्यश्री ने कहा : "आयेंगे ।" मन को रोकना। पहले पूँजी हो तो फिर व्यापार होता है न ? वैसे ही पहले तो ज्ञानी के वचनों का संग्रह करना है । आत्मा के लिए सब कुछ करना है, यह लक्ष्य रखें । हमें अच्छा बनना है । अच्छी अच्छी वस्तु, गुणकारी वस्तु ग्रहण करनी हैं । किसी को दुःखी नहीं करना । किसी की उत्तमता, उदारता के बारे में सुने तो मुझे ऐसा बनना है, ऐसी भावना रखनी । विशाल दृष्टि रखनी । बार-बार सुना होता है तो स्मरण रहता है और शुभ भाव आते हैं । जैसे-जैसे भाव बढ़ते जायेंगे वैसे वैसे फिर कैसे वर्तन करना ? क्या करना ? किस लिए करना ? ऐसे विचार आयेंगे । जब इच्छा जागेगी तब लगेगा कि आत्मा के हित के लिए करना है । यह लक्ष्य होगा ।

सत्संग, सत्शास्त्रों का परिचय रखना

"स्वरूपलक्षे जिन आज्ञा आधीन जो" स्वरूप का लक्ष्य रखकर भगवान की आज्ञा के अनुसार वर्तन करना । क्या करने से पाप, पुण्य, निर्जरा, आस्रव-बंध होता है ? कैसे जीना ? ये सारे विचार करने हैं । इस मनुष्यभव में उत्तम से उत्तम लाभ मिले ऐसा करना है । कार्य करना शुरू करें तो पता चलता है, विकास होता है । अपना जीवन कैसे व्यतीत करना ? इस पर सभी को विचार करना है । सत्संग, सत्शास्त्रों का परिचय रखकर उसमें से मुझे कैसे जीना, यह विचार करना । मोह है तब तक मुझे क्या करना ? इस पर विचार करना है । **"नथी धर्यो देह विषय वधारवा, नथी धर्यो देह परिग्रह धारवा ।"** पहले तो इन्हे दूर हटाना है । पाँच इन्द्रियो में खींचे नहीं जाना । उसमें समय नहीं गँवाना । उसी के संघर्ष में जिंदगी नहीं गँवाना ।

मोक्ष जाना हो तो उसे अन्य विचार नहीं करने

"मनुष्यभव के क्षण दुर्लभ है, इसलिए किसी क्षण हमें लाभ हो जाए वैसा करना है । कुछ नहीं तो स्मरण, वांचन, विचार करना । गलत आदतों में मन न जाए ऐसे करना हैं । सावधान रहने की आवश्यकता है । किसी वस्तु के प्रति आसक्ति होती है तो उसी के विचार आते हैं । यह सारा जगत ऐसा ही है । मन में जगह बना ले ऐसा नहीं करना । जिन्हे मोक्ष जाना है, उन्हें अन्य विचार करने ही नहीं । जो कंठस्थ किया है उसे दोबारा स्मरण में लाना, विचार करना, उसका अर्थ समझना । वो समझ में न आये तो दूसरों से पूछना । सुनने के बाद ग्रहण होता है, फिर समझ में आता है; जो नहीं समझ में आता उसे समझने का पुरुषार्थ करें । जो समझ गये उसे और विशेष समझने का पुरषार्थ करें । ये सब विचार के भेद हैं । **सब का सरल उपाय सत्संग है ।** सत्संग में दोष दिखते हैं । दोष को दूर करने का पुरुषार्थ होता है । विचार जगने पर प्रमाद में नहीं रहना। चाहे जितनी भी होशियारी हो यदि प्रमाद किया तो उसे खो बैठते हैं ।"

(अषाढ सुद १२, सं. २००८)

मैं देहादि स्वरूप नहीं ऐसा रटना

मैंने पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी से फिरसे कहा कि, "पढ़ता हूँ, सीखता हूँ फिर भी विचार नहीं आते ।" तब उन्होंने कहा कि, यदि विचार नहीं आते तो बार-बार "मैं देहादि स्वरूप नहीं", "मैं देहादि स्वरूप नहीं" ऐसा रटन करते रहना । विचार अपने आप आयेंगे ।

अगास आश्रम, आषाढ़ वदी ५, संवत् २००९

रुचि जगे तब जीव का कल्याण होता है

सुबह सभामंडप में वचनामृत के वांचन के दौरान किसी ने कहा कि **"बहु पुण्य केरा पुंजथी"** की रिकॉर्डिंग कराई हो तो जीवों में रुचि जाग सकती है और उस तरफ आकर्षित हो सकते हैं ।

पूज्यश्री ने कहा : "यह तो ठीक है परन्तु इससे कल्याण संभव नहीं है । रुचि जगती है तब ही कल्याण होता है । उलटी इससे सामान्यता आ जाती है जिससे, फिर कभी आश्रम में आयें तो सामान्यता हो जाने से माहात्म्य नहीं लगता । यह तो सुना है, मैं गाता हूँ न ? ऐसा हो जाता है । गीत गाते हैं वेसे यह भी हो जाता है ।"

संवत् २००८, पोष वदी १, गुडिवाडा

कहीं आसक्ति न हो इसकी सावधानी रखना

धर्मशाला में ऊपर के कमरे में पूज्यश्रीजी ठहरे थे वहाँ उनके लिए मैं गरम पानी का लोटा रखने गया, तब पूज्यश्रीजी ने पूछा, "जो पत्र सीखे है उन्हें दोहराता है ?"

मैंने कहा : 'हाँ जी ।"

पूज्यश्री : "रोज़ दोहराना । पत्रों को दोहराते वक्त विचार करना कि इसमें क्या कहा हैं ? जगत के निमित्त ऐसे हैं कि जीव को कहाँ से कहाँ ले जाते हैं । आसक्ति न हो जाय इसकी सावधानी रखना । समाधिसोपान में से जो पत्र नहीं सीखें हैं वे सीख लेना । प्रतिदिन कुछ न कुछ नवीन सीखते रहना ।"

मैंने पूछा : "आप जो वाणी बोलते हो, वह मैं लिखता हूँ । कोई एतराज़ तो नहीं है न ?"

पूज्यश्री : "कोई एतराज़ नहीं ।"

अगास आश्रम, चैत्र सुदी १३, सं.२००८ महावीर जयंती

संस्कृत का अभ्यास करना

सुबह पूज्यश्री ने मुझे संस्कृत का अभ्यास करने की आज्ञा देते हुए कहा कि "अनेक सत्शास्त्र मूल संस्कृत में हैं, संस्कृत का अभ्यास करने से वे समझने में आसान हो जाते हैं। परमकृपालुदेव के वचन भी विशेषरूप से समझ में आते हैं। एक वचन में अनंत आगम निहित हैं। वो समझने के लिए संस्कृत का अभ्यास करना है। कृपालुदेव ने प्रभुश्रीजी को वृद्धावस्था में भी संस्कृत का अभ्यास करने के लिए कहा था।"

अगास आश्रम, चैत्र सुदी १४, सं.२००८

वीतराग में और हमारे में भेद मत मानना

एक भाई पूज्यश्री के पास आये और कहा "मेरे घर ऋषभदेव और कृपालुदेव के चित्रपट रखे है। प्रातः पाँच बजे उठकर गुरुभक्ति करता हूँ। फिर ऋषभदेव के चित्रपट के समक्ष स्तवन आदि देवभक्ति करता हूँ। उसमें कुछ आपत्ति तो नहीं है न ?"

पूज्यश्री ने कहा : **"कुछ भी भेद न रखना। एक ही हैं। कृपालुदेव ने लिखा है कि वीतराग में और हमारे में भेद न मानियेगा। आत्मा की अनंत शक्तियाँ हैं।** परम पूज्य प्रभुश्रीजी ने कृपा करके इस भक्तिक्रम की योजना की है। उसे रोज़ करना, स्वच्छंद नहीं करना। उससे लाभ नहीं है। किसी को **'तत्त्वज्ञान'** नहीं देना। उनसे कहना कि अगास जायें, वहाँ ज्ञानी की आज्ञा से मिलता है। आपको विशेष लाभ होगा। भक्ति तो उत्तम है। दूसरी इच्छा नहीं रखते हुए **'परमशांतिपद की इच्छा रखना यही हमारा सर्वसम्मत धर्म है।'** प्रभुश्रीजी कहते थे कि जिनका महापुण्य होगा वही इस द्वार में कदम रखेगा।"

महापुरुष जो देते हैं वो आगे जाकर उगता है

देहविलय के चार-पाँच दिन पहले, पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी अपने निवासस्थान पर सुबह लगभग १०.३० बजे खाट पर सो रहे थे। मैं तथा अन्य दो-तीन मुमुक्षु चरणसेवा कर रहे थे। उस वक्त पूज्यश्री ने मुझसे कहा : "तुम्हें प्रभुश्रीजी का प्रसाद मिला है ?"

मैंने कहा : "प्रभुश्रीजी आहोर पधारे तब मैं लगभग छः महीने का था। मेरी माता परमपूज्य प्रभुश्रीजी के पास कोई खाद्य पदार्थ भेंट हेतु ले गयी थी। प्रभुश्रीजी ने वह ले ली थी और एक पका हुआ सुंदर आम देते हुए कहा कि तेरे घर छः महीने का शिशु जो झूले में झूल रहा है उसे इस आम के टुकड़े करके खिलाना। फिर मेरी माता ने मुझे वह आम खिलाया था, ऐसा मेरे पिताश्री कहते थे।"

उस वक्त पू.शनाभाई मास्टरने कहा कि, "यह तो छोटे थे, क्या पता चलेगा ?"

पूज्यश्री ने कहा : "चाहे वह छोटा हो, परन्तु महापुरुष हमारे अंदर ऐसा कुछ बीज डाल देते हैं जो हमें पता नहीं चलता परन्तु आगे चलकर वह उगता है।"

पुरुषार्थ करें तो सफलता मिलती है

वि.स. २००७ में पर्युषण के थोड़े दिन पहले मुझे आश्रम में रहने को मिला। उस दौरान एक दिन सुबह पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी परमपूज्य प्रभुश्रीजी के कमरे में बिराजमान थे और कुछ लिख रहे थे। मैंने उनके पास जाकर हाथ जोड़कर कहा कि "मुझे विवाह करने की इच्छा नहीं है और आगे का जीवन आश्रम में रहकर भक्ति कर के व्यतीत करने का भाव है। मेरी यह इच्छा सफल होगी या नहीं ?"

उन्होंने मेरे सामने देखा और हाथ लंबा कर हँसते हँसते कहा कि "सफल होगी। क्यूँ नहीं होगी ? पुरुषार्थ करना तो तेरे हाथ में है। यदि भाव है तो व्रत ले।" फिर पूज्यश्री कायोत्सर्ग में स्थित हो गये।

जलेबी वह अभक्ष्य वस्तु है

लगभग १४ वर्ष की उम्र में मैंने पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी से कहा कि "हलवाई के यहाँ की किसी वस्तु का उपयोग न करुँ ऐसा नियम मुझे दीजिए।" पूज्यश्रीने कहा कि "सभी वस्तुओं का त्याग नहीं कर सके वैसा है। इसलिए एक जलेबी नहीं खानी ऐसा नियम ले लो। जलेबी यह अभक्ष्य वस्तु है।" फिर मैंने वह नियम लिया था।

कुछ हो नहीं रहा ऐसा लगे तो पुरुषार्थ जागृत होता है

परमपूज्य ब्रह्मचारीजी के देहविलय के थोड़े दिन पहले (कार्तिक सुदी १,२०१०) हम तीन-चार मुमुक्षु पूज्यश्री की चरणसेवा कर रहे थे। उस वक्त उन्होंने हमसे पूछा "आपको ऐसा लगता है कि सारा समय यहाँ आश्रम में रहकर वक्त बरबाद हो रहा है, कुछ हो नहीं रहा ?"

तभी मैंने कहा : "बरबाद हो रहा है ऐसा तो नहीं लगता परन्तु कुछ हो नहीं रहा ऐसा जरुर लगता है।

पूज्यश्री ने कहा : "ऐसा हो तब पुरुषार्थ जागृत होता है, नहीं तो यह भाव हो जाता है कि आश्रम में रहते हैं न ? सब हो जायेगा एसा लगने लगता है।"

कषाय की उपशांतता आदि गुणों को प्रगट करना

बहुत उतावलापन नहीं करना । वैसे प्रमाद भी नहीं करना । तलवार की धार के समान है । बहुत उतावलापन करने जायें तो अधीरता आ जाती है जिससे फिर पुरुषार्थ नहीं होता । यहाँ रहकर कषाय की उपशांतता आदि गुणों को प्रगट करना है । आत्मा के हित के लिए यहाँ रह रहे हैं यह लक्ष्य रखना है । बीच में जितना समय मिले उसमें दूसरा पढ़ना, जानना है । इस बात का संतोष नहीं मानना की इतना पढ़ लिया । अब तो बस ! जिंदगीभर विद्यार्थी बने रहना है । थोड़ा सीखे तो भी कोई बात नहीं, परन्तु विचार करना सीखना है । इंद्रियों को नुकसान न हो और इंद्रियाँ अधिक लालुप भी न हों इसका नाम संयम है । बहुत उतावलापन नहीं करना है । शक्ति अुनसार तप आदि करना है । शरीर को भी नुकसान न हो तथा प्रमाद भी न हो इस तरह से करना है । नहीं तो शरीर बिगड जायेगा, फिर कुछ नहीं होगा । गांधीजी शरीर को गधा कहते थे, ज्यादा खा लें तो 'गधे ने ज्यादा खा लिया' ऐसा कहते थे ।

स्वप्न में परमकृपालुदेव के दर्शन

एक दिन स्वप्न के विषय में एक मुमुक्षु बहन ने बात की तब पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने बताया-आलोचनादि पद संग्रह में **'जिनवर दर्शन अधिकार'** है उस पर लिखने की मेरी इच्छा हुई तब विचार आया कि मुझे तो परमकृपालुदेव के दर्शन कभी हुए नहीं तो कैसे लिखना ? फिर रात को सपना आया कि बांधणी के मकान की ऊपरी मंजिल पर परमकृपालुदेव पधारे हैं । दातुन-पानी कर के दर्शन के लिए जाऊँगा । इतने में तो आँख खुल गई । दर्शन न हो पाये इसलिए खेद हुआ । रात बाकी थी इसलिए दुबारा सो गया । फिर से वही स्वप्न आया । मैं उपरी मंजिल पर गया । परमकृपालुदेव, कफ़नी वाला जो चित्रपट है, उस मुद्रा में बिराजमान थे । पू. सौभागभाई भी साथ में थे । उनके दर्शन करके अति आनन्द हुआ । फिर उठकर **'जिनवर दर्शन अधिकार'** काव्य लिखा । उसमें प्रथम प्रास्ताविक पद यह लिखा -

''धन्य रे दिवस आ अहो, प्रभु दर्शन आज पमाय रे,
सुधर्म प्रभात प्रगट थतां, दुःख स्वप्ननी रात्री गमाय रे. ।''

मुट्ठी की मार से पूरे शरीर में झनझनाहट

एकबार पूज्यश्री ने बताया की ''भगवती सूत्र में बात आती है कि श्री गौतमस्वामी ने श्री महावीर स्वामी से प्रश्न किया कि हे भगवान ! हम जब जमीन पर चलते हैं उससे पृथ्वीकाय के जीवों को कैसी पीड़ा होती होगी ? भगवान ने उत्तर में कहा कि कोई देव अपनी दोनो मुट्ठियाँ बंध करके किसी इन्सान के सिर पर ज़ोर से मारे उससे जितनी पीड़ा होती है, उतनी पीड़ा हमारे चलने से पृथ्वीकाय के जीवों को होती है ।'' फिर पूज्यश्री ने कहा : ''इस बात का मुझे अनुभव हुआ था । एक बार एक भाई मेरे पास मंत्र लेने आया, उसे मैंने मंत्र के सम्बन्ध में समझाया फिर उसे मैं परमकृपालुदेव के चित्रपट समक्ष नमस्कार करवाने के लिए ले गया । उसके शरीर में व्यंतर था । उसने मेरे सिर पर मुट्ठी बंध करके ज़ोर से मारा और भाग गया । पूरे शरीर में झनझनाहट हो गयी ।''

पू.श्री ब्रह्मचारीजी के बोध की हस्तलिखित नोट नं.१,२,३, में से :

'हमें भी साधु बनना है न !'

पूज्यश्री ने 'दशवैकालिक' सूत्र को जो कविता में गुजराती भाषांतर किया था उसे कंठस्थ करने के लिए ॐकार से कहा । ॐकार ने कंठस्थ करना शुरू किया और एक बार पूज्यश्री से पूछा कि : ''इसमें तो साधुओं के आचरण का वर्णन किया है । तो हमें कंठस्थ करने से क्या लाभ है ?'' तब पूज्यश्री ने कहा - 'हमें भी साधु बनना हे न ! '

पढ़ पढ़कर व्यवहारशून्य पंडित जैसे नहीं बनना

पूज्यश्री ने कहा - देवसीभाई बीमार हैं । तुम उनके यहाँ जाते हो ? ॐकार ने कहा : ना जी । पूज्यश्री ने कहा : वहाँ जाना । सेवा करना यह मुमुक्षु का धर्म है । भगवान ने मुनियों को भी परस्पर सेवा करने को कहा है । सिर्फ पढ़ते ही रहें तो फिर व्यवहार के बारे में कुछ पता नहीं चलता । पढ पढकर व्यवहारशून्य पंडित जैसे नहीं बनना । परमार्थ को प्रेरित करे ऐसा व्यवहार करने योग्य है । देवसीभाई के पास जाकर कुछ काम हो तो पूछना । शरीर दबाना हो तो दबा कर देना । (श्री ब्र.बो.ह.नो.नं.३ (पृ.१४२१)

जिसे गरज होगी वह करेगा

ॐकार ने कहा : आपने जो 'दशवैकालिक' का अनुवाद किया है वह कब प्रकाशित होगा ?

पूज्यश्री ने कहा : क्या प्रकाशित करें ? अभी टीका लिखनी बाकी है ।

ॐकार ने कहा : कब लिखना होगा ?

पूज्यश्री ने कहा : अभी आँखो की हालत ठीक नहीं है । इसलिए लिखना नहीं हो पा रहा ।

ॐकार ने कहा : तो ऐसे ही अधूरा रह जायेगा ?

पूज्यश्रीने कहा : किसी को गरज होगी वह करेगा । टीका साथ में हो तो समझ में आता है । (श्री ब्र.बो.ह.नो. नं.३ पृ.१४४९)

गहरा उतरने के लिए विचार की आवश्यकता है

पूज्यश्री ने मुझसे कहा : कुछ विचार करने को रक्खा है ?

मैंने कहा : नहीं जी । पूज्यश्री ने कहा : दिन में ीकसी भी समय में चाहे जो भी पद, पत्र अथवा पाठ का विचार करना । इसमें हमें क्या करने जैसा है ? इस प्रकार विचार करना । गहराई में जाना जरूरी है । गहराई में जाने के लिये विचारकी जरुरत हैं । विचार न करें और सिर्फ सीखना, सीखना करते रहें तो गहरे नहीं उतर सकते ।

(श्री ब्र.बो.ह.नो. नं.३ पृ.११६३)

सद्गुरु को भूला तो मान में चला जायेगा

ॐकार ने कहा : प्रभु मान तो बहुत आता है ।

पूज्यश्री ने कहा : मान करने जैसा कुछ हे ही नहीं । इस काल में ऐसा संहनन नहीं कि बारह बारह महीने उपवास कर सकें। इतनी शक्ति नहीं की अच्छी तरह से संयम पालन कर सकें। तो किस बात का अभिमान करना ?...सद्गुरु को भूलनेसे मान आ जाता हैं । सद्गुरु को नहीं भूलना यह मान दूर करने का उपाय है । जीव ऊँची श्रेणीवालो को नहीं देखता इसलिए मान आता है ।

पुद्गल के स्वरूप को जानें तो वैराग्य आयेगा

ॐकार ने कहा : **''पुद्गल ज्ञान प्रथम ले जाण''** ऐसा कृपालुदेव ने 'लोकपुरुष संस्थाने कह्यो' (वचनामृत पत्र १०७) इसमें कहा है उसका परमार्थ क्या होगा ? पूज्यश्री ने कहा : पहले पुद्गल के स्वरूप को जानें तब वैराग्यभाव उत्पन्न होता है । पुद्गल के विनाशी और क्षणिक स्वरूप को जानें तब उसका माहात्म्य नहीं लगता; फिर जीव ज्ञान प्राप्त करता है ।

(श्री ब्र.बो.ह.नो. नं.१ पृ.१३७)

देवलोक के देव तो, सत्देव की पूजा करते हैं

पूज्यश्री ने पारस से पूछा : तुने मोक्षमाला के कितने पाठ पढ़े हैं ?

पारस ने कहा : सात पढ़े हैं ।

फिर प्रभु ने आठवां पाठ 'सत्देव तत्त्व' को वहीं पढ़ने के लिए कहा । उसके पश्चात् पूज्यश्री ने कहा : देव अर्थात् क्या ?

ॐकारने कहा : राग द्वेष आदि अठारह दूषणों से रहित हैं वे देव ।

पूज्यश्री ने कहा : वे तो सत्देव कहलाते हैं । परन्तु देव किसे कहते हैं ? किसीने उसका उत्तर नहीं दिया तब पूज्यश्री ने कहा : जो देवलोक में रहते हैं वे देव कहलाते हैं । मनुष्य से भी ज्यादा सुख भोगते हैं, इसलिए वे देव कहलाते हैं; परन्तु सत्देव नहीं । बल्कि वे तो सत्देव की पूजा करते हैं ।

(श्री ब्र.बो.ह.नो.नं.१ पृ.१३६)

एक पत्र प्रतिदिन आधे घण्टे तक विचार करना

ॐकार ने कहा : पत्र तो दोहराता हूँ । परन्तु विचार नहीं आते ।

पूज्यश्री ने कहा : दूसरे सब पत्र दोहराने का रखना परन्तु एक पत्र प्रतिदिन आधे घण्टे तक बैठकर विचार करना । (श्री ब्र.बो.ह.नो.नं.२ पृ.४५६)

भूल हो जाए तो कृपालुदेव के समक्ष क्षमापना बोलना

ॐकार ने कहा : कल मैंने आयंबिल का पच्चखाण लीया था । उसके बाद भूल से मैंने कच्चा पानी पी लिया ।

पूज्यश्री ने कहा : याद आने के बाद फिर से तो नहीं पिया न ? ॐकारने कहा : नहीं ।

पूज्यश्री ने कहा : दुबारा ऐसा न हो इसका ध्यान रखना । (फिर से कहा) कृपालुदेव के चित्रपट के समक्ष क्षमापना बोलकर आओ । (श्री ब्र.बो.ह.नो.नं.१ पृ.१३७)

जितना होता हो उतना अच्छा

ॐकार ने कहा : चोविहार हो तब सुबह कितने बजे खाना ?

पूज्यश्री ने कहा : सूर्योदय के बाद । कुछ लोग दो घड़ी के बाद खाते हैं । जितना हो सके उतना अच्छा । (श्री ब्र.बो.ह.नो. नं.१ पृ.१८३)

समझ में न आए तो अर्थ पढ़ना

ॐकार ने कहा मैं रोज प्रतिक्रमण करता हूँ । परन्तु मेरा चित्त उसमें नहीं लगता और कुछ समझ में भी नहीं आता। इस तरह बिना समझे यदि करते जायें तो क्या होता है ?

पूज्यश्री ने कहा : समझ में ना आये तो उसके अर्थ है वो पढ़ना फिर ध्यान में रहता है । प्रतिक्रमण नहीं करना ऐसा भी नहीं है । नहीं करेंगे तो सीखा हुआ भी भूल जाएँगे । (श्री ब्र.बो.ह.नो.नं.१ पृ.१३९)

श्री ॐकारभाई

श्री सुमेरभाई फूलचंदजी बंदा

सूरत

पूज्यश्री की भगवान बनने की भावना

डॉ. भाटे के पास से सुना था : "पण्डितजी गुणभद्रजी कहते थे कि मैंने पू.ब्रह्मचारीजी के देहविलय के लगभग १५-२० दिन पहले पूछा था कि बचपन में आपकी क्या भावना थी ? उन्होंने कहा था कि **भगवान बनने की भावना थी।** मैंने पूछा : वह फलीभूत हुई ? पू. ब्रह्मचारीजी हँस दिये।"

एक बार अनेक मुमुक्षु भाई-बहनों के बीच पूज्यश्री ने कहा की "आत्मज्ञान न हो तब तक कुछ लिखना नहीं ऐसे रखना।"

वैराग्य के बिना आश्रय नहीं रहता

एक बार वणागनटवर की कहानी बहुत विस्तार से बताते हुए कहा : "आश्रय बहुत बड़ी बात है। आश्रय से तो एक-दो भव में मोक्ष हो जाए ऐसा है। इनका (कृपालुदेव का) आश्रय रखना। फिर भले ही एक-दो भव हों। परन्तु वैराग्य के बिना आश्रय नहीं रहता इसलिए वैराग्य को बढ़ाना है। वैराग्य के बिना आत्मा का विकास नहीं। वैराग्य मोक्ष का मार्गदर्शक है।"

इतने सारे मुमुक्षु कहाँ देखने को मिलते हैं ?

पुखराजजी ने कहा : प्रभु सुमेर ओर मेरा ईडर जाने का भाव है। पर्युषण में यहाँ बहुत लोग आयेंगे। इससे हमें कंटाला आता है। आपकी आज्ञा हो तो आठ दिन के लिए हम ईडर जायें।

पूज्यश्री ने कहा : "तुम्हें पर्युषण में यहाँ अच्छा नहीं लगता ? इसे तो प्रभावना कहते हैं। **इतने सारे मुमुक्षु कहाँसे देखनेको मिलते हैं ? धर्म की प्रभावना देखकर सम्यक्दृष्टि को हर्ष होता है। इससे कंटालने जैसा नहीं हैं। भक्ति, सेवा यह मुख्य बात है। अध्ययन करना है वह तो बराबर है परन्तु भक्ति मुख्य है। समूह में भक्ति करने से विशेष आनन्द आता है।**

पहले मैं जब यहाँ आता तब **'आत्मसिद्धि'** पढ़ता परन्तु कुछ ज्यादा समझ में नहीं आता था। परन्तु जब भक्ति में बैठता तब सब कुछ समझ में आ जाता और आनन्द आता। कंटालना नहीं। अरति होने से कर्म का बन्धन होता है। जो हो रहा है वह देखा करना। लिप्त नहीं होना ॥

(ब्र.बो.नो.नं.३ पृ.८१९)

सब वांचन परमकृपालुदेव के वचनों को समझने के लिए

पण्डितजी के पास हम संस्कृत पढ़ने तथा समझने के लिए जाते थे। उस संबंध में पूज्यश्री ने बताया कि :

परमकृपालुदेव के वचनों को समझने के लिए सब पढ़ता हूँ, सीखता हूँ ऐसा भाव रखना। मेरी समझ में आ गया ऐसे नहीं करना। परमकृपालुदेव जानते हैं और मुझे जानना है ऐसा भाव रखना। परमकृपालुदेव ने प्रगट किया वैसा ही मेरा आत्मा है।

वचनामृत पढ़ने के सम्बन्ध में :

वारंवार पढ़ें तब समझ में आता है

"रोज़ बड़े वचनामृत पुस्तक का वांचन करे। एक बार पढ़ लेने के बाद दुबारा पीछे से वापस पढ़ना। इस प्रकार बारबकार पढ़ें तब समझ में आता हैं। न समझ में आये तो कृपालुदेव जानते हैं ऐसा मानना। आगे चलकर समझ में आयेगा।"

नवी जिथरडी वडोदरा का गाँव में बोध देते हुए :

"आज ही मृत्यु है ऐसा मान लें तो थोड़े समय में बहुत काम हो जाये ऐसा है।

मन को निरन्तर स्मरण में रखना

डुमस में : "निठल्ले न बैठना। निठल्लापन सर्वनाश की ओर ले जाता है।

मन जो है वह एक समय में सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम की कर्म की स्थिति बाँध दे ऐसा है। उसे खाली न बैठने देना। इसलिए निरन्तर स्मरण में रहना। बिना बेतन के नोकर जैसे उसके पास से काम लेना है।"

सैर करने जायें तब स्मरण करें

पू. ब्रह्मचारीजी ने एक बार मुझसे पूछा : घूमने जाते हो तब क्या करते हो ?"

मैंने कहा : "कुछ नहीं।"

पूज्यश्री ने कहा : सेर करने जायें तब स्मरण करें, जो सीखा है उसे याद करें। घूमना तो सामान्य है।"

परमकृपालुदेव देह नहीं, परन्तु आत्मा हैं

'परमकृपालुदेव के देह की तरफ दृष्टि नहीं रखना है। आत्मा के प्रति दृष्टि रखना है।'

दूसरे एक अवसर पर उन्होंने कहा था : **"परमकृपालुदेव का जो देह है वह परमकृपालुदेव नहीं। उनका जो आत्मा है वह परमकृपालुदेव है।"**

आश्रम में अपने कमरे में–

सत् की भावना रोज करें तो सत् प्राप्त होता है

वचनामृत पुस्तक पढ़ें तब मन में यह भाव रखकर पढ़ना है कि अनेक विचार करने के पश्चात् ये वचन लिखे गये हैं।"

एक बार मैं अकेला था तब कहा : "सुबह उठकर 'हे प्रभु! मुझे सत् प्राप्त हो' ऐसी भावना करें तो सत् प्राप्त होता है।"

गुडिवाडा में पूज्यश्री ने कहा था :

सोने से पहले अठारह पापस्थानक का विचार करना

"सोने से पहले रोज़ अठारह पापस्थानक के संबंध में विचार करना। सुबह से शाम तक की प्रवृति का निरीक्षण करना। मुझ से कहाँ हिंसा हुई? कहा झूठ बोला? इस प्रकार पूरे दिन की प्रवृति को अठारह बार निरीक्षण करें। दोष हुए हों तो वहाँ से पीछे हटना और फिर अगले दिन लक्ष्य रखना। **इस प्रकार करने से, प्रतिक्रमण करने से भी अधिक फल प्राप्त होता है।"**

निर्जन स्थानो में ध्यान कायोत्सर्ग

पूज्यश्री जब दीर्घशंका के लिए जंगल में जाते तब कुँए के किनारे, वृक्ष के नीचे, किसी खंडहर में या पहाड़ के ऊपर ध्यान में बैठते या कायोत्सर्ग में खड़े रहते।

एकबार पूज्यश्री मुमुक्षुओं के साथ जालोर तीर्थ के दर्शन हेतु पधारे थे। नीचे की धर्मशाला में सब के रहने की

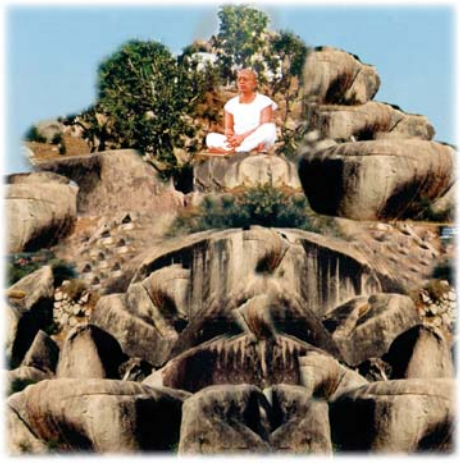

व्यवस्था थी। वहाँ से लोटा भरकर पूज्यश्री जंगल में गये। वहाँ **पहाड़ पर एक ऊँची शीला थी। वहाँ जाकर ध्यान में बैठ गये।** बहुत समय बीत जाने पर भी वे वापस नहीं लौटे तो मैं और श्री गटुलाल उन्हें देखने गये। वहाँ दूर से एक ऊँची पहाड़ी पर खड़े होते हुए वे दिखाई दिए। वहाँ से लौटते समय लौटे में जो पानी था उससे केवल पैर धो कर आते हुए दिखाई दिये।

आश्रम से आहोर जाते हुए :

जहाँ जायें वहाँ स्मरण करते जायें

एक बार मैंने कहा "प्रभु, आणंद जाना है।"

पूज्यश्री ने कहा : "स्मरण करते करते जायें। अन्य लोग दूसरी बातें करते हों उस पर लक्ष्य नहीं देना। स्मरण करना। चाहे जहाँ जाना हो तो भी पूछकर जाना। कुछ मंगवाना हो तो भी मंगवा सके।"

एक बार स्वच्छंद के विषय में बोलते हुए :

"कितने लोग **'सहजात्मस्वरूप परमगुरु'** की बजाए **'श्री सहजात्मस्वरू परमगुरु'** बोलते हैं। यह स्वच्छंद है। कहाँ से स्वच्छंद आ जाता है इसका जीव को पता ही नहीं।"

गुरु कृपालुदेव को मानना

श्री नेमिचंदजी ने एक बार प्रश्न किया : "परमकृपालुदेव तो परोक्ष है और प्रत्यक्ष ज्ञानी से कल्याण होता है ऐसा कहा है। तो किसे गुरु मानना?" पूज्यश्री ने कहा : **"कृपालुदेव को गुरु मानना। बाकी सब उपकारी हैं ऐसा समझना।"**

प्रतिदिन कुछ कुछ नया सीखना

मैं थोड़ा-थोड़ा करके द्रव्य संग्रह कंठस्थ करता था। पूज्यश्री ने कहा : "सिर्फ क्लास में जितना हुआ है उतना ही कंठस्थ करना, ऐसा नहीं है। आगे का भी कर लेना।"

दूसरे एक प्रसंग पर नासिक जाते हुए पूज्यश्री ने कहा : "नित्यक्रम पुस्तक में से सब कंठस्थ करना। यहाँ का भक्ति क्रम मुझे नहीं आता, ऐसा नहीं होना चाहिए। थोड़ा थोड़ा करके सब सीख लेना। कुछ न कुछ नया सीखते रहना। रोज़ कुछ न कुछ कंठस्थ करना। अधिक न हो तो एक पंक्ति, दो पंक्ति करना परन्तु रोज़ रोज़ कुछ न कुछ नया सीखना।

परमकृपालुदेव के समक्ष पुस्तक रखकर - **'हे प्रभु, आपकी आज्ञा से इतना कंठस्थ करूँगा'** ऐसी भावना करके कंठस्थ करना और सप्ताह में एक बार जो जो सीखा है वह फिर से सब दोहराना।"

परमकृपालुदेव का आत्मा अनंत सुखमय

एक बार आश्रम में राजमंदिर में बैठे थे तब मैंने पूछा : "शुद्ध भाव कैसे प्राप्त होंगे ?" पूज्यश्रीने कहा : (कृपालुदेव की ओर इशारा करके) **"यहाँ अनंत सुख है। ऐसी श्रद्धा रखना।"**

एक बार मुझसे प्रश्न किया : 'प्रभु अर्थात् क्या ?' मैंने तथा दूसरें मुमुक्षुओं ने इसका कुछ कुछ उत्तर दिया वह अब स्मरण में नहीं। फिर वे स्वयं बोले : **"हे प्रभु बोलते वक्त परमकृपालुदेव की ओर लक्ष्य जाना चाहिए।"**

एक बार अपने कक्ष से बाहर आते हुए कहा : **"बहु पुण्य केरा"** पर विचार करना।

स्वच्छंद रोकने से अवश्य मोक्ष होता है

एक बार कई मुमुक्षु भाई-बहन ऊपर कमरे में बैठे थे तब पूज्यश्री ने पूछा : "मोक्ष अवश्य कैसे प्राप्त हो सकता है ? क्या करे कि जीव का मोक्ष अवश्य हो ?" किसी को इसका जवाब सूझ नहीं रखा था। फिर उन्होंने स्वयं कहा : **"रोके जीव स्वच्छंद तो, पामे अवश्य मोक्ष।"** सभी लोगों को मन में महसूस हुआ कि यह तो रोज़ बोलते हैं फिर भी ध्यान में नहीं रहा।

आश्रम में :

जिसने व्रत लिया उसे अब प्रमाद नहीं करना

"एक आत्मा का ही कल्याण करना हो तो पढ़ाई करके कहाँ जाना है ? पढ़ना हो तो संस्कृत सीखने जैसा है। जैन के सभी शास्त्र संस्कृत में हैं।"

एक बार 'जंबुस्वामी चरित्र' पढ़ कर वापस देने गया तब पूज्यश्री ने कहा : **"जिसने व्रत लिया है उसे अब प्रमाद नहीं करना। थोड़ा पुरुषार्थ करे तो काम हो जाए।"**

बीस दोहों का अर्थ कृपा करके समझाया

एक बार चौदस की रात को भक्ति करते करते पूछा : "तुम्हें बीस दोहों का अर्थ पता है ?" थोड़ा-थोड़ा आता है" ऐसा मैंने कहा : तब पहली गाथा से पूरे बीस दोहों का अर्थ पूज्यश्री ने कृपा करके समझाया था। फिर अगले दिन लिखकर लानेको कहा तो लिखकर उन्हें बताया, उसे उन्होंने स्वयं देखा।

भाग्यशाली हो उसे आश्रम में रहना अच्छा लगता है

"संसार के भावों को छोड़कर यहाँ रहना कठिन है। भाग्यशाली हो उसे यहाँ अच्छा लगता है। यहाँ बहुत लोग आते हैं, परन्तु किसी-किसी को ही अच्छा लगता है। पहला बंध का कारण है और भक्ति मोक्ष का कारण है। मोज़शौख से उदास हो तब ये अच्छा लगता है। **प्रीति अनंती पर थकी जे तोड़े, ते जोड़े एह के परम पुरुष थी रागता।"**

पूछकर मुखपाठ करना

एक बार हम सेवा में थे तब पूज्यश्री ने पू. गोपालभाई से पूछा कि "अब क्या कर रहे हो ?"

गोपालभाई ने कहा : "प्रभु, मुखपाठ कर रहा हूँ।"

"क्या मुखपाठ कर रहे हो ?" ऐसा पूज्यश्री ने पूछा।

"जो पत्र अच्छे लगते हैं वो मुखपाठ करता हूँ" ऐसा गोपालभाई ने कहा।

पूज्यश्री ने कहा : "दवाखाने में अनके दवाईयाँ रखी होती हैं उनमें से क्या जो अच्छी लगे वो ले लेते हैं ? पूछकर मुखपाठ करना। जीव के लिए क्या हितकारी है वह जीव स्वयं नहीं जानना।"

बोध में आये हुए वचनामृत

आत्मा के लिए आश्रम में रहना है।

मोक्ष के सिवाय इधर उधर की इच्छा नहीं रखना।

इनके (परमकृपालुदेव के) शरण में सभी का कल्याण होगा।

कृपालुदेव के प्रति भक्तिभाव को बढ़ाना है।

मरण को याद करना, निरंतर याद करना, तो वैराग्य रहता है।

आश्रम में रहकर शम, संवेग आदि गुणों को विकसित करना है। मैं कुछ भी नहि जानता ऐसे करना है।

क्षायिक सम्यक्दर्शन होवे तब तक, 'मैं कुछ समझता हूँ' ऐसे भाव होते रहते हैं।

श्री छीतुभाई डाह्याभाई पटेल

भुवासण

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के हाथों से प.पू.प्रभुश्रीजी के चित्रपट की स्थापना

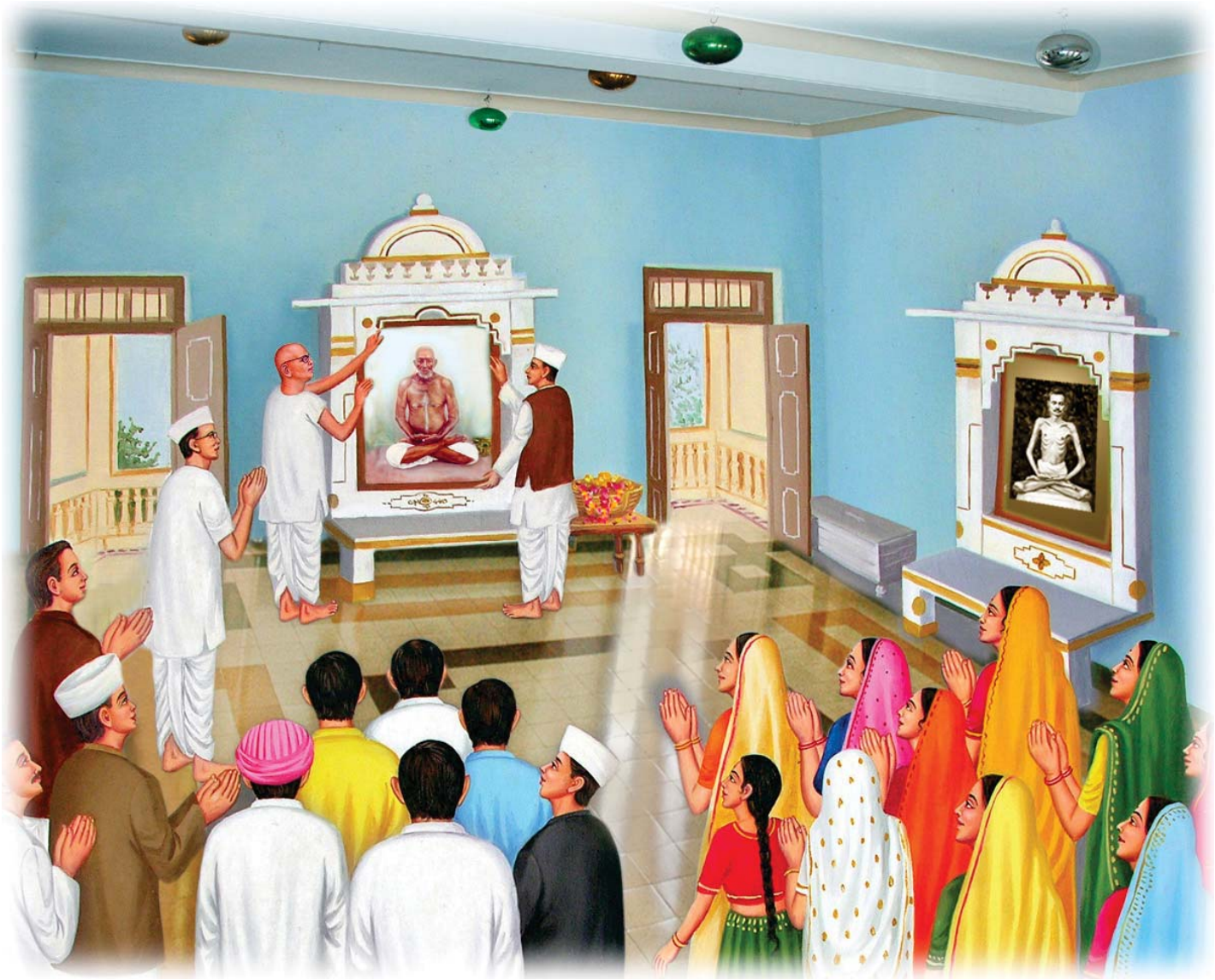

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी गोर्वधनदासजी, जिनको प.पू.प्रभुश्रीजीने, परमकृपालुदेव की दर्शायी हुई आत्मकल्याणकारी आज्ञा जिज्ञासु भाई-बहनों को देने का कार्य सौंपा था, उन महापुरुष संबंधी मुझे जो देखने-जानने को मिला और अनुभव में आया वह यथामति अनुसार कहता हूँ ।

संवत् २००९ के आसो वदी बीज के दिन राजमंदिर में प.पू.प्रभुश्रीजी के चित्रपट की स्थापना का चढ़ावा ६०० मण में हमारे भाई गोपालभाई ने लिया था । प्रतिष्ठा के वक्त श्री रावजीभाई देसाईने कहा : गोपालभाई उठिये । तब गोपालभाई ने पूज्यश्री से कहा : "प्रभु मैंने तो घी का चढ़ावा बोला है । चित्रपट तो आपके हाथों से ही प्रतिष्ठित करना है ।" तब पूज्यश्रीने कहा : "चित्रपट का एक कोना आप पकड़ीए ।" इस तरह पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के हाथों चित्रपट की स्थापना हुई थी ।

श्री गोपालभाई

एक हार छीतुभाई को देना

स्थापना के समय मैं वहाँ था । मुझे मन में विकल्प आया की प्रभुश्रीजी के चित्रपट पर गोपालभाई हार चढ़ायें, उसी वक्त परमकृपालुदेव के चित्रपट पर मैं फूल का हार चढ़ाऊँ तो कितना सुंदर हो ! इतने में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने श्री रावजीभाई देसाई से कहा : **''फूलों की टोकरी में से एक हार छीतुभाई को दो ।''** उसे लेकर मैंने परमकृपालुदेव के चित्रपट पर उसी समय हार चढ़ाया था ।

जैसे भाव वैसे प्रभु फल देते हैं

संवत् २००९ के आसो महीने में श्री देवशीभाई, पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के चरण दबा रहे थे । उस दौरान मेरा वहाँ जाना हुआ । तब मेरे मन में इसी प्रकार सेवा करने का भाव जागा । तभी पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी बोले : **''देवशीभाई, छीतुभाई को भी करने दीजिए ।''** फिर मैं चरण दबाने लगा । मंत्र **''परमगुरु निर्ग्रंथ सर्वज्ञ देव''** का निरंतर चालु था । साथ में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी भी मंत्र बोल रहे थे ।

श्री छीतुभाई

विनय के बदले में स्मरणमंत्र

संवत् १९८९ में भुवासन में दो घण्टों के लिए पू.प्रभुश्रीजी पधारे थे । उस वक्त हीराभाई फकीरभाई की पत्नी ने **प.पू. प्रभुश्रीजी का विनय किया, छींकनी की डिब्बी उनके सामने रखी ।** तब पू. मोहनभाई ब्रह्मचारीजी ने कहा : "माँजी, महाराजश्री स्त्री को छूते नहीं है, डिब्बी वापिस ले लो ।"

फिर संवत् २००९ में पू.श्री ब्रह्मचारीजी भुवासण पधारे तब दीर्घशंका के लिए बाहर जाते वक्त किसी के रास्ता बताए बगैर ही सीधे हीराभाई के घर गये और हीराभाई के पत्नी जिन्होंने प्रभुश्रीजी का विनय किया था उनसे कहा, "माँजी, हम बतायेंगे उस मंत्र की माला जपोगे ?" उन्होंने कहा "जी प्रभु !" फिर उन्हें स्मरणमंत्र दिया था । अंत में मृत्यु तक मंत्र का रटन तथा परमकृपालुदेव का शरण उन्होंने कायम रखा था ।

'आपके घर में उग्र स्वभाव का बैल है ?'

ईस्वी सन १९३६-३७ में मैं तथा घर के अन्य लोग आश्रम में थे, तब गाँव से तार आया कि हमारे पिताजी का स्वास्थ्य अच्छा नहीं है । तार लेकर हम पू. ब्रह्मचारीजी के पास गये । तार देखकर उन्होंने कहा : "**आपके घर पर उग्र स्वभाव का बैल है ?**" मैंने कहा: 'जी प्रभु ! उन्होंने पूछा : "**किसी को चोट लगाई है क्या ?**" मैंने कहा : ऐसा कोई संदेश नहीं है ।"

फिर भुवासण जाते हुए मेरी माँ से पूज्यश्रीने कहा : "**गाड़ी में बैठे बैठे स्मरण करना ।**" फिर हम भुवासण पहुँचे । जाँच की तो पता चला की बापूजी को बैल ने सींग से मारा और उस मार से वे बीमार पड़े थे । बाद में उनका स्वास्थ्य अच्छा हो गया और लगभग सात साल तक जीवित रहे ।

परमकृपालुदेव हमारे गुरु, उनकी भक्ति करना

अंभेटी गाँव के मुमुक्षु माधवभाई कालाभाई भक्त किसी महात्मा के कहने पर ॐ का जाप करते थे । गाँव के मुमुक्षु परमकृपालुदेव की भक्ति कर रहे थे जिसे सुनकर उन्हें भी भक्ति का रस जगा और पर्युषण में उनका आश्रम आना हुआ । तीन दिन के बाद मंत्र लेने के भाव से, वे पू. श्री ब्रह्मचारीजी के पास गये तथा मंत्र की माँग की । तब पू. श्री ब्रह्मचारीजी बोले : "**आप सोते समय ऊँगलीओं की पोरों पर ॐ का जाप करते हो ?**" उन्होंने कहा : "जी प्रभु, इस प्रकार करता हूँ ।" फिर राजमंदिर में ले जाकर मंत्र दिया । मंत्र देते वक्त पूज्यश्री ने कहा : "प्रभुश्रीजी के कहने से यह मंत्र देता हूँ । परमकृपालुदेव हमारे गुरु हैं । आपको उनकी भक्ति करनी है, मैं भी वही करता हूँ ।" तब माधवभाई बोले : "आप कहते हो कि परमकृपालुदेव हमारे गुरु है परन्तु वे तो विद्यमान नहीं । आप मुझे मंत्र दे रहे हो इसलिए आप मेरे गुरु ।" तब पूज्यश्री ने कहा : "मंत्रस्मरण देने की आज्ञा प्रभुश्रीजी ने मुझे दी है, इसलिए दे रहा हूँ । परन्तु भक्ति कृपालुदेव की करना । तब वे बोले : "आपके कहने से कृपालुदेव की भक्ति ही करुँगा । पर स्मरणमंत्र मुझे आपके हाथों मिला, इसलिए आप भी मेरे गुरु । क्योंकि परमकृपालुदेव ने प्रभुश्रीजी को आज्ञा दी और प्रभुश्रीजी ने आपको आज्ञा दी तो अ=ब और ब=क तो क=अ हुआ न ? पू. श्री ब्रह्मचारीजी हँसते हँसते बोले : आप तो रेखागणित का उदाहरण ले आये ।"

नरसिंह महेता की झोंपड़ी है

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी पथराडिया गाँव में ठहरे थे । एक बार लोटा लेकर वे जंगल में गये तब मैं और गोपालभाई भी साथ गये । पूज्यश्री ने कहा : "छोटुभाई का गाँव कितनी दूर है ?" तब हमने कहा : "नजदीक ही है ।" अतः ऐसे चलते चलते सीधे निझर गाँव छोटुभाई के घर पहुँचे । छोटुभाई और उनकी पत्नी जमनाबहन ने रात को भाव किया था कि पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी इतनी नज़दीक आये हैं, तो हम संघ को चाय-नाश्ता करायें तो कैसा रहे ! पूरे संघ को भोजन कराने की तो क्षमता नहीं । सुबह जमनाबहन ने छोटुभाई से कहा : मेरे पास २०० रु. हैं, तो हम संघ को चाय-नाश्ता कराये तो ? फिर छोटुभाई के घर पूज्यश्री थोड़े समय के लिए बिराजे थे और बोध दिया । घर से बाहर निकलकर रास्ते पर चलते चलते बोले कि "नरसिंह महेता की झोपड़ी है ।"

यह मंत्र तो संसार का ज़हर उतारने हेतु है

आस्ता गाँव में मकनभाई भवनभाई पटेल और उनकी पत्नी ने पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के पास स्मरणमंत्र लिया था । सुबह-शाम वे दोनों नियमित रूप से भक्ति करते थे । दोनों बहुत सरल तथा भद्रिक थे । खूब भक्तिप्रिय थे । गाँव में किसान जव बीज बोने जाते तो कई बार उन्हें साप डंसते थे । उस वक्त मकनभाई नहा-धोकर जहाँ सांप ने डंस मारा होता वहाँ कपड़े का टुकड़ा घुमाते हुए '**सहजात्मस्वरूप परमगुरु**' का मंत्र बोलते । जिससे सांप का जहर उतर जाता । वे दुबारा आश्रम में आये तब मैंने पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी से कहा कि "प्रभु ! यह मकनभाई कितनो के सांप का जहर उतारने के लिए मंत्र का उपयोग करते हैं । उससे ज़हर उतर जाता है ।" तब पूज्यश्री बोले : "यह मंत्र तो जन्म-मरण का फेरा दूर करने के लिए है । जीव को जो संसार का ज़हर चढ़ा हुआ है उसे उतारने के लिए है । इसका उपयोग लौकिक कार्य के लिए नहीं करना । अपने आत्महित के लिए ही उपयोग करना ।"

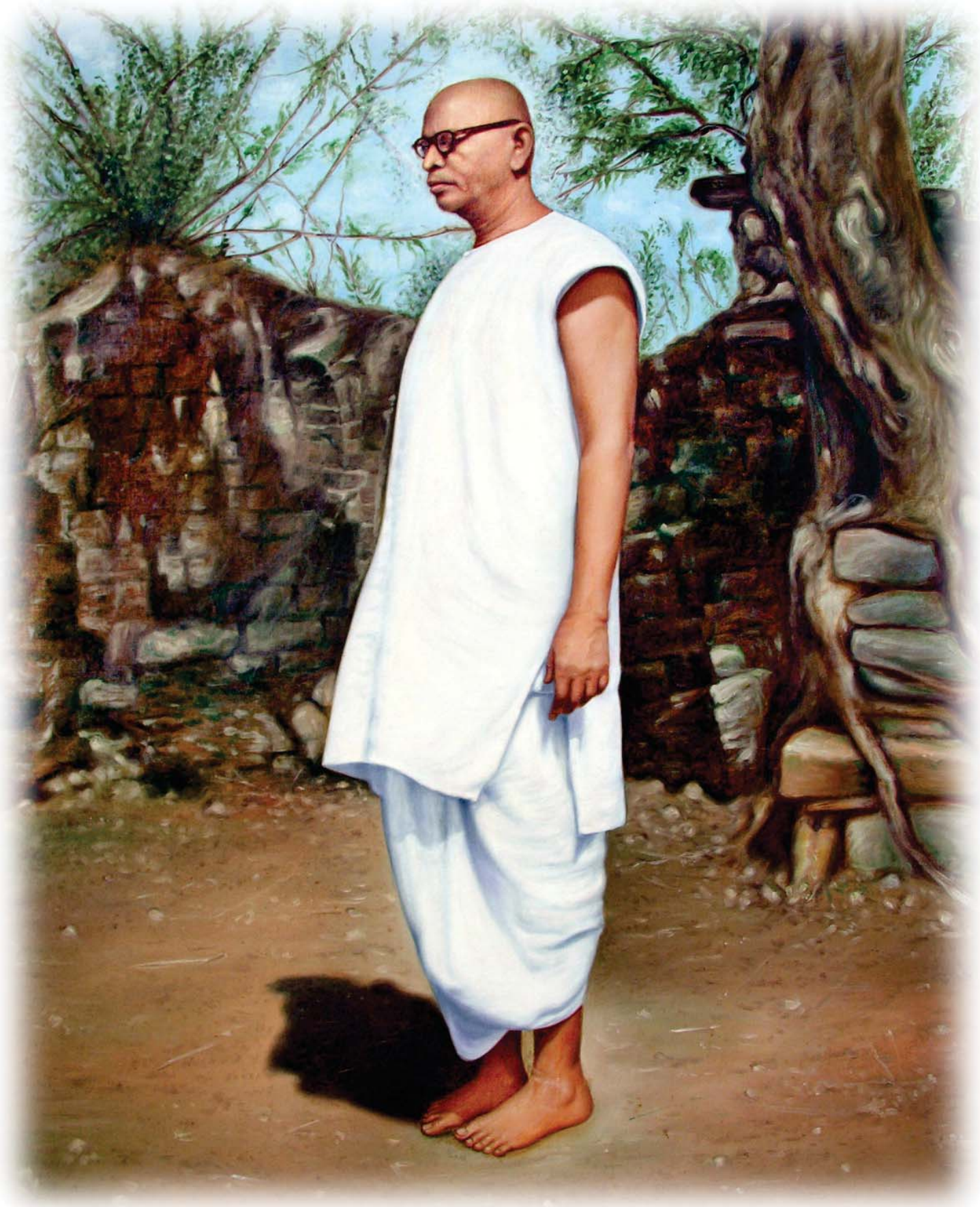

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

श्री नेमिचंदजी फूलचंदजी बंदा

आहोर

आत्मकल्याण के लिए सतत पुरुषार्थ करना

एक बार पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने मेरी ओर अमीभरी दृष्टि डालकर कहा : "जो करना है, वह अपने आत्मा के हित के लिए करना है । किसी को दिखाने के लिए नहीं करना यह लक्ष्य रखना है । जीवन बदल देना है ।" फिर चुटकी बजाते हुए बोले : "करने दे पुरुषार्थ ।" यह प्रसंग आज भी नज़र के सामने है ।

मुझे बहुत संकल्प-विकल्प होते थे । उस संदर्भ में मैंने पूज्यश्री से कहा "मुझे संकल्प-विकल्प बहुत आते हैं तो क्या करुँ ? पूज्यश्री ने कहा : "चिड़िया सिर के ऊपर से जाये तो जाने देना, परन्तु घोंसला बनाने नहीं देना । वैसे ही संकल्प-विकल्प आते हैं तब आने देना परन्तु उनमें लिप्त नहीं होना; नहीं तो कर्म बंधन होता है ।" ऐसा बहुत सा बोध दिया था । मुझे यहाँ बहतु व्याकुलता रहती और अनेक विकल्प आते ही रहते । इस संदर्भ में मैंने, पूज्यश्री से जब वे पू.प्रभुश्रीजी के पाट के पास अकेले बैठे थे, तब निवेदन किया । पूज्यश्री ने पास में रखी हुई पुस्तको में से मुझे 'मोक्षमाला' लाने को कहा । उसमें से 'शिक्षापाठ १९' 'संसार की चार उपमा' पढ़ने के लिए कहा । उस पाठ को पढ़ते हुए मेरी आँखो में से आँसू बहने लगे और मेरी व्याकुलता दूर हो गयी ।

स्वप्न में भगवान के दर्शन

मुझे स्वप्न में परमकृपालुदेव, प.पू.प्रभश्रीजी तथा पू.ब्रह्मचारीजी के दर्शन होते । कृपालुदेव के साफा बांधा हुआ है उस मुद्रा में दर्शन हुए । उस संदर्भ में मैंने पूज्यश्री से निवेदन किया तब पूज्यश्री ने कहा : "स्वप्न में भगवान के दर्शन होना शुभ है ।"

मंत्र मंत्र्यो...गाथा प्रतिदिन बोलते रहना

पूज्यश्री आश्रम से विहार करके सीमरडा गए थे तब मैं गुडिवाडा जाते हुए सीमरडा दर्शन करने हेतु गया । वहाँ से रवाना होते वक्त मुझसे पूछा : "मंत्र मंत्र्यो स्मरण करता...आता है ?" मैंने हाँ कहा । फिर मुझे वह गाथा रोज़ बोलते रहने की आज्ञा दी थी ।

ध्यान में 'अपूर्व अवसर' को श्रवण करने की आज्ञा

पूज्यश्री अनेक मुमुक्षुओं के साथ ईडर गये थे तब मैं भी साथ में गया था । ईडर से लौटते वक्त सब नरोडा आये थे और परमकृपालुदेव ने जिस स्थल पर मुनियों को बोध दिया था, उस स्थान पर स्मारक के रूप में एक चबूतरा बनाया गया था । दर्शन करके सब उस पर बैठे थे । फिर पूज्यश्री ने सभी को आँखे बंद करके ध्यान में बैठने के लिए कहा और श्री वस्तीमलजी को 'अपूर्व अवसर' पद बोलने के लिए कहा । इस तरह सभी ने ध्यान मैं बैठकर 'अपूर्व अवसर' यह पद शांतचित्त से श्रवण किया ।

फिर से दिया मंत्र

मैंने प.पू.प्रभुश्रीजी की उपस्थिति में छोटी उम्र में मंत्र लिया था । फिर पू.ब्रह्मचारीजी जब अहमदाबाद पधारे तब मैं वहाँ गया था । तब मैंने पूज्यश्री को कहा कि मंत्र लिया है, परन्तु बराबर ध्यान में नहीं है, इससे पूज्यश्रीने तत्त्वज्ञान देकर उसमें सब लिख कर दुबारा मंत्र दिया था ।

स्मरणमंत्र का उच्चारण शुद्ध करना

एक बार गुडिवाडा जाना था तब पूज्यश्री ने कहा : "गाड़ी में स्मरण करते रहना । कंठस्थ किया हुआ दोहराना । कोई न कोई सत्शास्त्र पढ़ते रहना ।

ईडर पहाड़ पर चढ़ते हुए एक भाई से माला बोलने के लिए कहा । दूसरे मुमुक्षु पीछे से दोहरा रहे थे । वे भाई 'आतम भावना भावता जीव लहे केवलज्ञाना रे' ऐसे बुलवा रहे थे । उन्हें रोककर पूज्यश्री ने कहा 'जीव लहे केवलज्ञान रे' ऐसे बोलना, 'ज्ञाना रे' नहीं ।

चित्रपटो में रंग भरने की आज्ञा

एक बार पूज्यश्री ने मुझे प.पू.प्रभुश्रीजी की छपी झरोखे वाली तस्वीर में रंग भरने को कहा । उस अनुसार मैंने अनेक तस्वीरों में 'वोटर कलर' ब्रश से भरे थे । वो तस्वीरें पुज्यश्री मुमुक्षुओं को देते थे ।

'आप्त पुरुष गुरुराज' का काव्य रोज़ बोलने की आज्ञा

पूज्यश्री के देहविलय के ४-५ दिन पहले ही मैं आहोर गया था । मेरे लौटने के पश्चात् भाई सुमेर से पूज्यश्री ने कहा था कि इसे (नेमिचंद को) पत्र लिखकर 'आप्त पुरुष गुरुराज मुज, दीनानाथ दयाल' रोज़ बोलने के लिए कहना । भाई सुमेर का पत्र मुझे मिला उसके १-२ दिन पश्चात् ही पूज्यश्री के देहविलय का तार मिला था ।

श्री नेमिचंदजी

श्री मणिभाई फुलाभाई पटेल

सुणाव

अनाज का व्यापार पाप का है

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी लगभग संवत् १९९५ की ग्रीष्म ऋतु में खेडब्रह्मा पधारे थे तब स्टेशन पर सोजित्रावाले रावजीभाई के वहाँ दोपहर का भोजन करके अंबाजी माताजी की धर्मशाला में आराम करने के लिए संघ के साथ पधारे । वहाँ मेरी अनाज किराने की दुकान थी । उस वक्त मेरे गाँव सुणाव के पू. बेचरकाका ढूँढते ढूँढते मेरी दुकान पर आये । आश्रम से संघ आया है यह जानकर आनंद हुआ । पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी की यह मेरे लिये प्रथम मुलाकात थी । परन्तु उनकी विनम्रता तथा त्याग देख मुझे महसूस हुआ कि ये कोई असाधारण व्यक्ति हैं । पूज्यश्री ने मुझे पूछा : "किसका व्यापार करते हो ?" मैंने कहा: "अनाज किराने का, भोजन की कच्ची सामग्री का ।" तब उन्होंने मुझे बताया कि "अनाज का व्यापार पाप का है ।" संजोगवश उस व्यापार को १०-१२ वर्ष मुझे चलाना पड़ा परन्तु उनकी सीख से इस व्यापार के संबध में मेरे मन में खेद रहता था ।

जंगल में बाघ था फिर भी दूर जाकर रात को ध्यान

उसके बाद एक बार पूज्यश्री ईडर पधारे तब पहले से ही पत्र लिखकर मुझे ईडर आने के लिए कहा था । मैं वहाँ गया था । वहाँ खूब भक्ति होती थी । २-३ दिन घंटिया पहाड पर रहे थे । वहाँ जंगल में एक बाघ रहता था इसलिए सभी को सूचना दी गयी थी की दीर्घशंका वगैरह के लिए बहुत दूर नहीं जाना परन्तु पूज्यश्री तो रात को काफी दूर जाकर ध्यान करते थे । पूज्यश्री की ऐसी अडग निर्भयता देख मेरी श्रद्धा ओर अधिक प्रबल हो गयी थी ।

हमारा कल्याण, ऐसे निःस्पृह पुरुष ही कर सकते हैं

संवत् २००३ के फाल्गुन महीने में मैं प्रथम बार आश्रम आया था तथा वैष्णव संप्रदाय की रीत के अनुसार रु.१००/- गुरुदक्षिणा के रुपमें उनके चरणों में रखे । पुज्यश्री ने आग्रह करके पैसे वापस जेब में रखने को कहा और पूछा कि "तू तेरी दुकान में रोज़ कितना कमाता है ?" मैंने जवाब दिया कि "१०-१२ रुपये रोज़ कमाता हूँ ।" तब पूज्यश्रीने कहा कि **"तू ऐसा समझ कि मेरी दुकान १० दिन तक खुली ही है । यह रुपये वापस ले जा और १० दिन यहाँ आश्रम में रहकर भक्ति सत्संग कर ।"** ऐसे निःस्पृह पुरुष को देखकर मुझे खूब खूब गहरी श्रद्धा हुई कि आज तक सब लूटेरे महाराज मिले । परन्तु हमारा सच्चा हित तो ऐसे सच्चे निःस्पृह पुरुष ही कर सकते हैं ।

ये पुरुष जो कह रहे हैं, वही धर्म है

संवत् २००४ में पूज्यश्री सुणाव में एक महीना तथा २ दिन रहे थे तब मन को खूब खूब तृप्ति हो वैसे संघ की सेवा, भक्ति तथा सत्संग का अवसर मिला। और ये पुरुष जो कह रहे हैं वही धर्म है, परमकृपालुदेव की आराधना करने से ही मोक्ष है ऐसा दृढ़ हुआ। जवानी में भी धर्म करना योग्य है यह ज्ञात हुआ। मार्गशीर्ष माह के पूनम को सबका खाना रखकर (स्वामीवात्सल्य) के मेरे यहाँ चित्रपट की स्थापना करवाई। उस वक्त मेरे घर के सभी लोगों ने मंत्र लिया।

पुण्य अनुसार चाहे जहाँ से भी मिल जाता है

एक बार सत्संग में प्रश्न पूछा "सब कुछ पुण्य के अनुसार हो जाता है; तो एक आदमी है, शरीर से कमज़ोर है और मात्र एक बीघा ज़मीन की खेती कर सकता है, दूसरा कोई व्यवसाय नहीं और पुण्य में लाख रुपये मिलने वाले हों तो किस प्रकार मिलते हैं?" तब पूज्यश्री ने कहा : "पुण्य कहीं नहीं जाता, खेती करते हुए ज़मीन में से सोने से भरा घड़ा मिल जाय।"

ज्ञानी कहें उसे सत्य मानना

सन् १९४६ में व्यापार करने हेतु मैं अमृतसर (पंजाब) जा रहा था। उस वक्त, पूज्यश्री के दर्शन करके जाऊँ इस विचार से आश्रम पर आया। उनके साथ बात की तो उन्होंने कहा : "पैसे कमाने के लिए वैसे अनार्य जैसे देश में क्यों जा रहे हो?" फिर भी मैं जवानी के जोश में गया। सन् १९४६-४७ में व्यापार किया और जो कुछ कमाया था वह दंगा होने से वहीं छोड़कर खाली हाथ वापस लौट आया।

अल्पमति काम निकाल लेगा, सयाना रह जायेगा

हमारे गाँव में जेसंग नाम का एक मुमुक्षु लड़का अल्प बुद्धि का और मासूम था। उसने मंत्र देने के लिए पूज्यश्री से खूब आग्रह किया तब उसे मंत्रदीक्षा देने के लिए पूज्यश्री उठकर खड़े हुए। उस वक्त एक भाई ने कहा : "ज़रा देखना, यह तो अल्पमति है।" तब पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने कहा : "ऐसे अल्पमति ही काम निकाल लेंगे और सयाने रह जायेंगे।" और सही में ऐसे ही हुआ। जब भी जेसंग खेत में चारा लेने जाता या कोई अन्य काम के लिए जाता तब भी उसके मुखसे मंत्र का रटन निरंतर रहता। उसकी मृत्यु के समय भी जब तक शुद्धि थी तब तक मंत्रस्मरण चालु था और मंत्रस्मरण करते करते ही उसने देहत्याग किया, ऐसे उसकी माताजी कहती थी।

अनार्य जैसे क्षेत्र में किसलिए जाते हो

दूसरी बार ई.सन. १९५० में बिहार जाने के लिए निकला। तब भी पूज्यश्री ने यही सीख दी थी : "अनार्य जैसे क्षेत्र में किसलिए जाते हो? जरूर पड़ेगी तब पैसे मिल जायेंगे।" फिर भी मैं तीन साल बिहार में रहा। परन्तु अंत में पूँजी में से दो-तीन हज़ार रुपये कम करके वापस लौटा।

पूज्यश्री ने कहा वैसा ही हुआ

एक बार आणंद में मेरे मित्र की दुकान का उद्घाटन नये वर्ष के दिन था। मेरे मित्र ने दर्शन करने के लिए मुझे आश्रम पर छोड़ा और कहा कि "शाम की पाँच बजे की गाड़ी में तू आणंद आ जाना। छः बजे का मुहूर्त है।" शाम को पूज्यश्री के दर्शन करने गया, सूचित किया तब पूज्यश्रीने मुझे कहा : **"आज रात को समाधिमरण की माला का जाप है, तो तुम यहीं पर रह जाओ।"** मैंने कहा : "यदि मैं आणंद नहीं गया तो मेरे मित्र को दुःख होगा।" पूज्यश्री बोले : **"समय पर यदि गाड़ी ही आणंद नहीं पहोंची तो मित्र को किस प्रकार खुश करेगा?"** मैंने कहा : "ऐसा कैसे होगा?" मैं आणंद जाने के लिए रवाना हुआ। आणंद स्टेशन आनेवाला था और किसी कारणवश आधे घण्टे तक गाड़ी स्टेशन के बाहर ही खड़ी रही। फिर आणंद स्टेशन से मैं उद्घाटन स्थल पर पहुँचा, परन्तु देरी हो जाने से मेरे मित्र उद्घाटन की विधि पूर्ण करके चाय नाश्ता करके चले गये थे। यह देख मुझे अत्यंत खेद हुआ कि पूज्यश्री ने कहा था वैसे ही हुआ। मैंने भक्ति भी खो दी और मित्र को भी खुश न कर पाया।

किसका गाँव और किसका घर

पूज्यश्री सुणाव से आश्रम तक पैदल चलकर आ रहे थे । बीच में बांधणी गाँव आया तब मैं खास उनके पीछे नज़दीक चल रहा था । चलते हुए दायीं ओर पूज्यश्री का मकान जिस गली में था वह स्थल आया । तब पूज्यश्री ने उस ओर दृष्टि तक नहीं की और जैसे कि यह गाँव उनका है ही नहीं, और न ही घर उनका है इस प्रकार सामने भूमि पर नज़र टिकाये एकदम अनजान हों ऐसी वैराग्यदशा से चल रहे थे ।

'कर्म के अनुसार सब बंटा हुआ ही है'

एक बार आश्रम में उनके कक्ष में पूज्यश्री के सामने २-३ मुमुक्षुओं के साथ मैं बैठा था । तब उनके पुत्र जशभाई की पत्नी परदेश से आयी थी । वे कहने लगी की बापुजी, एक बार घर आईए और हम सब को न्याय से ज़मीन वगैरह बाँट दीजिए । तब पूज्यश्री ने कपाल पर हाथ रखकर कहा : **''सब बंटा हुआ ही है । हर एक को अपने पुण्य अनुसार मिलता है ।''** ऐसे कहकर मानों जशभाई की पत्नी के साथ उनकी कोई पहचान ही न हो ऐसे मुख मोड़ लिया और मुमुक्षुओं के साथ सत्संग-बोध की बातें करने लगे ।

देह देह का काम करता है, हमें अपना काम करना है

संवत् २००७ में खेडब्रह्मा दुकान पर जाते समय पूज्यश्री के दर्शन करने के विचार से मैं आश्रम आया । सुबह दरवाज़े के पास पहुँचा तो चुनीलाल दरबान ने कहा कि पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी तो आज सुबह ही सीमरडा गये हैं । यह सुनकर चुनीलाल से रास्ता पूछकर दरवाज़े से ही मैं सीमरडा की ओर चलते हुए निकल गया । वहाँ भगतजी के घर की ऊपरी मंजिल पर पूज्यश्री के पास गया । पूज्यश्री के पैर पर रेल्वे की पटरी लगने से अंगूठा एकदम काला पड़ गया था और निम्बू के जितना सूज गया था । तुरंत ही सीमरडा से पेटलाद मेरे पहचान वाले वैद्य से दवा लाकर, उसे कूटकर, गरम कर के उसका लेप लगाया । सेवा करते वक्त देखा तो जाँघ के अगले हिस्से में भी खून जमा हो जाने से काले धब्बे पड़ गये हैं । वहाँ गरम पानी से सेंक किया । फिर शाम को वंदन करने का समय हुआ तब पूज्यश्री उठे । मैंने कहा : थोड़ा आराम करें, चलने से लेप निकल जायेगा । पूज्यश्री ने कहा : **''देह देह का काम करता है और हमें अपना काम करना है ।''** ऐसा कहकर सीढ़ियाँ उतरने लगे, वंदन करवाया और वांचन भी किया ।

श्री मणीभाई

एक प्रसंग पर पूज्यश्री ने मुझे कहा : ''मुमुक्षुओं की सेवा चाकरी करना वह भी धर्म की आराधना ही है ।''

जब देखो तब एक आत्मा की ही बात

गुप्ततत्त्व की आराधना गुप्त रीत से करके अपना तथा सर्व मुमुक्षुओं का हित करके पूज्यश्री चले गये । अहो ! उनका उपकार ! अहो उनकी करुणा ! हर वक्त एक आत्मा की ही बात उनके मुख से निकलती थी ।

स्टेशन पर दुकान करने जैसा नहीं

एक बार मैंने उनसे सलाह मांगी कि अगास स्टेशन पर कोई दुकान शुरू कर दूँ तो दिन में पेट भरने जितना मिल जाए और रात को भक्ति में आना हो जाए । तब वे बोले : ''स्टेशन पर दुकान करने जैसा नहीं । भावना करो तो भक्ति और पेट दोनों का हो जायेगा ।'' श्री दयालालजीभाई लल्लुभाई पटेल

पैसे का महात्म्य है वैसे धर्म का हो तो मुखपाठ होगा

किसी को छः आठ माह पहले कुछ मुखपाठ करने की आज्ञा दी हो, और वह जब दुबारा दर्शन करने आता तब उसे स्मरण कराते थे कि जो कहा था वह मुखपाठ किया ? हमारे मन तो पूज्यश्री एक ही थे लेकिन मुमुक्षु तो अनेक थे, फिर भी सबका ध्यान रखते । मुझे 'अपूर्व अवसर' मुखपाठ करने को कहा था, वह २-३ महीने के बाद जब मैं आया तब मुझसे पूछा । मैंने कहा ''मुखपाठ नहीं होता ।'' तब पूज्यश्री बोले : ''तमन्ना हो तो होता है । जीव को पैसे का जितना माहात्म्य लगता है उतना धर्म का नहीं लगा है ।''

श्री दयालजीभाई लल्लुभाई पटेल

सूरत

कृपालुदेव, प्रभुश्रीजी की बातें सुनकर बहुत आनंद आता

हमारा ज़री कारीगरी का धंधा था । उसके लिए मुझे अक्सर खंभात जाना पड़ता था । आते जाते वक्त मैं अगास उतरकर दर्शन करके जाता ।

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने मुझे बताया : "खंभात में श्री त्रिभोवनभाई के वहाँ जाना, वे पुराने मुमुक्षु है; कृपालुदेव के समय के हैं, उन्हें सद्गुरु वंदन कहना । वे तुझे कृपालुदेव की बातें बतायेंगे ।"

खंभात में त्रिभोवनभाई के वहाँ गया तथा पू.श्री ब्रह्मचारीजी ने सद्गुरुवंदन कहा है, ऐसा कहकर मैं वहाँ बैठा । तब त्रिभोवनभाई ने बताया :

"हम कृपालुदेव के साथ रात को आठ बजे गाँव के बाहर जाते, वहाँ तालाब था । तालाब के पास कैसे चलना वे हमें बताते थे । पानी के जीव दिन में तो छिपकर रहते हैं, परन्तु रात को बाहर आते हैं । जीव पानी से बाहर निकलें और तब हम चलते हों तो उन्हें पता चल जाता है कि कोई है तो भय की वजह से वापस पानी में चले जाते हैं । यह कृपालुदेव ने हमें सिखाया था । तब से दया का पालन करना मुझे समझ में आया । इसके पश्चात् भोगीलालभाई के वहाँ जाने को कहा था और सद्गुरुवंदन कहने को कहा था । खंभात में प्रभुश्रीजी के समय के पुराने मुमुक्षु थे । वे भी प्रभुश्रीजी की बातें करते । वह सुनकर खूब आनंद आता था ।

अन्य धर्मवालों को भी दर्शन कराना

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने 'सद्गुरुप्रसाद' ग्रंथ मुझे दिया, तब ढाई घण्टे बिठाकर दिया था । पू.श्री ब्रह्मचारीजी, पू.श्री प्रभुश्रीजी के कक्ष में छोटे स्टूल पर बैठे थे । मुझे कहा : "बैठकर तुम मेरे सामने देखते रहो ।" सवा घण्टे तक मैं सामने देखते हुए बैठा रहा । वहाँ मुमुक्षु बहनें भक्ति पद बोल रही थीं । उस ओर मेरी नज़र चली गयी तो पू.श्री ब्रह्मचारीजी फिर से बोले : "बराबर सामने देखते रहो" । फिर ढाई घण्टे हो गए तब "सद्गुरुप्रसाद" मुझे दिया और उसमें परमकृपालुदेव के पाँच अलग-अलग अवस्था के चित्रपटो के दर्शन कराये और कहा : "अन्य धर्म वाले हों उन्हें भी दर्शन करवाना; उनका भी भला होगा ।"

सुबह चार बजे उठकर वांचन करने से बहुत लाभ

मैं 'समयसार नाटक' नामक पुस्तक लेकर पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के पास आज्ञा लेने गया । तब उन्होंने कहा : "अन्य पुस्तकों की तरह इसे नहीं पढ़ना । **सुबह चार बजे उठकर इस पुस्तक का वांचन करना ।**" इसलिए सुबह चार बजे उठकर मैं वांचन करता और उससे मुझे बहुत लाभ हुआ ।

चित्रपट के सामने बैठकर भक्ति करना

हमारे घर में हम रात को गरमी लगने के कारण छत पर बैठकर भक्ति करते थे जब मैं अगास गया तब मुझसे पूछा : "कहाँ बैठकर भक्ति करते हो ?" तब मैंने बताया : "छत पर बैठकर करते हैं ।" तब पूज्यश्री ने दृष्टांत देते हुए कहा : "दुकान बंध करके घर पर बैठें तो ग्राहक आता है ?" दुकान बंद देखकर चले जायेंगे । इसलिए जहाँ चित्रपट हो वहाँ बैठकर भक्ति करना ।"

तब से हम चित्रपट के सामने बैठकर भक्ति करते हैं ।

मुझे बीड़ी का पच्चखाण दीजिए

मुझे बीड़ी का व्यसन था । उन्होंने दृष्टांत देकर समझाया "एक किसान था, उसके घर में रुई भरी हुई थी। झूले में छोटे बच्चे को सुलाकर बीड़ी पीते पीते वह खेत में गया । बीड़ी की चिनगारी रुई पर पड़ने से आग लग गयी। दरवाजा भी बंद था । किसान जब खेतसे घर आया तो देखा कि बच्चा और घर दोनों जलकर राख हो गये थे ।" यह दृष्टांत सुनकर मेरी आँखो में आँसु आ गये और मैंने कहा : "मुझे बीड़ी का पच्चखाण दीजिए ।"

सिनेमा नाटक देखने योग्य नहीं

फिर पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने मुझसे पूछा : "**सिनेमा नाटक देखते हो ?**" तब मैंने कहा, "हाँ देखता हूँ ।" तब मुझसे कहा : "उसमें अभिनय करनेवाले शराबी और कुशील होते हैं । उनके शब्द भी सुनने लायक नहीं, चेहरा भी देखने लायक नहीं । उन्हें देखते हुए, उनका विचार करते मृत्यु हो जाए तो कुगति में जाना पड़ता है ।" यह सुनकर मैंने सिनेमा और नाटक का भी पच्चखाण ले लिया था ।

दिन में सोने की अनुमति नहीं

मुझे दोपहर में सोने के लिए मना किया। आठ दृष्टि की सज्झाय रोज़ दोपहर में प्रभुश्रीजी की देहरी के पास रायण के पेड़ के नीचे बैठकर मुखपाठ करके आने को कहा और मुखपाठ हो जाए तो उनके पास आकर बोलने को कहा। फिर मुझे उसका अर्थ भी समझाते थे। इस तरह चार दृष्टि मैंने मुखपाठ कर ली थी। फिर मेरा सूरत आना हो गया इसलिए बाकी की रह गयी।

भरतजी के पहाड़ पर पू. ब्रह्मचारीजी मुमुक्षुओं के साथ स्वाध्याय-भक्ति करते हुए

पूज्यश्री के बोध से मुमुक्षुओं की आँखो में आँसु

दक्षिण की यात्रा के वक्त मुझे पत्र लिखकर कहा : "करीब सौ मुमुक्षु भाई-बहन आने वाले हैं। रात के डेढ़ बजे गुजरात मेल मे सूरत पहुचेंगे। यदि विचार हो तो सूरत स्टेशन पर अपना बिस्तर लेकर आ जाना।" उस अनुसार मैं रात को डेढ़ बजे सूरत स्टेशन से संघ के साथ जुड़ गया। हुबली, बैंग्लोर, मैसूर, बाहुबलीजी (श्रवणबेलगोला) इत्यादि तीर्थों की यात्रा की थी। श्रवण-बेलगोला में पहाड़ पर बाहुबलीजी और भरतजी के पहाड़ पर प्रतिमाएँ हैं। वहाँ दर्शन के पश्चात् पूज्यश्रीने बोध दिया था। बोध में भाई-भाई की लड़ाई तथा संसार का स्वरूप सुनकर मुमुक्षुओं की आँखो में आँसु गिरने लगे। वहाँ से मूडबिद्री की यात्रा के लिये गये। फिर इंदौर होते हुए अजमेर गये थे।

जितना परोसने में आता था उतना ही खातें

एक बार पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के साथ बांधणी जाना हुआ। तब हम पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के घर गये, वहाँ उनके भाभी थे। उन्होंने हमें पू. श्री ब्रह्मचारीजी जिस कमरे में अभ्यास करते थे वह कमरा बताया; वहाँ सामने दीवार पर लिखा था :

"जो जो पुद्गल फरसना, निश्चय फरसे सोय;
ममता समता भाव से, कर्म बंध क्षय होय।"

बातों बातों में उनके भाभी ने कहा की पू. श्री ब्रह्मचारीजी को भोजन के वक्त जितना पिरोसा जाता उतना ही वे खाते, दुबारा नहीं माँगते। वे बहुत कम बोलते थे।

श्री शनाभाई मथुरभाई पटेल

अगास आश्रम

गुरु कहें वैसा करना

एक बार श्री शांतिभाई पटेल और मैं पू.श्री ब्रह्मचारीजी के साथ आश्रम के बाहर गये थे । तब रास्ते में पूज्यश्री ने कहा : "एक बार पू. प्रभुश्रीजी ने मुझे कहा कि इस घुटने पर पैर रख । मैंने पैर नहीं रखा । फिर जीभ बाहर निकालकर बतायी और कहा : ले, फिर जीभ पर रख । फिर मैंने घुटने पर पैर रखा ।"

पूज्यश्री ध्यान में, सामने बड़ा सांप फन फैलाकर

इतनी बात करके आगे चलने लगे । थोड़ी दूर जाकर हमसे कहा कि यहाँ बैठो और खुद आगे गये । हमें 'अपूर्व अवसर' बोलने को कह गये । थोड़ी देर में सामने की दिशा से एक आदमी आया उसने पू. ब्रह्मचारीजी को देखा और जिससे उस ओर गया । कुछ ही पल में वह घबराकर दौड़ता दौड़ता वापस आया । उसे आगे जाता देख मैंने उसे रोका और पूछा कि क्या हुआ ? तब उसने बताया कि, वहाँ कोई महात्मा ध्यान में खड़े हैं । उनके सामने बड़ा सांप फन फैलाकर बैठा हुआ है । यह देखकर मैं ड़र के भाग आया । फिर हमारे मन में बहुत विकल्प आये परन्तु पूज्यश्रीजी ने यहीं रुकने के लिए कहा था इसलिए हम आगे नहीं गये । थोड़ी देर के बाद पूज्यश्री पधारे । फिर वापस लौटते वक्त हमें बताया की :

हिंसक पशु हमें नुकसान नहीं करते

"परमकृपालुदेव ईडर के पहाड़ पर थे तब कई मुनि भी साथ थे । उन्हें एक जगह पर ठहरने का कहकर कृपालुदेव आगे निकल गये । तब प्रभुश्रीजी रायण के ऊँचे पेड़ पर चढ़कर देखने लगे, तो परमकृपालुदेव ध्यान में बैठे थे; वहाँ एक जंगली जानवर आया और परमकृपालुदेव के चारों ओर प्रदक्षिणा कर थोड़ी देर सामने बैठा और फिर चला गया । जब परमकृपालुदेव वापस आए तब मुनियों को बताया कि **हिंसक पशु हमें नुकसान नहीं पहुँचाते, अन्य लोगों को नुकसान कर भी सकते हैं ।"** इस बात से हमारे मन को समाधान हुआ था ।

श्री शनाभाई

श्री हीराभाई पटेल

व्यारा

मुमुक्षुओ को भोजन कराने का भाव सफल हुआ

पू. श्री ब्रह्मचारीजी धुलिया से मुमुक्षुओं के साथ ट्रेन में आनेवाले हैं, ऐसे समाचार मुझे मिले । मुझे सभी को भोजन कराने का भाव हुआ परन्तु मेरे पास पैसे नहीं थे । आर्थिक स्थिति अनुकूल नही थी ।

मेरे पास एक घड़ी थी । उसे गिरवी रखने अथवा बेचकर रकम लेने के लिए मैं घर से निकला । एक आदमी ने ३०/- रु में उसे खरीद लिया । मुझे लगा कि इस समय इतने पैसे तो बहुत हैं । उन पैसों से रसोई के लिए सामग्री वगैरह खरीदकर रोटले और दूध बनाकर स्टेशन गया । वहाँ सभी मुमुक्षुओं को प्रसाद देने का लाभ प्राप्त हुआ । तीस रुपयों में रसोई की सामग्री खरीदने के बाद जो पैसे वगैरह बचे थे वो पूज्यश्री के पास रख दिए ।

कुछ वर्षों के बाद जिस आदमी को मैंने ३०/- रुपयों में घड़ी बेची थी वही आदमी अचानक मेरी दुकान पर वही घड़ी बेचने आया । मैंने २०/- रुपयों में वह घड़ी वापस खरीद ली । अभी भी वह मेरे पास है ।

'घर बदला है ?'

एक बार घर बदलकर मैं तुरंत आश्रम में आया था । किसी को मेरे घर बदलने की बात का पता नहीं था । बातों बातों में सहज ही पू. श्री बोले : घर बदला है ? मैंने कहा, हाँ प्रभु ! यह सुनकर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ था ।

सूरत साथ में आना है

पहलेका धामण मंदिर

एक बार प.पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के धामण पधारने की सूचना मुझे मिली इसलिए मैं धामण मंदिर गया । मंदिर में ऊपर परमकृपालुदेवके और प.पू. प्रभुश्रीजी के चित्रपटो के दर्शन करने गया । दर्शन करते वक्त मैंने परमकृपालुदेव को अंतरंग से विनंती की, कि मुझे पूज्यश्री के साथ सूरत जाना है । दर्शन करके नीचे उतरा वहाँ पूज्यश्री खड़े थे, मुझ से पूछा : "भोजन हो गया ?" मैंने कहा : "चाय बिस्किट लिया है ।" पूज्यश्री ने कहा : **"जाओ, भोजन कर लो, साथ में सूरत आना है ।"** मुझे अपार आनंद हुआ ।

श्री ठाकोरभाई माधवजीभाई पटेल

खोज पारडी (अभी बारडोली)

'आपको फिर से मंत्र लेना है ?'

संवत् २००२ में आस्ता मुकाम पर १८ वर्ष की उम्र में पू. श्री ब्रह्मचारीजी के पास से मैंने मंत्र लिया था । परन्तु २४ वर्ष की उम्र में मुझे ऐसा विकल्प हुआ करता कि मंत्र की आज्ञा आस्ता गाँव में मुझसे बराबर ली नहीं गयी थी । इसी दौरान मुझे अमेरिका जाना था इसलिये आश्रममें पूज्यश्री से मिलने गया । तब पूज्यश्रीने मुझे सामने से कहा : तुम्हे फिर से मंत्र लेना है ?" मैंने कहा : "हाँ प्रभु ! उस वक्त की जो छाप मेरे हृदय पर पड़ी, वो आज तक विस्मृत नहीं हुई ।

आज्ञापालन से दुःख का नाश

ईस्वी सन १९४५ में मोटी फरोद गाँव की भूलीबहन नारणभाई पटेल मेरे साथ एक बार आश्रम आये थे । हम पूज्यश्री के पास मंत्र लेने गये । उस वक्त भूलीबहन ने सात अभक्ष्य पदार्थों में से शहद की छूट रखने की माँग करते हुए पूज्यश्री को बताया कि : "दवाई में शहद का उपयोग न करुँ तो मेरे सिर में पीड़ा की लहर उठती है अर्थात् सिर में बहुत दर्द होता है ।" तब पूज्यश्री थोड़ा समय मौन रहकर बोले **"आपके सर में यदि पीड़ा न हो तो आप शहद का उपयोग नहीं करना ।"** हुआ भी ऐसा कि मंत्र की उस घड़ी से लेकर सन् १९८२ में उनका देहत्याग हुआ तब तक उनको कभी भी सिर में पीड़ा नहीं हुई और शहद का उपयोग नहीं करना पड़ा ।

श्री नरसीभाई भगाभाई पटेल

सडोदरा

'मंदिर बनवाना परन्तु कर्ज मत करना'

प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी का समागम होने के बाद कई बार में आश्रम में आता। संवत् १९९५ के वर्ष में जब में आश्रम में आया तब पूज्यश्रीजी को मिलने गया। उन्होंने मुझे पूछा : "भक्ति और आत्मसिद्धि बोलते हो?" मैंने कहा : "भक्ति और आत्मसिद्धि रोज़ बोलता हूँ। परन्तु भक्ति की जगह एकांत में न होने की वजह से चाहिये वैसी अनुकूलता नहीं है।"

तब पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने आज्ञा दी : **"मंदिर बनवाना, लेकिन कर्ज मत करना। नहीं तो आर्तध्यान होगा।"**

रामवचन के समान उनके वचन मिथ्या नहि होंगे

फिर मैं शंकरभगत के घर जहाँ ठहरा था वहाँ गया और शंकरभगत से बात की, कि पू. ब्रह्मचारीजी ने मंदिर बनवाने की आज्ञा दी है, परन्तु यह हमारे बस की बात नहीं हैं। तब शंकरभगत ने कहा : **"आपका मंदिर हो ही गया। आप ब्रह्मचारीजी के वचन को क्या समझते हो? राम वचन मिथ्या हो तो ब्रह्मचारीजी के वचन मिथ्या हो। इसलिए तैयारी शुरु करो।"**

मंदिर प्रतिष्ठा के समय तक कर्ज बराबर

फिर हमने भूमिपूजन करने का तय किया। आश्रम से पू. श्री ब्रह्मचारीजी के साथ १५-२० मुमुक्षु भी आये और भूमिपूजन का कार्य उत्साहपूर्वक पूर्ण हुआ। उस दिन मंदिर निर्माण के लिए रु. १९००/- की रकम जमा हुई और एक हज़ार रुपये नाहटा साहब ने दिए। कुल मिलाकर रु.२९००/- जमा हुए। पूरे पैसे न होने के कारण गाँव के मुमुक्षु भाईयों ने नींव से लेकर सारा काम मेहनत मजदूरी करके स्वयं पूर्ण किया। केवल एक बढ़ई और एक राजमिस्त्री को लाया। मंदिर के बांधकाम में रु. ४६००/- खर्च हुए। उसमें रु. २९००/- पहले ही जमा हुए थे अतः १७००/- कम थे। स्थापना के दिन आय-व्यय के बाद अंत में रु. ३००/- कम पड़े। उसे श्री नाहटा साहेब ने दे कर कर्ज चुकता किया। इस तरह हमारे मंदिर का निर्माण हो हुआ।

मंदिर गाँव के मकानों की तुलना में ऊँचा होना चाहिए

संवत् १९९६ के वैशाख सुदी तीज के दिन मंदिर की प्रतिष्ठा पू. श्री ब्रह्मचारीजी की उपस्थिति में हुई। इसके पश्चात् पाँच बार पूज्यश्री संघ के साथ सडोदरा पधारे। पाँचवी बार आये तब देववंदन करने के बाद छत के रेलींग पर हाथ रख कर खड़े थे तब कहा : "आधा गाँव पूर्व में है, आधा गाँव पश्चिम में है और मध्य भाग में मंदिर है। **मंदिर की तुलना में गाँव के मकान ऊँचे न हों।"** यह पूज्यश्री ने सहज बोला था।

पूज्यश्री के वचन अनुसार मंदिर ऊँचा बन गया

थोड़े समय के बाद गाँव के नये मकान मंदिर से ऊँचे बन गये तब हमने सोचा कि नूतन मंदिर करके नये मकानों से मंदिर दो फीट ऊँचा हो जाये वैसा करें।

परमकृपालुदेव के योगबल से वह भी संभव हो गया। संवत् २०३१ महा सुदी ६ ता. १७-२-७५ के दिन नूतन मंदिर में एकदम ऊपरी मंज़िल परम परमृपालुदेवीकी संगमरमरकी प्रतिमाजी की प्रतिष्ठा हुयी। वैसे पहली मंजिल पर परमकृपालुदेव के चित्रपट तथा प.पू.प्रभुश्रीजी के चित्रपट और प.पू.ब्रह्मचारीजी के चित्रपटो की स्थापना भी धूमधाम से सकल संघ के समक्ष हुई।

इस तरह पूज्यश्री के सहज वचन अनुसार फिर से मंदिर गाँव के मकानों से ऊँचा हो गया।

श्री नरसीभाई

श्री भूलाभाई वनमालीदास पटेल

आस्ता

परमकृपालुदेव परमात्मदशा को प्राप्त हुए पुरुष

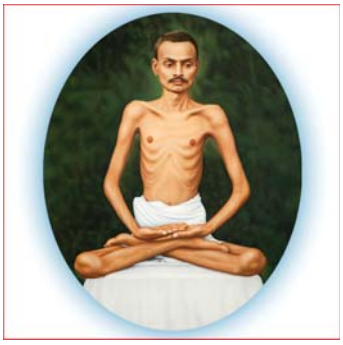

संवत् १९९४ के वर्ष में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी की आज्ञा से श्री शंकरभगत (काविठावाले) सत्संग के लिए दिवाली के दिनों में हमारे गाँव आस्ता में आये थे। उस समय गाँव में करीब चार मुमुक्षु थे। मेरे पिताश्री को पिछले श्रावण महीने में परमकृपालुदेव की आज्ञा-भक्ति प्राप्त हुई थी। लेकिन श्री शंकरभगत के समागम से गाँव में दूसरे अनेक लोगों को परमकृपालुदेव परमात्मदशा को प्राप्त हुए पुरुष हैं ऐसी श्रद्धा हुई और बहुत लोगों को आज्ञा-भक्ति लेने की भावना जगी।

मैं वैष्णव संप्रदाय के संस्कार से भक्ति करता था तथा मार्गानुसारी पुरुषों के पद्य बोलता था। परन्तु आत्मकल्याण का मार्ग कुछ भिन्न होना चाहिए ऐसा छः महिने पहले मेरे मन में भाव उद्‌भव हुआ था। जिससे श्री शंकरभगत के समागम से मुझे परमकृपालुदेव के मार्ग की बात यथार्थ लगी और सत्धर्म के प्रति बहुत रुचि उत्पन्न हुई। जिससे 'सहजात्मस्वरूप परमगुरु' मंत्र का स्मरण करते रहता था।

संवत् १९९५ के दौरान गाँव के मुमुक्षुओं की संख्या लगभग बीस जितनी हो गयी।

पूज्यश्री शांत तथा वैराग्य दशा के अलौकिक पुरुष

संवत् १९९६ के कार्तिक सुदी ५ के दिन मेरा आश्रम में आना हुआ। यहाँ का भव्य मंदिर, शांत वातावरण देख मुझे खूब आनंद हुआ और पू.श्री ब्रह्मचारीजी के प्रथम दर्शन होते ही मुझ पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि ये कोई शांत एवं वैराग्य दशा के अलौकिक पुरुष हैं। पूज्यश्री के हाथों मुझे कार्तिक सुदी ७ के दिन आज्ञाभक्ति और स्मरणमंत्र की प्राप्ति हुई।

संवत् १९९६ के वैशाख सुदी ४ के दिन हमारे नये

बिना बताये प्रतिष्ठा स्थान पर पहुँच गये

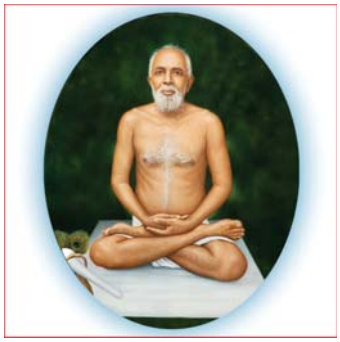

मकान में चित्रपट की स्थापना करने हेतु हमारे आमंत्रण को स्वीकार कर के, सडोदरा से संघ केसाथ पूज्यश्री आस्ता पधारे। गाँव की सीमा से ही **'सहजात्मस्वरूप टालो भवकूप'** यह पद बोलते हुए सीधे हमारे छः गाला के मकान की मंजिल पर, जहाँ अलमारी में चित्रपट की स्थापना करनी थी वहाँ आकर खड़े रहे। सभी को खूब आश्चर्य हुआ।

आस्ता गाँव का नाम आस्था हो गया

गाँव के लोगों में भी अच्छा उमंग था जिससे सत्संग में भी खूब लोग आते थे। गाँव में कुलधर्म का कोई कदाग्रह न था जिस कारण करीब चालीस मुमुक्षु भाई-बहनों ने पूज्यश्री के पास स्मरणमंत्र की आज्ञा ली थी। स्मरणमंत्र देते हुए तत्त्वज्ञान की पुस्तक कम पड़ जाने से आलोचना के पुस्तकों का उपयोग करना पड़ा था। यहाँ के लोगों में ऐसी श्रद्धा देखकर पूज्यश्री ने आस्ता गाँव का नाम 'आस्था' रख दिया। उस समय चार दिन वे यहाँ रुके थे।

प.पू.प्रभुश्रीजी के बोध की प्रतिलिपि

संवत् १९९८ के पर्युषण में मैं आश्रम में रहा और प.पूप्रभुश्रीजी के बोधवचन जो छपे नहीं थे, उनकी प्रतिलिपि करता तथा सत्संग के लिए पूज्यश्री के पास जाता। मेरे प्रश्नों के सुंदर जवाब मिलते। **"सत्पुरुष विदुर के कहे अनुसार आज ऐसा कृत्य कर कि रात में सुख से सोया जा सके।"** (पुष्पमाला-८३) इसका अर्थ क्या है? मैंने प्रश्न किया। उसके जवाब में पूज्यश्री ने एक नोटबुक देकर उसकी प्रतिलिपि करने को कहा था। बाद में 'प्रवेशिका' में शिक्षापाठ ३८ **'आत्मा के लिए हितकारी नीति वाक्य'** इस शीर्षक के नीचे वह छपा था। उसका मुझ पर अच्छा प्रभाव पड़ा था।

'विवेक' का पाठ मुखपाठ करने की आज्ञा

वडवा तथा खंभात दर्शन के लिए जाने की आज्ञा माँगने पूज्यश्री के पास गया तब पूज्यश्री ने मुझसे कहा कि **"विवेक के बारे में जानते हो ? विवेक का पाठ पढ़ा है ?"** फिर उन्होंने मुझे वह पाठ (मोक्षमाला-शिक्षापाठ ५१) समझाया और मुखपाठ करने की आज्ञा दी । थोड़े समय में कंठस्थ करके उनके समक्ष बोल दिया । फिर मैं वडवा गया । वहाँ से खंभात जाकर सुबोध पाठशाला में रात को रुकना हुआ । वहाँ प्रतिदिन मोक्षमाला में से एक पाठ का वांचन होता और उस पर प्रश्नोत्तर रूप चर्चा होती । उस दिन विवेक के पाठ का वांचन हुआ । मुझसे भी प्रश्न पूछने में आये । मैंने सभी प्रश्नों के सही उत्तर दिए । यह पाठ मुखपाठ देख वहाँ उपस्थित सभी लोग आश्चर्यचकित हुए और मुझसे पूछा कि आपको मोक्षमाला मुखपाठ है ? मैंने कहा नहीं, परन्तु खंभात आने से पहले पूज्यश्री ने यही पाठ समझाकर मुखपाठ करवाया था जिससे सभी प्रश्नों का सही जवाब मैं दे सका ।

मुझे यदि मोक्ष मिलता हो तो सब छोड़ दूँ

एकबार मैं प.पू.ब्रह्मचारीजी के पास बैठा था तब मेरे मन में ऐसे विचार आया करते थे कि मुझे भक्ति, ज्ञान, वैराग्य की तीव्र इच्छा है परन्तु मोक्ष की इच्छा नहीं होती । तब मेरे बिना कहे ही पू.श्री ब्रह्मचारीजी बोले कि : **"मुझे जो मोक्ष मिलता हो तो मैं सब कुछ छोड़कर अभी चला जाऊँ ।"**

हम नहीं आये तो भी मंदिर का कार्य पूर्ण करना

आस्ता के मुमुक्षु आश्रम में जाते तब वे आस्ता में मंदिर बनवाने की प्रेरणा किया करते । परन्तु जमीन के अभाव के कारण उस काम में विलंब हो रहा था । संवत् २००९ के वैशाख महीने में जब पूज्यश्री पथराडिया आये तब आस्ता के मुमुक्षुओं को कहा कि : **"अब की बार आस्ता में मंदिर का भूमिपूजन करना ही है । जगह तय करो ।"** एक भाईने जमीन दी और पूज्यश्री के हाथों यह पवित्र कार्य प्रारंभ हुआ । साथ में यह भी बताया कि **"हम नहीं आये तो भी मंदिर का कार्य पूर्ण करना ।"** और हुआ भी ऐसा कि फिर दुबारा वे आये ही नहीं, क्योंकि संवत् २०१० में पूज्यश्री का देहविलय हो गया ।

परमकृपालुदेव के शरण में समाधिमृत्यु

परमकृपालुदेव के प्रति मेरी श्रद्धा होने में पू.श्री ब्रह्मचारीजी का अनमोल योगदान है । पूज्यश्री मुमुक्षुओं को, इस भव में समाधिमृत्यु करनी ही है, ऐसा निश्चय कराते । अनेक लोग पूछते कि समाधिमृत्यु कैसे होती है ? तब बताते कि "अंत तक केवल परमकृपालुदेव के दिये हुए मंत्र पर चित्त को केन्द्रित रखना । परमकृपालुदेव का ही शरण रखना ।" स्वयं ने भी ऐसी अद्‌भुत समाधिमृत्यु अगास आश्रम के राजमंदिर में, परमकृपालुदेव के चित्रपट के समक्ष कायोत्सर्ग मुद्रा में खडे रहकर देहत्याग करके दृष्टांतरूप से कर दिखाया ।

अपने जीवनकाल के दौरान पूज्यश्री आस्ता गाँव में करीब पाँच बार पधारे थे । अंतिम बार जब आये थे तब नजदीक के गाँवो के अनेक मुमुक्षुओं के घर जाकर सत्संग का लाभ दिया था ।

पूज्यश्री ने एक पत्र में स्वयं रचित एक काव्य लिखा है । इस काव्य में उनकी अंतरंग भावना का स्पष्ट दर्शन होता है । इस कविता ने मुझे जीवन में खूब प्रेरणा दी है । वह इस प्रकार है :–

"कृपालु नी कृपा धारी, बनीशुं पूर्ण ब्रह्मचारी,
सहनशीलता क्षमा धारी, सजी समता नीति सारी,
करीशुं कार्य सुविचारी, कषायो सर्व निवारी,
गणीशुं मात परनारी, पिता सम परपुरुष धारी,
जीवीशुं जीवन सुधारी, स्वपरने आत्महितकारी,
बनीने अल्प संसारी, उघाडी मोक्षनी बारी,
समर्पी सर्व स्वामीने, तरीशुं सर्वने तारी।"

प.पू. प्रभुश्रीजी श्रीमद् राजचंद्र पू.श्री ब्रह्मचारीजी

श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, आस्ता

श्री नरोत्तमभाई प्रभुदास पटेल

आस्ता

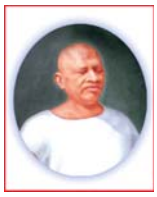

प्रतिष्ठास्थान जान गये

संवत् १९९६ के वैशाख सुदी ३ के दिन सडोदरा मंदिर की प्रतिष्ठा के प्रसंग पर पू. श्री ब्रह्मचारीजी पधारे थे। वहाँ से अगले दिन हमारे काका वनमालीदास के घर परमकृपालुदेव के चित्रपट की स्थापना करने हेतु आस्ता पधारे। हम बहुत सारे मुमुक्षु भाई-बहन उन्हें लेने गाँव की सीमा तक गये थे। गाँव से लगभग एक फर्लांग दूर, हमारे घर एक ही लाईन में एक जैसे छः गाले बने हुए हैं। उसमें हमारे काका वनमालीदास का पश्चिम दिशा में आखिरी गाला है। वहाँ उपर की मंजिल में अलमारी में परमकृपालुदेव के चित्रपट की स्थापना करनी थी। सीमा पर से ही कार से उतरकर पू.श्री ब्रह्मचारीजी गाँव में न जाते हुए सीधे हमारे घरों की ओर आगे चलने लगे। हम सब उनके पीछे चल रहे थे। पू.श्री ब्रह्मचारीजी ने **"सहजात्मस्वरूप टालो भवकूप', अखिल अनुपम बहुनामी"** यह पद बोलना शुरू किया। इसलिए हम सब भी साथ-साथ में बोलने लगे। हमारे घरों की ओर जब आये तो अंत में जो वनमाली काका के घर हैं वहाँ सीधे प्रवेश करके सीढीयाँ चढकर उपर गयें और जहाँ सामने के कमरे में परमकृपालुदेव के चित्रपट की स्थापना करनी थी उस अलमारी के समक्ष जाकर परमकृपालुदेव को तीन नमस्कार करके बैठे और भक्ति की।

यह देख हमें आश्चर्य हुआ कि, वनमालीकाका का घर कहाँ है? तथा घर मे किस जगह पर चित्रपट की स्थापना करनी है, नीचे या ऊपर की मंजिल पर? इत्यादि किसी को बिना पूछे सीधे चित्रपट की स्थापना की जगह पर आ पहुँचे और भक्ति की।

अगले दिन वैशाख सुदी पांचम के दिन चित्रपट की स्थापना की। चार दिन आस्ता में ठहरे थे। वहाँ से सूरत जिले के अन्य गाँवो में जाकर अगास आश्रम लौट गये थे।

पंद्रह लोगों की रसोई ज़्यादा बनाओ

संवत् १९९८ के फागुन सुदी में सडोदरा के हरिभाई भगाभाई ने अगास आश्रम में मुझे बताया : "एक वक्त अगास आश्रम से पू.श्री ब्रह्मचारीजी अनेक मुमुक्षुओं केसाथ ईडर पधारे थे। मुझे (हरिभाई को) खबर मिली कि पू.श्री ब्रह्मचारीजी ईडर गये हैं और वहाँ रुकनेवाले हैं। इसलिए मुझे भी वहाँ जाने का विचार आया। सडोदरा तथा नजदीकी गाँवो से कुल मिलाकर हम छः लोग ट्रेन से ईडर के लिए रवाना हुए। अहमदाबाद स्टेशन पर दूसरे नौ मुमुक्षु ईडर जाने के लिए हमारे ही डिब्बे में आ कर बैठे अर्थात् ईडर जानेवाले हम कुल १५ लोग हो गये। उस दिन पू. श्री ब्रह्मचारीने सभी मुमुक्षुओं के साथ ईडर के पहाड़ से नीचे उतरते वक्त फिर से थोड़ा उपर जाकर रसोईये से कहा कि पंद्रह लोगों की रसोई अधिक बनाना। उस वक्त आश्रम के पू. शंकर भगतजी तथा पू. दासभाई, रसोईये के पास खड़े थे। उन्हें मन में विचार आया कि हम रोज़ हैं उतने जितने ही लोग हैं तो पंद्रह लोगों की रसोई अधिक बनाने के लिए क्यूँ कहा होगा?

इन पंद्रह लोगों के लिए कहा था

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी सभी मुमुक्षुओं के साथ लगभग प्रतिदिन घंटिया पहाड़ से उतरकर दूसरे पहाड़ वगैरह जगहों पर भक्ति करने के लिए जाते और रोज़ की तरह लगभग एक बजे वापस घंटिया पहाड़ पर चढ़ते। अब ट्रेन से आकर हम पंद्रह मुमुक्षु भी करीब एक बजे घंटिया पहाड़ पर चढ़ते हुए पू. श्री ब्रह्मचारीजी तथा अन्य मुमुक्षुओं के साथ जुड़ गये। शंकर भगतजी ने मुझे (हरिभाई को) पूछा : 'आप कितने लोग आये हैं?' मैंने उत्तर देते हुए कहा : 'हम छः लोग सडोदरा से आये हैं और दूसरे नौ लोग अहमदाबाद से हमारे साथ जुड़े हैं। उन्हें मिलाकर हम कुल पंद्रह लोग आये है।' यह सुनकर शंकर भगतजी ने दासभाई से कहा : 'सुबह पू.श्री ब्रह्मचारीजी पंद्रह लोगों की रसोई ज्यादा बनाने के लिए कह रहे थे तो वो ये पंद्रह लोग।' यह बात सुनकर सभी को आश्चर्य के साथ आनंद हुआ था।

श्रीमद् राजचंद्र विहार भवन घंटिया पहाड, ईडर

आज की रात रुक जाओ

संवत् २००९ में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षुओं के आमंत्रणसे सूरत जिले में परमकृपालुदेव तथा पू. श्री प्रभुश्रीजी के चित्रपटो की स्थापना करने के लिए पधारे थे, तब पथराडिया गाँव में गये थे। मैं भी वहाँ था, वहाँ श्री माधवभाई खुशालभाई ननसाडवाले भी सत्संग के लिए आये थे। माधवभाई की राजपीपला जिले के चीखली गाँव में जमीन तथा मकान भी है। चीखली गाँव जाने के लिए पू. श्री ब्रह्मचारीजी के पास वे अनुमति लेने गये तब पूज्यश्री ने माधवभाई से सहज ही का : "आज की रात रुक जाइए।" इसलिए माधवभाई रात पथराडिया रुक गये।

चीखली गाँव में डाका पड़ा

उसी रात चीखली गाँव में उनके घर डकैती हुई। लूटेरों ने तिजोरी तोड़ने की कोशिश की परन्तु वह टूटी नहीं। इस वजह से घर के नौकरों को मारने लगे, लेकिन फिर अड़ोस-पड़ोस के लोग इकट्ठा होने लगे तो लूटेरों को भाग जाना पड़ा। माधवभाई की बंदूक भी वो लूटेरें अपने साथ ले गये। अगले दिन वे चीखली गाँव अपने घर गये तब सारी हकीकत जानने को मिली। उनको मन में ऐसा लगा कि यदि में वहाँ होता तो मेरा बुरा हाल होता और तिजोरी की चाबी न देता तो कदाचित वे लोग मार ही डालते।

श्री माधवभाई

वेशधारी पुलिस घर आये

श्री माधवभाई के ननसाड गाँव में भी घर और जमीन है। वहाँ भक्ति के लिए पू.श्री ब्रह्मचारीजी को आमंत्रण दिया। पू. श्री ब्रह्मचारीजी उनके घर आये। उस दिन दो लोग पुलिस की वेशभूषा में उनके घर आये और माधवभाई से कहा कि: "आपकी बंदूक मिली है, वह वालीया गाँव (तालुका का मुख्य गाँव) में पुलिस थाने में जमा है। वह ले जाने के लिए आपको बुलाया है। इसलिए हमारे साथ चलिए।"

अभी भक्ति करो

उनके साथ जाने के लिए श्री माधवभाई पू. श्री ब्रह्मचारीजी के पास अनुमति लेने गये। तब पूज्यश्री ने बताया **"अभी साँझ हो गयी है। जो लोग आये हैं उनको भोजन करवा के बाहर चबूतरे पर सुला दो। अभी भक्ति करो।"** माधवभाई ने यही किया। सुबह उठकर देखा तो वो वेशधारी पुलिसवाले भाग गये थे। बाद में पता चला कि वे लोग वैरभाव के कारण श्री माधवभाई को रास्ते में मार डालने के लिए लेने आये थे। इस घटना से माधवभाई को पूज्यश्री ब्रह्मचारीजीके वचन पर दृढ़ विश्वास और श्रद्धा हो गयी।

श्री नरोत्तमभाई

श्री डाह्याभाई नारणभाई पटेल

सीमरडा

देह का भरोसा करने जैसा नहीं

सीमरडा निवास के दौरान एक बार पू.श्री ब्रह्मचारीजी सुबह के समय एकाध गाउ दूर खेतमें दीर्घशंका के लिये गये थे । वहाँसे वापस आते समय, खेत में एक मुमुक्षुभाईका लड़का (विठ्ठल सोमा) कुछ काम के लिये गया होगा वो सामने मिला । उसे पूज्यश्रीने बुलाया और खिरनी के पेड़ के नीचे उसे **मंत्र स्मरण और तीन पाठकी आज्ञा दी,** और कहाँकि देह का भरोसा करने जैसा नहीं हैं । वो लड़का १५-२० दिन बाद थोडी बीमारी भोगके मर गया था ।

किसी दिन सोते हुये नहीं देखा...

सीमरडा में पू.श्री ब्रह्मचारीजी की भगतजी के घर रहने की व्यवस्था की थी। उनके लिये पाट तथा गद्दी की व्यवस्था की थी। पू.श्री ब्रह्मचारीजी पाट को रेलींग के पास खींच दी, और गद्दी नीचे रख दी और पूरी रात कायोत्सर्ग में ही व्यतीत करते थे। भगतजी चौकनी बुद्धि के होने से रात को ३-४ बार उठकर निगरानी करते, परन्तु कभी भी उन्होंने **पू.श्री ब्रह्मचारीजी को सोते हुए नहीं देखा।**

भगतजी साफ दिल के इन्सान

सीमरडा में एक बार भगतजी ने पू.श्री ब्रह्मचारीजी के लिए दूधपाक बनाने के लिए मुझसे चावल मंगवाये। मैं १० वर्ष पुराने बढ़िया चावल लाया, परन्तु भगतजी को वो चावल पसन्द न आने से मुझे वापस लौटा दिये। यह मुझे अच्छा नहीं लगा तथा भगतजी के प्रति खराब भाव हो गये। १५-२० दिन के पश्चात् पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी आशी जाते हुए बीच में स्मशान के पास पीपल के नीचे जहाँ पू.प्रभुश्रीजी बैठते वहाँ बैठे और उनको बिदा करने आये हुए सीमरडा के अनेक मुमुक्षु भी बैठे। वहाँ पूज्यश्री ने कहा : "शाहु महाराज के मंत्री नाना फडनवीस थे। वे इतने राजहितैषी थे कि कोई भी व्यक्ति राजा से मिलने आये तब उनके शस्त्र वे ले लेते, नाखुन भी काट देते की जिससे राजा को कोई नुकसान न पहुँचा सके। वैसे ही भगतजी में कोई दोष नहीं देखना। किसी को दुःखी करने का भाव उनके दिल में नहीं है, सतर्क रहने के लिए सब करते हैं। वे स्वच्छ मन के है।"

श्री डाह्याभाई

दवा के लिए दें तो वह परोपकार का ही काम है

गायकवाडी राज्य में सरकार २/३ कीमत देती और गाँववाले १/३ हिस्सा कीमत देते, इस तरह दवाइयों की पेटियाँ गाँव में आती। एक बार सीमरडा गाँववासियों ने पैसे नहीं भरे इसलिए दवा की पेटी वापस गयी। उस दौरान मैं आश्रम में दर्शन करने हेतु आया था। प.पू. प्रभुश्रीजी के कक्ष में दर्शन कर पू. श्री ब्रह्मचारीजी के दर्शन कर राजमंदिर में जा रहा था। वहाँ पू.श्री ब्रह्मचारीजी ने मुझे वापस बुलाया : "डाह्याभाई, आइए बैठिये।" मैंने कहा : "क्या प्रभु ! पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने कहा : "गाँव की दवा के लिए हम पाँच-पच्चीस रुपये दें या किसी से दिलवायें तो कुछ नुकसान नहीं है। यह परोपकार का ही काम है।"

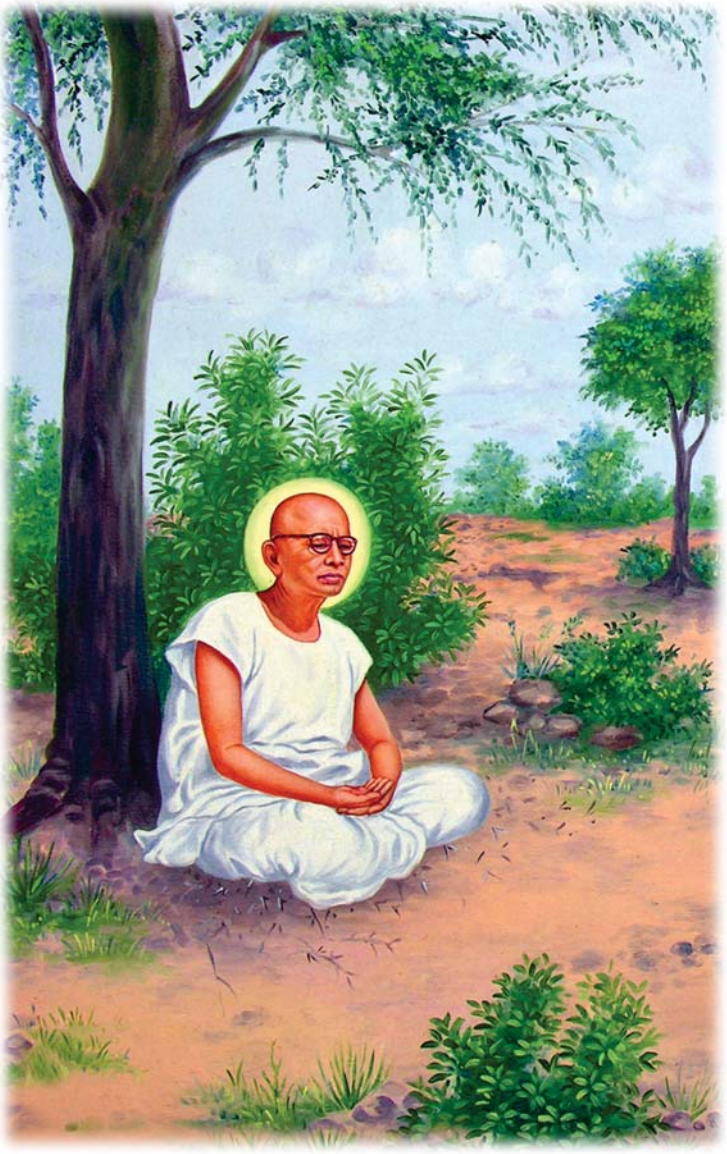

आज्ञा देने में विलंब नहीं किया

आश्रम में जिस दिन सभामंडप में निवेदन करके ट्रस्टीगण ने मंत्र देने के लिए पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी पर प्रतिबंध लगाया था, उस दिन शाम को एक मुमुक्षु को स्टेशन पर जाकर पूज्यश्री ब्रह्मचरीजी ने मंत्र दिया था। क्योंकि मंत्र (आज्ञा) देने में विलंब हो और कल उसका देह विलय हो जाए तो वह जीव आज्ञा के बिना रह जाय।

'कुछ नहीं पुद्गल की मुठभेड़ 'टकराव' है'

आश्रम पर जब पू. श्री ब्रह्मचारीजी के संबंध में विरोधी वातावरण चल रहा था, तब मैंने पूज्यश्री को कहा कि : "आश्रम पर फिलहाल वातावरण अनुकूल नहीं। इसलिए आप पाँचो ब्रह्मचारीजी (पू.श्री ब्रह्मचारीजी, श्री मोतीभाई भगतजी, श्री मोहनभाई बोरीयावाले, श्री जेसंगभाई बोरीयावाले, श्री रणछोडभाई) सीमरडा हमारे यहाँ पधारें। आप सबका खर्च तथा समागम-दर्शन हेतु जो मुमुक्षु आयेंगे उनके रहने-खाने का खर्च हम उठायेंगे और अतिथियों का आदर-सत्कार करेंगे।" पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने हँसकर कहा : "कुछ नहीं। पुद्गल की मुठभेड़ 'टकराव' है।"

भगवान के भक्त की संभाल

कुछ दिन पश्चात् पू. श्री ब्रह्मचारीजी संवत् २००६ में सुबह विहार कर सीमरडा पधारे थे और साडे-तीन महीने रहे थे। उस दौरान एक लड़के (सोमाभाई मंगलभाई) को टी.बी. की बीमारी हो गयी थी। उसके वहाँ जाकर उसे स्मरण-मंत्र दिया था। रोज़ शाम को भक्ति के पश्चात् मुमुक्षुओं के साथ वहाँ जाकर वांचन करते थे। थोड़े दिन के बाद उस लड़के का देहविलय हो गया था।

काँटे साफ किये तो दूसरी जगह पर बैठ गये

सीमरडा में पू.श्री ब्रह्मचारीजी साढ़े-तीन महीने रहे थे, उस वक्त वहाँ के हरिजन ने मेरे पिताजी से आकर कहा कि आपके महाराज बबूल वृक्ष के नीचे जहाँ इतने काँटे होते है वहाँ ध्यान में बैठते हैं। तब नारणभाई ने कहा, तू साफ कर दिया कर। तब हरिजन ने कहा : मैंने साफ किया तब दूसरी जगह जाकर बैठ जाते है।

श्री मोरारजीभाई लल्लुभाई पटेल

नवसारी

वचनामृत पढ़ने की आज्ञा

मैं जब वडोदरा में पढ़ता था तब समय-समय पर आश्रम में आता था। जब श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत प्रकाशित होकर बाहर आया तब उसे लेकर मैंने आश्रम में अपने कमरे में रख दी। प.पू. श्री ब्रह्मचारीजी की अनुमति लेने गया कि अब कल जाना है। प.पू.श्री ब्रह्मचारीजी दूसरा कुछ नहीं बोले परन्तु इतना ही कहा कि **"श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत प्रकाशित हुई है उसे पढ़ना।"** ऐसा कहकर उन्होंने मुझे वचनामृत पढ़ने की आज्ञा दी है यह मुझे बाद में समझ में आया।

पूर्व में पाप किया हो वह अनार्य देश में जाता है

पढ़ाई के बाद मैं नौकरी पर लग गया। हमारे रिश्तेदारों ने हम चार शिक्षित व्यक्तियों के लिए अफ्रिका-झांबिया जाने की परमीट भेजी। दूसरे दिन तीन व्यक्तियोंने जाने की तैयारी कर ली। हमारे घर के सभी लोग बहुत खुश थे कि हमारे भाग्य खुल गये। परदेश जाकर अब भाई खूब कमाएँगे। परन्तु मैं दुविधा में था कि जाऊँ या ना जाऊँ। इतने में मेरा अगास आश्रम में आना हुआ। विचार आया कि प.पू.श्री ब्रह्मचारीजी से पूछ कर देखुँ। इसलिए ऊपर गया। उनके पास अनेक मुमुक्षु बैठे थे तथा धर्म की बातचीत चल रही थी। मेरे पूछने से पहले ही पूज्यश्री ने बोध में कहा कि **"जिन्होंने पूर्व में पाप किया हो वह अनार्य देश में जाता है।"** यह बात सुनकर मैं आश्चर्यचकित हो गया। आज तो कितने लोग परदेश जाने के लिए आकाश-पाताल एक कर देते हैं और पूज्यश्री ने तो कुछ अलग ही बात की। उस वक्त मुझे यह पता नहीं था कि बहुत पुण्य हो तो ही आर्यकुल और भरत खण्ड में, आर्यक्षेत्र में जन्म मिलता है। फिर भी उस वक्त मैंने जाने का स्थगित रखा। मेरे मित्र गये। उनका पत्र आया कि यहाँ तो बड़ी दुकान में सुबह पाँच बजे से रात को बारह बजे तक काम करना पड़ता है और जहाँ दिन में भी रोशनी न आये ऐसी कोठरी में सोना पड़ता है। वेतन मासिक पाँच पाऊन्ड मिलते है। इतना परिश्रम करना पड़ता है। यह जानकर मैंने मन में प.पू.श्री ब्रह्मचारीजी का खूब आभार माना।

श्री मोरारजीभाई

उसके बाद व्यवहारिक संबंधियों के विवाह प्रसंग तथा घूमने-फिरने के निमित्त से दो-तीन बार परदेश जाने का प्रलोभन खड़ा हुआ तो भी अनार्य भूमि में जाने की इच्छा ही नहीं होती। यह सब प.पू. ब्रह्मचारीजी के बोध वचनों का प्रभाव था।

'अगले वर्ष में माला हो सके या नहीं, अभी कर लो'

संवत् २००९ में दिवाली की माला फेरने मैं आश्रम में आया था। उस वक्त प्रसंगोपात्त सभामंडप में पूज्यश्री ने बताया कि : **"अगले वर्ष में माला हो सके या नहीं, अभी कर लो।"** आश्रम से घर आया, दो ही दिन हुए थे और समाचार मिला कि प.पू.श्री ब्रह्मचारीजी ने वि.स. २०१० के कार्तिक सुदी ७ के दिन शाम को कायोत्सर्ग में देहत्याग कर दिया। यह जानकर मैं सिसक-सिसककर रो पड़ा जैसे हमेशा के लिए मेरा कोई अपना सगा मुझे अनाथ छोड़कर चला गया।

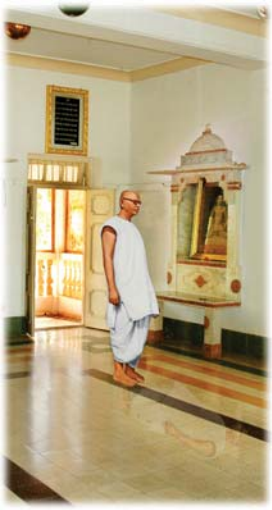

श्री डाह्याभाई नाथुभाई पटेल

धामण

व्रत लेने के पश्चात् कभी दर्द नहीं उठा

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी यहाँ धामण में श्रीमद् राजचंद्र आश्रम में पधारे थे। इस अवसर पर हम घर के सभी लोग दर्शन समागम हेतु गये थे। तब पू.श्री ब्रह्मचारीजी ने मेरी धर्मपत्नी से पूछा : "आप कंदमूल का उपयोग करते हो ?" हम सब घर में तो कंदमूल का उपयोग नहीं करते थे। इसलिए जवाब में उसने कहा कि : "दूसरा कोई कंदमूल तो मैं नहीं खाती लेकिन मुझे बहुत वर्षों से हर पंद्रह दिन में पेट का दर्द होता है, उस वक्त पेट में बहुत पीड़ा होती है, इतनी की मुझे बेभान कर देती है। इसलिए उस रोग के उपचार के लिए सिर्फ अदरक की छूट रखी है, जिसके उपयोग से आराम महसूस होता है।

उसके जवाब में प.पू.श्री ब्रह्मचारीजीने कहा : "**पूर्व में अभक्ष्य पदार्थ खाये हैं, जिससे ऐसे दर्द उत्पन्न होते हैं, वह खाने योग्य नहीं है।**" तब उसने कहा कि : "मुझसे छूटता नहीं है, परन्तु अब मेरा जो होना होगा वह होगा, अभी मुझे इसे न खाने का व्रत दीजिए।" प.पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने व्रत दिया। इसके पश्चात जीवनभर उसे पेट का दर्द नहीं हुआ।

श्री डाह्याभाईके पत्नी

हमारे घर में दूसरा धर्म नहीं चाहिए

पू. श्री ब्रह्मचारीजी उनके अंतिम वर्ष में सडोदरा राजमंदिर में पधारे थे। नज़दीक के कुचेद गाँव में मेरी मासीजी रहती थी। सरई गाँव में प.पू. प्रभुश्रीजी हमारे घर पधारे थे तब उन्होंने प्रभुश्रीजी के दर्शन किये थे। उस वक्त घर के सभी लोगों ने स्मरणमंत्र लिया था, परन्तु मासीजी रह गई थी। छः महीने पहले जब वे बीमार पड़ी तब उन्होंने कहा "भाणेज, मुझे अब आत्मकल्याण का साधन कौन देगा ? तू मुझे दिलाना।" मैंने कहा कि मैं देखूँगा। वे अनपढ़ थे। पूज्यश्री सडोदरा आये हैं यह जानकर हम सडोदरा गये। तब पू. शंकरभगत आदि को साथ लेकर अपनी मासीजी को मंत्र दिलाने की अनुमति लेने के लिए मौसाजी के पास गये। तब उन्होंने कहा : "हमें अपना धर्म छोड़कर, दूसरा धर्म अपने घर नहीं लाना।" पू. शंकर भगत ने मौसाजी को समझाने के बहुत प्रयत्न किया परन्तु मौसाजी ने स्वीकार नहीं किया।

श्री डाह्याभाई

नित्य नियम सम्बन्धी वार्तालाप करते हुए पू. श्री ब्रह्मचारीजी

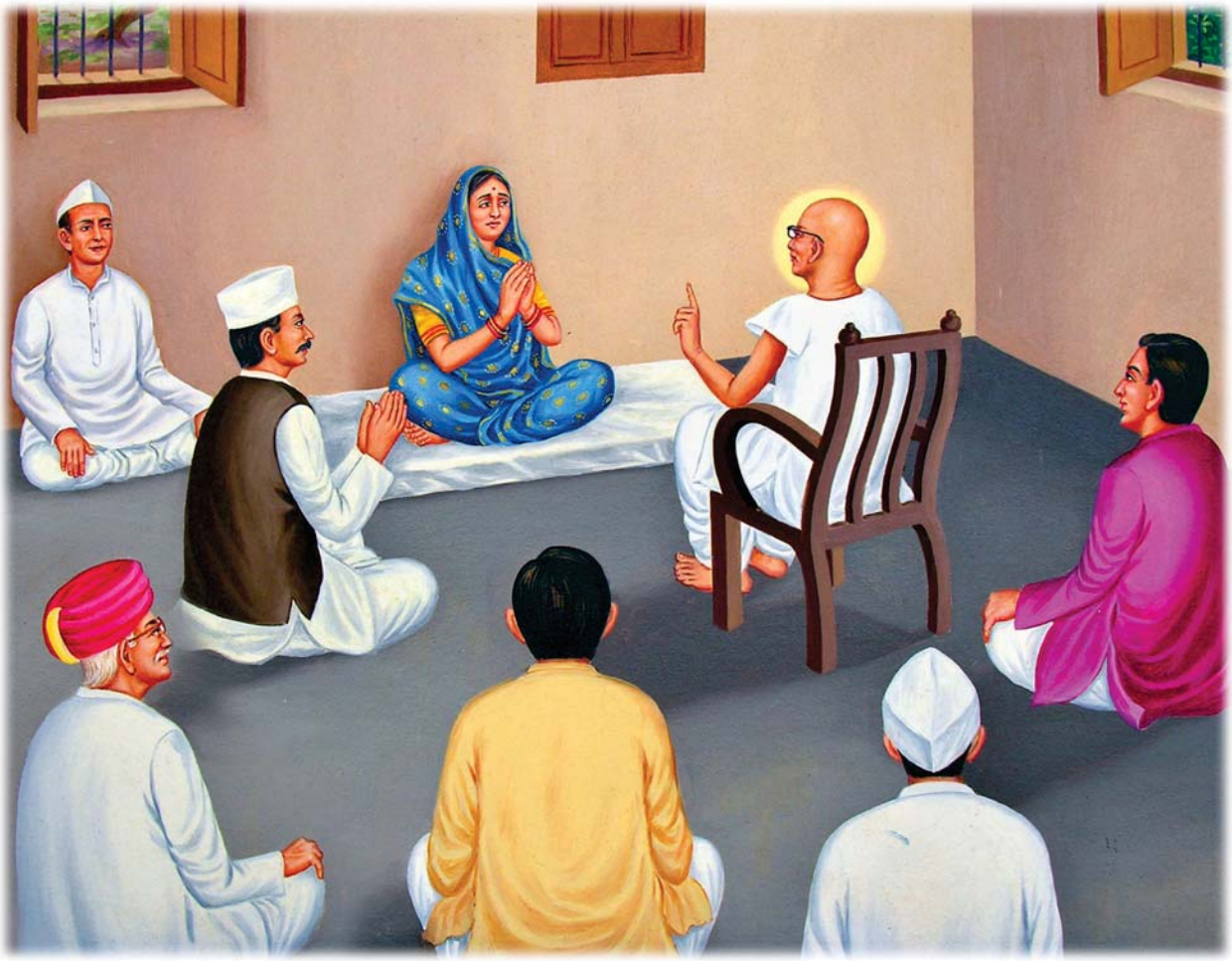

बिना आमंत्रण पधारकर मंत्र दिया

संजोगवश दूसरे दिन पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी स्वयं संघ के साथ कुचेद के लल्लुभाई आदि के आमंत्रण पर पूजा के निमित्त से वहाँ पधारे । तब पू. शकर भगत के साथ दुबारा हम मौसाजी के पास अनुमति लेने गये, परन्तु वे नहीं माने । तब शंकर भगत आदि, पूजा शुरु हो गई इसलिए पूजा के लिए निकल गये । मैं बैठा रहा । इस संबंध में मासीजी तथा मैं, दोनों ही विडंबना में थे कि क्या और कैसे करना ? इतने में बिना किसी आमंत्रण के पूज्यश्री मासीजी को स्मरणमंत्र देने पधारे । पू. श्री ब्रह्मचारीजी को किसी ने भी इस बात की सूचना नहीं दी थी । फिर भी वे निवासस्थान से नीचे उतर कर सडोदरा के श्री हरिभाई तथा उनके साथ जो आश्रम के मुमुक्षु थे उनको साथ लेकर बिना किसी आमंत्रण के मासीजी के पास आ पहुँचे । नित्यनियम संबंधी बात की और उन्हें स्मरणमंत्र दिया ।

दर्शन मात्र से भाव में परिवर्तन

पूज्यश्री ने जब घर में प्रवेश किया उस वक्त उनके दर्शन मात्र से मौसाजी को उनके प्रति जो अनादरभाव था वह मिट कर आदरभाव हुआ और स्वयं कुर्सी लाकर पूज्यश्री को आदरसहित बिठाया । थोड़ी देर के बाद पूज्यश्री ने मौसाजी से पूछा "आप पढ़े-लिखे हो ?" मौसाजी ने हाँ कहा । तब पूज्यश्री ने कहा : **"यह बहन पढ़ी-लिखी नहीं है इसलिए आप उन्हें ये भक्ति के पाठ पढ़कर सुनायेंगे ?"** जवाब में मौसाजी ने कहा : "महाराज, आप ने कहा इसलिए मुझे तो करना ही होगा ।" फिर मासीजी की मृत्यु के वक्त भी मौसाजी ने उनको स्मरण कराया, चित्रपट के दर्शन करवाये तथा नित्य-नियम का पाठ पढ़कर सुनाया था । अंत में उनका देहत्याग भी स्मरण करते-करते हुआ था ।

श्री मगनभाई शंकरभाई पटेल

सुणाव

मैं 'ज्ञानप्रचार' नाम की मासिक पत्रिका पढ़ता था। उसमें संपादक के रूप में श्री 'गोरधनभाई कालीदास पटेल' (पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का नाम था।

मंत्र प्राप्ति

मेरी उन्नीस वर्ष की उम्र में, अगास आश्रम में प.पू. प्रभुश्रीजी की उपस्थिति में, उनकी आज्ञा से पू. श्री ब्रह्मचारीजी मुझे राजमंदिर में लेकर गये। वहाँ सात व्यसन का त्याग और सात अभक्ष्य का त्याग अच्छी तरह से समझाया तथा तत्त्वज्ञान में मंत्र लिख कर दिया : **'सहजात्मस्वरूप परमगुरु'। भक्ति के बीस दोहे, क्षमापना का पाठ एवं यमनियम के पाठ के तत्त्वज्ञान में पृष्ठ नंबर लिख करके दिये। फिर कहा : "रोज़ भक्ति करना," "थोड़ा-थोड़ा मुखपाठ करना।"** तब से मैं नियमित रूप से भक्ति करता हूँ।

सुबोध पाठशाला

सुणाव में देरावासी उपाश्रय में मैंने पाठशाला खोली थी। उसमें **मोक्षमाला, आत्मसिद्धिशास्त्र, कृपालुदेव के भक्ति पद, जैन चैत्यवंदन विधि, आलोचना** इत्यादि सिखाता था। वहाँ संवत् १९६८ में परमकृपालुदेव के चित्रपट की स्थापना हुई थी। इस पाठशाला का नाम 'सुबोध पाठशाला' रखना ऐसा पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने मुझे सूचित किया। पाठशाला में ४५ बालक थे। समय-समय पर पाठशाला में श्री पंडित लालन, श्री सौभाग्यभाई चु. शाह, मास्टर पोपटलाल घीवाला, पंडित गुणभद्रजी, श्री रवजीभाई देसाई इत्यादि आते थे। समय-समय पर पाठशाला में पेन्सिल, नोटबुक, लड्डु आदि की प्रभावना होती थी।

नाम तथा पता लिखना भूल गया

ई.सं. १९४४ में अहमदाबाद ट्रेनिंग कॉलेज में मैं पढ़ने गया। इससे पहले मैंने रात्रिभोजन तथा कंदमूल त्याग की प्रतिज्ञा ली थी। अहमदाबाद गया तब चार दिन तक चले इतनी सुखडी ले कर गया था। वहाँ पहुँच कर मैंने प.पू. श्री ब्रह्मचारीजी को पत्र लिखा कि मुझे दो वर्ष के लिए रात्रिभोजन करने की अनुमति दें।

पूज्यश्री का जवाब तुरंत अगली डाक में तीसरे ही दिन मिला। उसमें लिखा था : **"तुम्हें छूट नहीं मिलेगी। अहमदाबाद शहर में जैन भोजनशाला मिल जायेगी। आपने पत्र लिखा परन्तु उतावल में आपका नाम और पता लिखना भूल गये है।"**

इसके बावजूद भी पूज्यश्री ने अपने अंतर्ज्ञान से मेरा नाम और पता लिखकर मेरे पत्र का जवाब ट्रेनिंग कॉलेज में लिखकर भेजा था।

अरे ! भूखे आए हो ?

एक बार हमें खबर मिली कि पू. श्री ब्रह्मचारीजी बाहरगाँव यात्रा के लिए जाने वाले हैं। हमें दर्शन की इच्छा हुई, इसलिए चलो दर्शन करने चलें ऐसा तय कर मैं, शांति पटेल और दूसरा एक लड़का सुबह विद्यालय से छूटकर खेत के रास्ते से सीधे अगास गये। वहाँ पहुँचे तो साड़े बारह बज़े थे। तब पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने **"अरे ! भूखे आये हो ?"** ऐसा कहकर उनकी सेवा में रहे श्री रणछोडजी से कहा : **"जाओ, खिचड़ी बची होगी तो इनको खिला दो।"** फिर हमने ब्रह्मचारी भाईयों के रसोई घर में खिचड़ी खायी थी।

सौम्यमुद्रा का प्रभाव

मैं समय-समय पर शनि-रवि, छुट्टी तथा वेकेशन के समय आश्रम में जाता। मुझे तो उनके 'मुख की माया' लग गयी थी। मानो देखता ही रहूँ। मैं कुछ पूछता नहीं था। दूसरे पूछें तो उनका जवाब सुनता था। उनकी सौम्य मुद्रा एवं वचन का प्रभाव पड़ता।

पत्र लिखते तो पता लिखकर लिफाफे को बंद किये बिना मुझे देते थे और कहते : **"जा, पोस्ट कर देना।"** मैं पूछता : "पढ़ुं" तो कहते : **"पढ़ना"**। इस तरह मुझे पढ़ने की जिज्ञासा उत्पन्न हो ऐसा वर्तन करते थे।

ग्रंथ पढ़ने की सलाह

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने प्रथम मुझे बेंजामिन फ्रेंकलिन का जीवनचरित्र पढ़ने के लिए दिया था। फिर मोतीभाई अमीन का जीवनचरित्र पढ़ने दिया। फिर **'मणिरत्नमाला'** जो संस्कृत श्लोक और गुजराती विवेचन सहित थी, वह पढ़ने के लिये दी। फिर टोडरमलजी रचित **'मोक्षमार्ग प्रकाशक'** पढ़ने के लिए दीया। फिर **'उपमितिभवप्रपंच'** के तीन बड़े भाग हैं वह पढ़ने की सलाह दी, वह सुणाव में मैंने पढ़े। पूज्यश्री ने मुझसे कहा, **"याद रखना, मैं पूछूंगा।"** इसलिए मुझे ध्यान से पढ़ना पड़ता और वे पूछते भी।

प्रभुश्रीजी के पत्र पढ़कर आँखो में आँसु

पूज्यश्री के पास हस्तलिखित नोटबुके थी, जिसमें कृपालुदेव पर मुमुक्षुओं के पत्र तथा मुमुक्षुओं ने परस्पर एक दूसरे पर लिखे हुए पत्र तथा श्री ठाकरशीभाई आदि के निवेदन थे; इसके बाद उन्होंने वे नोटबुके मुझे पढ़ने के लिए दी थी। इसमे कृपालुदेव के प्रति प.पू. प्रभुश्रीजी द्वारा लिखित पत्रो को पढ़कर आँखों में आँसु आ जाते, रोना निकल जाता।

इनमें से लगभग चारसो जितने पत्र मैंने तथा नडियाद के नारणभाई देसाई ने उतार लिये थे । वह कॉपी मैंने पूज्यश्री के पास हाज़र की । पूज्यश्री ने कहा : "यह नोटबुक पढ़कर इसका इंडेक्स (अनुक्रमणिका) करो ।" तदनुसार प्रत्येक पत्र पढ़कर शीर्षक दे कर अनुक्रमणिका तैयार की ।

पूज्यश्री के समागम का लाभ

पूज्यश्री के साथ सीमरडा, दतांली, काविठा, सुणाव, कासोर, ढुंढाकुवा, आशी, अगास, उत्तरसंडा, नडियाद, भादरण, सीसवा, कुचेद, अंभेटी, सडोदरा, धामण, ववाणिया, पालीताना, वटामण जाने का और सत्संग, भक्ति, दर्शन का लाभ मिला था ।

बच्चों को पढ़ाने के लिए मैंने मोक्षमार्ग के शब्दार्थ आदि की नोट बनाई थी वह ६७ पाठ तक लिखी थी । वह मैंने पू. श्री ब्रह्मचारीजी को दिखाई । उसमें उन्होंने कितने ही सुधार तथा सुझाव कर के दिये । वह नोट ६७ वें पाठ से अधूरी ही रह गयी ।

सच्चे ब्रह्मचारी

पूज्यश्री सच्चे ब्रह्मचारी थे । प.पू. प्रभुश्रीजी मात्र उन्हें ही 'ब्रह्मचारी' कह कर पुकारते थे । जिनके नाम से जमुनामैया भी रास्ता दे दें ऐसे ब्रह्मचारी हैं, ऐसा कहते ।

प.पू.प्रभुश्रीजी जुनागढ़ रहने गये तब सुणाव के काभाई मुनदास उनकी सेवा में रहते । इसके पश्चात् अगास आश्रम की स्थापना हुई थी । तब काभाई सुणाव आकर रहे थे । वे प्रतिदिन मंदिर (उपाश्रय) में सत्संग में आते थे ।

समाधिमरण कराने के लिये अचानक आगमन

एक दिन अचानक पू. श्री ब्रह्मचारीजी अगास आश्रम से सुणाव उपाश्रय आ पहुँचे और कहा : **"काभाई मुनदास के यहाँ जाना है ।"** हम सब पूज्यश्री के साथ काभाई के वहाँ गये । काभाई बीमार थे । वहाँ भक्ति कर के, उन्हें मंत्र की स्मृति दिलाकर जागृत कर पूज्यश्री वहाँ से वापस लौटे । थोडी ही देर में काभाई ने देहत्याग किया । काभाई बीमार थे यह हम गाँव में होने के बावजूद भी जानते नहीं थे, परन्तु काभाई के जीवन का आज अंतिम दिन है, यह बात अंतर्ज्ञान से जानकर पूज्यश्री सुणाव आ पहुँचे थे ।

यह बटन तो चांदी का है

एक बार पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी से मैंने कहा : "मैं तो सोने-चांदी की कोई चीज नहीं पहनता ।" पूज्यश्री ने मेरे समक्ष देखकर कहा - **"यह बटन तो चांदी के है ।"** (वह बटन मेरी माता ने, धोने के लिए कुरता बदला था तब डाले थे ।)

मुझे बहुत बार कहते : "यह वीतराग मार्ग है, शूरवीरका मार्ग है, दीनता नहीं करनी ।"

अनेक ग्रंथों का सर्जन

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने अनेक ग्रंथो का सर्जन किया । किसी का अनुवाद, किसी का अर्थ, किसी का विवरण, संकलन एवं प्रकाशन किया । कितने तो उनके मौलिक ग्रंथ हैं, जो गुजराती गद्य-पद्य में हैं । इसके बावजूद कहीं पर उनका नाम नहीं। स्वयं तो मानो कृपालुदेव में विलीन हो गये थे ।

'ग्रंथ युगल' : यह ग्रंथ सीमरडा निवास दरम्यान लिखा थी । जैन तथा वेदांत के साररूप-नदी का संगमरूप प्रवाह जैसा है ।

'उपदेशामृत' : परम पूज्य प्रभुश्रीजी के वचनों को ग्रंथस्थ करना कठिन काम है । इमली के पत्ते की पत्तल बनाने जैसा कठिन कार्य है । जिसमें कुशलता और कला की आवश्यकता है । वह भी किया ।

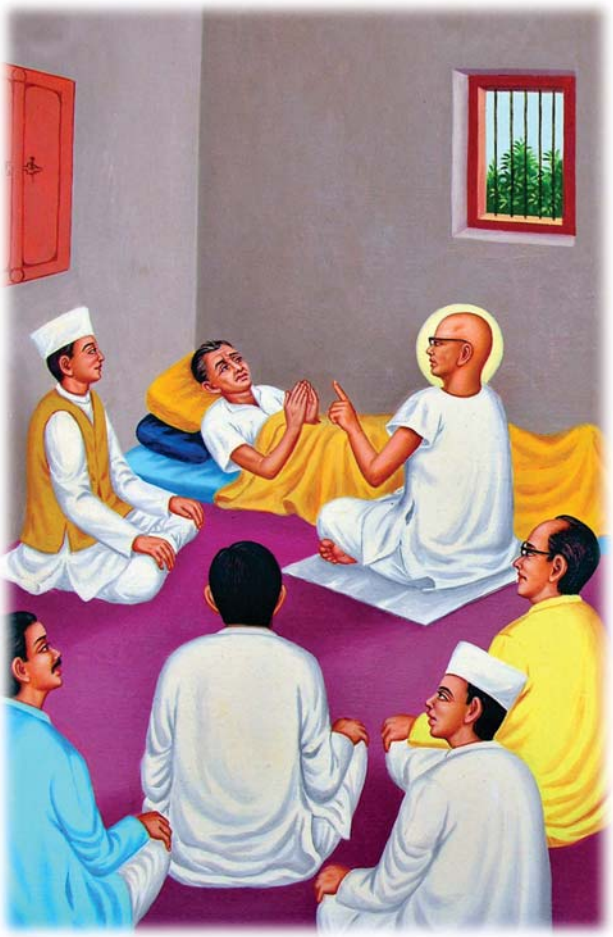

परमकृपालुदेव ने भविष्यवाणी की थी कि 'प्रज्ञावबोध' कोई करेगा

पंक्ति पंक्ति में परमकृपालुदेव का गुणगान

'प्रज्ञावबोध' श्री परमकृपालुदेव ने भविष्यवाणी की थी कि **'प्रज्ञावबोध'** भाग भिन्न है। उसे कोई और करेगा। उसके शीर्षक परमकृपालुदेव ने लिखे थे उस पर से पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने प्रज्ञावबोध की रचना की। भिन्न-भिन्न गेय रागों में, छंद में तथा परमकृपालुदेव के दिये हुए विषयों में उसकी रचना की है। परन्तु कहीं भी अपना नाम नहीं लिखा। जैसे रामचरितमानस में पंक्ति पंक्ति में श्री रामजी की भजना है, जैसे भागवत में श्लोक-श्लोक में भगवान विष्णु की भजना है, वैसे ही प्रज्ञावबोध की कड़ी-कड़ी में परमकृपालुदेव परमात्मा की भजना है। प्रत्येक पाठ की पहली गाथा परमकृपालुदेव की स्तुतिरूप है, वह अधिकतर ध्रुवपद में बार-बार आती है।

प. पू. ब्रह्मचारीजी के समक्ष कोई व्यवहारिक बात करें तो उसे पोषण नहीं देते बल्कि युक्ति से उस बात को घुमाकर परमार्थिक मोड़ दे देते थे।

परमकृपालुदेव के मार्ग को प्रकाश में लाने वाले

इस पुरुष ने परमकृपालुदेव के मार्ग को प्रकाश में लाया है। स्वयं उसकी नींव की ईंट बनकर रहे हैं। उनके हाथों अनेक मंदिरों की स्थापना हुई। परन्तु कहीं भी उनका अपना नाम नहीं। स्वयं मानो कुछ हैं ही नहीं ऐसे जानकर परमकृपालुदेव में विलीन हो गये।

पूज्यश्री हज़ारों मुमुक्षुओं के परिचय में आये फिर भी प्रत्येक का नाम, ठिकाना, गाँव स्वभाव से ज्यादातर वाकिफ थे।

प. पू. प्रभुश्रीजी की सेवा में आये, वह सच्चे सेवाभाव से, नाम अथवा किसी भी भौतिक लालच से नहीं। इस महापुरुष ने आश्रम को अपना समग्र जीवन अर्पण किया था।

'उपकारों को नहिं वीसरीए'

ऐसे महापुरुष अपनी प्रशंसा कभी नहीं करते। परन्तु हमें 'न-गुणा' (कृतघ्न) नहीं होना चाहिए। उपकारी के उपकार को भूलना नहीं चाहिए।

कायोत्सर्ग मुद्रा में देहत्याग

ये पुरुष पूरी जिंदगी कृपालुदेव में विलीन होकर जिये और अंत में देहत्याग भी उनके ही चरणों में - उनकी ही वीतराग मुद्रा के समक्ष कायोत्सर्ग मुद्रा में किया।

इस पुरुष ने अपने पूर्व के महापुरुषों का गुणगान-भक्ति की है और सभी को उनकी भक्ति करने को प्रोत्साहित किया है। जैसे हनुमानजी का स्मरण करते ही श्री रामजी की भक्ति और बहुमान होता है, वैसे ही पू. श्री ब्रह्मचारीजी के नाम के साथ परमकृपालु परमात्मा और प. पू. प्रभुश्रीजी स्मरण में आते ही हैं।

सभी आश्रम परमकृपालुदेव के नामसे चलते हैं

स्वामी श्री विवेकानंद के कारण उनके गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस का नाम अधिक प्रकट में आया है, छूप गया नहीं है। उनके सभी मिशन 'रामकृष्ण मिशन' के नाम से चलते हैं। वैसे ही इन उपकारी पुरुषों द्वारा परमकृपालु परमात्मा का वीतराग मार्ग विशेष विशेष प्रकट में आया है। सभी आश्रम परमकृपालुदेव के नाम से चलते हैं।

देहविलय के पश्चात् पूरी रात भक्ति

पू. श्री ब्रह्मचारीजी के देहविलय का समाचार सुनते ही मैं आश्रम में पहुँच गया। सारी रात बीच के दरवाज़े पर राज-मंदिर के नीचे भक्ति की। अगले दिन आश्रम के चारों ओर होते हुए स्मशानयात्रा जुलूस के रूप में निकाली। वर्तमान में जहाँ पूज्यश्री का समाधिस्थान हैं वहाँ दोपहर में अग्निसंस्कार हुआ था।

"पुनित ए गुरुवर्यना पदपंकजे मुझ शिर नमे,
दुर्लभ मनोहर संत सेवा विरहथी नहिं कंई गमे।
ए ज्ञानमूर्ति हृदय स्फुरती आँख पूरती आंसुथी,
निर्मल निरंजन स्वरूप प्रेरक वचन विश्वासे सुखी।"

-प्रज्ञावबोध पुष्प २५

पूज्यश्री के संसर्ग में मेरा बहुत रहना होता था। यदि किसी पुरुष के प्रत्यक्ष समागम की मुझ पर विशेष उत्तम एवं अच्छी छाप पड़ी है तो वह पू. श्री ब्रह्मचारीजी की है।

प्राध्यापक श्री दिनुभाई मूलजीभाई पटेल

वडोदरा

आश्रम की शांति तथा चित्रपटों की मुद्राओं को देख आनंद

पू. श्री ब्रह्मचारीजी की पहचान सन् १९४६ में मेरे काका श्री शिवाभाई चतुरभाई पटेल ने मुझे अगास आश्रम में ले जाकर करवाई । अगास आश्रम की स्वच्छता, शांति, परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्र और प.पू. श्री लघुराजस्वामी के चित्रपटों की मुद्राओं को देख मुझे बहुत खुशी होती ।

मैं भी उनका विद्यार्थी था

मेरे पू. पिताश्री मूलजीभाई चतुरभाई पटेल पू. श्री ब्रह्मचारीजी के साथ पेटलाद छात्रावास में एक ही रूम में रहकर हाईस्कूल में अभ्यास करते थे । मैं वडोदरा कॉलेज का विद्यार्थी बनकर तत्त्वज्ञान का विषय लेकर, उसी कॉलेज में तत्त्वज्ञान का अध्यापक बना । पू. श्री ब्रह्मचारीजी जब आणंद में दादाभाई नवरोजी हाईस्कूल के आचार्य थे, उस समय मैं भी उनका विद्यार्थी था । महात्मा गांधीजी के दांडीमार्ग के वक्त हाईस्कूल का अभ्यास छोड़कर स्वयंसेवक के रूप में जुड़ गया था । यह सब बातें जानकर पू. श्री ब्रह्मचारीजी मुझे अपने बालक कि तरह मानते थे ।

इंग्लेन्ड जाते वक्त मिला स्मरणमंत्र

जब मैं वडोदरा राज्य की छात्रवृत्ति लेकर उच्च शिक्षा के लिए दो साल के लिए (सन् १९४७ से १९४९) इंग्लेन्ड गया, उस वक्त मैं पू. श्री ब्रह्मचारीजी का आशीर्वाद लेने आश्रम में गया था । तब उन्होंने मुझे जुलाई १९४७ में राजमंदिर में स्वहस्ते परमकृपालुदेव के चित्रपट के समक्ष स्मरणमंत्र दिया था और उसका नित्य स्मरण करने को कहा था, उसे रोज़ करने से मुखपाठ हो गया था ।

पूज्यश्री के गुण

उनका सरल स्वभाव, स्वच्छ एवं सादी सफेद पोशाक तथा सर्व का भला करने की महान इच्छा, ये सब सद्गुण मुझे बहुत ही प्रिय लगे थे । फिर तो कई बार उनके साथ बातचीत करने के प्रसंग बनते ।

आश्रम में जो विषम प्रसंगो का सामना उन्हें करना पड़ा था उन प्रसंगो में भी उनका चेहरा आनंदित ही रहता । ऐसे प्रसंगो में शांति एवं धीरज से काम लेने की उनकी रीत अनोखी थी ।

संक्षिप्त में समझाने की सरल रीत

पू. श्री ब्रह्मचारीजी के साथ मैं सुबह-शाम सभामंडप में वांचन के वक्त उनके बहुत निकट बैठता था । उस वक्त, न समझ में आयें ऐसे **'श्रीमद् राजचंद्र'** ग्रंथ के वचनामृत आसानी से, सहजता से तथा संक्षिप्त में समझाने की उनकी रीत का मुझ पर बहुत प्रभाव पड़ा था ।

आत्मसिद्धि पर विचार करने की आज्ञा

जैसे सोक्रेटिस को अज्ञान के लिये दया आती थी वैसे ही पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी को अज्ञान-पीडितो के लिये दया आती और अनुकंपाभाव रखते हुए उनके प्रति वर्तन करते । कभी मैंने उनमें क्रोध अथवा आवेश नहीं देखा तथा सुना भी नहीं । मैं उनका अपना हूँ ऐसा मुझे हमेशा लगता था, समझ में आता था । उन्होंने मुझे आत्मसिद्धि को पढ़कर विचार करने को कहा उस मुताबिक मुझसे जितना बन पाया उतना मैंने अभ्यास किया है ।

परमकृपालुदेव के प्रति अनन्य भक्तिभाव

पू. श्री ब्रह्मचारीजी के तलस्पर्शी लेखों में परमकृपालुदेव के प्रति उनका अनन्य भक्तिभाव सभर भरा हुआ है । उत्तम देशभक्तों के समागम से प्रथम देशभक्ति, फिर प.पू. प्रभुश्रीजी के समागम से गुरुभक्ति और आखिर में आत्मचिंतन, मनन, निदिध्यासन करके उन्होंने अपना आत्मकल्याण सिद्ध किया । वास्तविकरूप में परमकृपालुदेव के अनन्यभक्त, वैसे ही पू. श्री लघुराजस्वामी के उत्तम शिष्य और प्रभुश्रीजी के निर्वाण के पश्चात् श्रीमद् राजचंद्र आश्रम के प्राणप्रेरक तथा अध्यात्म-ज्ञानानुभव के पूरक थे । इन तीनों महापुरुषों के परम अनुग्रह से श्रीमद् राजचंद्र आश्रम की सभी आध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ फलीफूली है और भविष्य में भी वैसा ही होगा । यह आश्रम बाह्य ताप से थके हुए जीवों का आश्रयस्थान है ।

पी.एअच.डी. से भी श्रेष्ठ कार्य

आत्मसिद्धि का गद्य अंग्रेजीकरण पू. श्री ब्रह्मचारीजी के साथ करीब १० से १५ दिने नियमित रूप से बैठकर आश्रम में ही एक-एक शब्द हम दोनों ने देख-जांच कर पूर्ण किया । उस वक्त मुझे कहा था कि **"पी.एच.पडी. की अपेक्षा यह कार्य ज्यादा अच्छी तरह से हुआ अै । इसकी प्रस्तावना तथा छ पद के पत्र का भी आपको अंग्रेजी में करना है ।"**

बारबार आश्रम में आना

शामको भोजन के बाद वडोदरा जाते वक्त मुझे अगास स्टेशन पर छोड़ने आये और जब गाड़ी में बैठकर, मेरी गाड़ी रवाना हुई तब तक पूज्यश्री मुझे आनंद से आशीर्वद देते रहे और कहा, **"समय निकालकर वडोदरा से वारंवार आश्रम में आते रहना ऐसा कहा था ।** ये सारे प्रसंग जब मैं स्मरण करता हूँ तब आध्यात्मिक स्वजनों के स्नेह तथा प्रेम का खयाल आता है । ऐसे उत्तम पुरुषों की छत्रछाया में हमेशा रह सकूँ ऐसी भावना एवं योग्यता मुझे विकसित करनी रही ।

मुझे ही लिखने को क्यों कहा वह समझ में आया

आत्मसिद्धि के गद्य अंग्रेजीकरण के समय मुझे कहाँ ख्याल था कि ऐसे प्यारे आदरणीय वरिष्ठ गुरु इसके बाद करीब १५ दिन पश्चात् देह छोड़ देंगे । यह समाचार भाई श्री शांतिलाल ने वडोदरा में मुझे दिया तब मुझे कुछ ख्याल आया कि आत्मसिद्धि के अंग्रेजी अनुवाद के साथ उसकी प्रस्तावना आदि लिखने को मुझे ही क्यों कहा था ।

अति प्रिय सत्पुरुष को मेरा वारंवार नमस्कार

अब वे सदेहरूप में आश्रम पर नहीं मिलेंगे यह सोचकर बहुत दुःख अनुभव हुआ । मैं तथा भाई श्री शांतिलाल तुरंत ही आश्रम में आये और उनके देह की अग्निसंस्कार क्रिया के वक्त उपस्थित रहे, उन्हें वहाँ नमस्कार किये, प्रदक्षिणा करके । हम से कुछ भी भूल हो गयी हो उसकी क्षमा उनकी चिता समक्ष माँगी । उन अतिप्रिय सत्पुरुष को मेरा वारंवार नमस्कार हो ।

श्री नाथाभाई भीखाभाई सुथार

सुणाव

पूज्यश्री की प्रेरणा से सुणाव में पाठशाला

प.पू. ब्रह्मचारीजी सुणाव में एक माह और दो दिन ठहरे थे । उस वक्त वे बोध देते और खूब उल्लास भाव से मुमुक्षु भक्ति भजन करते थे ।

पूज्यश्री के प्रेरणा से हमने सुणाव में ४-५ वर्ष पाठशाला चलायी थी ।

एक बार पूज्यश्री चल कर दंताली जा रहे थे । तब रेलवे के नाले के पास से सायकल पर एक बालक आ रहा था । उसे बचाते हुए स्वयं एक तरफ खिसकने गये और घुटना छिल गया था तथा उँगली से खून निकला था । फिर भी उसकी कुछ परवाह किये बिना पूज्यश्री मंत्र बोलते हुए दंताली गये थे ।

आश्रम पर कदम रखो तब पूनम समझना

एक बार सुणाव के फूलाभाई कुबेरभाई पटेल तथा मैं पूनम समझकर अगास आश्रम में गये । परन्तु उस दिन पूनम की जगह एकम थी । फूलाकाका बोले : "भिखु, आज तो पूनम नहीं, एकम है ।" उस वक्त प.पू. ब्रह्मचारीजी अनायास बाहर आते हुए हमारी यह बात सुनकर बोलें : **"जब जब आश्रम पर कदम रखो तब पूनम समझना । उल्लासभाव रखना ।"**

चेहरा शांत एवं तेजस्वी

पूज्यश्री मुझे पद्य, पत्र, मुखपाठ करने के लिए निशानी लगा कर देते । पूज्यश्री का चेहरा शांत, कपाल तेजस्वी और आँखे भी ब्रह्मचर्य के तेज से खिल उठी थी ।

पूज्यश्री के देहविलय के समाचार मिलते ही मैं तथा गोरधनभाई वल्लभभाई पटेल दोनों सुणाव से चलकर आश्रम में रात को दो बजे पहुँच गये थे । उस वक्त पूज्यश्री के पार्थिव देह को राजमंदिर के नीचे के दरवाजे में बिराजमान कर उनके समक्ष मंत्रस्मरण की धून चल रही थी, वहाँ हम बैठे थे । अगले दिन दोपहर में पूज्यश्री के अग्निसंस्कार की विधि पूर्ण कर शोक सहित घर लौटे थे ।

श्री रावजीभाई छगनभाई देसाई

अगास आश्रम

उपदेशामृत का कार्य पूज्यश्री के हाथों

संत शिरोमणि प्रभुश्रीजी की सेवा में सर्वार्पणता से जीवन समर्पित कर परमकृपालुदेव की आज्ञा आराधन करनेवाले तथा मुमुक्षुओं को परमकृपालुदेव की आज्ञा आराधन के प्रति प्रेरित करने में प्रयत्नशील होकर सेवा अर्पण करनेवाले अध्यात्म प्रेमी सद्‌गत पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने इस ग्रंथ के संपादन कार्य में खूब उल्लास से और सावधानी से अपनी सर्व शक्ति और समय का भोग देकर परिश्रम लिया है। **जिससे इस ग्रंथ प्रकाशन का सर्व श्रेय उनको ही जाता है।**

उनके मार्गदर्शन से यह ग्रंथ (उपदेशामृत) संपादित हुआ है । जिसके फलस्वरूप आज यह ग्रंथ मुमुक्षुओं को समर्पित करते हुए आनंद होता है। परन्तु उसके साथ इस बात का खेद भी है कि यह ग्रंथ तैयार होकर मुमुक्षुओं के हाथ आये उसके पहले ही इस पवित्र आत्मा का देहत्याग हो गया ।

वीतरागश्रुत-प्रकाशनरूप आश्रम के ग्रंथ प्रकाशन में उन्होंने जीवनभर दी हुई सर्वोत्तम सेवा के लिए उन्हें धन्यवादपूर्वक स्मृति अंजलि अर्पित करना उचित है ।

'उपदेशामृत' निवेदन में से (पृ. ५)

परमकृपालुदेव के प्रति ही स्थिर रहने का उपदेश

प.पू. प्रभुश्रीजी ने अपने जीवन दरमियान जैसे **एक परमकृपालुदेव की ही श्रद्धा, भक्ति, उपासना में स्थिर रहने का बार-बार उपदेश दिया है।** उसी में साधक का परमआत्महित है, ऐसा उपदेश दिया है । वैसे ही **पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने भी एक परमकृपालुदेव के प्रति ही अपनी श्रद्धा स्थिर रखने का बार-बार दृढ़तापूर्वक उपदेश दिया है।**

परमकृपालुदेव तथा **प.पू.प्रभुश्रीजी के योगबल** से यह मूल मार्ग **रत्नत्रय आश्रम हुआ,** उसका विकास हुआ और वर्तमान में उन्नति के स्तर पर आ पहुँचा । इसके लिए **आश्रम उनका जिस रीत से अत्यंत आभारी है,** वैसे ही प.पू.प्रभुश्रीजी के देहविलय के पश्चात् उनकी आज्ञानुसार जिन्होंने मुमुक्षुओं की उन्नति में अपनी निष्काम सेवा का योगदान दिया है ऐसे **पू. श्री ब्रह्मचारीजी का...भी यह आश्रम उतना ही आभारी है।** ('सुवर्ण महोत्सव' में से)

कायोत्सर्ग में देहत्याग

श्री सनातन मोक्षमार्ग के उद्धारक परम तत्त्वज्ञ श्रीमद् राजचंद्रदेव के अनन्य आज्ञाउपासक, आत्मनिष्ठ महर्षि श्रीमद् लघुराज स्वामी के परम पुनीत चरणोपासक और उनकी सेवा में सर्वार्पणता से जीवन अर्पित कर स्व-परहित के लिए सदा प्रवर्त्तन करनेवाले, सतत उल्लास और सावधानी से परमार्थप्रेमी मुमुक्षुजनो के सदा ही परमार्थ के प्रेरक-सहायक सिद्ध होनेवाले श्रीमद् राजचंद्र आश्रम (अगास) में बिराजनेवाले अध्यात्मप्रेमी पू. श्री ब्रह्मचारीजी गोवर्धनदासजी का संवत् २०१० कार्तिक सुदी ७ शुक्रवार को शाम के ५.४० बजे समाधिपूर्वक कायोत्सर्ग में एकाएक देहत्याग होने से सर्व मुमुक्षु समुदाय के लिए परमखेद का कारण बना है ।

मुमुक्षुओं की अंजलि

पूज्यश्री का जन्म बांधणी गाँव में चरोतर के पाटीदार कुल में हुआ था । वे सन् १९२२-१९२३ में आश्रम में आये थे । यहाँ पूज्यश्री की अंतिम विधि के प्रसंग पर एकत्र हुए सैंकड़ों मुमुक्षुओं के स्नेह भरे हृदय में अत्यंत आघात का अनुभव किया। इस अवसर पर अगास आश्रम के विद्वान ट्रस्टी श्री अमृतलाल परीखजी ने नीचे लिखे अनुसार पूज्यश्री को अंजलि अर्पित की थी ।

पवित्र आत्मा के पवित्र गुण

आज के इस अवसर पर मेरा हृदय बहुत भर आया है । इसलिए अधिक तो कह नहीं सकता । इस पवित्र आत्मा के प्रत्येक गुण का वर्णन करने में तो बहुत वक्त लग जाए ऐसा है । किसी भी पवित्र आत्मा का मूल्यांकन उनके जीवनकाल में हम आँक नहीं सकते । परन्तु जैसे जैसे काल व्यतीत होता है वैसे वैसे उनका माहात्म्य हम शांति से आँकते जाते हैं ।

परमकृपालु महावीर के सनातन मूल आत्मधर्म का उद्धार इस काल में परमकृपालु श्रीमद् राजचंद्रजी ने किया है और उसका उद्योत परमकृपालु आत्मनिष्ठ श्रीमद् लघुराजजी ने, एकनिष्ठासे जीवनपर्यंत किया है, ये परमकृपालु श्रीमद् लघुराजजी के प्रति एकनिष्ठा से, मानपूजा की कामना किये बिना, निःस्पृहता से, सर्वार्पणता से, आज्ञांकितरूप से इस पवित्र आत्मा ने अनन्य सेवा दी है ।

परमात्मपद के आनंद में स्वयं झूले और दूसरों को भी झूलाया

परमकृपालु लघुराजजी के देहावसान के पश्चात् लगभग सत्रह वर्षों तक **परमात्मपद के आनंद में अति उल्लासपूर्वक स्वयं भी रंगे और हम सब मुमुक्षुओं को भी रंगमें रंग दिया।** इसके लिए स्वपरहित हेतु अप्रमत्तता से जिन्होंने जीवन व्यतीत किया ऐसे इन पावन आत्मा की गुणस्मृति क्या कर सकते हैं ? फिर भी मेरी तरफसे और आप सब की ओर से भक्तिभरे चित्त से, उत्तमगति को प्राप्त ऐसी इस पवित्र आत्मा को अंतिम अंजलि अर्पित करता हूँ। इस जगत में इस पवित्र आत्मधर्म की जय हो !

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

इस निमित्त से श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास में कार्तिक सुदी ११ से कार्तिक वदी ४ तक अट्ठाई महोत्सव रखने में आया है । सभी मुमुक्षुओं को इसका लाभ लेने की विनती हैं । श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, स्टे. अगास । ता. १४-११-५३

(ली. संतचरणरज रावजीभाई देसाई)

श्री चिमनलाल गोरधनदास देसाई

नडियाद

संवत् १९७६ में वैष्णव कुल में मेरा जन्म हुआ था । मेरी दादीमाँ अत्यंत भागवत प्रेमी थी । बचपन में भी रामचंद्रजी तथा श्रीकृष्ण आदि के जीवन चरित्र उनके पास से सुनकर मुझमें धर्म के संस्कार पड़े । इसके पश्चात् भगवतगीता में श्रीकृष्ण द्वारा वर्णित आत्मा का वर्णन सुनकर और स्वामीश्री रामतीर्थ के आत्मा उपरके प्रवचन पढ़कर आत्मा की ओर मेरा झुकाव हुआ।

इसके पश्चात् वि.सं. २००० में किसी सद्भाग्य पल में मेरे मित्र श्री नारणभाई देसाई मुझे अगास आश्रम पर लेकर आये और प.पू. ब्रह्मचारीजी के साथ मुझे दो-तीन दिन सत्संग करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ ।

प.पू. ब्रह्मचारीजी की मुद्रा मुझे परमशांत एवं सौम्य लगी और जो प्रश्न मैंने किये थे उनके मुझे सुंदर प्रतीति आये ऐसे उत्तर मिले । फिर पूज्यश्री ने मेरे उपर कृपा करके मुझे 'तत्त्वज्ञान' पुस्तिका दी । उसमें परमकृपालुदेव के चित्रपट पर "सहजात्मस्वरूप परमगुरु" ऐसा लिखकर दिया तथा बीस दोहे, यमनियम और क्षमापना के पाठ पर निशान कर नियमितरूप से अभ्यास करने को कहा । खासकर सात व्यसन का त्याग तथा अभक्ष्य पदार्थों का त्याग करने का सुझाव भी दिया था।

इस प्रसंग के अनुलक्ष्य से मुझे परमकृपालुदेव का जीवनचरित्र पढ़ने का योग प्राप्त हुआ । उसमें परमकृपालुदेव की दर्शायी हुई अद्भुत अवधान शक्ति से मैं खूब प्रभावित हुआ था और उस समय ही मुझे आत्मा की कैसी शक्ति होती है इसका कुछ परिचय हुआ । विशेषरूप से परमकृपालुदेव ने मुमुक्षु लक्षण जैसे कि अखंड नीति का मूल आत्मा में स्थापित करना, द्रव्यादि संपादन करने में न्यायसंपन्न रहना इत्यादि जो उपदेश दिया है उसका मुझ पर गहरा प्रभाव पड़ा और उसी अनुरूप अपना जीवन बिताना ऐसा विचार किया था ।

यदि मुझे प.पू.ब्रह्मचारीजी का सत्संग न मिला होता तो वर्तमान में मेरे जीवन में जो परिवर्तन हुआ है या हो रहा है वह होता या नहीं यह प्रश्न है । इसलिए इस सब का श्रेय प.पू. ब्रह्मचारीजी के साथ संवत् २००० में हुआ प्रथम घनिष्ठ सत्संग को ही है, ऐसा नम्रतापूर्वक निवेदन कर यहाँ विराम लेता हूँ ।

श्री गोविंदजी जीवराज लोडाया

मुंबई

पू. श्री ब्रह्मचारीजी ध्यानस्थ मुद्रा में

आजसे अनेक वर्ष पहले अगास आश्रम में जाना हुआ था तब आश्रम का वातावरण बहुत ही रमणीय फिर भी गंभीर, भक्ति की घंटियों से गूँजता फिर भी शांत, सभी अपने भक्तिकर्तव्य में प्रवृत्त फिर भी आत्मीयता से भरपूर ऐसा भासित हुआ था। देवदर्शन, गुरुवंदन के अलावा भी रात को भक्ति-रस का गुंजन कुछ अनोखी भावना को प्रेरित करता।

ऐसे पवित्र वातावरण का मेरे अपरिपक्व दिमाग पर असर हो रहा था। इतने में दो-तीन दिन के बाद देववंदन करानेवाले अध्यात्मप्रेरक विभूति पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के सानिध्य में और अधिक आने का हुआ। हमारी माताश्री हमें शांतिस्थान में उनके पास लेकर गयी और हमें गुरुमंत्र देने की विनती की।

इसके पहले साधारण बातचीत के दौरान पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने मुझसे पूछा : "तेरे पिताजी सट्टा करते हैं ?" मैंने कहा : "हाँ करते हैं।" फिर पूछा : "तू करेगा ?" मैंने कहा : "नहीं।" इस प्रकार थोड़ी बातचीत के पश्चात् पूज्यश्री ने सात व्यसन एवं सात अभक्ष्य का ख्याल करवाया। मक्खन के सिवाय अन्य वस्तुएँ छोड़ने का नियम देने के लिए मैंने विनती की तब 'तत्त्वज्ञान' पुस्तक में अपने हाथसे उन्होंने नियम लिखकर दिये तथा "ताजा मक्खन लेना, स्वाद के लिए नहीं।" ऐसा भी लिखकर दिया। फिर "सहजात्मस्वरूप परमगुरु" का मंत्र मुखपाठ करवाया और नियमितरूप से यह मंत्र-जाप करने को कहा। मंत्रदान के बाद माताश्री के संकेत अनुसार मैंने दंडवत् किया और खड़े होकर मैंने सहजता से पूज्यश्री को कहा : "साहेब, आप खड़े रहो तो।"

"क्यों ?" बोलते वक्त उनके प्रभावशाली मुख में गंभीरता थी। मैंने उनसे कहा - "आपका फोटो लेना है।"

सहज विचार के लिए थोड़ा रुके लेकिन फिर मेरे मन के भाव को न तोड़ने के इरादे से मानो मौन सहमति दी हो इस तरह स्वयं सहजभाव में काउसग्ग मुद्रा में खड़े रहे। वह गंभीर फिर भी प्रसन्न मुखमुद्रा इस आसन में अधिक प्रतिभाशाली दिखाई दे रही थी। मैंने तुरंत फोटो खींच लिया, जो यहाँ सामने छपा है। बाद में पता चला कि पूज्यश्री किसी को भी अपनी छबि निकालने की अनुमति नहीं देते थे। इस बात से अन्य लोगों को आश्चर्य हुआ। मेरी युवाभावना को न दुभाने का पूज्यश्री का करुणामय व्यवहार मुझे स्पर्श कर गया था।

श्री ओटरमलजी के. साटिया

शिवगंज

सच्चे गुरु के लिए की गयी प्रार्थना सफल

(१) ये पुरुष निःस्पृह हैं। (२) ये पुरुष आप्तपुरुष हैं, मोक्षमार्ग में मुझे ठगेंगे नहीं। (३) मुझे सच्चे गुरु मिल गये, भगवान ने आज मेरी प्रार्थना सुन ली।

इन तीनों बातों का एक साथ पू. श्री ब्रह्मचारीजी के आत्मा में से मेरे आत्मा पर सहज स्वाभाविक प्रतिभास हुआ। यह उनकी गुणातिशयता थी। मैं मंदिर में शांतिनाथ भगवान के समक्ष दो वर्षों से नियमित रूप से सच्चे गुरु की प्राप्ति के लिए प्रार्थना करता था। कोई गौतमस्वामी समान, कोई हेमचंद्राचार्य समान सच्चा गुरु इस काल में जहाँ भी हो वहाँ से मुझे मिले। सच्चे गुरु के पास से है भगवान्! मैं आपका सच्चा धर्म समझुँगा। आपका धर्म अति गहन है, अगाध है; इसलिए संपूर्ण रूप से आराधन नहीं हो पायेगा, आंशिक हो पायेगा। यदि धर्म की आराधना करुँगा तो सच्चे धर्म की ही आराधना करुँगा, अन्यथा धर्म की आराधना ही नहीं करुँगा। ऊपर बताये अनुसार अगास आश्रम में पू. श्री ब्रह्मचारीजी की बैठक के कमरे में उनकी परम करुणा मुझ पर बरसी तब मोक्षमार्ग के लिए मुझे निश्चिंतता (शांति) आ गयी। पूज्यश्री मुझे तत्त्वज्ञान देते वक्त राजमंदिर में परमकृपालुदेव के चित्रपट के सन्मुख लेकर गये और कहा कि हमारे गुरु ये **'श्रीमद् राजचंद्र'** तथा वहाँ परमकृपालुदेव के चित्रपट सन्मुख स्वयं तीन नमस्कार कर मुझे परमकृपालुदेव की आज्ञा मान्य करायी। मेरे आप्त इन संतपुरुष के कहने से मुझे परमकृपालुदेव की आज्ञा मान्य हुई। संत के कहने से मैं परमकृपालुदेव का शिष्य बना।

अंतरंग चारित्र में विराजमान परमात्मा

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के पवित्र चरणकमल में हजारों नमस्कार करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था, परन्तु जब मैं उनके पवित्र चरणों में नमस्कार करता था तब-तब पूज्यश्री स्वयं परम निःस्पृहभाव से, परम असंगभाव से, सहजस्वरूप से मेरे सर्व नमस्कार परमकृपालुदेव को पहुँचा रहे हैं, ऐसा स्पष्ट भासित होता। उनके अंतरंग चारित्र में ऐक्य भाव का लक्ष्य होने से उनके अंतःकरण में विराजमान परमात्मा के साथ ऐक्य भाव होता था।

पूज्यश्री की अनुभव सहित वाणी का प्रभाव

पूज्यश्री की वाणी सहज स्वभाव से प्रकाशित होती थी, आत्मा के शुद्ध उपयोग को स्पर्श करती। उस शांतरसगर्भित वाणी का श्रवण करते ही रहें, उस वाणीरूपी अमृत का आत्मा में सिंचन करते ही रहें ऐसा उनके परम सत्संग में महसूस होता रहता। **'सहज विशुद्धि के अनुभव वचन थे।'** सहजस्वरूप में स्थित, आत्मा के शुद्ध उपयोग से उदय में आती उनकी अनुभवसहित वाणी से यह आत्मा पवित्र होता था। वे सदैव सहज समाधियुक्त दिखते, मोक्षमूर्ति समान दिखते। उनके दर्शन मात्र से सर्व विकल्प शांत हो जाते।

स्वहस्ते परमकृपालुदेव की स्थापना

परम करुणा करके इस आत्मा की विनती सुनकर, वे हमारे घर शिवगंज पधारे तथा अपने हाथों से परमकृपालुदेव के चित्रपट की स्थापना (हमारे घर में) की। उस वक्त वे तीन-चार हमारे यहाँ ठहरे थे। दूसरी बार आहोर से आश्रम जाते वक्त बीच में हमारे घर पर दो-तीन घण्टो के लिए **'हेते आव्या हाली चाली'** स्वैच्छा से अचानक पधारे थे। साथ में, अनेक मुमुक्षु भी थे। उस वक्त मैं घर पर नहीं था। हमारे घर पर स्थापित चित्रपट के समक्ष भक्ति करके आश्रम पधारे थे।

सांगोपांग नीति की पुष्टि

मुझे समय समय पर सांगोपांग नीति के महत्व की पुष्टि कराते हुए व्यवसाय के बारे में कहते कि, **"पैसा आपको नहीं बचा सकता, परन्तु धर्म बचायेगा।"** इस तरह परम संतोष का उपदेश देकर मुझे कृतकृत्य किया था और आशीर्वाद देकर गये की जो पुराना चला गया वह अच्छा हुआ। सब नया होगा। मुझे बचपन से ही सांगोपांग नीति के विचार रहते थे और फिर उसमें पू. श्री ब्रह्मचारीजी द्वारा न्याय नीति की विचारधारा को पुष्टि मिलने से आत्मा में खूब आनंद रहता है।

परमकृपालुदेव प्रत्यक्ष

पूज्यश्री आबू आये थे तब एक बार मैंने सहज प्रश्न किया था कि : "परमकृपालुदेव प्रत्यक्ष हैं?" तुरन्त उत्तर मिला कि **"हाँ, प्रत्यक्ष हैं।"**

जूनागढ़ में पहाड़ पर स्थित देरासर में स्वयं ने एक स्तवन गवाया था : **"देखण दे रे सखी मुने देखण दे, चंद्रप्रभ मुखचंद सखी मुने देखण दे।"** परम शांति से, सहज भाव से, मधुर वचन से, मानो भगवान के साथ बात करते हों इस तरह गाया था। ज़रा भी कृत्रिमता नहीं, विकृति नहीं। उनकी प्रत्येक चेष्टा के अद्‌भुत रहस्य तब दृष्टिगोचर हो रहे थे, हृदयगत हो रहे थे।

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का निवास स्थान, आश्रम

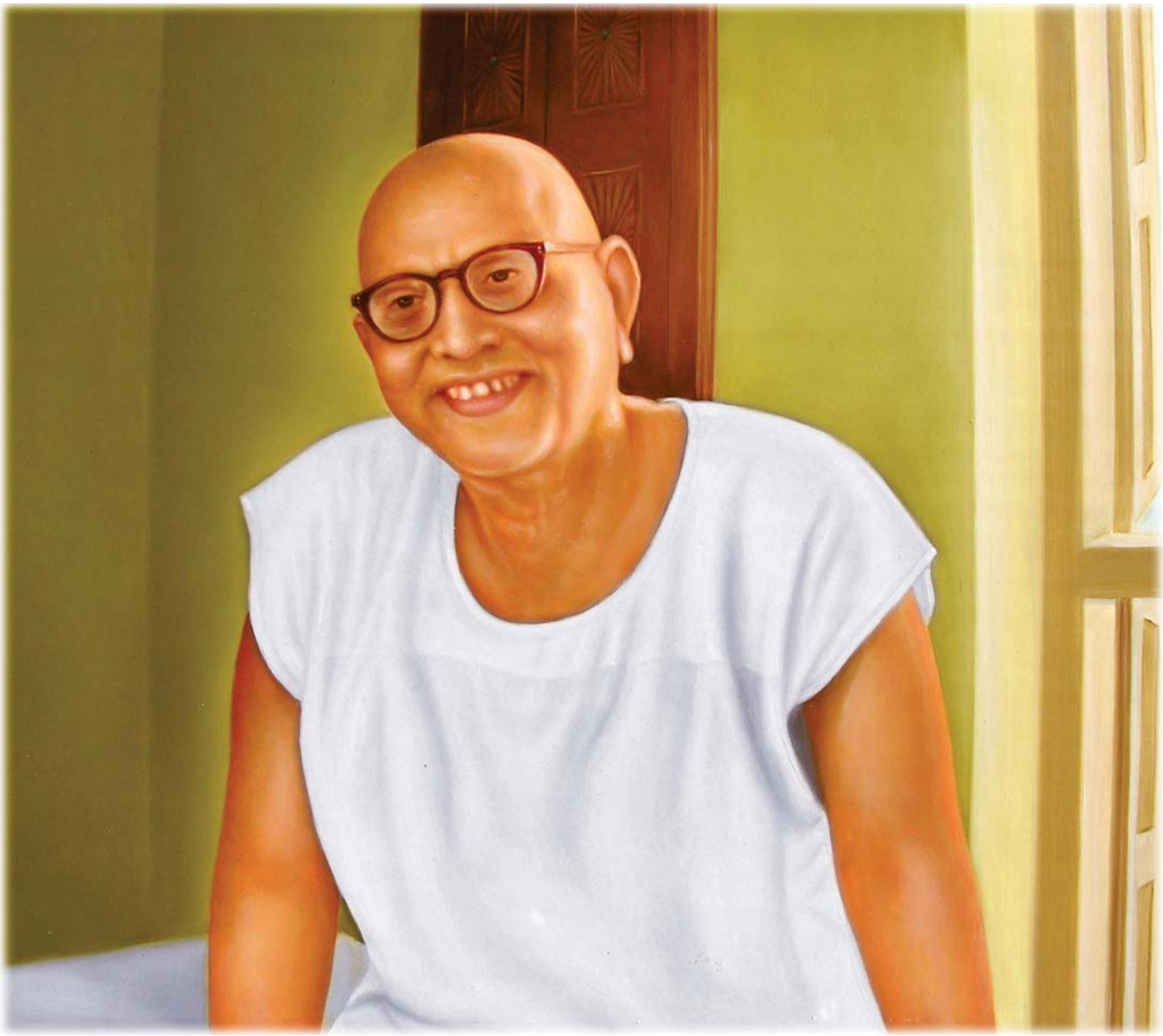

मूल मार्ग रत्नत्रय, यही है जैन धर्म

इंदौर में श्री हुकमीचंद सेठ ने बगीचे में अपने निवृत्ति के समय में पू. श्री ब्रह्मचारीजी को प्रश्न किया कि "जैन धर्म क्या है ?" तब जवाब में तुरन्त ही 'मूळ मारग सांभळो जिननो रे' यह पद्य सभी मुमुक्षुओं के साथ खुदने गाया था। उस समय बैठक के कमरे में अद्‌भुत शांति महसूस हो रही थी। साक्षात् परमकृपालुदेव यह पद्य बोल रहे हों और सेठ को सुना रहे हों ऐसा वातावरण उत्पन्न हो गया था।

समाधिमरण होने के लिए रागद्वेष का त्याग करना

एक बार मैंने पू. श्री ब्रह्मचारीजी से पूछा कि, "समाधिमरण होने के लिए मुझे क्या करना है ?" तुरन्त जवाब दिया कि "**राग द्वेष नहीं करना, जाईए।**" अर्थात् राग द्वेष न करें तो अवश्य कल्याण है।

श्री ओटरमलजी

श्री धर्मचंदजी जोराजी

शिवगंज

मेरा अहोभाग्य

सं. २००३ में मेरा प्रथम बार श्रीमद् राजचंद्र आश्रम में श्री ओटरमलजी के साथ आना हुआ। उस समय श्री आश्रम का उत्तम भव्य स्थान देख मुझे खूब आनंद हुआ।

फिर स्नान आदि करके, पूज्यश्री के समागम हेतु ऊपर गये और पूज्यश्री के दर्शन होते ही अंतरंग में ऐसा हुआ कि मेरा अहोभाग्य कि ऐसे महापुरुष का मुझे आज समागम हुआ। फिर मैंने नित्यनियम लिया।

नहाने धोने में रहेंगे तो आत्महित कैसे होगा?

संवत् २००५ में मैं दुबारा आश्रम आया तब पूज्यश्रीजी आशी गये हुए थे, इसलिए मैं भी आशी गया। अगले दिन कुँए पर नहाने गया। वहाँ कपड़े धोने में बहुत समय लग गया जिससे मैं भक्ति में देरी से पहुँचा। भक्ति चल रही थी। भक्ति पूर्ण होते ही पूज्यश्री ने मुझसे कहा : "नहाने धोने में समय बिता देंगे तो आत्महित कैसे होगा?" इस डाँट से मेरी शिथिलता से कपड़े धोने की तथा टिपटॉप रहने की जो आदत थी वह सहजरूप से मिट गयी और खूब सफाई से कपडे धोने में समय गँवाने की आदत भी बंद हो गयी।

महान विभूति के दर्शन से आनंद

पूज्यश्री सं.२००९ में नासिक से बोरीबंदर स्टेशन पधारने वाले हैं, ऐसे समाचार मिले। इसलिए मैं और मेरी पत्नी दोनों स्टेशन पर जल्दी पहुँच गये। हम राह देख रहे थे कि पूज्यश्री कब पधारें और उनके दर्शन हों, इतने में मानो देवविमान से कोई महान विभूति नहीं आई हो ऐसे हमें दर्शन हुए और खूब आनंद हुआ।

शांति एवं नीति से आजीविका चलाना

फिर पूज्यश्री चोपाटी पर छोटालालभाई के घर पधारे। हम भी वहाँ गये। पूज्यश्री ने मुझे उपदेश दिया : "शांति से तथा नीति से आजीविका चले उतना मिले, तो शांति रखना।" उन वचनों का मुझपर आजतक असर है और प्रभुकृपा से शांति रहती है। अशांति के संजोग उत्पन्न होते हैं परन्तु उनके वचनों से शांति रहती है। फिर पूज्यश्रीजी चार दिन मुंबई में रुके थे और तब तक हमें उनके उपदेश का खूब लाभ प्राप्त हुआ था।

पूज्यश्रीने किया अनंत उपकार

पू. श्री ब्रह्मचारीजी को, प. पू. प्रभुश्रीजी के समागमसे परमकृपालुदेव के प्रति जो भक्ति जगी थी, वही परम भक्ति उन्होंने 'प्रज्ञावबोध' ग्रंथ में गायी है। उसमें भक्ति की लहरें छूटती हैं। ऐसे भक्तियुक्त पदो की रचना करके पूज्यश्री ने मुमुक्षुओं पर अनंत अनंत उपकार किया है। इन पदो से मुमुक्षु जीव अपनी योग्यतानुसार हित साध सकते हैं, मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।

रोम रोम में परमकृपालुदेव

पूज्यश्री के रोमरोम में परमकृपालुदेव के सिवाय अन्य बात नही थी। मानों परमकृपालुदेव को ही हृदय में धारण किया हो, स्वयं उनमें ही मगन हों इस तरह बिराजते तथा बोध देते। पूज्यश्री ने स्वयं परमकृपालुदेव में मग्न रहकर जिस अपूर्व आनंदसुख को प्राप्त किया था, वह परमानंद सुख अन्य भव्य जीव भी प्राप्त करें इसलिए मुमुक्षुओं को भी परमकृपालुदेव के प्रति प्रेम, प्रीति, भक्ति करने के लिए बार-बार कहते। **'प्रज्ञावबोध'** में भी वही भक्ति गूँज रही है। अहो! धन्य है ऐसे उपकारी सत्पुरुष को जिन्होंने इस किंकर पर और उसी प्रकार अनेक मुमुक्षुओं पर अलौकिक दया बरसायी है। कोटी-कोटी नमस्कार हो उनके चरणकमल में।

श्री पारसभाई जैन

अगास आश्रम

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी की दिनचर्या

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी की दिनचर्या का दिग्दर्शन मुमुक्षुओं के अंतरंग में पुरुषार्थ प्रेरक होने से जानने योग्य है। पूज्यश्री एक सच्चे कर्मठ योगी थे। योगी पुरुषों के विचार, वाणी और वर्तन अलौकिक होते हैं।

सतत पुरुषार्थमय जीवन

जब तक प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी विद्यमान रहे, प.पू.श्री ब्रह्मचारीजी उनकी सेवा में ही रात दिन रहते। प्रातः तीन बजे उठकर प.पू. प्रभुश्रीजी के पास गोम्मटसार जैसे गहन ग्रंथो का स्वाध्याय करते। उसके पश्चात् साढ़े चार अथवा पाँच बजे भक्ति का क्रम शुरू होता था।

प.पूप्रभुश्रीजी के देहावसान के पश्चात् प्रातः साढ़े चार बजे की भक्ति में पूज्यश्री पधारते थे। प्रारंभ में बोले जाने वाले पद तथा माला भी पूज्यश्री बुलवाते। भक्ति पूर्ण होने पर सर्व दर्शनीय स्थानों के दर्शन करने हेतु पूज्यश्री चूके बिना अवश्य जाते। साथ में बड़ा मुमुक्षु समुदाय भी दर्शन के लिए जाता।

मुमुक्षुओं के साथ दर्शन हेतु जाते हुए पू. श्री ब्रह्मचारीजी

प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी के अंतेवासी तरीके से रहे पू. ब्रह्मचारीजी का निवावस्थान प. पू. प्रभुश्रीजी का कमरा ही था। उस कमरे में प. पू. प्रभुश्रीजी की पाट के पास एक छोटे टेबल पर पूज्यश्री अधिकतर विराजते थे।

स्व-पर हित का कार्य

प.पू.प्रभुश्रीजी के कमरे मे[illegible] पाट, वह पूज्यश्री का प्रतिदिन का बैठकस्थान था। सुबह करीब साढ़े आठ बजे मुमुक्षु पूज्यश्री के [illegible] थे। पूज्यश्री बोध देते, मोक्षमाला समझाते अथवा आठ दृष्टि की सज्झाय आदि का अर्थ भी करते थे। सत्संग में पूज्यश्री मुमुक्षुओं की शंकाओ का समाधान करते, मुझे भी मोक्षमाला का आठवां पाठ ‘सत्देव तत्त्व’ वहाँ पढ़ाकर समझाया था।

करने में तत्पर

किसी का मुखपाठ किया हुआ सुनते, किसी को पत्र, भक्ति के छंद, मोक्षमाला आदि मुखपाठ करने के लिए देते। किसी को वचनामृत अथवा अन्य पुस्तकें पढ़ने की आज्ञा भी देते। सभी को दिये हुए पाठ के संबंध में समय पर पूछते भी थे। जिससे सभी मुमुक्षु प्रमादरहित होकर दोपहर को जागकर मुखपाठ करते अथवा शास्त्र-वांचन का लाभ लेते। इस तरह जिज्ञासु मुमुक्षुओं का सहज ध्यान रखते हुए पूज्यश्री स्व-परहित का कार्य करने में तत्पर रहते थे।

सभा मण्डप में
पढ़ाई जानेवाली
पूजा में विराजमान
पू. श्री ब्रह्मचारीजी
तथा
मुमुक्षु भाई-बहन

उस समय सुबह की
भक्ति का क्रम
साढ़े नौ बजे का था ।
प्रतिदिन पूजा नहीं
पढ़ाई जाती थी ।
इसलिए वांचन का
क्रम विशेष रहा करता
था । सभा में पंडित
गुणभद्रजी वचनामृत
का वांचन
करते और
पूज्यश्री से पूछते
तब पूज्यश्री योग्य
स्पष्टीकरण
करके अर्थ
बताते थे ।

भक्ति पूर्ण होने पर नीचे उतरते हुए पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

सहज निरभिमानी दशा

सं. २००६ के पश्चात् वर्तमान में जिस कमरे में पूज्यश्री के दो चित्रपट दर्शन हेतु रखे हुए है, वह स्थान पूज्यश्री का कायम का निवासस्थान बन गया। उस कमरे में रखे हुए लकड़ी के पाट पर चटाई बिछाई हुयी रहती। उस पर पूज्यश्री बिराजते थे। उनके सामने सत्संग हेतु आये हुए मुमुक्षु भाई-बहन बैठते। पूज्यश्री बोध देते तथा किसी को मंत्र लेने की भावना होती तो मंत्र के बारे में उसे समझाते। मुझे आठ वर्ष की उम्र में पूज्यश्री ने आजीवन मंत्र दिया था। पूज्यश्री की बैठने तथा बोलने की सहज निरभिमानी दशा अद्‌भुत थी।

बहनों में भी आत्मजागृति की संभाल

साढ़े ग्यारह बजे भक्ति पूर्ण होने के बाद पूज्यश्री, ब्रह्मचारी भाईयों के रसोई घर में भोजन हेतु जाते। भोजन के पश्चात् शांतिस्थान पर घूमते-घूमते माला गिनते थे। फिर मुमुक्षुओं के आने पर उनके साथ सत्संग हेतु विराजते। वहाँ से करीब पौन बजे शांतिस्थान में पधारते। वहाँ पंडित गुणभद्रजी के साथ बैठकर श्री साकरबहन इत्यादि ब्रह्मचारी बहनों को शास्त्र पढ़ाते। **कर्मग्रंथ, श्री सर्वार्थसिद्धि टीका, सूयगडांग, आचारांग, दशवैकालिक आदि सूत्र, तत्त्वार्थसार, लाटीसंहिता आदि ग्रंथो का स्वाध्याय होता था।**

डेढ़ बजे वहाँ दूसरी अनेक बहनें भी आती थी। उन्हें तथा ब्रह्मचारी बहनों को भी नया नया सीखने हेतु पत्र तथा मोक्षमाला के पाठ देते। किसी का सीखा हुआ सुनते। मोक्षमाला तथा वचनामृत के पत्रों आदि का अर्थ भी करते। इस प्रकार बहनों में भी आत्मजागृति बनी रहे इसकी संभाल पूज्यश्री रखते थे।

भक्ति में अंत तक उपस्थिति

सर्दी के मौसम में दोपहर की भक्ति का समय दो बजे से चार बजे का था और गर्मी के मौसम में ढ़ाई बजे से साढ़े चार बजे का था। दोपहर की भक्ति में अनेक शास्त्रों का स्वाध्याय हुआ करता था। किसी को मंत्र देने में अथवा प्रश्नों का समाधान करने में पूज्यश्री को भक्ति में आने में विलंब हो जाए तो पंडित गुणभद्रजी पढ़े हुए शास्त्र का सार संक्षिप्त में दुबारा कहा करते थे। प्रत्येक भक्ति में आने के पश्चात् पूज्यश्री अंत तक भक्ति में उपस्थित रहते थे।

मुनि जैसी चर्या

शाम की भक्ति पूर्ण होने पर, गर्मी के दिनों में, कुछ मुमुक्षु सीधे पूज्यश्री के पास राजमंदिर में आ जाते। वहाँ कभी किसी शास्त्र का वांचन होता, और कभी वे श्रीमुख से बोध भी देते, अथवा किसी को कुछ पूछना हो तो उसके मन का समाधान करते। आधा पौना घण्टा सत्संग करके मुमुक्षु भोजन के लिए जाते और पूज्यश्री दूध पीकर दिशा के लिए जाते। दिशा से आने के पश्चात् हाथपैर धोकर सीधे ऊपर राजमंदिर में जाकर परमकृपालुदेव के चित्रपट के समक्ष 'इरियावही' करके ध्यान करते थे। लघुशंका अथवा दीर्घशंका निवारण करके आने के पश्चात् भी तुरंत परमकृपालुदेव के चित्रपट समक्ष ध्यान करते। ऐसी मुनि जैसी चर्या पूज्यश्री की थी।

देववंदन के समय सर्व प्रथम प्रवेश

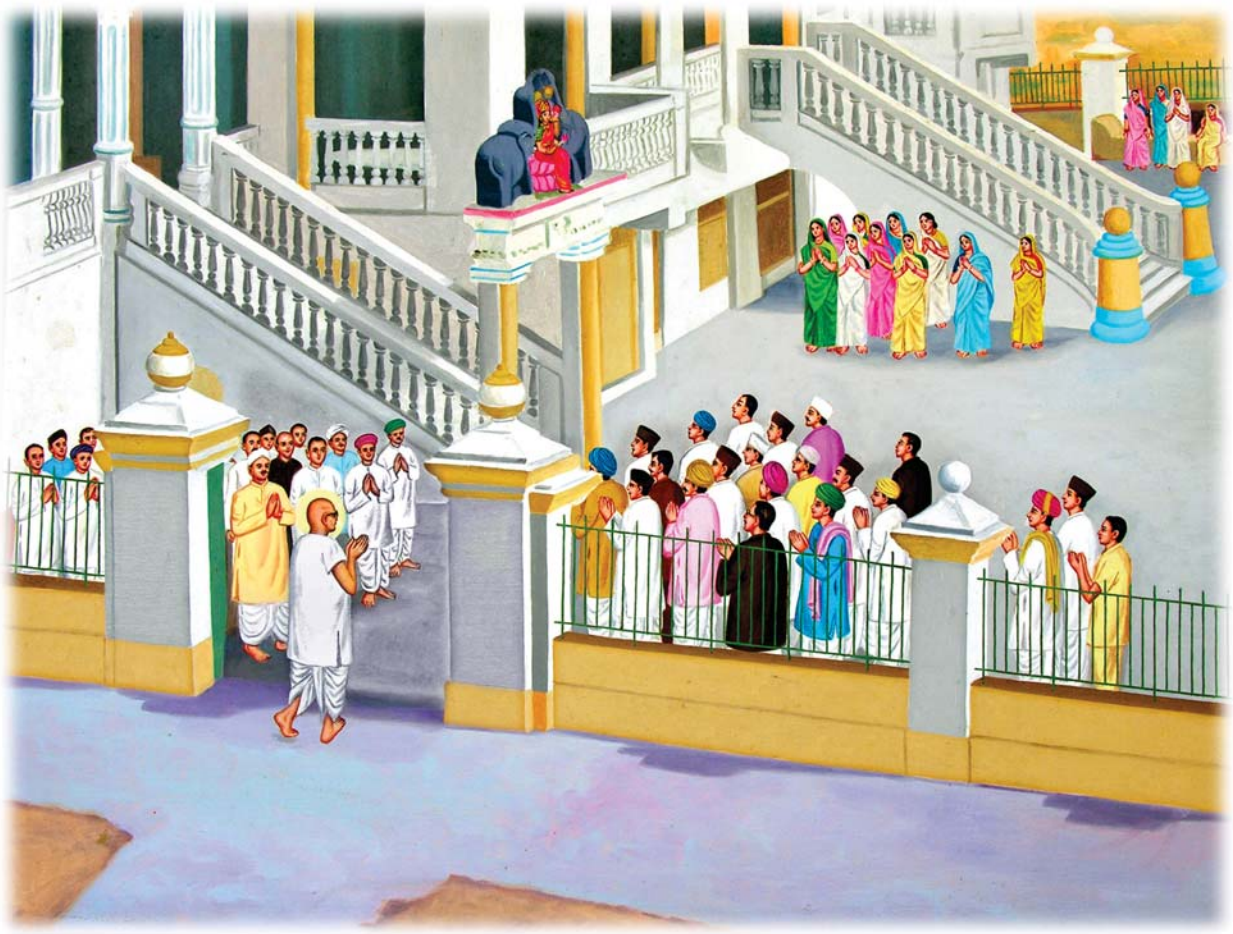

सायंकाल के देववंदन का घंट बजने पर सर्व मुमुक्षु भाई-बहने सभामंडप के चौक में आकर चबूतरे पर बैठते। दस-पंद्रह मिनिट के पश्चात् पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का देववंदन करने हेतु आगमन होता। उस वक्त मुमुक्षुओं का ध्यान राजमंदिर की ओर रहता। पूज्यश्री राजमंदिर की सीढ़ियों से उतर रहे हैं यह जानते ही सभी मुमुक्षुभाई सभामंडप के चौक में दक्षिण दिशा वाले लोहे के द्वार के पास रास्ते के दोनों ओर व्यवस्थित रूप से खड़े हो जाते। पूज्यश्री जब सभामंडप के चौक के द्वार में प्रवेश करते उस समय मुमुक्षु 'सद्गुरु देव की जय' 'परमकृपालुदेव की जय' इस तरह ज़ोर से दो बार जय का उच्चारण करते। उसके पश्चात् पूज्यश्री सर्व प्रथम जिनमंदिर की सीढ़ियाँ चढ़ते। पूज्यश्री के पीछे ही सब मुमुक्षु ऊपर चढ़ते। देववंदन होने के बाद पूज्यश्री श्री जिनमंदिर और भूगर्भ में आए हुए गुरुमंदिर में दर्शन करके ऊपर राजमंदिर में पधारते। प्रतिदिन का यह क्रम था।

देववंदन के समय पू. श्री ब्रह्मचारीजी के साष्टांग दंडवत् नमस्कार

देववंदन के समय परमकृपालुदेव के चित्रपट के सामने पूज्यश्री के लिए छः फीट की चटाई हॉल में लोगों के बैठने की शतरंजी के आगे बिछाई जाती। उस पर पूज्यश्री देववंदन के समय साष्टांग दंडवत् नमस्कार करते थे। नमस्कार करते वक्त पूज्यश्री एक पैर पर दूसरे पैर के अंगूठे का आधार रखकर नमस्कार करते थे।

प्रतिक्रमण करते हुए पू. श्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षु भाईयों के साथ

देववंदन पूर्ण होने के बाद पूज्यश्री थोड़े मुमुक्षुओं के साथ प्रतिदिन प्रतिक्रमण करते थे । प्रतिक्रमण में आनेवाले प्रथम कायोत्सर्ग में **पूज्यश्री की अडोल स्थिरता देखकर एक बार एक चिड़िया उनके बायें कंधे पर आकर निर्भयता से बैठी थी ।**

प्रतिक्रमण पूर्ण करके रात को भक्ति में पधारते । अंतिम वर्षों में शारीरिक निर्बलता के कारण अपने कमरे में ही दो-चार मुमुक्षु भाइयों के साथ भक्ति का क्रम पूर्ण करते थे ।

रात की भक्ति में वांचन की शुरुआत

संवत् २००९ से पूज्यश्री ने सभामंडप में, रात को वांचन करने की योजना शुरु की । उस वक्त ब्र. मोहनभाई वचनामृत पढ़ते तथा पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी उस पर विवेचन करते थे । शुरूआत में वचनामृत में से प.पू. प्रभुश्रीजी पर लिखे गये पत्रों को क्रम से पढ़ाकर उन पर विवेचन किया । इसके उपरांत पू. श्री सौभाग्यभाई पर लिखे पत्रों को उलटे क्रम में पढ़ाकर विवेचन किया । उस समय अनेक पत्रों का विवेचन हुआ था, जो बोधामृत भाग-२ में दिया हुआ है ।

रात्रि, ध्यान स्वाध्याय हेतु

रात की भक्ति पूर्ण होने पर पूज्यश्री मुमुक्षुओं के आये हुए पत्रों के उत्तर लिखते अथवा किसी शास्त्र का अनुवाद करते अथवा **'प्रज्ञावबोध'** के काव्यो की रचना भी करते थे । नींद नहीं के बराबर लेते थे । सारा समय पुरुषार्थमय ही रहते थे । उनके मन के अनुसार रात्रि ध्यान एवं स्वाध्याय के लिए ही है ।

जबभी देखें रात के समय वे जागे रहते थे, ऐसा अनेक लोगों को अनुभव हुआ है । **नैष्ठिक ब्रह्मचर्य के प्रताप से आत्मबल अद्‌भुत था ।** धन्य है ऐसे आदर्श पुरुषों के सतत सत्पुरुषार्थ को, कि जिन्हें देख अपना आत्मा भी सत्पुरुषार्थयुक्त बनकर शाश्वत सुख को प्राप्त करे ।

श्री निर्मलाबहन फूलचंदजी बंदा

आहोर

शिक्षा, उपदेश करने के लिए नहीं

एकबार पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने मुझसे कहा : "संस्कृत पढ़ना है, वह खुद को समझने के लिए; कहीं उपदेश देने के लिए नहीं पढ़ना है । संस्कृत बहुत कठिन है । मन को उसमें लगाना पड़ता है, इसलिए उचित है । **"नवरु मन नख्खोद वाले ।"** (निठल्ला मन सर्वनाश का कारण ।)

महापुण्यशाली को धर्म की भावना जागती है

अपने भाइयों के प्रति राग के कारण मेरे मन में विकल्प हुआ करते कि सभी भाईयों को इस अपूर्व सत्संग का योग प्राप्त हुआ है, फिर भी कमाने में लगे रहने से पूरा लाभ नहीं लेते । इस विकल्प के बारे में एक बार पू. श्री ब्रह्मचारीजी से बात की । जवाब में पूज्यश्री बोले : **"हमें अपना स्वयं का काम कर लेना है ।"** अन्य करें तो उचित है, अन्यथा कोई बात नहीं । **इस काल के सभी जीव विषयों में तथा भोग विलास में पड़े हैं । धर्म की गरज कहाँ है ? महा-पुण्यशाली कोई हो उसे धर्म की भावना जगती है । प. पू. प्रभुश्रीजी कहते थे कि महत् पुण्य जिसका होगा वही इस दरवाज़े में कदम रखेगा ।"**

"कबीरा तेरी झूंपडी, गलकटे के पास;
करेगा सोही भोगवेगा, तुं क्युं भये उदास।"

इस एक गाथा ने मेरी सारी दुविधा निर्मूल करी दी ।

जीव मोह में फंस जाता है इसलिए सत्संग में रहना चाहिए

एकबार बोध में मुझे उद्देशकर कहा : "खास कहीं, महीने-दो महीने के लिए जाना पड़े तो भी स्वयं का चूकना नहीं । निमित्त में फंस नहीं जाना है । विशेष रूप से लक्ष्य रखना है । मैसूर तो मुंबई जैसा है । कलियुग में सचेत रहकर खद का काम कर लेना है । बुरी संगत नहीं रखना । जीव अकेला इतना बलवान नहीं; खींचा जाता है । इसलिए सत्संग का आधार चाहिए । हो सके उतना दूसरों को बुरा लगे, ऐसा नहीं करना ।"

एकबार पूज्यश्री ने कहा :-

लड़कियों के साथ पढ़ने का नहीं रखना

"पारस पढ़ता है ? लड़कियों के साथ पढ़ने को नहीं रखना । यह वर्ष पूरा हो तब दूसरी जगह रख देना । यह काल बहुत खराब है । संभल कर चलने जैसा है ।"

आश्रम पर रहकर भक्ति करो यही दीक्षा है

मुझे दीक्षा लेने का भाव था, यह जानकर पूज्यश्री ने कहा : "वातावरण खराब है । यहाँ 'आश्रम' में दीक्षा ही है । यहाँ रहकर भक्ति करें । आश्रम में ही रहना; उत्तम स्थान है ।"

वेदना के वक्त खेद तो मरण के वक्त क्या ?

एकबार आहोर जाते समय पूज्यश्री से मिलने गयी । उस समय पूज्यश्री ने कहा : "बीमार होते हैं तब दवाई से स्वस्थ होते हैं ऐसा नहीं मानना । दवाई तो निमित्त मात्र है । शरीर में वेदना हो तब उसे सहन करना है । इतने में तुम खेद करते हो तो मरण के समय तो कितनी वेदना आयेगी, तब क्या करेगा ? इसलिए अभी से अभ्यास करने दे । दवाई के प्रति लक्ष्य नहीं रखना । दवा से ही स्वस्थ होंगे ऐसा कुछ नहीं है । परन्तु फिर भी, धर्मकार्य करने में यदि विघ्न होता हो तो भक्ति की इच्छा से कुछ लेनी पड़े तो लेना, परन्तु भक्ति सत्संग का लक्ष्य नहीं चूकना ।"

'ब्रह्मचर्य है, वह चारित्र का अंश है'

वि.सं. २००८ की मार्गशीर्ष सुदी २ के दिन बेंग्लोर में मैंने पूज्यश्री से कहा : ब्रह्मचर्य व्रत लेना है, यावत् जीवन का ।

पूज्यश्री : "अनुमति मिली है ? उन लोगों ने कहा है ?

मैंने कहा : हाँ जी ।

पूज्यश्री : अच्छा है व्रत पालने की बड़ी जिम्मेदारी है । आत्मा में शांति बढ़ाने के लिए व्रत है । शांति बढ़ाने का यह साधन है । **व्रत लेकर लक्ष्य आत्मा का रखना है ।** सब अनुकूलता हो, फिर भी न करें तो स्वयं का ही दोष है । **ब्रह्मचर्य जो है वह चारित्र का अंश है ।"**

"जेम आवी प्रतीति जीवनी रे, जाण्यो सर्वेथी भिन्न असंग;
लेवो स्थिर स्वभाव ते ऊपजे रे, नाम चारित्र ते अणलिंग ।" मूळ०

दशा बढ़ाने के लिए खूब पुरुषार्थ की आवश्यकता

"दिन प्रतिदिन दशा वर्धमान हो ऐसा करना है । पुरुषार्थ की खूब आवश्यकता है । कोई भी कार्य करना हो उसके लिए पुरुषार्थ तो करना पड़ता है । यह तो महान कार्य है । इसलिए अधिक पुरुषार्थ की आवश्यकता है । 'आत्मसिद्धि' है वह अनेक शास्त्रों का सार है । मुखपाठ किया हुआ हो तो उस पर विचार कर सकते है । तीन पाठ प्रतिदिन करना । प्रमाद नहीं करना ।

आत्मा को भूलना वह सब प्रमाद है । प्रमाद किसे कहते है ?

आत्मा को भूलना वह प्रमाद । पूर्व के पुण्य से योग तो मिला है । अभी भी न करें तो स्वयं का दोष है । संसार के प्रति उदासीनता-वैराग्य रखना ।" फिर मुझे पूज्यश्री ने मैसूर में मार्गशीर्ष सुदी ६ के दिन परमकृपालुदेव के समक्ष आत्मसिद्धि की पूजा दरम्यान यावत् जीवन पर्यंत ब्रह्मचर्यव्रत दिया । निर्मलाबहन का समाधिपूर्वक देहत्याग भी मार्गशीर्ष सुदी ६ के दिन ही अगास आश्रममें हुआ ।

अट्ठाई सोने के लिए नहीं परन्तु भक्ति के लिए है

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास में अट्ठाई करने की आज्ञा लेने गयी तब -

पूज्यश्री : "बारह भावना का विचार करना । रोज एक भावना में चित्त रखना । बारह भावनाओं में चित्त रहेगा तो सच्ची अट्ठाई हुई कहलायेगी । जीव कहाँ खाता है ? वह तो देह को खिलाता है । जीव तो अणाहारी है । इसलिए अभ्यास करना है । किसी दिन गला पकड जाता है, बीमारी आती है तो खा नहीं सकते, अभ्यास हो तो कुछ नहीं ऐसा महसूस नहीं होगा । अट्ठाई सोने के लिए नहीं करनी, परन्तु भक्ति के लिए करनी है । निवृत्ति मिलती है । खाने को न हो तो शांति रहती है । खास लक्ष्य रखना है कि आर्तध्यान नहीं होने देना । खाने-पीने के विचार नहीं करने । इस तरह के विचार आयें तो बल करके हटाना । आत्मा का कहाँ खाने का स्वभाव है ? वह तो अणाहारी है । यह तो देह का काम है । तू तेरे काम में रह । **"छूटे देहाध्यास तो नहीं कर्ता तुं कर्म"** देहाध्यास छोड़ने के लिए करना है । स्मरण में लक्ष्य रखना है । आर्तध्यान न हो इसका बराबर ध्यान रखना । रटन करना, पढ़ना, विचारने का रखना । मन को निठल्ला नहीं बैठने देना । सभी साधन करने योग्य हैं परन्तु **"निश्चय राखी लक्षमां साधन करवा सोय ।"** हो सके उतना करना । विशेष रूप से आत्मा के लिए करना है । अट्ठाई करें और फिर सोये रहें, आहार के विचार आते रहें तो कर्म बंधन होता है । बारह भावना में से एक एक भावना हमेशा पूरे दिन लक्ष्य में रखना । बातों में वक्त नहीं गंवाना ।"

कम बोलने की आदत रखना

मौन रहने की आज्ञा लेने गयी तब–

पूज्यश्री : "मौन रहना अच्छा है । परन्तु किसलिए मौन रहना है ? मेरे आत्मा के लिए । मान नहीं करना कि फलाना मौन नहीं रहता, मैं मौन रहती हूँ; इस तरह करें तो कर्मबंधन होता है । कर्म छोडने के लिए मौन रहना है । सिद्ध की दशा का स्मरण करना । सिद्ध कहाँ बोलते हैं ? मेरा आत्मा भी वैसा ही है । बोलना मेरा स्वभाव नहीं । आर्तध्यान नहीं होने देना । बीस दोहे, क्षमापना का विचार करना । स्मरण करते रहना । बिना कारण बोलने की जो आदत है उसे छोड़ने के लिए मौन रहना है । मौन के दिन भक्ति, रटन, वांचन में बोलने की छूट हो तो हरकत नहीं । परन्तु दुसरी जगह नही बोलना, चाहे जो भी नियम लें उसमें कसौटी आये तब वैराग्य भाव, समभाव रखना । इस तरह मौन रहना की फिर अन्य दिनों में भी उसका प्रभाव रहे । बोलने से पहले विचार करना कि यह बोलने से मुझे लाभ है ? लाभ तो नहीं है तो मुझे बोलना नहीं है । बोलने का अभ्यास बहुत कम करना । खास मौनता तो वह है कि देह और आत्मा को भिन्न मानें । मुझे भी ऐसा अभ्यास करने के लिए मौन रहना है । मौन रहकर मुझे आत्मा का विचार करना है, आर्तध्यान अथवा संकल्प विकल्प नहीं करना; तब मौन रहना सफल है । आवश्यकता के बगैर बोलना नहीं और आत्मा का विचार करना । कोई बात कर रहा हो तो सुनने नहीं बैठ जाना ।"

संसार पर से जितना प्रेम कम होगा उतना आत्मा में लगेगा

संवत् २००८ मार्गशीर्ष वदी ९ मैसूर जाते वक्त–

पूज्यश्री : "जाना है ? जहाँ भी हो गाड़ी में बैठे बैठे भी स्मरण करना । इधर-उधर नहीं देखना । अंत तक गाड़ी में बैठे बैठे स्मरण करते रहें तो कितनी माला हो जाये । स्मरण में चित्त को केन्द्रित करना । समकित प्राप्त कर लेना है ।

मैंने पूछा : यहाँ होते हैं तब तो ऐसा होता है कि अन्य स्थान पर भी भक्ति आदि करेंगे, परन्तु निमित्त मिलते ही खींचे चले जाते हैं ।

पूज्यश्री : "अनादिकाल का अभ्यास है । पानी ढ़लान में बहता है वैसे । परन्तु पहले से निश्चय किया हो कि मुझे ऐसा करना ही है तो फिर निमित्त भी ऐसे ही मिलाकर के अभ्यास रखता है । आज शांतिस्थान में आया था की कसरत करनी है । पुरुषार्थ करें तथा अभ्यास करें तो जैसे पानी नीचे जा रहा हो उसे पुरुषार्थ करके पंप से ऊपर चढ़ाते हैं, वैसे ही जितना प्रेम संसार पर से उठेगा उतना इसमें लगेगा । पुरुषार्थ की आवश्यकता है ।"

पूरा समय आत्महित के लिए व्यतीत करना

पूज्यश्री : "यहाँ आश्रम में रहें तब तक पूरा समय का सदुपयोग हो इस तरह करना । कुछ आत्महित हो इस तरह करना। यहाँ सुने फिर विचार करें, स्मरण करें कि आज वांचन में क्या आया था ? क्या चर्चा हुई थी । याद रहे तो अपने पर विचार आते हैं; नहीं तो कल क्या पढ़ा उसका भी पता नहीं होता । श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन इस तरह तीन कहे हैं । श्रवण करना या पढ़ना, फिर मनन करना अर्थात् विचार करना और फिर निदिध्यासन अर्थात् भावना करनी; वेदांत में ये तीनो भेद हैं । उसका वापस खूब विस्तार है । पहले सुनने कि इच्छा जगे वह शुश्रूषा । फिर श्रवण होता है । फिर धारणा अर्थात् याद रखना और फिर मनन होता है ।

ऊह अर्थात् शंका करना । जैसे कि चोरी की हो तो क्या होता है ? ऐसी शंका हो तो वह ऊह है । फिर ऐसी शंका दूर करते हैं कि चोरी करने से पाप का बंधन होता है । और अधोगति प्राप्त होती है । वह अपोह है । इस तरह ऊहापोह करके वस्तु का निर्णय करें कि ऐसा ही है, वह निर्णय है । फिर तत्त्वाभिनिवेश अर्थात् जिस वस्तु का निर्णय हुआ है वह छूट न जाये, दृढ़ हो । इस तरह बुद्धि के ये ८ गुण कहलाते हैं । तीसरी दृष्टि में शुश्रूषा गुण प्रकट होता है । फिर उसे सुनने को मिले तो खूब उल्लास आता है ।"

मुखपाठ किया हुआ कभी न कभी उपयोगी होता है

संवत् २००९, मार्गशीर्ष वदी ८ आहोर जाते हुए–

"भक्ति, वांचन, स्मरण आदि में किसी भी वक्त चित्त तन्मय होता हो उस प्रकार से वैसे होने देना । मुखपाठ कने का अभ्यास रखना; क्योंकि मुखपाठ किया हुआ हो वह किसी भी समय लाभदायक होता है । चाहे कभी भी संजोग में मुखपाठ किया हुआ उपयोगी हो जाता है; क्योंकि पुस्तक हमेशा पास नहीं रहती ।"

श्री निर्मलाबहन

श्रीमती रतनबहन पुनशीभाई सेठ

मुंबई

पू. श्री ब्रह्मचारीजी के साथ हुए प्रसंग यहाँ बताती हूँ–

रात के समय ताला लगाकर भक्ति में जाने से शांति

सभामंडप में रात के वांचन में पू. श्री ब्रह्मचारीजी वचनामृत पर विवेचन करते थे। वह सुनकर मैं रात को घर लौटती थी। हमेशा की तरह मैने मेरे घर का दरवाजा खटखटाया। तब पानबहन ने दरवाजा खोलकर गुस्से में आकर मुझे तमाचा लगाया और कहा कि : "भक्ति में से इतनी देर से आती है ? मुझे रात को नींद में से उठकर दरवाजा खोलना पड़ता है, इसका भान भी नहीं ?"

अगले दिन सुबह उठकर भक्ति में जाकर, सभी जगह दर्शन करके पू. श्री ब्रह्मचारीजी के पास उनके दर्शन हेतु गयी, तब पूज्यश्री ने कहा : **"पानबहन ने तुम्हें तमाचा मारा है ?"** मुझे मन में हुआ कि कल रात की ही तो बात है। सुबह उठकर स्तवन बोलकर सीधे यहाँ आयी हूँ। अभी तक मैंने किसी से बात भी नहीं की और इन्होंने कैसे जान लिया ? मैंने कहा : "हाँ मारा है।" पूज्यश्री ने कहा : "तो अब क्या करोगे ?" मैंने कहा : "मैं वांचन छोड़नेवाली नहीं।" पूज्यश्रीने कहा : "फिर से तमाचा मारेंगे तो ?" मैंने कहा : "भले तमाचे मारें।" तब पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने कहा : **"तुम रात को ताला लगाकर भक्ति में आना जिससे उनको नींद में से उठना न पड़े।"**

स्वच्छंद छोड़ कर आज्ञा का आराधन करने से समाधिमरण

मेरी माताजी आश्रम में पहले आये थे। मंत्र भी लिया था परन्तु साथ में वह उवसग्गहरं आदि दूसरे मंत्रो की भी माला गिनती थी।

पू. श्री ब्रह्मचारीजी के पास दर्शन करने गये तब पूज्यश्री ने कहा : "माँजी कितनी माला गिनते हो ?" माताजी ने कहा "सहजात्मस्वरूप के साथ उवसग्गहरं की माला गिनती हूँ।" पूज्यश्री ने कहा : "उवसग्गहरं की माला किस लिए गिनते हो ?" माँजी ने सरल भाव से कहा : "मेरे बेटे के पास पैसे नहीं है इसलिए गिनती हूँ।" पूज्यश्री ने कहा : "बेटे के पास पैसा आये ?" माँजी ने कहा : "नहीं प्रभु, पैसे थे वो भी चले गये।" पूज्यश्री ने कहा : "तो अब स्वच्छंद से यह गिनना छोड़ दें।"

पूज्यश्री के कहे अनुसार माताजी ने उवसग्गहरं की माला गिनना छोड़ दिया। 'सहजात्मस्वरूप परमगुरु' मंत्र की माला गिनना श्रद्धापूर्वक ज़ारी रखा। उसका परिणाम यह आया कि माताजी को अपनी मृत्यु की जानकारी पहले से ही हो गयी तथा मुझे बुलाने के लिए मुंबई तार भेजा। उस वक्त भी माताजी ने कहा था कि वह मुझे मिलने वाली नहीं है। अंत में शांतिपूर्वक समाधिमरण किया।

'द्रव्यसंग्रह' ग्रंथ का विवेचन सहित श्रवण

प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी के देहविलय के पश्चात् पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी को उनके विरह का दुःख बहुत सताता था। एक मुमुक्षुभाई की पत्नी गुज़र गयी इस निमित्त से उस भाई को संघ ले जाने की भावना हुई। उन्होंने पूज्यश्री को यह बात बतायी। तब पूज्यश्री ने ईडर जाने का विचार किया। संघ में १०० से अधिक लोग ईडर की यात्रा पर गये। अहमदाबाद से आश्रम के प्रमुख सेठ श्री जेसींगभाई भी आये थे। उपप्रमुख श्री पुनशीभाई सेठ भी साथ आये थे।

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी सबसे आगे और पीछे पूरा संघ स्मरणमंत्र की धून के साथ श्री घंटिया पहाड़ पर आ पहुँचा। श्री सिद्धशिला के सामने नमस्कार करके सभी बैठे एवं भक्ति की।

उसके पश्चात् पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने स्वमुख से श्री **'बृहद् द्रव्य संग्रह'** ग्रंथ की गाथाएँ बोली तथा साथ-साथ में विवेचन भी किया। सभी मुमुक्षु मौन रहकर एकाग्रचित्त से सुनते हुए अत्यंत आनंदित हुए।

फिर रणमल की चौकी पर गये वहाँ सिंह सोया हुआ था। वह देखकर पू. श्री ब्रह्मचारीजी बोले - शांति से चलते रहो; डरना नहीं।

वहाँ आठ दिन ठहरे थे। प्रतिदिन भिन्न-भिन्न जगह दर्शन करने जाते। वहाँ भक्ति के पश्चात् पूज्यश्री बोध देते और डेढ़-दो बजे लौटकर फिर भोजन लेते थे। इन चार दिनों में खूब आनंद आया था।

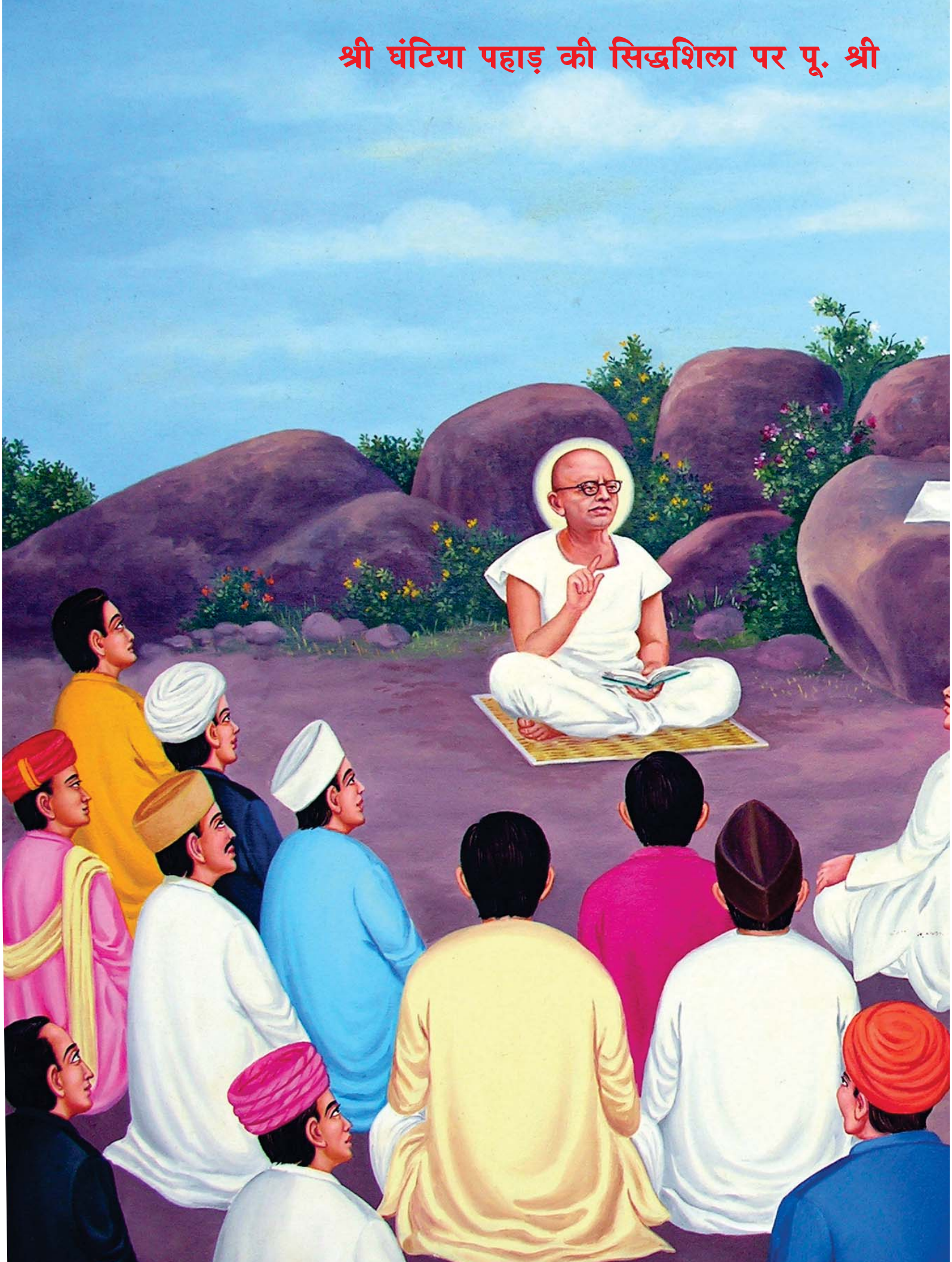

श्री घंटिया पहाड़ की सिद्धशिला पर पू. श्री

ब्रह्मचारीजी द्वारा समझाया गया 'द्रव्यसंग्रह' ग्रंथ

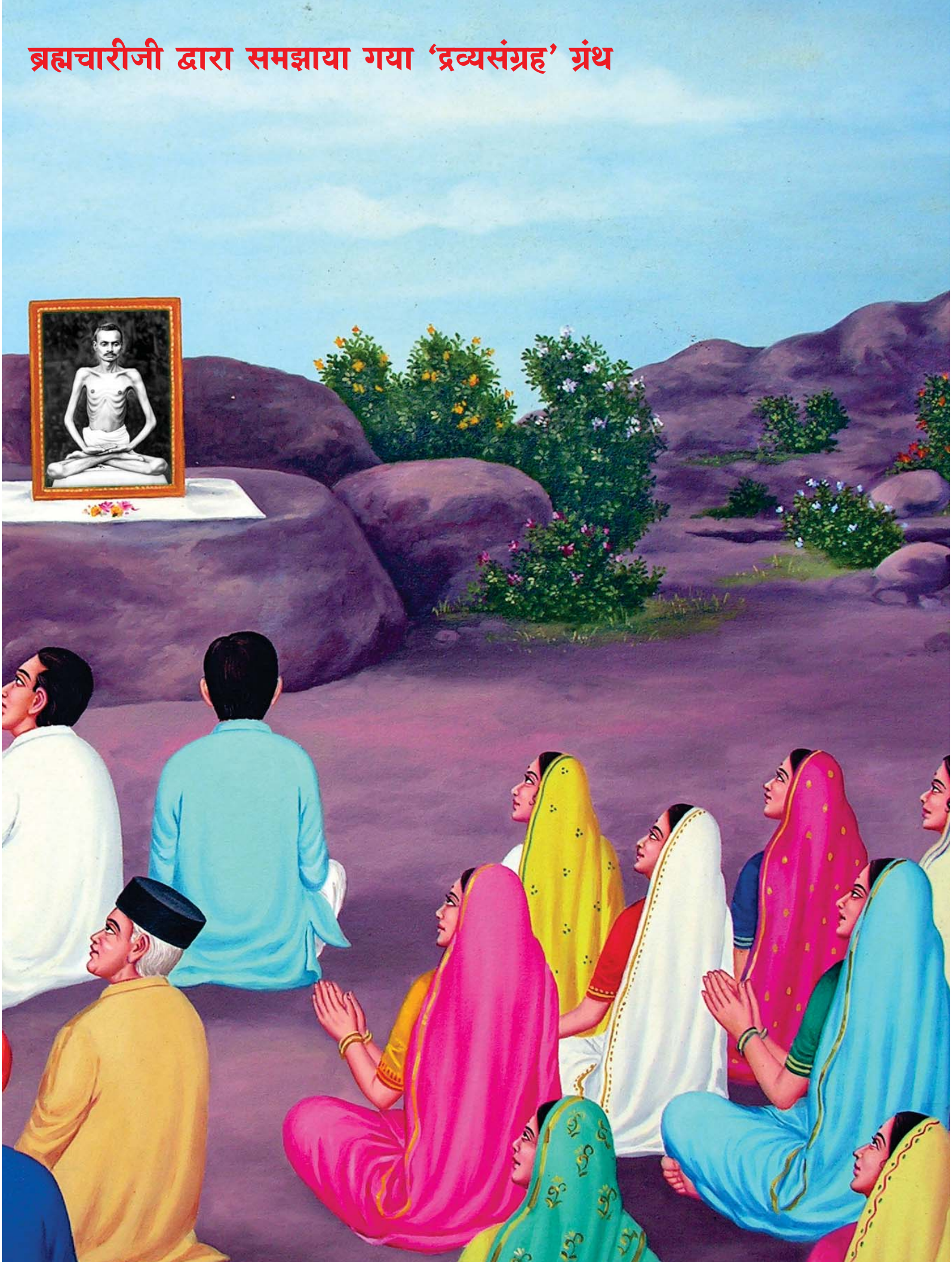

इतना समय मंत्र का जाप किया होता तो ?

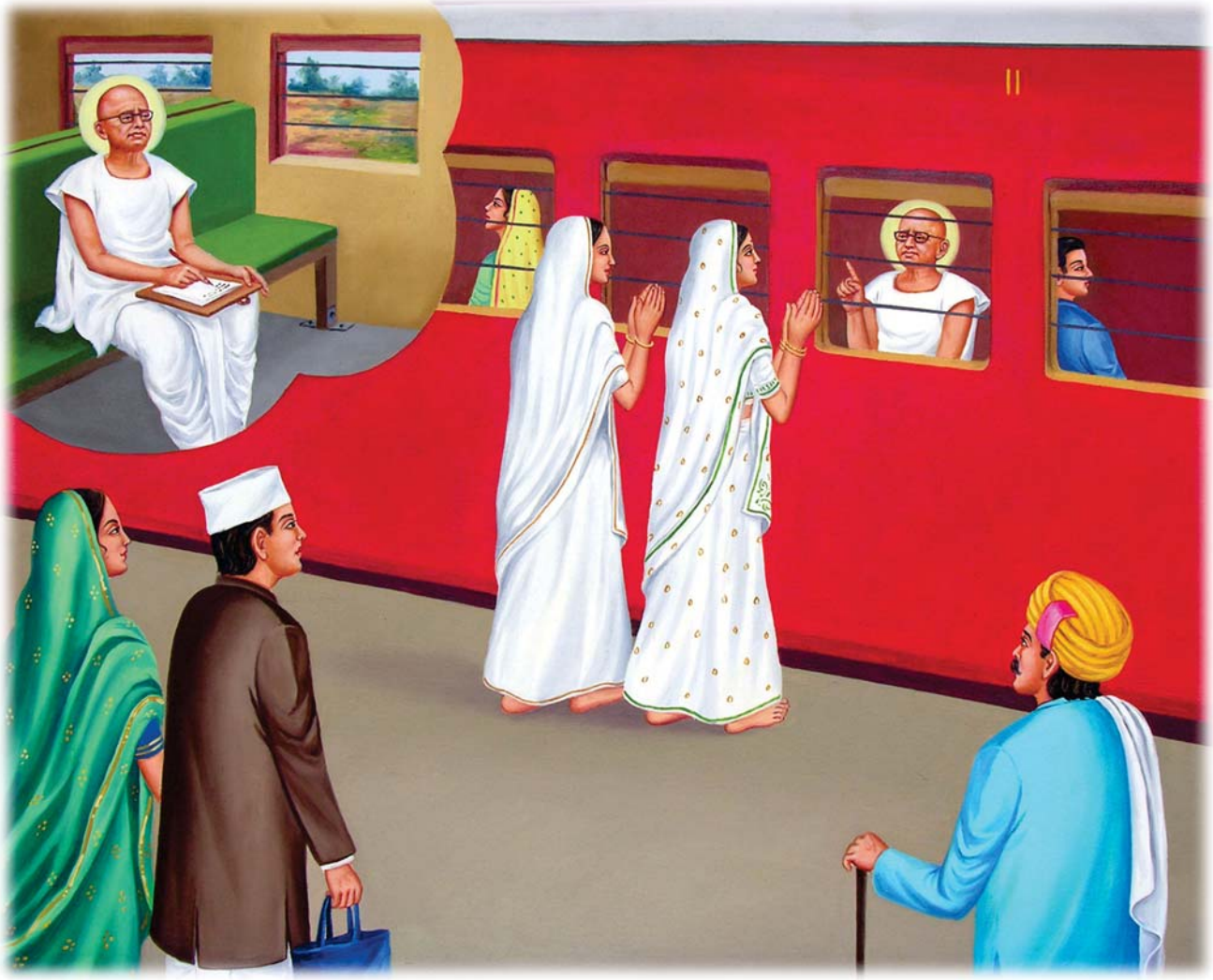

पू. श्री ब्रह्मचारीजी संघ के साथ बाहुबलीजी की यात्रा पर जा रहे थे । तभी गाड़ी में पुणे स्टेशन आया । तब मैंने चंचलबहन बरोडियाजी से कहा : चलो हम पूज्यश्री को देखकर आये । इसलिए हम देखने गये ।

पू. श्री ब्रह्मचारीजी रेल के डिब्बे में बैठे थे और कुछ लिख रहे थे । पूज्यश्री ने कहा : "क्यूँ आये ?" चंचलबहन ने कहा : "सिर्फ आपको देखने ।" तब पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी हंसे और बोले : "इतना समय मंत्र का जाप किया होता तो ? क्या देखना है ?"

सत्पुरुष के योग से व्यसनी का उद्धार

पू. श्री ब्रह्मचारीजी ववाणिया की ओर आये हुए थे । इसलिए मैंने विनती की कि प्रभु, मेरे गाँव कच्छ में पधारिये । उसे मान्य रखकर पूज्यश्री ने दो महीने कच्छ की ओर यात्रा की । कच्छ में एक भाई बीमार थे । वह सातों व्यसन का सेवन करते थे । उस भाई ने बुलाकर मुझसे कहा : "ये महात्मा पुरुष क्या मेरे यहाँ आयेंगे ?" तब मैंने कहा : "आपके भाव होंगे तो आयेंगे ।" उस भाईने कहा : "तो उन महात्मा को अवश्य बुलवाईए ।" फिर मैंने पूज्यश्री से बात की और उन्हें उस भाई के वहाँ लेकर गयी । उस भाईने जो सातों व्यसन का सेवन किया था, वह सारे पाप पूज्यश्री के समक्ष कहकर बता दिये और कहा : "इन सब पापों से मुझे छुड़वाइए ।" फिर पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने उसे मंत्र दिया, सातो व्यसन तथा सातो अभक्ष्य का त्याग करवाया, बोध दिया । थोड़े समय के पश्चात् उनका समाधि मरण हुआ था ।

शत्रुता रखनेवाले को भी क्षमा करना

जिस तरह पू. प्रभुश्रीजी ने मेरा ख्याल रखा था उसी तरह पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने भी रखा। मुझे अनेक कठिनाईयाँ आयी परन्तु उनके सामने टिकाने में पू. श्री ब्रह्मचारीजी का मुझ पर बड़ा उपकार हैं।

श्री पुनशीभाई सेठ की मृत्यु के बाद उनकी सारी जायदाद लेने के लिए उनके भाई अर्थात् मेरे देवर ने मुझ पर कोर्ट में केस किया। वह अनेक वर्षो तक चला। थककर एक बार पू. ब्रह्मचारीजी से मैंने कहा कि साहेब इस केस का अंजाम कब आयेगा, मैं तो थक गयी हूँ। तब पूज्यश्री ने कहा : **अभी डेढ़ वर्ष लगेगा। फिर सब सुलझ जायेगा। उसे पश्चात्ताप होगा। आकर रोयेगा, क्षमा माँगेगा।** डेढ़ वर्ष के पश्चात् ऐसा ही हुआ। इससे मुझे पूज्यश्री पर खूब श्रद्धा हो गयी थी।

मुझे ऐसा भी कहा था कि आपको प्रतिवर्ष पर्युषण के पश्चात् उनसे क्षमा माँगना है। मैं वैसे ही करती। परन्तु मेरा देवर मुँह फेर लेता था। परन्तु अंत में पूज्यश्री ने कहा था वैसे ही वह क्षमा माँगने आया, पश्चात्ताप किया था और रोया भी था।

दूसरे एक प्रसंग पर पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने मुझसे कहा था कि कोर्ट आदि में जाना पड़े तो पुराने कपड़े पहन कर जाना। सत्य ही बोलना। मंत्र स्मरण करते रहना। तब मेरी उम्र ३६-३७ वर्ष की थी।

इस जगह का देव जगेगा

मैं पू. नारंगीबहन के वहाँ गयी तब उन्होंने मुझसे कहा कि मेरे साथ पू. श्री ब्रह्मचारीजी के पास चलिये। उनसे जाकर हम पूछेंगे कि पू. प्रभुश्रीजी आपको मंत्र देने का सौंप कर गये, वैसे आप किसे सौंपेंगे ? तब पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने सहज स्मित के साथ बताया कि 'इस जगह के देव जागृत होंगे।'

श्री रतनबहन

प.उ.प.पू. श्री प्रभुश्रीजी के बाद भी पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के समागम से सभी प्रश्नों का हल हो जाने से मन में शांति रहती थी। परन्तु पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के देहविलय के बाद बहुत खेद हुआ कि अब मन खोलने का कोई आधार नहीं रहा।

श्री सुवासबहन घेवरचंदजी

शिवगंज

साँप ने डंख मारा परन्तु भक्ति करें, अच्छा हो जायेगा

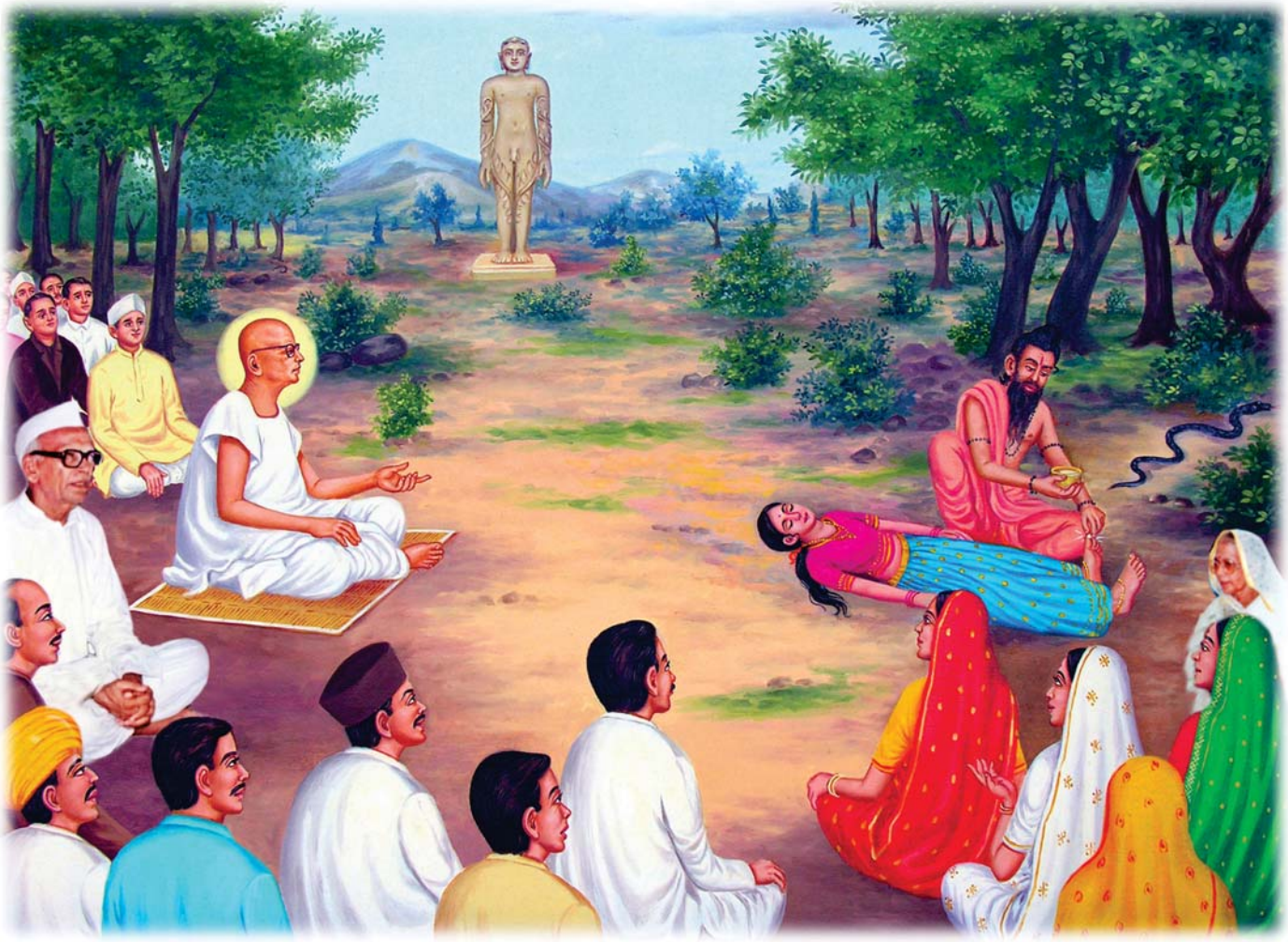

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी श्रवणबेलगोला (बाहुबलीजी) की यात्रा पर गये थे उस वक्त की बात है। मूडबिद्री, कारकल के घने जंगल के बीच लगभग पच्चीस फीट की बाहुबलीजी की मूर्ति थी। उनके दर्शन करने रात के दो बजे पूरे १०० लागों का संघ गया। उस वक्त मेरी पुत्री सद्गुणा को साँप ने डंख मारा। तब पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी वहाँ आये और कहा कि : **"थोड़ी भक्ति करते हैं, सब ठीक हो जायेगा। कहीं ले जाने की आवश्यकता नहीं।"** इस तरह धीरज दिलवाया। वहाँ **'अपूर्व अवसर'** बोले जाने के बाद एक बाबा आया और दूध में मणि को धोकर सद्गुणा को लगाया। आत्मसिद्धि पूर्ण हुई कि उसे होश आ गया। करीबन एक घण्टा बेभान रही थी।

'ग्रंथारंभ प्रसंग रंग भरवा कोडे करुं कामना'...इस गाथा का अर्थ पूज्यश्री ने एकबार मुझे समझाया था।

शहद की एक बूंद में अनेक जीव

एक वक्त मेरा बेटा बीमार था, उस सम एक वैद्य ने कहा था कि शहद और ब्रांडी (दारू) दो। फिर मैंने पूज्यश्री से पूछा कि शहद और ब्रांडी दुँ ? पूज्यश्री ने कहा : "इससे रोग दूर होगा ? जो होनेवाला है वही होगा। पाप की दवा लेने से क्या जीवित रहेगा ? **शहद की एक बूँद में सात गाँव जला दें इतना पाप है। उसमें मनुष्य, गाय, भैंस, कौआ, कीडी, मकोड़ा आदि सब मर जायें इतना पाप लगता हैं।**"

रात्रिभोजन मांस तथा पानी खून के बराबर

एकबार मैं पूज्यश्री के पास ऊपर गयी उस समय कोई दो लोग रात्रिभोजन के त्याग के लिए आये थे। उस समय रात्रिभोजन के त्याग की बात चल रह थी। 'प्रवेशिका' में प्रीतिंकर सेठ की बात आती है उस पर बात कर रहे थे। रात्रिभोजन के त्याग से इतना पुण्यबंध हुआ कि वह लोमड़ी के भव से प्रीतिंकर सेठ हो गया। **रात को भोजन लेना मांस खाने बराबर है, पानी पीना वह खून पीने बराबर है।** यह बात सुनकर हम पाँच-छः बहनोंने उसी समय रात्रिभोजन का त्याग किया।

जो भक्ति करे उसकी सेवा से खूब लाभ

आश्रम में पर्युषण के समय हमारे घर पर बहुत मेहमान आते थे उस वक्त मुझे रसोई का काम करना पड़ता था, जिससे मुझसे भक्ति में जाना नहीं बन पाता। इसलिए पूज्यश्री के पास जाकर मैं रोने लगी तब पूज्यश्री ने कहा कि "ऐसा विचार तुमको कैसे आया ? ऐसा विचार मन में से निकाल दो। **जो भक्ति करते हैं उनकी सेवा करें तो खूब लाभ होता है।**"

एक नहीं तो दूसरी तरह से इच्छाओं को रोकना

आसो महिने की ओळी आयी। उस वक्त सभी आयंबिल करते परन्तु मुझसे न हो पाता। इसलिए पूज्यश्री से मैंने पूछा कि सभी लोग आयंबिल उपवास करते हैं परन्तु मुझसे नहीं हो पाता। तब पूज्यश्री ने कहा कि : **"दस पदार्थ खाते हों तो उसमें से दो छोड़ देना। पेट भर के नहीं खाना। थोड़ा कम खाना, जिससे उणोदरी तप होगा।**"

ज्ञानपंचमी के दिन उपवास करने की आज्ञा

एकबार हुबली से हम बारह लोग आश्रम में आये। उस दिन ज्ञानपंचमी थी। हम सब आणंद से दूध पीकर आये थे।

फिर सीधे पूज्यश्री के पास ऊपर गये। पूज्यश्रीने पूछा : "सबका उपवास है ?" हमने कहा : "हम तो दूध पीकर आये हैं। तब पूज्यश्री ने कहा : **"सभी को उपवास करना है। जिस टाईम पर दूध पिया था उसके एक घण्टे के बाद पारणा करना। प्रभुश्रीजी ने ज्ञानपंचमी के दिन उपवास करने की आज्ञा दी है।**"

भाव से दर्शन करने से आराम की नींद

मैं हुबली थी तब दो तीन वर्षों से मुझे रात को बराबर नींद नहीं आतीथी। बादमें जब मैं आश्रम में आयी तब पूज्यश्री से पूछा कि मुझे बराबर नींद नहीं आती और संकल्प-विकल्प होते हैं बहुत आते हैं। तब पूज्यश्री ने कहा : संकल्प-विकल्प से तो बहुत कर्म बंधन होते हैं। संकल्प-विकल्प नहीं करने से निर्विकल्प हो सकते हैं। "संकल्प-विकल्प आयें तब स्मरण एवं भक्ति इन दोनों की तीव्रता बढ़ाना। संकल्प-विकल्प को प्रवेश नहीं करने देना फिर आश्रम का चिंतवन करना जैसे सभामंडप में आकर दर्शन कर रही हूँ। इस तरह सभी जगहों के दर्शन करने की चिंतवना करनी, फिर नींद आ जायेगी।" इस तरह करने से मुझे चैन की नींद आने लगी और यदि नींद न भी आये तो भी मन में दुविधा या दुःख नहीं होता था परन्तु भक्ति होती थी। फिर अपने आप नींद आ जाती थी।

श्री सुवासबहन

श्री कमलाबहन निहालचंदभाई डगली

बोटाद

'सद्गुरुप्रसाद'

आश्रम के एक मुमुक्षु फूलाभाई बोटाद आते थे । वे परमकृपालुदेव तथा पू. प्रभुश्रीजी के समागम कि बातें करते । वो बातें मुझे प्रिय लगती । तीन पाठ तथा माला करने की बात उन्होंने की थी, उस तरह मैं करती थी । आश्रम में आने का बहुत मन करता था लेकिन प्रतिकूल संजोगो के कारण ८-९ वर्षों तक आना न हो पाया । एकबार मेरी बहन पदमा अगास आश्रम गयी तब पू. ब्रह्मचारीजी से बात की कि मेरी बहन को आश्रम पर आने की खूब इच्छा रहती है परन्तु आ नहीं सकती ।

तब पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने मेरी बहन को 'सद्गुरुप्रसाद' ग्रंथ देते हुए कहा कि यह **'सद्गुरुप्रसाद'** कमलाबहन को देना और कहना कि प्रत्यक्ष सद्गुरु कृपालुदेव ही मेरे घर पधारे हैं, ऐसा मानकर रोज़ दर्शन करें ।

मनुष्यभव कब पूर्ण हो जाए इसलिए मंत्र ले लो

एकबार पू. श्री ब्रह्मचारीजी आबू, जुनागढ़, पालिताना, ववाणिया आदि तीर्थों की यात्रा करके संघ के साथ बोटाद पधारे थे । सेठ वीरचंदभाई भूराभाई के यहाँ ठहरना था । वहाँ चार-पाँच मुमुक्षु बहनों ने मंत्र लिया, उस वक्त एक मुमुक्षुभाई ने मुझ से कहा कि यहाँ प्रभु आये हैं इसलिए आप मंत्र ले लो । मेरी नासमझी की वजह से मैंने कहा कि आश्रम में जाऊँगी तब मंत्र लूँगी । थोड़े समय के बाद यही बात मैंने पू. श्री ब्रह्मचारीजी से कही तब पूज्यश्री ने कहा : **''यह दुर्लभ मनुष्यदेह मिला है वह कब पूर्ण हो जाये इसकी जानकारी नहीं है, इसलिए मंत्र ले लो ।''** मानो यह उनका लब्धिवाक्य हो वैसे मैंने तुरंत ही कहा कि मुझे भी मंत्र अभी दे दीजिये । मंत्र देते वक्त पूज्यश्री ने कृपादृष्टि बरसाते हुए कहा : **''जैसे आज से ही दीक्षा ली है, ऐसे भाव रखना ।''** उस वक्त मुझे अपूर्व दर्शन समागम का लाभ प्राप्त हुआ था ।

निरंतर सत्संग की भावना रखनी

श्री वीरचंदभाई के यहाँ से पूज्यश्री संघ के साथ मेरे घर पधारे थे । घर में परमकृपालुदेव के चित्रपट के दर्शन करके बैठे और गंभीर भाव से बोध देते हुए कहा : **''निरंतर सत्संग की भावना रखना तथा सत्पुरुष के एकवचन को भी पकड़के रखना ।''** इतना कहकर वे खड़े हो गये । मैंने कहा : ''बैठिए और मुझे कुछ कहिए ।'' इसलिए पूज्यश्री मेरी विनंती से दुबारा बैठ गये और फिर से यही कहा कि ''निरंतर सत्संग की भावना रखना और सत्पुरुष के एकवचन को भी पकड़के रखना । ऐसा कहकर खड़े हो गये । इससे मुझे यह समझ में आया कि इन दो वाक्यों में सर्व शास्त्रों का सार है ।

आश्रम में आने की इच्छा होने के बावजूद आना नहीं हो पाता था परन्तु इन महापुरुषक के बोटाद में हुए दर्शन समागम और अनंत कृपादृष्टि के पश्चात् थोड़े ही समय में संवत् २००७ में परमकृपालुदेव के अर्धशताब्दी उत्सव पर अगास आश्रम आने का धन्यभाग्य प्राप्त हुआ था ।

'पंचास्तिकाय' मुखपाठ करने की आज्ञा

उस समय एकबार मैंने पू. श्री ब्रह्मचारीजी को वचनामृत में से पंचास्तिकाय का पृष्ठ बताकर कहा : ''इसमें द्रव्य गुण पर्याय की बात मुझे कुछ भी समझ में नहीं आती ।'' पूज्यश्री ने कहा : **''पंचास्तिकाय शास्त्र बहुत उत्तम है । कुंदकुंदाचार्य ने लिखा है । हो सके तो मुखपाठ करने योग्य है ।''** उनकी आज्ञा से मुखपाठ करने की शुरूआत की। फिर मैं बोटाद आयी । थोड़ा मुखपाठ करने के पश्चात् कठिन लगा । इसलिए मैंने पू. साकरबहन को पत्र लिखा । वह पत्र उन्होंने पू. श्री ब्रह्मचारीजी को पढ़ाया । उसके जवाब में पू. साकरबहन ने पूज्यश्री के कहे अनुसार मुझे लिखा कि ''पंचास्तिकाय गहन है। इसलिए मुखपाठ करने में कठिन हो रहा है । परन्तु जैसे बालक पहले बच्चागाड़ी से चलना सीखता है, फिर अपने आप चल सकता है; वैसे अभी मुखपाठ किया हो तो आगे चलकर आपको समझ में आयेगा ।'' इससे दुबारा हिम्मत आ गयी और उनकी कृपा से सरलता से मुखपाठ हो गया ।

आश्रम में आती तब पूज्यश्री कुछ न कुछ मुखपाठ करने की आज्ञा देते और गाँव में रहूँ तब पत्रों द्वारा **'मोक्षमाला'** में से पाठ, **'समाधि सोपान'** में से पत्र आदि मुखपाठ करने के लिए कहते ।

देववंदन प्रतिदिन भाव से करना

एकबार अगास आयी तब पूज्यश्री ने पूछा : ''देववंदन रोज़ करते हो ?'' मैंने कहा : ''हाँ करती हूँ ।'' तब कहा : **''देववंदन रोज़ करना । भाव से करना ।''**

किसी समय संकल्प-विकल्प होता हो या विचारों की उलझन में होऊँ अथवा कोई दुविधाजनक प्रश्न हो उस समय बहुत बार बोधामृत खोलकर पढ़ने से तुरंत ही मन हलका हो जाने से संतोष मिलता था । एकबार बोध में बताया कि : **''मंत्र है वह जैसे-तैसे नहीं है । मंत्र है वह केवलज्ञान है ।''**

वर्षीतप सादगी से आत्मार्थ के लिए करना

एकबार मणिबहन जगजीवनराम आनंदवाला ने वर्षीतप करने की शुरूआत की । थोड़े दिनों के बाद पू. श्री ब्रह्मचारीजी को पता चला तो उन्होंने कहा : "किस से पूछकर वर्षीतप शुरू किया ? पारणा कर लो ।" मणिबहन को मन में एहसास हुआ की स्वच्छंद से मैंने तप की शुरूआत की थी वह योग्य नहीं है । थोड़े दिन के पश्चात् पूज्यश्री ने स्वयं वर्षीतप करने की आज्ञा दी और कहा : **"किसी को बुलाना नहीं, शोभायात्रा निकालना नहीं, धूमधाम से नहीं परन्तु सादगी से करना, आत्मार्थ के लिए करना ।"**

श्री सविताबहन रावजीभाई पटेल

भादरण

श्री सविताबहन

विद्या प्राप्त करना वह उत्तम है

इ.सन् १९५० में आश्रम में रहने की मेरी बहुत इच्छा होने से मन में आया कि शिक्षा प्राप्त करके, धन कमा के फिर आश्रम में रह जाऊँ, जिससे किसी के आगे हाथ न फैलाना पड़े । इसलिए शिक्षा प्राप्त करने की तीव्र इच्छा जगी । मेरे पिताजी तो शिक्षा के लिए अनुमति देने वाले नहीं थे । वैसे आश्रम या कहीं बाहर जाना हो तो भी अनुमति लेनी पड़ती थी, अनुमति मिलने के उपरांत ही बाहर निकल सकते थे । इसलिए मैंने नडियाद में अपने ननिहाल में रहकर शिक्षा प्राप्त करने का विचार किया । वहाँ भी मामा-मामी की अनुमति मिलने पर ही आगे बढ़ सकती थी । उनके पास से मैंने अनुमति माँगी तो उन्होंने कहा कि अपने पिताजी से अनुमति माँगो; और अब इतनी बड़ी उम्र (२९ वर्ष) में कहाँ विद्या ग्रहण होगी ? फिर भी यदि तुम्हारी शादी करने की इच्छा नहीं है तो पढ़ो । मामा की अनुमति मिलते ही मन में हुआ कि पहले अगास आश्रम में जाऊँ और पू. श्री ब्रह्मचारीजी मेरे कुछ कहे बिना इस विषय पर बात करें तो समझूँगी के मेरे भाग्य में विद्या है । इसलिए मैं आश्रम में आयी और एक मुमुक्षु बहन को साथ लेकर पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के पास गयी । पूज्यश्री को वंदन करके बैठ गयी । वहाँ अन्य मुमुक्षु भी थे । पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने (परमकृपालुदेव की ओर इशारा करते हुए) मुझसे कहा : **"एक ही समर्थ मालिक कर लो ।"** फिर स्वयं अलमारी में से पुस्तक लेने खड़े हुए । पुस्तक लेते हुए दृष्टि मेरी ओर करके बोले : **"बहुत हिम्मत की है । विद्या प्राप्त करना यह तो उत्तम कार्य है ।"** इस तरह मैंने मन में जान लिया कि मुझे आज्ञा मिल गई है और मन में शांति हुई कि अब तो अच्छी तरह पढ़कर पास हो जाऊँगी । फिर मैं नडियाद गयी, वहाँ दाखिल हुई और अच्छे नंबर प्राप्त कर पास भी हो गयी ।

अदरक की छूट नहीं रखना

मैं तथा मेरी बहन तारा पू. श्री ब्रह्मचारीजी के पास गये और कहा : "हमें कंदमूल का नियम लेना है ।" तब पूज्यश्री ने कहा : "नियम उतना ही लेना जितना पालन हो सके । एक बार नियम लिया हो फिर उस पर आँच नहीं आनी चाहिए । अंत तक दृढ़ता से नियम का पालन करना ।" तब अदरक की छूट रखने के लिए मैंने बताया, क्युँ की परिवार में खाना खाने के लिए जायें तो मुश्किल न हो । तब पूज्यश्री ने कहा : "उसके बिना मर तो नहीं जायेंगे । चला लेना । कभी छाश और भात, दही और भात खाकर पेट भर सकते हैं ।" हाथ की मुट्ठी बनाकर कहा : **"भात का मुठिया बनाकर पानी के साथ खाना, लेकिन अदरक का सेवन नहीं करना ।"** मुझे कंदमूल का संपूर्ण त्याग करवाया और मेरी बहन तारा को अदरक की छूट दी ।

फिर संजोगानुसार मुझे ट्रेनिंग कॉलेज में जाना हुआ । वहाँ हर पदार्थ में कंदमूल होता था । तब मुझे भात का मुठिया बनाकर खाना पड़ता था । वहाँ के प्रिन्सिपल गुस्से हुए और कहा कि खाना पड़ेगा । मैंने कहा कि मेरा नियम है, इसलिए मैं नहीं खाऊँगी । पूज्यश्री ने कहा था कि नियम लेने के बाद दृढ़तापूर्वक उसका पालन करना है, उसके बिना मर नहीं जायेंगे । ऐसा कहा था जिससे मेरा भी अटलरूप से नियम का पालन हुआ ।

अनार्य देश में जाने की आवश्यकता नहीं

इ.सन् १९५२ में नडियाद की एक बहन समान मेरी मित्र थी । उसने मुझे आफ्रिका से पत्र लिखकर कहा कि तुम यहाँ आ जाओ तो अच्छा रहेगा । यहाँ नर्सरी स्कूल है, उसमें तुम्हें नौकरी दिलवा दूँगी । उस वक्त में फाइनल वर्ष में थी । यह समाचार सुनकर मैं पू. श्री ब्रह्मचारीजी से पूछने आश्रम पर गयी कि मैं आफ्रिका जाऊँ ? परन्तु मेरे पूछने से पहले ही बोध में आया कि : **"अनार्य देश में जाने की क्या जरूरत है ? सब कुछ यहाँ है ।"** इतने में मैं समझ गयी कि मेरा वहाँ जाना योग्य नहीं ।

श्री विमुबहन शनाभाई पटेल

काविठा

आश्रम जैसा कहीं नहीं

गुडिवाडा गाँव में पूज्यश्री ने मुझसे कहा : "तत्त्वार्थसार की गाथाएँ मुखपाठ हुई ?" मैंने कहा : "यहाँ कुछ होता ही नहीं ।" तब पू. श्री बोले : **"आश्रम जैसा कहीं नहीं ।"**

दिन के समय नहीं सोना

आश्रम में मैं तथा बाबरभाई की बेटी पूज्यश्री के पास ऊपर गये । बोध में पूज्यश्री ने कहा : "दिन के समय सोते हो ?" तब मैंने कहा : "हाँ काविठा में भोजन के बाद कुछ काम नहीं होता इसलिए सो जाते हैं फिर चार बजे उठते हैं ।" तब पूज्यश्री ने कहा : **"तेरी इस सहेली का काम करना, परन्तु दिन के समय सोना नहीं ।"**

संवत् २००९ में दिवाली की माला के बारे में समझा रहे थे । उस वक्त मैंने कहा : "आप समझा रहे हो परन्तु मुझे कुछ याद नहीं रहता ।" तब पूज्यश्री ने कहा कि **"बच्चों का नाम कैसे याद रखते हैं ? उसी तरह यह भी याद में रखना ।"**

आचार में जो स्वाद है वह जीवों का है

पूज्यश्री ने बोध में कहा कि आचार में जो स्वाद आता है वह सिर्फ जीवों का ही स्वाद है ।

प्रिय के संग से जीव दुःख में होमे जाते हैं

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने अनंतकृपा करके एकबार मुझे अपने हाथों से निम्न गाथा तथा परमकृपालुदेव के पत्र की एक पंक्ति लिख कर दी थी; जो जीवन का आधाररूप है ।

(दोहा)

प्रिय कर्यो ना कोई जन, त्यां सुधी सुखी गणाय;
संग कर्यो ज्यां प्रियनो, जीव दुःखे होमाय ।

"सत्संग के योग से सहज स्वरूपभूत ऐसी असंगता जीव को उत्पन्न होती है ।" (श्रीमद् राजचंद्र)

श्री रमुबहन आदितराम

सूरत

बारहसौ गाँव जलाने जितना पाप

पूज्यश्री ने कहा : "छः बारह महीने का रखा हुआ आम का आचार खाने से बारहसौ गाँव जलाने जैसा पाप लगता है ।" यह सुनकर मैंने सभी प्रकार के आचार-मुरब्बे का त्याग किया ।

बालों में फूल लगाने से पाप

"बालों में फूल लगाने से पाप का ढेर होता है तथा भाव से एक फूल भगवान को चढ़ाने से पुण्य का ढ़ेर होता है ।" यह सुनकर मैंने पूछा कि मैं लगाती हूँ तो इसका क्या ? तब कहा : "पाप का ढेर होगा ।" फिर मैंने पूज्यश्री के पास से उसका त्याग किया ।

मोक्षमाला शिक्षा पाठ २ (सर्वमान्य धर्म) तथा ४ (मानव देह) रोज़ बोलने की आज्ञा देते हुए कहा कि : **"एक भी दिन भूलना नहीं ।"**

कंदमूल न खायें तो नहीं चल सकता ?

पूज्यश्री ने कहा : "कंदमूल खाते हो ?" मैंने कहा : "हाँ । इसके बिना मुझे नहीं चलता ।" तब उन्होंने कहा : "कंदमूल में क्या अधिक पसंद है ?" मैंने कहा कि "रतालु ।" तब पूज्यश्री ने कहा : "रतालु की बाधा पूरी जिंदगी के लिए ले लो । एक पदार्थ नहीं खायेंगे तो नहीं चलेगा ?" फिर मैंने रतालु की बाधा ली । थोड़े दिनों के पश्चात् अन्य कंदमूल का भी त्याग किया था ।

श्री मणिबहन भाईलालभाई पटेल, धुलिया

क्यूँ, अट्ठाई करने आये हो ?

एकबार हम दोनों धुलिया से आश्रम पर अट्ठाई करने के लिए आये थे । फिर पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के दर्शन करने गये, तब पूज्यश्री बोले : "क्यूँ, अट्ठाई करने आये हो ?" भाईलालभाई ने कहा : "हाँ करने का भाव तो है ।" ये अट्ठाई की बात हमने किसी को बतायी नहीं थी ।

अगले दिन दर्शन करने गये उस वक्त पूज्यश्री ने कहा कि : **"प्रतिदिन का प्रत्याख्यान लेना ।"**

तीन उपवास हो गये अर्थात् अट्ठाई पूर्ण हो जायेगी

उपवास के तीसरे दिन मेरे लिए उठना भी मुश्किल हो गया था, उस दिन चूआ से मेरी माताजी आयी थी । उन्हें लेकर मैं दर्शन करने गयी । मुश्किल से सीढ़ी चढ़कर ऊपर जाकर दर्शन करने बैठी । फिर पू. श्री ब्रह्मचारीजी का बोध शुरू हुआ । उससे धीरे-धीरे शरीर में शक्ति आ गयी और अट्ठाई जैसे पूर्ण हो जायेगी ऐसा प्रतीत हुआ, नहीं तो अगले दिन पारणा करने वाली थी । बोध पुरा हो गया फिर पूज्यश्री बोले कि : "तीन उपवास हो गये हैं अर्थात् अट्ठाई पूर्ण हो जायेगी ।" यह वचन सुनकर पीछे हटने की जो भावना थी वह रुक गयी और अट्ठाई अच्छी तरह से पूर्ण हुई ।

श्री मणिबहन

श्री मणिबहन शनाभाई मास्तर

अगास आश्रम

(श्री कमुबहन शनाभाई मास्तरने बताया हुआ)

आपका जवाब सही है

एकबार साध्वीजीयों ने मेरी माताजी मणिबहन से पूछा कि आपके अगास में श्रीमद्‌जी को पच्चीसवें तीर्थंकर मानते हो न ? मेरी माताजी ने कहा : "हम तो चौबीस तीर्थंकर ही मानते हैं । पच्चीसवें तीर्थंकर होते ही नहीं तो कैसे मानेंगे ।" यह सुनकर वे चुप हो गये । फिर माताजी आश्रम में आयी तब पू. श्री ब्रह्मचारीजी से यह बात की । तब पूज्यश्री ने कहा : तुम्हारा जवाब सही है ।

आत्मा जागृत है इसलिए संस्कार पड़ते हैं

हमारी माताजी भक्ति में जाती तब बाहर से ताला लगाकर हमें घर पर छोड़कर जाती थी । उस वक्त विनु एक वर्ष का था और मैं चार वर्ष की थी । एक बार पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने मेरी माताजी से कहा : ऐसा न करें, साथ लेकर जायें । माताजी ने कहा वो लोग घर पर सो जाते हैं । यहाँ पेशाब आदि करेंगे इसलिए लेकर नहीं आती । तब ब्रह्मचारीजी ने कहा : पेशाब करवा के लेकर आना और यदि जरूरत लगे तो पेशाब करने ले जाना । भक्ति में आवाज़ न करें तो साथ लेकर आना । भले सोये रहें । माताजी ने कहा वो तो सो जायेंगे फिर क्या सुनेंगे ? तब पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने कहा : आत्मा तो जागृत है इसलिए संस्कार पड़ते हैं ।

पेड़ को पत्थर नहीं मारना

शांतिस्थान के पीछे मोसंबी का एक पेड़ था । वहाँ से मौसंबी लेने के लिए मैंने और मेरे भाई विनुने पेड़ पर पत्थर मारा । तब पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने ऊपर से देख लिया और हमसे कहा : पेड़ को मारना नहीं ! जैसे हमें चोट लगती है वैसें पेड़ को भी दुःख होता है ।

एक लाख रुपये हो जायें फिर कमाना नहीं

पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने मेरे पिताजी से कहा था कि एक लाख रुपये हो जायें फिर तुम्हें कुछ कमाना नहीं । इस तरह परिग्रह परिमाण करवाया था ।

विनु अथवा मोती दोनों को समान समझना

एकबार मेरे पिताजी शनाभाई काविठा जानेवाले थे । उन्होंने पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी को यह बात की । तब पूज्यश्री ने कहा : 'विनु हो अथवा मोती हो दोनों को समान समझना ।' विनु मेरा भाई था और मोतीभाई मेरे पिताजी के बड़े भाई । फिर मेरे पिताजी काविठा गये तब मोती काका ने हाथ में लकड़ी लेकर कहा : यह घर और जमीन सब मुझे दे दो वरना यह लकड़ी और तू । पिताजी को पू. ब्रह्मचारीजी की बात याद आयी और उन्होंने कहा : यह घर तथा जमीन सब तुम्हारा; मुझे कुछ नहीं चाहिए । तुरंत कलेश थम गया तथा कषाय के कारण मिट गये ।

मुमुक्षुओं के भिन्न-भिन्न प्रसंग

श्री अंबालालभाई पटेल

संदेसर

नहीं नहीं के बदले, है है ह—ो जाये तब तक बोलना

अंबालालभाई ने पू. ब्रह्मचारीजी से पूछा कि 'हे प्रभु' कहाँ तक बोलना। तब पूज्यश्री ने कहा - खाने बैठते हैं तब कब तक खाते हैं ? पेट भर जाये तब तक। उसी तरह 'हे प्रभु' में नथी नथी के बदले; है है ऐसा हो जाय तब तक।

श्री रमणभाई पटेल

काविठा

पवित्र आत्मा के संग से पुद्गल परमाणु भी सुगंधित

पूज्यश्री के देह छूटने के बाद उन्हें नहलाते हुए काविठा के रमणभाई ने बताया कि 'इनके देह से कितनी सारी सुगंध आ रही है। वैसे ही परमकृपालुदेव के मलमूत्र से भी इत्र जैसी सुगंध आती थी।'

श्री शिवबा कल्याणजीभाई पटेल

काविठा

आज काविठा नहीं जाना

शिवबा आश्रम में दर्शन करने आये थे। तब पूज्यश्री ने कहा : **आज काविठा नहीं जाना**। इसलिए वे नहीं गये। शाम को समाचार मिला कि ट्रेक्टर उल्टा हो गया तथा उसमें बैठे सभी लोग दब गये।

श्री डाहीबहन शंकरभाई पटेल

सीमरडा

तुम पाप करते हो और दूसरों को भी कराते हो

सीमरडा वाले डाहीबहन शंकरभाई के वहाँ ऊपरी मंजिल पर पू. श्री ब्रह्मचारीजी ठहरे थे। तब डाहीबहन ने कई लोगों से कहा कि चलो खेत पर चारा लेने जाते हैं। उस वक्त पू. ब्रह्मचारीजी ने डाहीबहन को ऊपर बुलाया और कहा : **तुम पाप करते हो और दूसरों को भी करवाते हो।**

पू. श्री ब्रह्मचारीजी के बोध वचन

परभवमें भी किये हुए कार्यका फल मिलता है।

किए हुए कार्य का फल परभव में भी प्राप्त होता है किसी मनुष्य ने मिल का निर्माण किया हो, फिर वह चाहे जिस गति में जाये; परन्तु जब तक वह मिल चलती है तब तक उसे वहाँ भी उसका पाप लगता है। उसी तरह किसी ने मंदिर बंधवाया हो तो उसे भी उस प्रकार होता है।

(ह.ब्र.बो.नो.२ पृ.४५०)

जिनमेंसे दूध निकले वैसे फल अभक्ष्य

एक मुमुक्षुभाई चीकु, रायण आदि की प्रतिज्ञा लेने आये थे। पूज्यश्री ने कहा : जिन से दूध निकलता है वह सब अभक्ष्य है। खाने लायक नहीं। अनंत काय है। चीकु, रायण, पपीता आदि सब ऐसे ही हैं। (ह.ब्र.बो.नो.२ पृ.४७८)

देवदेवियों की मान्यता त्यागने योग्य

श्री शांतिसागरजी नाम के एक दिगंबर मुनि थे। उन्होंने ऐसा नियम लिया था कि जो देवदेवियों को पूजते हों, मानते हों, उनके घर से आहार नहीं लेना। वे मुनि बहुत प्रख्यात थे इसलिए लोगों को उन्हें आहार करवाने की इच्छा होती थी। इसलिए अनेक लोगों ने देवदेवियों की मान्यता त्याग दी और उनके घरों में जो देव देवियों की मूर्तियाँ थी वे सब गाड़ी में भरकर नदी में बहा दी। (ह.ब्र. बो.नो.४ पृ.१७२९)

जिनका भाग्य होगा उनका देहत्याग यहाँ होगा

पू. भाटेजी की साली के बेटी गुणवंती आश्रम में बहुत बार रहती। यहीं पर बड़ी हुई थी। वह एक शादी के प्रसंग के लिए अपने माता-पिता के साथ मुंबई से कच्छ गयी थी। वहीं बीमार हो गयी लेकिन आश्रम में आने की उसकी खूब एच्छा होने से बीमारी की हालत में ही उसे आठ दिन पहले यहाँ लाया गया। दस बजे की गाड़ी से आयी थी तब मैं (पू. श्री ब्रह्मचारीजी) उसके पास गया था। प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी ने दिये हुए मंत्र आदि की स्मृति दिलायी थी। बारह बजे तो उसका देहत्याग हो गया। उससे सोया नहीं जा रहा था। इसलिए दोनों हाथ बिछाने के दोनों ओर रखकर मंत्र स्मरण करती थी। पूछने पर स्मरण कर रही हूँ ऐसा कहती। मुझे आश्रम में ले जाओ ऐसी रट लगा रखी थी। आश्रम में आकर उसका देहत्याग हुआ। प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी अनेक बार कहते कि जिसका भाग्य होगा उसका देहत्याग यहाँ होगा। इस दस वर्ष की बालिका के दृष्टांत से यह प्रत्यक्ष ज्ञात हुआ। (पू. श्री ह.ब्र.डायरी पृ.१६५)

श्री शांतिलालजी वरदीचंदजी
शिवगंज

कल्याणमूर्ति सत्पुरुषो

वंदू सद्गुरु राजने, अने संत लघुराज
गोवर्धन गुणधर नमुं, आत्महितार्थे आज।

परमकृपालु परमात्मा देवाधिदेव श्रीमद् राजचंद्र प्रभु का जन्म वि.सं. १९२४ में और देहोत्सर्ग वि.सं. १९५७ में, प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी का जन्म वि.सं. १९१० में और देहोत्सर्ग वि.सं. १९९२ में, प.पू.श्री ब्रह्मचारीजी का जन्म वि.सं. १९४५ में तथा देहोत्सर्ग वि.सं. २०१० में हुआ था।

इस प्रकार बीसवी सदी की शुरूआत से अर्थात् वि.सं. १९१० से शुरू करके वि.सं. २०१० तक पूरे सौ वर्षों की कालावधि में तीन महापुरुषों का इस आर्यभूमि पर अवतरण सही मायने में मुमुक्षुओं के महत् पुण्य का उदयरूप ही था। आज भी ये महात्मा अपने अक्षररूप देह से विद्यमान ही हैं। उनकी यथातथ्य मुखमुद्राएँ भी हमारे सद्भाग्य से आज मौजूद है। इन महात्माओं के प्रति अब हमारा भक्ति-प्रेम, बहुमान जितना जगेगा उतना हमारा कल्याण होगा।

परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्र प्रभु के वचनामृत ग्रंथ का एक-एक वचन शास्त्ररूप है, शास्त्र के साररूप है, मंत्ररूप है। उसे समझने के लिए अपूर्व भक्ति, विनय तथा बहुमान चाहिए। गहराई में उतरकर के पढ़ने, चिंतन-मनन तथा निदिध्यासन के क्रम का सेवन करने से अवश्य कल्याण संभवित है। परन्तु उन वचनों को समझने के लिए प्रथम प.पू. श्री ब्रह्मचारीजी के बोधामृत भाग १-२-३ तथा प.पू. प्रभुश्रीजी के उपदेशामृत को पढ़ने की विशेष आवश्यकता है ऐसा मेरी समझ में आया है और इस प्रकार करने से वचनामृत समझने में मुझे खूब आसानी भी हुई है।

बोधामृत भाग-३ (पत्रसुधा) भी एक अपूर्व ग्रंथ है। इसमें अनेक मुमुक्षुओं के दुविधाजनक प्रश्नों के स्पष्टरूप से समाधान दिये है तथा वचनामृत में आनेवाले अनेक भावों की समझ पूज्यश्री ने दी है। कैसे भाव रखते हुए वर्तन करना, किस प्रकार सदाचार का सेवन करना आदि अनेक विषयों का उसमें समावेश है। पूज्यश्री द्वारा लिखे गये ये पत्र मुमुक्षुओं के लिये परमहित का कारण हैं।

पू. श्री ब्रह्मचारीजी का प्रज्ञावबोध ग्रंथ तो एक अपूर्व कृति है। इस काल के जीवों के लिए एक वरदान है। उसे गाते हुए, उसका आशय गहराई से समझते हुए वृत्ति में शांति आती है। मन को स्थिर करने का यह एक अपूर्व साधन है।

इन सत्पुरुषों की त्रिपुटी के चाहे जो शास्त्र या बोध, पत्र या काव्य, पढ़ते या गाते आत्मा कृतार्थता का अनुभव करता है। यही महापुरुषों की वाणी का अतिशय है क्योंकि वाणी आत्मप्रदेशों केा छू कर निकलती है। धन्य है ऐसे महापुरुषों की वाणी को और उनकी अलौकिक वीतराग मुद्रा को।

"सत्पुरुषों का योगबल जगत का कल्याण करे।"

(श्रीमद् राजचंद्र)

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

श्री प्रेमराजजी जैन

यवतमाल

महापुरुषों की परम लघुता

अनेक वर्ष पहले तत्त्वज्ञान में पढ़ा था : "रात्रि बीत गयी, प्रभात हुआ, निद्रा से मुक्त हुए। भावनिद्रा दूर करने का प्रयत्न करें।" यह मुझे समझ में नहीं आया। संयोगवश खंभात में एक विद्वानभाई, जिन्हें ज्ञान है ऐसा सुनने में आया था, जिससे समझने के लिये उनसे पूछा परन्तु उनके जवाब से समाधान नहीं हुआ। उसके पश्चात् जब प.पू. ब्रह्मचारीजी ने इस विषय पर जो स्पष्टीकरण किया है उसे पढ़ा तो समाधान भी हुआ तथा सहज महसूस हुआ कि परमकृपालुदेव के हृदय को जाननेवाले ये भी महापुरुष ही होने चाहिए।

'नहि प्राप्त को ना चहें, प्राप्त अप्राप्त समान'

ग्रंथ-युगल का यह वचन बहुत बार स्मरण आता रहता है कि संक्षिप्त में दुःख से मुक्त होने का ऐसा रामबाण उपाय बता दिया है !

सात वर्ष के अपने इकलौते पुत्र का त्याग करके प.पू. प्रभुश्रीजी की सेवा में सर्वार्पणभाव से रहना यह पू. श्री ब्रह्मचारीजी की त्याग-वैराग्य की पराकाष्ठा को सूचित करता है।

यवतमाल के मंदिर में पत्रसुधा के वांचन के वक्त सतत यह जानने में आता कि पूज्यश्री की श्रीमद् राजचंद्र प्रभु के प्रति कैसी गज़ब की अद्‌भुत निष्ठा थी। मानो अपना अस्तित्व ही कृपालुदेव में विलीन कर दिया हो ऐसा स्पष्ट जानने में आता है। उनके प्रति पूज्यभाव की वृद्धि होने में उनके अनेक वचन निमित्तरूप बने हैं। उनमें से एक यहाँ लिखता हूँ। पत्रसुधा के पत्र १००१ में बोध की माँग करनेवाले मुमुक्षुभाई को जवाब में कहा है कि "मैं तो पामर हूँ..." इस वचन में उनकी अनहद लघुता, शूरवीरता तथा आत्मानंद में अखंड निवास करने की प्रबल इच्छादशा के दर्शन होते हैं। परमकृपालुदेव के प्रति कितनी महत्ता उनमें हृदयगत हुई होगी तभी अपनी उत्तम दशा में भी पामरता ही दिखाई देती थी। ये इससे उनकी गुरुप्रेम दशा का माप निकाल नहीं सकते।

इस जीव को सहज ही कुछ लिखना, बोलना आ जाए तो अपनी महानता दिखाता रहता है, जबकि प्रज्ञावबोध, समाधि-सोपान, समाधि-शतक, लघुयोगवासिष्ठसार, प्रवेशिका आदि ग्रंथो की रचना करनेवाले, घरकुटुम्ब का अंतरंग तथा बाह्य से त्याग करनेवाले, तत्त्वज्ञ पुरुष की सेवा में सतत रहकर आज्ञा की एकांत उपासना करनेवाले, स्वसंपत्ति (आत्मसंपत्ति) प्राप्त करके उस दशा में निरंतर रहने का सतत पुरुषार्थ करनेवाले अपने आप को पामर कहें यह उनकी कितनी ज्यादा अद्‌भुत महानता दर्शाता है !

उनके वचन-दर्शन के आधार पर पूज्यश्री के प्रति खूब आदरभाव उत्पन्न हुआ है। धन्य है परम पुरुषों की परम लघुता को। अस्तु।

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

श्री मूलचंदभाई शाह

पाऊँ सच्चा जीवन परिवर्तन

मंत्रे मंत्र्यो, स्मरण करतो, काल काढुं हवे आ,
ज्यां त्यां जोवुं पर भणी भूली, बोल भूलुं पराया,
आत्मा माटे जीवन जीववुं, लक्ष राखी सदा ए.
पामुं साचो जीवनपलटो, मोक्षमार्गी थवाने।

जिनके रोमरोम में परमकृपालुदेव द्वारा दिया हुआ 'सहजात्मस्वरूप परमगुरु' मंत्र व्याप्त था ऐसे पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने अपने जीवन में एकरूप हुए परमकृपालुदेव के वचनामृत को यथार्थ समझने योग्य, पूर्वभूमिका तैयार करने के लिए तथा सच्ची मुमुक्षुता प्राप्त करने की चाबीरूप ऊपर का काव्य हमारे जीवन के परिवर्तन के लिए शिक्षाबोध के रूप में हमें दिया है ।

पू. श्री ब्रह्मचारीजी प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी के सानिध्य में करीब ११ वर्ष रहे, उनकी प्रत्येक आज्ञा का पूर्ण निष्ठा पूर्वक पालन करके, स्वयं के अस्तित्व को एकदम गौण कर के, प्रभुश्रीजी की सेवा में अहोरात्र उपस्थित रहकर सर्व मुमुक्षुओं को उत्तम जीवन जीने का मार्गदर्शन देकर गये हैं और वे आज्ञांकितपने के जीवंत आदर्शरूप बने हैं ।

परमकृपालुदेव को तथा प. पू. प्रभुश्रीजी को जिन्होंने देखा ही नहीं ऐसे अनेक मुमुक्षु पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के पास से आत्मरहस्य का बोध प्राप्त कर जीवन में यथायोग्यता तथा यथाशक्ति परिवर्तन लाने के लिये परमकृपालुदेव के प्रति श्रद्धावान तथा भक्तिवंत बने हैं । ऐसे उपकारी पुरुष के उपकार की यत्किंचित् स्मृति हेतु पूज्यश्री के जन्मशताब्दी उत्सव मनाने का लाभ हमें मिला हैं यह हमारा अहोभाग्य है । परमकृपालुदेव के द्वारा उद्धार किये हुए वीतराग मार्ग को प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी ने प्रकट रूप में लाया है । प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी ने अपनी आयुष्य की अंतिम अवस्था में इस वीतरागमार्ग की डोर प.पू. ब्रह्मचारीजी को योग्य धर्माधिकारी जानकर उनके हाथ में सौंपी । पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने अनेक मुमुक्षुओं को प.पू. प्रभुश्रीजी की आज्ञानुसार परमकृपालुदेव की भक्ति में जोड़ दिया । हनुमान समान भक्तिवंत पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने परमकृपालुदेव को चर्मचक्षु से देखा नहि था, दर्शन नहीं किये थे फिर भी अपने पुरुषार्थ के बल से तथा अंतःकरण की भक्ति द्वारा अंतर्चक्षु को प्रगटकर परमकृपालुदेव के स्वरूप के साथ अभेदता साध्य की ।

परमकृपालुदेव के मार्ग का जयजयकार करनेवाले, आज्ञारूप धर्म अपने जीवन में सांगोपांग उतारने वाले, प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी के बोये हुए बोधबीज को ज्ञानरूप बड़ के वृक्ष समान करनेवाले तथा मुमुक्षुओं के अंतरंग को शीतलता प्रदान करनेवाले ऐसे धर्माधिकारी पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का सर्वसामान्य रीत से परमकृपालुदेव के प्रकट किये हुए वीतरागधर्म की परंपरा में और विशेषरूप से इस आश्रम में धर्मपरंपरागत तृतीय पुरुष के रूप में स्थान यथायोग्य है; तथा धर्ममार्ग की सुपुर्दगी और चलती परंपरा के पूर्णविरामरूप है ।

'शुक्ल अंतःकरण के बिना मेरे वचनों को कौन दाद देगा ?' ऐसे परमकृपालुदेव के वचनों को साकार करनेवाले, उनके वचनो के आधार पर समग्र जीवन जीनेवाले और सभी सत् जिज्ञासुओं को प्रमाणिकरूप से यही लक्ष्य करानेवाले ऐसे प.पू. ब्रह्मचारीजी स्वयं भवसागर से पार हो गये और दूसरे अनेक लोगों को भी इस मार्ग की ओर प्रेरित किया ।

इस आश्रम में त्रिवेणी संगमरूप, रत्नत्रयरूप, त्रिपुटीरूप ये तीन पुरुष हुए हैं । एक अपेक्षा से ये तीनों पुरुष समकालीन कहलाने योग्य हैं । संवत् १९५७ में परमकृपालुदेव के निर्वाण के बारह वर्ष पहले ही अर्थात् संवत् १९४५ में ब्रह्मचारीजी का जन्म हो चुका था । पू. श्री ब्रह्मचारीजी इस समय के सत्पुरष हैं । उनके जन्मशताब्दी वर्ष का उत्सव वह परमकृपालुदेव एवं प.पू. प्रभुश्रीजी के मनाये गये जन्मशताब्दी उत्सवों के अनुसंधानरूप मानने योग्य है ।

प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी का आयुष्यकाल भी इसी समयांतराल दरम्यान था । (संवत् १९१०-१९९२)

परमकृपालुदेव ने लिखा है कि, "ईश्वरेच्छा से जिन किन्ही भी जीवों का कल्याण वर्तमान में भी होना सर्जित होगा, वह तो वैसे होगा और वह दूसरे से नहीं परन्तु हमसे, ऐसा भी यहाँ मानते हैं ।" (वचनामृत पत्र ३९८) इस पंचमकाल में ऐसे परमात्मास्वरूप प्राप्त पुरुष के प्रति आत्मकल्याण-इच्छुक जीवों को मोड़नेवाले अपने परम उपकारी परमपूज्य प्रभुश्रीजी और श्रीमद् राजचंद्र प्रभु, पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के बताये मार्ग में, आदेशानुसार हमारा जीवन पलट जाये और हम सभी परमकृपालुदेव की भक्ति में लीन हो जायें, लीन रहें यही प्रभु से नम्र विनंती ।

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का विशाल साहित्य

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का साहित्य सर्जन विभाग बहुत विशाल है। उनके लिखने की शैली सरल, सुंदर एवं सचोट है। प्राथमिक भूमिका के जिज्ञासुओं के लिए भी वह परम आधार है। निर्मल आत्मा को स्पर्श कर निकली हुई यह वाणी सामनेवाले जीव के आरपार उतर जाती है। सम्यक् भावों से सुशोभित ऐसी सत्पुरुषों की वाणी वही सच्ची सरस्वती है।

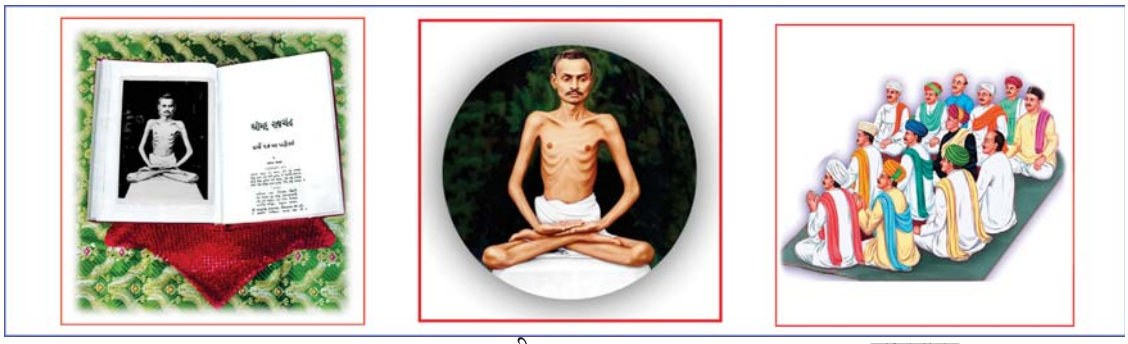

वचनामृत | वीतराग मुद्रा | सत्समागम

परमकृपालुदेव ने कल्याण के मुख्य तीन साधन कहे हैं :–

"अहो सत्पुरुष के वचनामृत, मुद्रा और सत् समागम ! सुषुप्त चेतन को जागृत करनेवाले, गिरती वृत्ति को स्थिर रखनेवाले, दर्शन मात्र से भी निर्दोष, अपूर्व स्वभाव के प्रेरक, स्वरूपप्रतीति, अप्रमत्त संयम और पूर्ण वीतराग निर्विकल्प स्वभाव के कारणभूत; अंत में अयोगी स्वभाव प्रकट करके अनंत अव्याबाध स्वरूप में स्थिति करानेवाले ! त्रिकाल जयवंत रहें ! " (वचनामृत पत्र ८७५)

अक्षर-देहरूप सत्पुरुषों की वाणी

उपरोक्त तीन साधनों में प्रथम तथा मुख्य साधनरूप साक्षात् मोक्ष की मूर्ति समान प्रत्यक्ष सत्पुरुष का समागम वह तो आसान नहीं; परम दुर्लभ है । वीतराग पुरुषों की यथातथ्य मुखमुद्रा भी महाभाग्य से मुमुक्षुओं को प्राप्त होती है परन्तु अक्षर-देहरूप सत्पुरुषों की वाणी-वचनामृत मुमुक्षु के लिए सदैव परम उपकारभूत है । वह परमपद प्राप्ति का प्रबल कारण है तथा कैवल्यदशापर्यंत उस वाणी का अवलंबन आवश्यक है ।

ऐसी वीतराग प्रभु की गहन वाणी को कोई विरले संत पुरुषो ने ही जाना है, उसके मर्म को प्राप्त कर अनुभव किया है और ऐसे अनुभवी संत पुरुषों ने ही उसकी यथार्थ महिमा की है ।

इस वीतरागवाणी से भरपूर पू. श्री ब्रह्मचारीजी का विशाल साहित्य नीचे दिये अनुभाग में विभाजित कर सकते हैं–

१. मौलिक ग्रंथ विभाग
२. जीवन चरित्र विभाग
३. बोधामृत विभाग
४. विवेचन विभाग
५. संयोजन विभाग
६. भाषांतर विभाग
७. अंग्रेजी साहित्य विभाग
८. संपादन विभाग
९. भिन्न-भिन्न काव्य विभाग

इन विभागों में विभाजित साहित्यों का आस्वादन करने के लिए जिज्ञासु वर्ग में वांचन-मनन की प्रेरणा उद्‌भव हो इस हेतु से इस बहुमुखी साहित्य का यहाँ संक्षिप्त विवरण दे रहे हैं ।

(१) मौलिक ग्रंथ विभाग

प्रज्ञावबोध : पूज्यश्री की यह एक अमूल्य मौलिक रचना है । सर्व शास्त्रों के साररूप इस ग्रंथ की रचना करके इस प्रज्ञापुरुष ने गागर में सागर को समा डाला है ।

परमकृपालुदेव के पत्रों को भी काव्यों में पिरोकर अनेक गेय रागों में प्रस्तुत किया है । ग्रंथ में विविध छंदो की सुंदर छटा भी सुहावनी है । प्रत्येक पाठ के प्रारंभ में आनेवाली गाथा में परमकृपालुदेव विविध स्वरूप में प्रकट होते हैं । परमकृपालुदेव की परम भक्ति इस ग्रंथ में भरपूर भरी हुई है । भक्ति एवं ज्ञान का संगमरूप यह सर्जन मुमुक्षुओ के अंतरात्मा को शीतलता पहुँचाता है, शांत करता है, सुख देता है ।

इस ग्रंथ का सर्जनकाल संवत् १९९४ से १९९७ है ।

(२) जीवन चरित्र विभाग

जीवनकला : इस ग्रंथ में परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजी का विस्तृत जीवन चरित्र है । आराधक मुमुक्षु वर्ग को श्रीमद्‌जी की वीतरागदशा की सच्ची पहचान करवाने में तथा उनके प्रति भक्ति प्रकट होने में यह ग्रंथ परम उपयोगी है । श्रीमद्‌जी के जीवन संबंधी उपलब्ध संपूर्ण हकीकत इस ग्रंथ में यथास्थान पर दी हुई है । इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि पूज्यपाद श्री लघुराजस्वामी ने इसे संपूर्ण सुना है, इसकी कसौटी करके इसे मंजूर किया है । परमकृपालुदेव के जीवन पर अनेक पुस्तकें लिखी गई है । इन सब में यह ग्रंथ संपूर्ण एवं सर्वोपरी है ।

परमकृपालुदेव की मौलिक स्वतंत्र रचनाओ में मोक्षमाला, भावनाबोध तथा आत्मसिद्धिशास्त्र मुख्य हैं । उनमें आनेवाले विषयों का इस ग्रंथ में संक्षिप्त वर्णन देते हुए सुज्ञ पाठक को उन मूल ग्रंथो के वांचन तथा मनन की हितकारी प्रेरणा की है । अनेक प्रसंगों को इस ग्रंथ में समाकर इस ग्रंथ का गौरव बढ़ाया है ।

इस पुस्तक का रचनाकाल संवत् १९९०-९१ है ।

श्रीमद् लघुराजस्वामी जीवन चरित्र :

इस ग्रंथ में प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी के जीवन चरित्र का आलेखन है जो कि १५ खंड तक पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने किया है फिर १५ से २२ खंड का जीवनचरित्र श्री रावजीभाई देसाई ने आदरसहित पूर्ण किया है ।

पूज्यश्री ने प.पू. प्रभुश्रीजी के सभी जीवन प्रसंगों का इसमें समावेश करके अधिक से अधिक जानकारी उपलब्ध हो सके इसका प्रयास किया है । प्रभुश्रीजी के जीवन संबंधी विस्तृत विवरण करता हुआ अन्य कोई ग्रंथ उपलब्ध नहीं है । प्रभुश्रीजी के अंतेवासी पू. श्री ब्रह्मचारीजी द्वारा आलेखित होने से यह जीवनचरित्र संपूर्ण विश्वसनीय है ।

(३) बोधामृत विभाग

बोधामृत भाग - १ :

पूज्यश्री के अनेकवार हुए बोध को आत्मसात करके मुमुक्षुओं ने उसका संग्रह किया । उस संग्रह पर से यह ग्रंथ तैयार किया गया है । इस बोधरूप अमृत को पीकर अनेक भव्य आत्माओं को शांति प्राप्त होती है । यह सरल, सचोट, सम्यक्बोध शांतसुधारस का धाम है । प्राथमिक भूमिका के मुमुक्षुओं के लिए भी महान उपयोगी है । ग्रंथ की स्वाभाविक सरल शैली जिज्ञासु बालजीवों को भी आकर्षित करती है । बातों बातों में मोक्षमार्ग का मर्म समझाकर महान उपकार किया है । बोध का संग्रह समय सं. १९९९ से सं. २०१० तक का है । उसमें से ८० प्रतिशत भाग सं.२००८ से सं.२०१० तक का है ।

बोधामृत भाग - ३ (पत्रसुधा) :

मुमुक्षुओं के अनेक सवालों एवं उलझनों के समाधानरूप यह ग्रंथ है । मुमुक्षुओं के आये हुए पत्रों के दिए गये समाधान से इस ग्रंथ का सर्जन हुआ है । मुमुक्षुओं के आये हुए प्रश्नों का पूज्यश्री पत्रो द्वारा समाधान करके उनके अंतरंग को शीतलता एवं शांति प्रदान करते थे । ग्रंथ में कुल मिलाकर १०२५ पत्र हैं । उसमें पहला पत्र पूज्यश्री की संसार से छूटने की तीव्र प्रबल अभिलाषा दर्शाता है । दूसरा और तीसरा पत्र प.पू. प्रभुश्रीजी पर लिखा गया है । उसमें भी पूज्यश्री के त्याग वैराग्य की उत्कृष्ट भूमिका का स्पष्ट दर्शन होता है । इसके बाद के १९ पत्र परमकृपालुदेव को प्रत्यक्ष मानकर लिखे हुए हैं, वे पूज्यश्री की परमकृपालुदेव के प्रति अनन्य भक्ति के सूचक हैं । इन पत्रों में पूज्यश्री अपने अंतरंग के भाव परमकृपालु परमात्मा के समक्ष प्रकट करते हैं । इसके बाद के सर्व पत्रों में अनेक तरहका बोध मुमुक्षुओं की दुविधा मिटाने में समर्थ है ।

पत्रसुधा के उपनाम से प्रसिद्ध

पत्रों में भी बोधरूप अमृत बहता होनेसे 'पत्रसुधा' उपनाम से यह ग्रंथ प्रसिद्ध है । 'श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत में उत्पन्न होनेवाले अनेक संशयो का भी समाधानरूप यह अमूल्य ग्रंथ मुमुक्षुओं के लिए महान है । परमकृपालुदेव द्वारा उपदेशित सत्धर्म की आराधना के लिए योग्य जीवन की बुनियाद बनाने की रहस्यमय चाबी व प्रेरणा, इस ग्रंथ के अनुभवसिद्ध वचनों से प्राप्त होने योग्य है । इन पत्रों का लेखनकाल सं.१९८३ से सं. २०१० तक का है ।

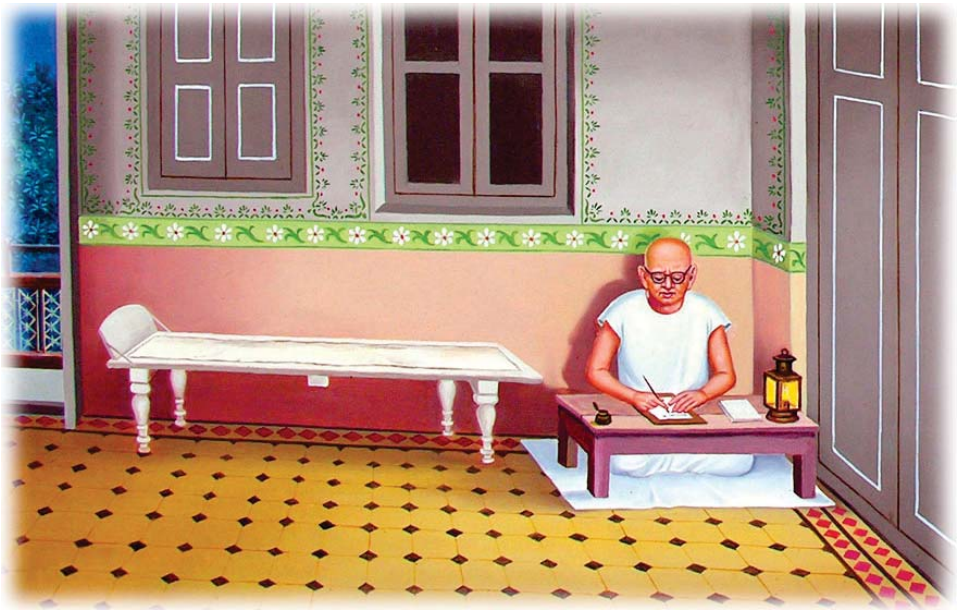

पूज्यश्री का पत्र लेखन

प.पू. प्रभुश्रीजी की विद्यमानता में भी पू. श्री ब्रह्मचारीजी प्रभुश्रीजी की आज्ञानुसार मुमुक्षुओं को पत्र लिखते थे तथा अपने देहविलय के पहले दिन तक पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने पत्रलेखन की पवित्र जिम्मेदारी निभाकर मुमुक्षुओं के मन को शांति प्रदान की है ।

(४) विवेचन विभाग

आत्मसिद्धि विवेचन : परम पू. श्री ब्रह्मचारीजी द्वारा स्वयं के स्वाध्याय हेतु लिखा गया आत्मसिद्धि पर अर्थविस्तार, इस ग्रंथ के रूप में प्रकट हुआ है । खंभात के पू. अंबालालभाई ने आत्मसिद्धि पर संक्षिप्त गद्यार्थ लिखा है, जिसे परमकृपालुदेव ने स्वयं देखा हुआ है । उसे इस ग्रंथ की प्रत्येक गाथा के नीचे लिखकर, फिर इस अर्थविस्तार को उसके नीचे भावार्थरूप में दिया गया है ।

सर्व शास्त्रों के साररूप 'आत्मसिद्धिशास्त्र' के अवगाहन में और उसमें बोध किये गये मार्ग की परम प्रेमपूर्वक उपासना करने में यह विवेचन मुमुक्षुवर्ग के लिए अति सहायक है ।

इस ग्रंथ की प्रस्तावना में पूज्यश्री लिखते हैं कि "सज्जन पुरुष इस अर्थविस्तार को इत्यमेव ना समझें, 'इत्यमेव' परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्र प्रभु के हृदय में है ।"

अर्थविस्तार का समय सं. १९८२ है ।

आठ दृष्टि की सज्झाय (भावार्थ सहित) :

"श्री हरिभद्राचार्य ने 'योगदृष्टि समुच्चय' ग्रंथ संस्कृत में रचा है ।" (वचनामृत पत्र ८१४) "इस पर से उपाध्याय श्री यशोविजयजी ने गुजराती भाषा में यह आठ दृष्टिकी सज्झायकी ढालबद्ध रचना की है ।" इस के बारे में परमकृपालुदेव बताते हैं कि "उसे कंठाग्र कर विचारने योग्य है । ये दृष्टियाँ आत्मदशामापक (थर्मोमीटर) यंत्र है ।"

(श्रीमद् राजचंद्र पृ.६७४)

इस ग्रंथ के निवेदन में पूज्यश्री बताते हैं कि "श्री यशोविजयजी कृत यह आठ दृष्टि की सज्झाय मुखपाठ करके उसका नित्य स्वाध्याय करने की प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी ने आश्रमनिवासी मुमुक्षुओं को आज्ञा दी थी । तबसे आश्रम के नित्यनियम में इस आठ दृष्टि का समावेश होने से इसका भक्तिपूर्वक नित्य पाठ करने में आता है ।" प्रसंगोपात पूज्यश्री ने इस गहन ग्रंथ पर जो विवेचन किया उसकी नोंध करके साकरबहन ने यह भावार्थ तैयार किया जो मुमुक्षुओं को आठ दृष्टि के अर्थ समझने में सहायक होने से ग्रंथरूप से प्रकट किया गया है । इस विवेचन का समय सं. २००३ है ।

समाधि शतक विवेचन :

१०५ गाथाओं का यह मूल ग्रंथ संस्कृत में है । उसके रचयिता श्री पूज्यपाद स्वामी हैं । वे संवत् ३०८ में आचार्यपद पर बिराजमान थे । इस ग्रंथ के संस्कृत टीकाकार श्री प्रभाचंद्रजी हैं ।

संवत् १९४९ में मुंबई में परमकृपालुदेव ने इस ग्रंथ की १७ गाथाएँ प्रभुश्रीजी को समझायी और स्वाध्याय हेतु यह ग्रंथ उन्हें दिया था । उसके अग्रपृष्ठ पर परमकृपालुदेव ने अपने हाथ से **'आतमभावना भावतां जीव लहे केवलज्ञान रे'** यह मंत्र लिखकर दिया था । इस मंत्र का तथा इस ग्रंथ का प.पू. प्रभुश्रीजी ने मुंबई छोड़ने के बाद तीन वर्ष तक मौन रहकर परिशीलन किया था ।

इस ग्रंथ के बारे में पूज्यश्री बोधामृत भाग-१, पृ.१६ पर बताते हैं कि :–

'समाधिशतक' समाधि प्राप्त कराये ऐसा है । जिन्हें आगे बढ़ना है उनके लिए यह अतिशय हित का कारण है । सत्रहवें श्लोक में बहुत सुंदर वर्णन है । एक महिना यदि सच्चे हृदय से पुरुषार्थ करने में आये तो आत्मा प्राप्त हो जाए । श्लोक पचास तक तो हद कर दी है । बात संक्षिप्त में है परन्तु उसपर अनेक शास्त्र बन सकें ऐसा है । इस ग्रंथ का गुजराती पद्यानुवाद काल सं.१९८२ है ।

तीन आत्मा का तलस्पर्शी वर्णन

ग्रंथ में बहिरात्मा, अंतरात्मा तथा परमात्मा का खूब तलस्पर्शी विवेचन है । "बाह्यत्याग को अंतर्त्यागरूप में पलटाकर परमार्थ में मग्न रहने में मददरूप हो इसलिये तथा भविष्य में भी मोक्षमार्ग में दीपक समान मार्गदर्शक साबित हो" ऐसा यह ग्रंथ है । प.पू. प्रभुश्रीजी ने भी पू. श्री ब्रह्मचारीजी को यह ग्रंथ स्वाध्याय के लिए दिया था । पूज्यश्री ने ६-६ वर्ष स्वाध्याय करके इस तरह आत्मसात् किया कि उसके फलस्वरूप प.पू. प्रभुश्रीजी ने उन्हें 'गुरुगम' दी ।

श्री समाधिशतक ग्रंथ का समावेश **'ग्रंथ युगल'** नाम से

छपी पुस्तक में किया गया है । इस पुस्तक में प्रथम 'लघुयोगवासिष्ठसार' पद्यरूप में दिया गया है ।

'ये दो ग्रंथ (लघुयोगवासिष्ठसार एवं समाधिशतक) कद में छोटे होने के बावजूद रत्नतुल्य अमूल्य हैं । मुमुक्षुओं के आत्मोन्नति में मददरूप हैं । प्रथम ग्रंथ में वैराग्य की मुख्यता है । दूसरे में आत्मविचार की मुख्यता है ।" - इस विवेचन का उद्भव काल सं. २००६ है ।

नित्यनियमादि पाठ (भावार्थ सहित) : परमकृपालुदेव के पदों पर पूज्यश्री ने प्रसंगोपात विवेचन किया है । ये विवेचन मुमुक्षुओं के लिए उपयोगी होने से ग्रंथरूप में प्रकाशित हुए हैं । इस ग्रंथ की प्रस्तावना में पूज्यश्री बताते हैं कि "अर्थ समझकर नित्यनियमादि पाठ हो तो परमार्थ की ओर वृत्ति प्रेरित होगी और भक्ति उल्लासपूर्वक होगी, यह इस प्रकाशन का हेतु है । समझने के बाद विचार का विस्तार होता है और नवीन भाव जगते हैं, वह स्वविचारणा आत्मप्रतीति का कारण बनती है ।"

इस ग्रंथ में अगास आश्रम में नित्यक्रमरूप से बोले जानेवाले मंगलाचरण से लेकर करीब सभी पद्यों के अर्थ हैं । सुबह, दोपहर, शाम तथा रात्रि के भक्ति पदों और देववंदन, आत्मसिद्धि आदि सब के अर्थ का समावेश इसमें है । इसलिए यह प्रकाशन भी मुमुक्षुओं के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध हुआ है ।

इस ग्रंथ की प्रथम आवृति का समय सं. २००७ है । वर्तमान में आठवीं आवृत्ति विद्यमान है ।

मोक्षमाला विवेचन : पूज्यश्री ने 'मोक्षमाला' ग्रंथ पर दो बार विवेचन किया है । उसे सम्मिलित कर यह ग्रंथ तैयार किया गया है । ग्रंथ की भाषा सरल है । बालजीवों को भी समझ में आये ऐसी है ।

यह विवेचन 'मोक्षमाला' को समझने में बहुत उपयोगी होने से उसका स्वाध्याय करते वक्त साथ रखकर विचारने योग्य है; जिससे जैन वीतराग-मार्ग का स्वरूप समझने में सुगमता रहे ।

इस विवेचन का समय सं.२००५ से सं. २००८ है ।

पंचास्तिकाय विवेचन : अध्यात्मयोगी श्रीमद् कुंदकुंदाचार्य द्वारा रचित यह ग्रंथ प्रसिद्ध है । इस ग्रंथ के प्रथम अध्ययन में षड्द्रव्य-जीवास्तिकाय, अजीवास्तिकाय, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय तथा कालद्रव्य का भी वर्णन है ।

दूसरे अध्ययन में नौं तत्त्व का संक्षिप्त स्वरूप समझाया है । अंत में 'मोक्षमार्ग प्रपंच चूलिका' है । उसमें सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्र यह मोक्षमार्ग है, ऐसा निरूपण किया है ।

मूल ग्रंथ प्राकृत भाषा में है । प्रस्तुत पुस्तक में, प्रथम मूल प्राकृत गाथा, फिर उसकी संस्कृत छाया, फिर परमकृपालुदेवकृत गुजराती भाषांतर और अंत में पू. श्री ब्रह्मचारीजी का विवेचन क्रमशः देकर ग्रंथ को समझने में सुगमता की है । परमकृपालुदेव कृत भाषांतर में अमुक गाथाओं का अर्थ किसी कारणवश मिल न सका परन्तु पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी कृत भाषांतर में वह मिलने से यहाँ सम्मिलित कर ग्रंथ की पूर्ति की गयी है । ग्रंथ द्रव्यानुयोग का है । 'द्रव्यानुयोग का फल सर्वभाव से विराम पानेरूप संयम है ।' (श्रीमद् राजचंद्र पत्र ८६६)

विवेचन का समय सं.२००८ है ।

बोधामृत भाग - २ (वचनामृत विवेचन) :

पूज्यश्री ने प्रसंगोपात् श्रीमद् राजचंद्र ग्रंथ के पत्रों पर विवेचन किये हैं । उन विवेचनों को एकत्रित करके पत्रों के क्रमानुसार रखकर इस ग्रंथ का गूंथन किया गया है ।

यह बोधरूपी अमृत परमकृपालुदेव के वचनामृत को समझने में विशेष सहायरूप सिद्ध हुआ है । परमकृपालुदेव के वचनामृत का वास्तविक अंतर आशय समझने के लिए यह बोध संपूर्ण विश्वसनीय है । परमकृपालुदेव एक पत्र में बताते हैं कि **"मार्ग को प्राप्त पुरुष मार्ग को प्राप्त करायेगा ।"** (श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत पत्र १६६) इसलिए मोक्षमार्ग की सुपुर्दगी जिन्हें हुई है ऐसे पुरुष से वचनामृत का अंतर आशय समझना हितकारी है । वचनामृत विवेचन का समय मुख्यतः सं. २००८ से सं. २०१० है ।

(५) संयोजन विभाग

प्रवेशिका (मोक्षमाला पुस्तक पहली) यह ग्रंथ धर्ममार्ग में प्रवेश करानेरूप है । प्राथमिक भूमिका के जिज्ञासु के लिए प्रथम वांचन करने योग्य है । 'मोक्षमाला' ग्रंथ के चार विभाग करने की परमकृपालुदेव की योजना थी । उसमें की यह पहली पुस्तक है । इस ग्रंथ के विषयों का क्रम मुख्यरूप से मोक्षमाला ग्रंथ अनुसार है । कुल मिलाकर १०८ शिक्षापाठ हैं । ग्रंथ में विविध विषय सरल सीधी भाषाशैली में पूज्यश्री ने प्रस्तुत किये हैं । प.पू. प्रभुश्रीजी की सलाह अनुसार विविध शास्त्रों में से किये हुये अवतरण तथा श्रीमद् राजचंद्र ग्रंथ में से विषयानुसार अवतरण एवं अन्य महापुरुषों की प्रसादीरूप इस ग्रंथ का संयोजन किया है ।

'मोक्षमाला' ग्रंथ के स्वाध्याय से पहले इस पुस्तक का स्वाध्याय करने से वह समझने में सुगमता होगी तथा **'श्रीमद् राजचंद्र'** ग्रंथ को भी समझने की योग्यताके अमुक अंश इससे प्राप्त हो सकते है ।

धर्म के अन्य ग्रंथ समझने की भी इससे योग्यता आये इसलिए **'धर्म-प्रवेशिका'** की आवश्यकता है, ऐसा ग्रंथ की प्रस्तावना में पूज्यश्री ने बताया है । उसी प्रकार धर्म का आराधन एवं पालन जीवन में आवश्यक है ऐसे संस्कारो का सिंचन हो ऐसे शुभ आशय से पूज्यश्री ने इस ग्रंथ का संयोजन किया है ।

इस पुस्तक का संयोजन समय संवत् २००५ है ।

(६) भाषांतर विभाग

बृहद्द्रव्य संग्रह : इस ग्रंथ के मूल कर्ता श्री नेमिचंद्र सिद्धांत-चक्रवर्ती है । मूल ग्रंथ की ५८ गाथाएँ हैं । इस पर से पूज्यश्री ने गुजराती पद्यानुवाद में मूल ग्रंथ की ६३ गाथाएँ एवं आद्यमंगल की ३ गाथाएँ तथा अंत्यमंगल की ३ गाथाएँ लिखकर ग्रंथ की पूर्णाहुति की है ।

ग्रंथ के प्रथम अधिकार में जीव, अजीव, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, काल तथा आकाश इन छः द्रव्यों का वर्णन तथा जीवों के भेद का वर्णन है । दूसरे अधिकार में सात तत्त्व—जीव, अजीव, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध, मोक्ष का द्रव्य से और भाव से स्वरूप बताया है । तीसरे अधिकार में सम्यक् दर्शन-ज्ञान चारित्ररूप रत्नत्रय का व्यवहार व निश्चयनय की अपेक्षा से स्वरूप समझाया है । प.पू. प्रभुश्रीजी अनेक लोगों को यह ग्रंथ मुखपाठ कराते ।

ईडर के पहाड़ पर परमकृपालुदेव ने प.पू. प्रभुश्रीजी सहित सात मुनियों को द्रव्यसंग्रह ग्रंथ समझाया था । पू. श्री ब्रह्मचारीजी सं. १९९३ में मुमुक्षुओं के संघ सहित ईडर पधारे थे उस वक्त पूज्यश्री ने भी पूर्ण द्रव्यसंग्रह ग्रंथ अर्थसहित समझाया था । जैन सिद्धांतबोध का यह ग्रंथ, प्रयोजनभूत तत्त्वों का संक्षिप्त में सुंदर प्रतिपादन करता है । पद्यानुवाद का रचनाकाल सं. १९८४ तथा द्वितीय बार किये गये गीति छंद का रचनाकाल सं.१९८६ है ।

आलाप पद्धति : आलाप अर्थात् शब्दोचारण और पद्धति अर्थात् विधि; अर्थात् बोलने तथा चर्चा करने की रीत वह आलाप पद्धति । ग्रंथ में न्याय, नय, निक्षेप, द्रव्य, गुण, पर्याय आदि का संक्षेप में स्पष्टीकरण किया है ।

ग्रंथ के मूल रचयिता श्रीमद् देवसेनाचार्य है । सं.९९० में वे विद्यमान थे । पूज्यश्री ने इस ग्रंथ का पद्यानुवाद एवं गद्यानुवाद किया है । ग्रंथ का दूसरा नाम द्रव्यानुयोग प्रवेशिका भी है । गुजराती अनुवाद का समाप्ति काल जन्माष्टमी सं.१९८५ है । इस **बृहद् आलोचनादि पद संग्रह** में नीचे लिखे हुए स्वदोष दर्शन, वैराग्य-मणिमाला, जिनवरदर्शन आलोचना अधिकार दिये हुए है ।

स्वदोष दर्शन : मूल संस्कृत में और उपजाति छंद में श्री रत्नाकरसूरि कृत श्री रत्नाकर पंचविंशति पर से पूज्यश्री ने स्वदोष दर्शन नामक दोहे का गुजराती पद्यानुवाद किया है । संप्रदाय में रत्नाकर पच्चीशी के रूप में इसके अनेक अनुवाद प्रचलित हैं, जिसमें 'मंदिर छो मुक्तितणा मांगल्य क्रीडा ना प्रभो' विशेष प्रसिद्ध हुआ है । इस काव्य में भक्त, भगवान के समक्ष पश्चातापपूर्वक अपने दोषों का वर्णन करता है और अंत में बोधिरत्न-सम्यक्दर्शन की माँग करके संसार के भावों से मुक्त होने की प्रार्थना करता है ।

पद्यानुवाद का समय विक्रम संवत् १९८५ है ।

वैराग्य मणिमाला : श्री चंद्रकवि कृत संस्कृत काव्य वैराग्य मणिमाला का यह गुजराती पद्यानुवाद पूज्यश्री ने किया है । काव्य में वैराग्य का भरपूर उपदेश है । धन, कुटुम्ब आदि सब विनाशी है, संसार अशरण है, बालवय-युवायय की क्रिया, शरीर स्वरूप आदि अनेक का रसप्रद वर्णन है । भाषा भावभरी तथा असरकारक है । पद्यानुवाद का समय वि.सं. १९८८ है ।

जिनवर दर्शन : श्री पद्मनंदि आचार्यकृत 'पद्मनंदि पंचविंशति' ग्रंथ के अधिकार १४ में जिनवर स्तोत्र है । उसका यह पद्यानुवाद है । इस के बारे में पूज्यश्री बताते हैं कि "जिनवर दर्शन का...भाषांतर करने से पहले अभिग्रह किया था कि परमकृपालुदेव का स्वप्न भी न आये तो इस दर्शन बारे में भाषांतर करना ही नहीं ।" फिर स्वप्न आया और यह भाषांतर काव्य किया ।

काव्य में भगवत्-दर्शन के अद्भुत माहात्मय का वर्णन किया है । इस काव्य का गद्य अनुवाद भी पूज्यश्री ने किया है । काव्य का उद्भव समय वि.सं. १९८८ है ।

आलोचना अधिकार : श्री पद्मनंदि आचार्यकृत ग्रंथ 'पद्मनंदि पंचविंशति' में अधिकार नौंवे में यह आलोचना अधिकार है । इसका गुजराती में गद्य-पद्यानुवाद पूज्यश्री ने किया है ।

इस आलोचना अधिकार में अपने पापों की पश्चात्ताप पूर्वक आलोचना करने हेतु आश्रय का फल, नौ प्रकार के पापों की निंदा, आलोचना का हेतु, सद्गुरु सहवास के लिए योग्यता, मन की चंचलता, मन को मारने का उपाय, कर्मशत्रु से बचने की प्रार्थना, कलिकाल में भक्ति का अवलंबन, आलोचना का माहात्म्य आदि अनेक विषयों का वर्णन है । अगास आश्रम में चातुर्मासी चौदस तथा संवत्सरी के दिन यह आलोचनादि का पाठ होता है ।

अंतिम गाथा में सत्पुरुष के निश्चय एवं आश्रय का खूब माहात्म्य गाया है । जीव को सत्पुरुष का निश्चय तथा आश्रय हो तो उसका मोक्ष अवश्य होता है ।

इस अनुवाद का पूर्णाहुति काल वि.सं. १९८८ है ।

कर्तव्य उपदेश : श्री यशोविजयजी कृत अध्यात्मसार के अनुभवाधिकार के अंत में कर्तव्यदशक है । उसका यह पद्यानुवाद पूज्यश्री ने किया है । परनिंदा यह पाप है, पर के अल्पगुण में प्रीति, अपनी निंदा में शांति, सद्गुरु की सेवा, श्रद्धा, प्रमाद का अभाव, स्वच्छंद का त्याग, आत्मसाक्षात्कार करने की सलाह आदि हितकारी विषयों का इस उपदेश में वर्णन है । पद्यानुवाद का समय सं. १९८८ है ।

हृदय प्रदीप : इस पद्यानुवाद में पूज्यश्री बताते हैं कि सम्यक् तत्त्वज्ञानी मार्गदर्शक गुरु यदि सिर पर हो तो संसार, भोग तथा शरीर पर से जीव को उदासीनता और वैराग्य आता है । ये तीनों का विचार करते हुए जीव आगे बढ़ता है और सिद्धि प्राप्त करता है । भव, तन एवं भोग संसार के तीन मूल कारणों पर सुंदर विवरण करके इनसे मुक्त होने का बोध दिया है । वैराग्यभाववाली यह रचना है । इस पद्यानुवाद का समाप्ति समय सं.१९८८ है ।

समाधि सोपान : इस ग्रंथ के निवेदन में पू. श्री ब्रह्मचारीजी बताते हैं कि जिज्ञासु में "वैराग्य की वृद्धि हो, आत्महित करने की प्रेरणा मिले तथा जिन्हें आत्महित करने की इच्छा जागृत हुई है, उन्हें आत्मविचार करने में पोषण मिले तथा मनुष्यभव सफल करने का साधन प्राप्त करने की दिशा दिखे ऐसे विषयों की चर्चा इस समाधि सोपान में की गयी है ।"

मूल ग्रंथ **'रत्नकरंड श्रावकाचार'** श्री समंत भद्राचार्य ने संस्कृत में लिखा है । हिन्दी भाषा में इसकी विस्तृत टीका पंडित सदासुखदासजी ने की है । श्रीमद् लघुराज स्वामी के समक्ष इस ग्रंथ का वांचन करने का मुझे सद्भाग्य प्राप्त हुआ तब इस ग्रंथ का कितना ही भाग मुमुक्षु जीवों के लिए अति उपकारी होने से प.पू प्रभुश्रीजी ने इसका सरल गुजराती भाषांतर करने की मुझे सूचना दी । इस पर से सम्यक् दर्शन अथवा आत्मश्रद्धा के आठ अंग, धर्मध्यान में उपयोगी बारह भावनाएँ तथा तीर्थंकर नामकर्म के हेतुभूत सोलह भावनाएँ, क्षमा आदि दस लक्षणरूप धर्म तथा समाधिमरण के अधिकारों का यथाशक्ति गुजराती भाषा में अवतरण किया ।

इस ग्रंथ का भाषांतर प. पू. प्रभुश्रीजी की आज्ञा से पूज्यश्री ने किया है । ग्रंथ की भाषाशैली सरल एवं रोचक है । समाधिमरण के इच्छुक को अवश्य इसका स्वाध्याय करना कर्तव्य है । इस ग्रंथ के अंतिम भाग में परमकृपालुदेव द्वारा लिखित सौ पत्रों का समावेश होने से ग्रंथ की उपयोगिता विशेष प्रमाणित हुई है ।

इस ग्रंथ के भाषांतर का समाप्ति समय संवत् १९८९ की अश्विन सुदी दशमी है ।

मेरी भक्ति : श्री ब्रह्मचारी नंदलालजी का बनाया हुआ यह हिन्दी काव्य है । पूज्यश्री ने इसका गुजराती पद्यानुवाद किया है । इसमें प्रभु के प्रति भावपूर्ण भक्ति का दर्शन होता है ।

हे प्रभु, मुझे आपकी शरण में रखिए, मेरे जन्म मरण को दूर करने के लिए हे नाथ ! मुझे सदा आपके पास रखो, कृपा करके सहज सुख पद दीजिए आदि अनेक प्रकार से इसमें प्रभु की भक्ति की है ।

पद्यानुवाद के साथ इसका गुजराती अर्थ भी श्री पूज्यश्रीने लिखा है । काव्य का रचनाकाल सं.१९९० वैशाख सुदी ३ गुरुवार है ।

योगप्रदीप : पूज्यश्री के किए हुए इस पद्यानुवाद में उपदेश है कि लोग तीर्थ की इच्छा करते हैं परन्तु धर्म तीर्थरूप अपना आत्मा ही है । इसलिए उसकी भावना करें, उसी की खोज करें, उसी का ध्यान करें, उसी का निरंतर स्मरण करें । बहिरात्मपने का त्यागकर, अंतर आत्मा बनकर परमात्मा का ध्यान करें तो परमपद-मोक्षपद की प्राप्ति होगी ।

'जिसने आत्मा जाना उसने सर्व जाना ।" श्रीमद् राजचंद्र

इस पद्यानुवाद का प्रारंभ काल स.१९९१ और समाप्ति समय सं.१९९२ है ।

विवेक बावनी : श्री टोडरमलजी कृत 'मोक्षमार्ग-प्रकाशक' ग्रंथ पर से स्व-पर विचार भेदज्ञान को दर्शाते हुए बावन दोहों के इस काव्य की पूज्यश्री ने रचना की है । जड़-चेतन का विवेक करना यही सर्व शास्त्रों का सार है । इस प्रयोजनभूत तत्त्व को इस काव्य में पिरोया है । परमकृपालुदेव ने **'हूँ कोण छूँ', 'क्यांथी थयो, शुं स्वरूप छे मारुं खरूं' अथवा 'रे आत्म तारो ! आत्म तारो ! शीघ्र ऐने ओळखो'** आदि पद्यों में जो भाव प्रकट किये हैं उन भावों की पुष्टिरूप यह विवेकबावनी है । इस काव्य का रचना काल वि.सं. १९९३ है ।

ज्ञानमंजरी : इस ग्रंथ की प्रस्तावना में पूज्यश्री बताते हैं कि 'ज्ञानसार ग्रंथ में भी यशोविजयजी उपाध्याय ने बत्तीस महा गहन विषयों पर संस्कृत भाषा में आठ-आठ श्लोक के अष्टक लिखे हैं । उसका भावार्थ (टिप्पणी) स्वयं पुरानी (अपने समय की) गुजराती में लिखा है । श्री देवचंदजी महाराज ने इस ज्ञानसार पर संस्कृत टीका 'ज्ञानमंजरी' नाम से लिखी है ।

"श्रीमद् राजचंद्र आश्रम में स्वाध्याय करते समय **'ज्ञानमंजरी'** में आती वैराग्य युक्त अध्यात्म चर्चा को सुनकर कई मुमुक्षुओं ने उस संस्कृत टीका 'ज्ञानमंजरी' का गुर्जर भाषा में अनुवाद हो तो समझना सरल बने ऐसी भावना व्यक्त की । इस प्रेरक कारण से, साथ ही मुझे भी आत्माविचारणा के अर्थ से यह विषय विचारने योग्य लगने से, संस्कृत में मेरी स्वयं की कुशलता न होते हुए भी इस विषय की प्रीति से प्रेरित होकर यथाशक्ति श्रम (?) करना शुरू किया । इस कार्य की पूर्णाहूति संवत् १९९४ के आषाढ़ सुदी ९ को बुधवार के दिन हुई है । संस्कृत टीका ज्ञानमंजरी का गुर्जर भाषानुवाद करके पूज्यश्री ने गहन विषयों को समझाने का सुंदर प्रयास किया है ।

चित्रसेन-पद्मावती शील कथा : मूल कथा संस्कृत भाषा में है । इसके लेखक श्री राजवल्लभ पाठक हैं । इसका गुजराती पद्यानुवाद पूज्यश्रीने काविठा गाँव में शुरू किया तथा पूर्णाहुति सीमरडा गाँव में हुई । इस कथा का गद्यानुवाद भी इन्होंने किया है जो 'प्रवेशिका ग्रंथ में छपा है । 'प्रवेशिका' में इस कथा के अंत में पूज्यश्री साररूप में लिखकर बताते हैं कि "शील के प्रभाव से लक्ष्मी, पुत्र, स्त्री, वैभव तथा कीर्ति प्राप्त होती है । शील के प्रभाव से पाप, भूत, वेताल, सिंह, साप आदि के भय का नाश होता है । बुद्धिमान लोगों ने शील के प्रभाव का बहुत वर्णन कया है, यह जानकर भव्य जीवों को शील का पालन निरंतर करने योग्य है । शील के प्रभाव से देव के, मनुष्य के सुख, प्राप्त कर मनुष्य परमपद अर्थात् मोक्ष प्राप्त करते हैं ।" इस कथा-काव्य का लेखन समय वि.सं. २००३ है ।

लघु योगवासिष्ठ सार : यह ग्रंथ मूल संस्कृत भाषा में है । परमकृपालुदेव ने इस ग्रंथ के **'वैराग्य'** और **'मुमुक्षु'** प्रकरण पढ़ने-विचारने का कई पत्रों में सूचन किया इसलिए पूज्यश्री ने इन दो प्रकरण के सार का गुर्जर पद्यानुवाद अपने सीमरडा निवास के दौरान किया है । इसमें श्रीराम का वैराग्य अति उत्कृष्ट रूप से वर्णित है ।

इस ग्रंथ के संदर्भ में पूज्यश्री ग्रंथयुगल की प्रस्तावना में बताते हैं कि, "किसी सज्जन ने 'योगवासिष्ठ महारामायण' में से कुछ प्रकरणवार श्लोकों को छाँटकर 'योगवासिष्ठसार' नाम का पहला ग्रंथ प्रकाशित किया । वह प्रमाण में बड़ा होने से बहुतों के उपयोग में नहीं आता यह जानकर, किसी पंडित ने इसके सार का सार 'लघुयोग वासिष्ठसार' नामक ग्रंथ में लिखा । वेदांत शास्त्र के अनेक ग्रंथ है, इनमें मुख्य प्रस्थानत्रयी (ब्रह्मसूत्र, उपनिषद और भगवद् गीता) है । परन्तु प्रस्थानत्रयी की तुलना में आए ऐसा यह 'योगवासिष्ठ' ग्रंथ है ।"

परमकृपालुदेव इस ग्रंथ के विषय में पत्र १२० में बताते हैं कि, "आपकी 'योगवासिष्ठ' पुस्तक इसके साथ भेजता हूँ । उपाधि का ताप शमन करने के लिए यह शीतल चंदन है; इसके पढ़ने में आधि-व्याधि का आगमन संभव नहीं है ।" ग्रंथ का रचनाकाल सं.२००६ है ।

दशवैकालिक सूत्र : श्री शय्यंभवाचार्य इस ग्रंथ के मूल लेखक है । वे १४ पूर्वधारी थे । उनके गृहस्थाश्रम के पुत्र मनक ने ७-८ वर्ष की उम्र में उनके पास दीक्षा ग्रहण की थी । शिष्य मनक मुनि का आयुष्य मात्र ६ महीने का ही रह गया है यह जानकर, उनको मूलभूत तत्त्वों की सारी बातें संक्षेप में समझाने का आचार्यश्री ने इस ग्रंथ में प्रयास किया है । संक्षेप में १४ पूर्व का सार बताया है ।

मूल ग्रंथ मागधी में हैं । पूज्यश्री ने इसका गुजराती भाषा में दोहे में पद्यानुवाद किया है ।

ग्रंथ में कुल १० अध्ययन है । (१) 'द्रुम पुष्पक' (२) 'श्रामण्यपूर्वक' (३) 'क्षुल्लक आचार कथा' (४) 'छः जीव निकाय' (५) 'पिंडेषणा' (६) 'महाचार कथा' (७) 'वाक्य शुद्धि' (८) 'आचार-प्रणिधि' (९) 'विनय-समाधि' (१०) 'सभिक्षु' । दशवैकालिक सूत्र-उत्तर सूत्र में प्रथम 'रतिवाक्य' और द्वितीय 'विविक्त चर्या' नामक दो 'चूलिका' है ।

इस ग्रंथ पर श्री हरिभद्रसूरीजी ने मागधी भाषा में बृदह् टीका निर्युक्ति लिखी है उसका भी गुजराती पद्यानुवाद इस ग्रंथ में दिया है । पद्यानुवाद का प्रारंभ काल वि.सं. २००६ माघ वदी १ और पूर्णाहूति समय सं.२००६ भाद्रपद वदी १२ है ।

तत्त्वार्थसार : ग्रंथ की प्रस्तावना में बताया गया है कि "मूल ग्रंथ **'तत्त्वार्थ सूत्र'** श्री उमास्वामीजी ने दस अध्याय प्रमाण रचा है, जो मोक्षशास्त्र या **'तत्त्वार्थाधिगम सूत्र'** के नाम से भी लोकप्रसिद्ध है । इस पर से श्री अमृतचंद्रसूरीजी ने 'तत्त्वार्थसार' ग्रंथ की संस्कृत भाषा में रचना की है । इस ग्रंथ में सर्वज्ञ प्रणीत मूलभूत सात तत्त्वों - जीव, अजीव, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध और मोक्ष का निरूपण है ।" इस पर से पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने सरल गुजराती भाषा में यह पद्यानुवाद किया है ।

इस ग्रंथ के विषय में पूज्यश्री अन्य स्थानों पर बोध में बताते हैं कि "सभी का सार कृपालुदेव ने **'आत्मसिद्धि'** में कह दिया है । **'तत्त्वार्थसार'** पुस्तक से **'आत्मसिद्धि'** अधिक समझ में आ सकती है । विचार करना है । **'विचारतां विस्तारथी संशय रहे न कांई'** 'कर्म मोहनीय भेद बे, दर्शन चारित्र नाम', इसका विस्तार **'तत्त्वार्थसार'** से अधिक समझ में आ सकता है । यह **'तत्त्वार्थसार'** श्री अमृतचंद्राचार्य ने रचा है । नव तत्त्व पढ़ लिये, लेकिन क्यों पढ़ना है ? यह लक्ष्य न हो तो किसी काम का नहीं ।"

ग्रंथ का प्रारंभकाल श्रावण वदी १२ वि. सं. २००७ है और समाप्ति काल फाल्गुन सुदी ६ वि.सं. २००८ है ।

(७) अंग्रेजी साहित्य विभाग :

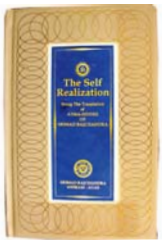

Self Realization : आत्मसिद्धि का पूज्यश्री द्वारा किये गये अंग्रेजी पद्यानुवाद को इस ग्रंथ में दिया है । जो सिर्फ अंग्रेजी भाषा जानते हैं उनके लिए यह उपयोगी है । प्रत्येक गाथा के नीचे उसका गद्यरूप में अर्थ भी दिया गया है । प्रोफेसर श्री दीनुभाई मूलजीभाई उसका गद्यार्थ करके आश्रम में ले आते । पूज्यश्री उनके पास बैठकर उसमें और सुधार करवाते । इसलिए इसका अर्थ भी भाव की दृष्टि से शुद्ध होने से माननीय है ।

इस ग्रंथ में पूज्यश्री द्वारा **'बहु पुण्य केरा'** पद्य और साथ ही वचनामृत पत्र ६९२ का अंग्रेजी अनुवाद भी दिया गया है । इसके अतिरिक्त वचनामृत पत्र ८१९ का अंग्रेजी अनुवाद भी पूज्यश्री द्वारा किया गया है । आत्मसिद्धि पद्यानुवाद का समय सं.१९९९ से सं. २००० है ।

(८) संपादन विभाग

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथ इस वचनामृत ग्रंथ का सं.

२००७ का संस्करण लगातार सातवां संस्करण कहलाता है, किन्तु अगास आश्रम का यह प्रथम संस्करण है । इसका कारण यह है कि इस संस्करण में बहुत संशोधन किया गया है। जगह-जगह से प्रकट-अप्रकट साहित्य इकट्ठा करके उसको मूल के साथ मेल करके ग्रंथ को शुद्ध करने का प्रयास किया गया है । पूज्यश्रीने इस प्रकार ग्रंथको सवाँग संपूर्ण विश्वंसनीय बनाने लिये अथाग परिश्रम लिया है । इसी शुद्ध संस्करण का पुनर्मुदण आज दिन तक भी जारी है, जो सर्वमान्य है । वर्तमान में आश्रम की ओर से प्रकाशित इस ग्रंथ का आठवां संस्करण विद्यमान है ।

उपदेशामृत :

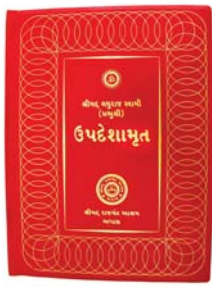

प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी के बोध का संकलन कार्य पूज्यश्री के हाथों से ही हुआ है ।

प.पू. प्रभुश्रीजी के विविध बोधवचनों को चुनने, छाँटने और व्यवस्थित करने का विकट कार्य पूज्यश्री ने अपने जीवन के अंत तक कर के हम सब पर अत्यंत उपकार किया है ।

इस ग्रंथ के संपादन की समाप्ति का समय पूज्यश्री के जीवन का अंतिम दिन अर्थात् सं. २०१० कार्तिक सुदी ७ है ।

वंदन सद्गुरु राजने, नमुं संत लघुराज;
गोवर्धन गुणधर नमुं, आत्महितार्थे आज ।

(९) विभिन्न काव्य विभाग :

ऊपर बताये गए विविध साहित्य के अतिरिक्त पूज्यश्री ने अनेक भावपूर्ण काव्यों की रचना की है । प्रत्येक काव्य की प्रथम गाथा यहाँ दी गयी है ।

(१) ववाणिया तीर्थ दर्शन के समय रचा हुआ काव्य :

"अंतर अति उल्लसे हो के जन्मभूमि नीरखी;
मुमुक्षु-मनने हो के कल्याणक सरखी।"

(२) परमकृपालुदेव के जन्मोत्सव निमित्त पर रचित दो काव्य :

(अ) "आनंद आज अपार, हृदयमां आनंद आज अपार;
शुं गाशे गानार, हृदयमां आनंद आज अपार।"

(ब) "जन्म्या महाप्रभु राज आजे देवदिवाली दिने;
संपूर्ण पदने पामवाने सर्व कर्मो छेदी ने।"

(३) परमकृपालुदेव के जातिस्मृतिज्ञान की उत्पत्ति का वर्णन करता हुआ काव्य :

"ववाणियाना वाणिया, गणधर गुण धरनार;
जातिस्मरणे जाणिया, भव नवसो निरधार।"

(४) प्रभु के प्रति याचना काव्य :

"हे कृपालु प्रभु, आपजो आटलुं, अन्य ना आपनी पास याचुं;
सत्य निर्ग्रंथता, एक निर्मल दशा, शुद्ध चैतन्यता ना चूकुं हुं ।"

(५) अंतर्लापिका सप्तक काव्य :

"परमश्रुतरूप चरणकमल नो परिमल प्रसरावो;
परमगुरु परिमल प्रसरावो।
रमण रत्नत्रयरूप राजनुं, निशदिन दिलमां हो;
परमगुरु निशदिन दिलमां हो।"

(६) प्रभु के प्रति प्रार्थना काव्य :

"शुद्ध स्वरूपी नाथ, निरंतर दृष्टि रहो तुज चरण विषे;
प्रभु दृष्टि रहो तुज चरण विषे।
वचन-कायनां काम थतां पण वृत्ति वहो तुम शरण विषे;
प्रभु वृत्ति वहो तुम शरण विषे।"

(७) आत्मसिद्धि के माहात्म्य के संबंध में रचित काव्य :

"पतित जन पावनी, सुरसरिता समी,
अधम उद्धारिणी आत्मसिद्धि;
जन्म जन्मांतरो, जाणता जोगीए,
आत्म-अनुभव वडे आज दीधी।"

(८) श्री उत्तरसंडा तीर्थदर्शन के समय रचित काव्य :

(अ) कोड अनंत अपार, प्रभु मने कोड अनंत अपार;
अण फरस्या तीरथनी यात्रा, करवा कोड अपार-प्रभु मने ।

(ब) नयन सफल थया आज, प्रभु मारा नयन सफल थया आज;
घणा दिवसनी आश तीरथनी, पूरी थई गुरुराज-प्रभु मारा ।

(९) प.पू. प्रभुश्रीजी उपकार स्मृति काव्य :

"अहो ! अहो ! उपकार, प्रभुश्रीना, अहो ! अहो ! उपकार;
आ अधम जीव उद्धरवाने, प्रभुश्री नो अवतार - प्रभुश्रीना।"

(१०) प.पू. प्रभुश्रीजी के माहात्म्य के संबंध में काव्य :

"अंगूठे सौ तीरथ वसतां, संत शिरोमणि रूपेजी;
रण-द्वीप सम दीपाव्यो आश्रम, आप अलिप्त स्वरूपेजी ।"

(११) प.पू. प्रभुश्रीजी स्मृति काव्य :

"ज्यां ज्यां नजर मारी ठरे, यादी भरी त्यां आपनी;
आपनी प्रभु आपनी, उपकारी प्रभुजी आपनी-ज्यां ज्यां ।"

(१२) मुमुक्षु को शिथिलता के समय शूरातन जगाता काव्य :

"वारस अहो ! महावीरना शूरवीरता रेलावजो;
कायर बनो ना कोई दी, कष्टो सदा कंपावजो।"

(१३) ब्रह्मचार्य की नववाड का वर्णन करता काव्य :

"ब्रह्मचर्य स्वर्गीय तरु रमणीय छे;
फल पंक्ति त्यां लची रही प्रति डाल जो।"

(१४) बारह भावना वर्णन काव्य :

अति आनंदकारी, जनहितकारी, भवदुःखहारी, नाम तमारुं नाथ;
करी करुणा भारी, कलिमल टाली, अति उपकारी ग्रहो गुरु मम हाथ।

इन काव्यों के अलावा अन्य अनेक काव्य उनके द्वारा रचे गए हैं ।

निष्काम पुरुषों की वाणी कर्म काटने की तलवार है । ज्ञानियों के ज्ञान गुण का गौरव गंभीर है । क्या पामर प्राणी उसका मर्म पा सकते हैं ?

कोटीशः वंदन हो ज्ञानियों के ज्ञानगुण को ।

"सत्पुरुषों का योगबल जगत का कल्याण करे ।"

(श्रीमद् राजचंद्र)

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी की जीवनयात्रा के ६५ वर्षों का विहंगावलोकन

सं.१९४५ श्रावण वदी ८ (जन्माष्टमी) बांधणी गाँव में जन्म-मूल नाम गोवर्धनधर अथवा गोरधनभाई - पिताश्री का नाम कालिदास द्वारकादास - मातुश्री का नाम जीताबा - बड़े भाई का नाम नरसिंहभाई ।

सं.१९५७ पिताश्री का स्वर्गवास - खेती के काम में भाई की मदद करने से परीक्षा में अनुत्तीर्ण-पढ़ाई छोड़नी पड़ी ।

सं.१९५८ १३ वर्ष की उम्र में शादी - पढ़ने से कुछ उद्धार होगा ऐसा लक्ष्य रखकर फिर से पढ़ाई शुरू - पेटलाद में अंग्रेजी प्रथम कक्षा में प्रवेश ।

सं.१९६८ बरोडा आर्ट्स कॉलेज में इंटर आर्ट्स पास किया ।

सं.१९७० (ई.स. १९१४) 'बॉम्बे प्रेसीडेन्सी' में विल्सन कॉलेज से बी.ए. पास - देशसेवा का लक्ष्य - स्वयंसेवक के रूप में सेवा ।

सं.१९७१ (जनवरी १९१५) वसो की अंग्रेजी शाला में ६वीं कक्षा को पढ़ाया - मोन्टेसरी पद्धति से शिक्षण ।

सं.१९७५ (ई.स. १९१९) चरोतर एज्युकेशन सोसाइटी ।

सं.१९७६ में संचालित दादाभाई नवरोजी हाईस्कूल (D.N.High school) आणंद में हेडमास्टर के रूप में सेवा ।

सं.१९७७ दा.न. हाईस्कूल 'विनयमंदिर' बनते ही हेडमास्टर के बजाय 'आचार्य' बन गये - योग्यता के बिना आचार्य पद चुभने लगा और किसी महापुरुष के पास जाकर जीवन को उन्नत करने की लगनी लगी - दिवाली की छुट्टियों में बांधणी के मुमुक्षु श्री भगवानभाई के साथ अगास आश्रम में बोधिसत्त्वसमान रायण के वृक्ष के नीचे दशहरे के दिन पूज्यपाद प्रभुश्री का प्रथम समागम - कालीचौदस जैसे सिद्धियोग के दिन प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी के हाथों अपूर्व मंत्रदीक्षा ।

सं.१९७८ छोटा पुत्र जशभाई (बबु) ढाई साल का हुआ तब पत्नी का देहत्याग - संस्कार देनेके समय की वजह से बालक के पालन के लिए आणंद में निवास और छुट्टी के दिनों में प.पू. प्रभुश्रीजी के समागम के लिए आश्रम में जाना - ता. १-१-२२ के दिन प.पू. प्रभुश्रीजी से भेंटरूप में 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथ की प्राप्ति ।

सं.१९८१ जशभाई जब ५ वर्ष के हुए तब प्रतिदिन रात को अगास आश्रम में आना और सुबह आणंद जाना - ई.स. १९२५ के जून महीने में सोसाइटी से इस्तीफा देकर, बड़े भाई से अनुमति लेकर सदा के लिए प. पू. प्रभुश्रीजी की सेवा में जुड़ना ।

सं.१९८२ 'समाधिशतक' का गुर्जर पद्यानुवाद चैत्र वदी ११ से द्वि. चैत्र सुदी १० ।

सं.१९८४ ज्येष्ठ सुदी पंचमी को अगास आश्रम के गुरुमंदिर (गर्भगृह) में परमकृपालुदेव की मूर्ति और चन्द्रप्रभु आदि दिगंबर-श्वेताबर मूर्तियों की उल्लासपूर्वक स्थापना - श्रावण सुदी पंचमी के दिन द्रव्यसंग्रह का गुजराती भाषांतर ।

सं.१९८५ 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथ की अनुक्रमणिका, शब्दसूचि, Bibliography श्रीमद् राजचंद्र ग्रंथ के पुराने संस्करण में से स्वयं के स्वाध्याय के लिए जन्माष्टमी के दिन तैयार किये 'आलाप पद्धति' का गुजराती अनुवाद । रत्नाकर पच्चीसी का स्वदोष-दर्शन का गुजराती पद्यानुवाद ।

सं.१९८६ माघ सुदी १५ के दिन 'बृहद् द्रव्यसंग्रह' का गीतिवृत्त में भाषांतर ।

सं.१९८८ हृदयप्रदीप भाषांतर (३८ गाथा) ज्ञानपंचमी को - मार्गशीर्ष वदी २ के दिन पद्मनंदि - आलोचना गुर्जर पद्यावतरण (३५ गाथा) - माघ सुदी ५ (वसंतपंचमी) को अभिग्रहपूर्वक 'जिनवर दर्शन अधिकार' की पद्य रचना (३६ गाथा) - माघ सुदी १० को मुख्य द्वार की देहरी पर परमकृपालुदेव की पंचधातु की प्रतिमाजी का महोत्सवपूर्वक स्थापन - माघ वदी अमावस्या के दिन 'अध्यात्मसार' में से कर्तव्य उपदेश अधिकार का गुर्जर पद्यावतरण (१० गाथा) - ज्येष्ठ सुदी ९ के दिन प.पू. प्रभुश्रीजी से 'गुरुगम' की प्राप्ति - चन्द्रकविकृत वैराग्यमणिमाला का गुर्जर पद्यानुवाद - भाद्रपद सुदी छठ के दिन मुनिश्री मोहनलालजी महाराज का समाधिमरण ।

सं.१९८९ 'रत्नकरंड श्रावकाचार' के आधार पर प.पू. प्रभुश्रीजी की सूचना अनुसार गुर्जर अनुवादरूप में 'समाधि-सोपान' ग्रंथ की आसो सुदी १० (दशहरा) के दिन पूर्णाहुति ।

सं.१९९० ग्रीष्मकाल में प.पू. प्रभुश्रीजी के साथ एक डेढ़ महीने सूरत में अठवा लाइन्स पर बंगले में निवास - वैशाख सुदी ३ के दिन 'मेरी भक्ति' काव्य का गुजराती पद्यानुवाद ।

सं.१९९१ पू. प्रभुश्रीजी के साथ माउन्ट आबू में शबरी बंगले में करीब तीन महीने निवास - बीच में ११ दिनों के लिए प्रभुश्रीजी के साथ आहोर की क्षेत्रस्पर्शना - 'श्रीमद् राजचंद्र जीवनकला' के संकलन (रूपरेखा) तथा प्रस्थान कार्यालय की ओर से श्रीमद् की जीवनयात्रा में अन्य जयंती प्रवचनों के साथ प्रसिद्धि ।

सं.१९९२ पौष वदी ३ के दिन 'योगप्रदीप' के अनुवाद की पूर्णाहुति - चैत्र वदी पंचमी के पवित्र दिन प. पू. प्रभुश्रीजी द्वारा ट्रस्टियों की उपस्थिति में 'धर्म' (मार्ग) की पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी को सुपुर्दगी - 'मुख्य ब्रह्मचारी सौंपनी' - वैशाख सुदी ८ की रात्रि में बड़े बड़े मुनियों को भी दुर्लभ ऐसी निश्चल असंगता से निजउपयोगमय दशापूर्वक प.पू. प्रभुश्रीजी का निर्वाण - विरहाग्नि शांत करने हेतु प्रभुश्रीजी के जीवनचरित्र का संकलन तथा प्रभुश्रीजी ने जिन तीर्थों की स्पर्शना की उनकी यात्रा ।

सं. १९९३ ज्येष्ठ सुदी १३ के दिन श्री राजमंदिर, आहोर में उनके स्वहस्त से चित्रपट की स्थापना - ज्येष्ठ वदी छठ (यात्रा की अंतिम रात्रि) के दिन अपूर्व ब्रह्म अनुभव - इसका सूचक 'धर्मरात्रि' काव्य ज्येष्ठ वदी ८ - आषाढ़ वदी ९ के दिन मोक्षमार्ग प्रकाशक परसे 'विवेकबावनी' नामक गुजराती रचना - 'ज्ञानसार' तथा 'ज्ञानमंजरी' के गुजराती अनुवाद की शुरूआत ।

सं.१९९४ 'श्रीमद् राजचंद्र जीवनकला' की प्रस्थान कार्यालय की ओर से विस्तृत प्रथमावृत्ति और माघ सुदी पंचमी (वसंतपंचमी) के दिन भादरण मंदिर की प्रतिष्ठा के निमित्त से भेंट - वैशाख सुदी १० के दिन प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी के अंतिमसंस्कार के स्थान पर उनके चरणकमलों की महोत्सवपूर्वक स्थापना - आषाढ़ सुदी ९ के दिन 'ज्ञानमंजरी' का गुर्जर अनुवाद संपन्न - श्रावण सुदी १३ से 'प्रज्ञावबोध' का सर्जन शुरू ।

सं.१९९५ कार्तिक वदी पंचमी को पैदल विहार करते हुए संदेशर, बांधणी, वसो की यात्रा - ज्येष्ठ सुदी पूर्णिमा के दिन आश्रम से प्रस्थान करके मैसूर, गोमट्टगिरि, कनकगिरि, बाहुबली, वेणुर, वारंग, मूडबीद्री आदि स्थलों की यात्रा ।

सं.१९९६ माघ सुदी १३ के दिन श्रीमद् राजचंद्र समाधि मंदिर, राजकोट में पूज्यश्री के शुभ हाथों से श्रीमद्जी के चित्रपट की स्थापना - वैशाख सुदी

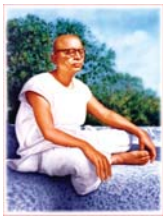

३ के दिन मंदिर प्रतिष्ठा के निमित्त से सडोदरा गमन तथा आस्ता में श्री भुलाभाई के घर स्वहस्ते चित्रपट की स्थापना - वैशाख वदी १ के दिन ईडर के विहारभुवन में परमकृपालुदेव की पादुकाजी की प्रतिष्ठा के निमित्त से गमन - वैशाख वदी ९ के दिन सद्गुरुस्वरूप के साथ अभेदता का हुआ अति अति प्रकट अनुभव-प्रभास ।

सं.१९९७ ज्येष्ठ सुदी पूर्णिमा को 'प्रज्ञावबोध' की पूर्णाहुति ।

सं.१९९८ मार्गशीर्ष सुदी १० के दिन धामण मंदिर में स्वहस्ते चित्रपट की स्थापना - माघ सुदी ११ से राजकोट, ववाणिया, जूनागढ़, पालीताना तरफ की यात्रा - फाल्गुन वदी २ के दिन इंदौर में स्वहस्ते चित्रपट की स्थापना तथा उस तरफ की यात्रा करके अगास में आगमन ।

सं.१९९९ पौष सुदी पूर्णिमा के दिन सूरत में श्री मनहरभाई के यहाँ चित्रपट की स्थापना तथा धामण, भुवासण होकर आहोर में २१ दिनों के लिए स्थिरता - फाल्गुन सुदी नवमी से होली तक ईडर के घंटिया पहाड़ पर निवास - भाद्रपद सुदी ७ से आत्मसिद्धिशास्त्र के Self Realisation नामक अंग्रेजी पद्यानुवाद की शुरूआत ।

सं.२००० कार्तिक पूर्णिमा के बाद कच्छ की पंचतीर्थी की यात्रा - इस बीच नानी खाखर में मार्गशीर्ष सुदी ९ के दिन Self Realisation अनुवाद संपन्न - परमकृपालुदेव की जन्मभूमि ववाणिया का प्रथम दर्शन और इस प्रसंग के उपलक्ष में 'अंतर अति उल्लसे हो के जन्मभूमि नीरखी' काव्य की भावमयी रचना - वैशाख माह में प.पू. प्रभुश्रीजी की निर्वाणतिथि के पश्चात् सीमरडा पधारे ।

सं.२००१ कार्तिक पूर्णिमा के बाद यात्रा के लिए गमन - एक माह से कुछ दिन अधिक आहोर में निवास, नाकोड़ाजी तीर्थ के दर्शन, लगभग दस दिन इंदोर रहे वहाँ से लगभग पच्चीस मुमुक्षुओं सहित इलाहाबाद, काशी, पटना, सारनाथ, राजगृह, पावापुरी, नालंदा, कुंडलपुर, गुणावा, मधुवन, गया, अयोध्या, मथुरा आदि तीर्थस्थलों की यात्रा - कुल तीन महीने, माघ वदी १३ के दिन आश्रम में आगमन ।

सं. २००२ कार्तिक वदी सप्तमी को ववाणिया गए तथा वहीं ११ दिनों की स्थिरता - राजकोट, वढवाण, सूरत, धूलिया, आदि स्थलों से होकर आश्रम वापसी - पर्युषण में प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी का रंगीन तैल चित्रपट राजमंदिर के लिए मुंबई से लाया गया उसका प्रवेश उत्सव ।

सं.२००३ काविठा, सीमरडा, भादरण आदि स्थलों पर भक्तिभाव हेतु गमन तथा निवास - चित्रसेन पद्मावती शील कथा - काव्य की शुरूआत सीमरडा में पौष सुदी तीज के दिन और काविठा में पौष वदी त्रयोदशी के दिन समाप्ति - ता. २३-५-४७ से ता. १६-६-४७ तक उभराट में स्थिरता ।

सं.२००४ कार्तिक पूर्णिमा के बाद पैदल विहार कर के संदेशर, बांधणी, सुणाव, सीमरडा, आशी आदि स्थानों से भ्रमण कर चातुमासी चर्तुदशी के दिन आश्रम आगमन - वैशाख सुदी नवमी के दिन प्रतिष्ठा प्रसंग के लिए काविठा गए ।

सं.२००५ ब्रह्मचर्य के नववाड का वर्णन करती सुंदर गुर्जर पद्य-रचना (१० गाथा) - वैशाख सुदी १३ से श्री चुनीलाल मेघराज सिंधी की विनती पर लगभग एक मास के लिए माउन्ट आबू पर कई मुमुक्षुओं सहित भक्तिभाव हेतु निवास - ज्येष्ठ वदी ८ रविवार के दिन (ता. १९-६-४९) अगास आश्रम से तार आने के कारण आश्रम की ओर वापसी - श्रावण सुदी २ से 'मोक्षमाला प्रवेशिका' की शुरूआत ।

सं.२००६ आश्रम का वातावरण क्लेशित लगने के कारण पौष सुदी छठ के दिन रविवार को विहार कर सीमरडा गए - श्री मोतीभाई रणछोड़भाई भगतजी के घर साढे तीन महीने रुके - इस बीच तारीख ३१-१२-४९ से १९-२-५० (फाल्गुन सुदी ३) तक 'लघुयोगवासिष्ठसार' की गुर्जर में पद्य रचना - फाल्गुन वदी ३ से ज्येष्ठ वदी ५ के बीच 'समाधिशतक' पर विस्तृत विवेचन - चैत्र वदी ५ (परमकृपालुदेव की निर्वाण तिथि) के दिन ट्रस्टियों की विनती से आश्रम में पुनः प्रवेश - चैत्र वदी ८ से १२ तक चार दिन के लिए ईडर में स्थिरता - वैशाख सुदी एकादशी को चित्रपट की स्थापना के लिए इंदोर गए तथा उस तरफ की यात्रा कर के ज्येष्ठ सुदी ३ के दिन वापस आश्रम लौटे - माघ वदी १ से भाद्रपद वदी १२ के बीच दशवैकालिक सूत्र का दोहा छंद में गुजराती अनुवाद - दशहरे के दिन प्रभुश्रीजी का उपकार दर्शाता 'अहो अहो उपकार प्रभुश्रीना' काव्य का सर्जन ।

सं.२००७ कार्तिक वदी में ववाणिया की ओर यात्रा के लिए गमन - मोरबी, राजकोट, जूनागढ़, पालीताना, सोनगढ़, बोटाद आदि स्थलों की यात्रा - श्रावण वदी १२ से श्री मोक्षशास्त्र पर से तत्त्वार्थसार नामक गुर्जर पद्यानुवाद का प्रारंभ ।

सं.२००८ कार्तिक वदी १४ की रात को हुबली की ओर यात्रा के लिए गमन - वहाँ से मार्गशीर्ष सुदी में बैंगलोर, मैसूर, श्रवणबेलगोला, गुडिवाडा, विजयवाड़ा तरफ विचरना- विजयवाड़ा से पौष सुदी ५ के दिन निकलकर भाडुंकजी, अंतरिक्षजी होकर धूलिया गए - वहाँ से अंजड़ में चित्रपट की स्थापना करके पौष सुदी पूनम को रवाना होकर बड़वानी, बावनगजा, इंदौर, बनेडियाजी, मक्शीजी, उज्जैन, मांडवगढ़, सिद्धवरकूट होकर इंदोर आगमन - इंदौर से माघ सुदी ६ को रवाना होकर अजमेर, ब्यावर, शिवगंज होकर माघ सुदी पूर्णिमा को आहोर पहुँचे - माघ वदी ४ से लगभग ५० मुमुक्षुओं सहित राणकपुर की पंचतीर्थी (नारलाई, नाडोल, वरकाना, मुछाला महावीर) जोधपुर जैसलमेर, नाकोड़ा, जालोर, सिवाना दर्शन कर के वापस फाल्गुन सुद तीज को आहोर आगमन और फाल्गुन वदी ५ तक भक्तिभाव के लिए स्थिरता - यात्रा के दरम्यान भी बोध, अनुवाद आदि प्रवृत्ति कायम और तत्त्वार्थसार का अनुवाद आहोर में फाल्गुन सुदी ६ को पूर्ण ।

सं.२००९ माघ सुदी ३ से चैत्र सुदी ११ स्वास्थ्य अनुकूलता हेतु नासिक रहे - चैत्र वदी ८ से प्र. वैशाख सुदी १५ तक पथराड़िया, भुवासण, आस्ता, देरोद, नीझर, सडोदरा, धामण, सूरत की ओर विचरे - इस दरम्यान आस्ता गाँव में स्वहस्ते मंदिर का खातमुहूर्त - प्र. वैशाख वदी १ से श्री मनहरभाई कड़ीवाला की विनंती से समुद्र के किनारे डुमस में १८ दिन तक निवास - फिर से दूसरी बार वैशाख सुदी १३ से ज्यष्ठ सुदी ६ तक २३ दिनों के लिए डुमस में स्थिरता - अश्विन वदी २ के दिन आश्रम के श्री राजमंदिर में प.उ.प.पू. प्रभुश्रजी के रंगीन चित्रपट की स्वहस्ते स्थापना ।

सं.२०१० कार्तिक सुदी ७ की शाम ४ बजे प्रभुश्रीजी के बोध के अन्वेषण का काम संपूर्ण करके ५.४० बजे श्री राजमंदिर में परमकृपालुदेव के चित्रपट के समक्ष कायोत्सर्ग मुद्रा में समाधिपूर्वक देहत्याग ।

श्री अशोकभाई जैन, अगास आश्रम

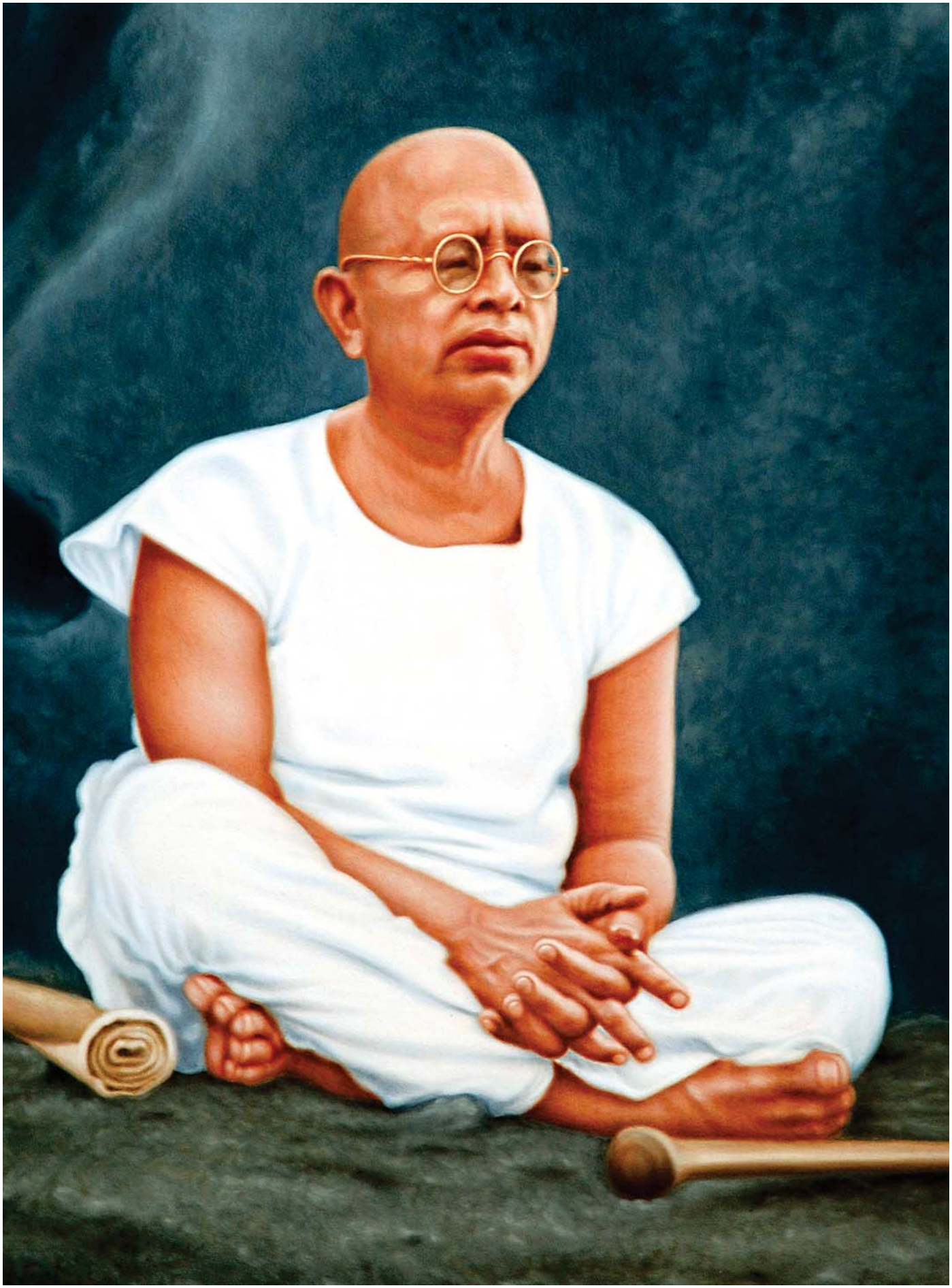

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी चिंतन मुद्रा में

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के बोधवचन

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का जीवन भक्ति के अवतार समान था। परमकृपालुदेव मानों उनके रोम-रोम में बसे हों ऐसे उनके विचार, वाणी, वर्तन और लेखन से ज्ञात होता है। मंत्रस्मरण तो उनके श्वासोश्वास बन गये थे। वे एक काव्य में भी लिखते हैं : **'मंत्रे मंत्र्यो स्मरण करतो काल कादुं हवे आ...'** तद्नुसार उनका जीवन आज्ञामय बनकर शोभायमान हो उठा था।

वे मुख्यतः अपनी आत्मोन्नति के पुरुषार्थ में ही रत रहते। साथ ही साथ अन्य जीवों का कल्याण हो ऐसे शुभ आशय से जो कुछ सहजभाव से कर्तृत्व बुद्धि रहित उनके वचन निकले या कलम चली तो वह बोधामृत अथवा पत्रसुधा आदि ग्रंथो के रूप से प्रचलित हुई। इस बोधामृत अथवा पत्रों आदि में अनेक आत्महितकारी सामग्री उपलब्ध है। फिर भी प्रारम्भिक भूमिका में श्रद्धावान मुमुक्षु को मोक्षमार्ग में विशेष उपयोगी हो ऐसे विषयों का यहाँ उल्लेख कर रहे हैं। उन-उन विषयो संबंधी उन्होंने कहाँ-कहाँ क्या बताया है उन सब में से मुख्य भाग को एकत्रित करके यहाँ प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जिससे उनका उन-उन विषयो संबंधी अंतरंग अभिप्राय जानने को मिले तथा मुमुक्षु को उन-उन विषयों की मार्मिकता लक्ष्यगत हो। इसमें निम्नलिखित विषय शामिल है।

परमकृपालुदेव के प्रति परम भक्ति, नित्यनियम के तीन पाठ के संबंध में, स्मरण-मंत्र का अद्भुत माहात्म्य, सात व्यसन एवं सात अभक्ष्य के संबंध में, सत्पुरुष की आज्ञा, सत्संग ये सर्व सुख का मूल तथा समाधिमरण पोषक अलौकिक तीर्थ श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास। अब यथाक्रम एक-एक विषय का यहाँ अवलोकन करते हैं।

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

परमकृपालुदेव के प्रति परम भक्ति

(पू. श्री ब्रह्मचारीजी द्वारा लिखित 'पत्रसुधा' में से)

परमगुरु का दर्शन दुर्लभ

दर्शन दुर्लभ भाई, परमगुरु दर्शन दुर्लभ भाई,
साची राज सगाई, जगत गुरु दर्शन दुर्लभ भाई,
देव, गुरु ने धर्म, त्रणे मां गुरुपद नी ज वडाई,
साचा गुरु समजावे साचा देव, धर्म सुखदाई। जगत १
मोक्षमार्ग ने कर्यो मोकलो ए सद्गुरु-चतुराई,
देखत भूली दूर करावी सम्यक् दृष्टि लगाई। जगत २
कलिमलमांथी करुणा करीने काढ्यो ए ज भलाई,
पण आलंबन सदा रहो ए, दूर करो नबलाई। जगत ३

(पत्रसुधा पृ.२९)

शुद्ध चैतन्यघन, परमज्योति, प्रकट पुरुषोत्तम, कृतकृत्य प्रभु, दिव्य लोचनदाता, क्षायिक सम्यक्त्व के स्वामी, परम पुरुषार्थी परमात्मा प्रभु श्रीमद् राजचंद्र हृदयेश्वर को नमो नमः।

हे परमकृपालु, परम आलंबन दाता, वीतराग प्रभु! आप तो सर्वज्ञ और इस सेवक के अंतर के अप्रकट भावों के भी संपूर्णरूप से सर्व प्रकार से जानकार हो। (प.पृ.१८)

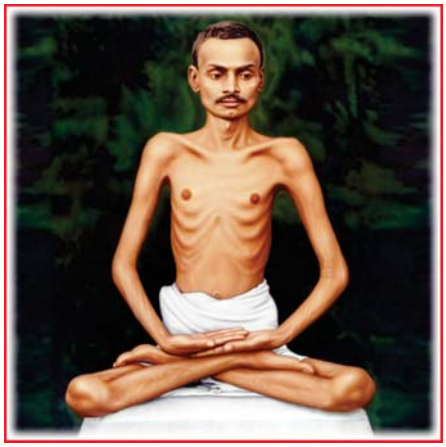

एक की उपासना से अनंत ज्ञानियों की उपासना

एक सत्पुरुष या ज्ञानी की उपासना करने से सर्व अनंत ज्ञानीयों की उपासना होती है जी। 'धर्म कहे आत्मस्वभावकूं, ए सत्मत की टेक' (धर्म कहा है आत्म स्वभाव को, सत्मत का यही लक्ष) परम धर्म ये परमात्मपदप्राप्ति है; उसका कारण सत्पुरुष में ही परमेश्वर बुद्धि-श्रद्धा होना वही है जी; सर्व दोषों का नाश करने का यही उपाय है जी। (प.पृ.२६२)

परमकृपालुदेव का अपार उपकार है कि इस कलिकाल में हमारे जैसे अबुध जनों को उत्तम अध्यात्म मार्ग सरलता और सुगमता से समझ में आए वैसे गुजराती भाषा में संपूर्ण प्रकार से प्रकट किया है। (प.पृ. ४२३)

परमकृपालुदेव जिनके हृदय में बसते हैं, परमकृपालुदेव के प्रति जिनको पूज्य भाव हुआ है, जो-जो परमकृपालुदेव का गुणगान करते हैं तथा उनके प्रति जिनको अद्वेष भाव है ऐसे सर्व भव्य जीव प्रशंसा के पात्र हैं जी। (प.पृ. ४२३)

सत्य मोक्षमार्ग को प्रकट करने वाले परमकृपालुदेव

जैसे-जैसे परमकृपालुदेव के वचनों को बारबार पढ़ते वैसे वैसे उनका परम उपकार विशेष-विशेष स्फूरित होता है। ऐसे अपवादरूप महापुरुष ने "मोक्षमार्ग बहु लोप" हो गया हैं, उसे "भाख्यो अत्र अगोप्य" प्रकट किया है। उनके योगबल से अनेक जीव सत्य मार्ग की ओर मुड़े मुड़ रहे हैं और मुड़ेंगे। हम सबका भी महाभाग्य है कि ऐसे पुरुष के वचनों पर विश्वास, प्रेम, प्रतीति होने से उनके हृदय में रही हुई अनुपम अनुकंपा के योग्य उनकी आज्ञा के अनुरूप अपना आत्मोद्धार करने के लिए प्रेरित हुए हैं। (प.पृ. ४८१)

परमकृपालुदेव के प्रति गुरुबुद्धि रखकर हम सब सत्संगी मोक्ष मार्ग के पथिक है, एक ही मार्ग में इकट्ठे हुए है, संसार के दुःख से छूटने के इच्छुक हैं। (प.पृ. ४८१)

सर्वोपरि उपकार परमकृपालुदेव का

इस जीवन में किसी ने हम पर अत्याधिक उपकार किया हो तो उसमें सर्वोपरि परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्र प्रभु का है। उनकी निष्कारण करुणा की निरंतर स्तुति करने से भी आत्मस्वभाव प्रकट होता है। उनके अपूर्व वचनों को हृदय में अंकित करने वालों को निर्वाणमार्ग की प्राप्ति होती है। ऐसा अचिंत्य माहात्म्य जिनका है, ऐसे निःस्पृही महात्मा का शरण हमें मिला है तो अगर उसे मरण तक टिकाये रखकर उनके आश्रय में यह देह छूटे तो जीव समाधिमरण प्राप्त करता है। (प.पृ.६०४) सिर पर मृत्यु है उसकी तैयारी परमकृपालुदेव की शरण में करने जैसी है। अब दूसरा कुछ खोजना तो है नहीं। अन्य कहीं से परमकृपालुदेव के वचनामृत समान आत्महितकारी मदद मिले ऐसा ज्ञात नहीं होता। (प.पृ.७०३)

परमकृपालुदेव के अतिरिक्त मन कहीं और रोकने जैसा नहीं

इस काल में परमकृपालुदेव जैसे कोई नज़र नहीं आते। उनके अतिरिक्त कहीं ओर मन रोकने जैसा नहीं है ऐसा मुझे लगता है जी। दूसरी वस्तुओं में मन रखकर जीव ने अनंतकाल तक परिभ्रमण किया है। अब तो सती की तरह यह एक ही ग्रहण करने योग्य है जी। वृत्ति का व्यभिचार यही कर्मबंध का कारण है। (प.पृ. ७३६)

नित्यनियम के तीन पाठ के विषय में

(बोधामृत भाग-१ में से)

विश्वास रखकर तीन पाठ बोलें तो ज्ञान प्रकट होता है

प.उ. प्रभुश्रीजी ने अपने जीवन के आखिरी दिनों में बीस दोहे, यमनियम, क्षमापना ये तीनों पाठ नित्यनियम के रूप में प्रतिदिन भावपूर्वक बोलने को कहा है । इतना यदि विश्वास पूर्वक करने में आए तो ज्ञान प्रकट हो जाए ऐसा है । अमुक शास्त्रों के जानकार पंडितों का मोक्ष होता है और अनपढ़ को नहीं होता ऐसा नहीं है । श्रद्धापूर्वक आज्ञा का आराधन करने से सब संभव है । (पृ.९)

'बीस दोहे' जो हैं, वे भावपूर्वक बोलने में आयें तो सभी दोष क्षय होकर आत्मा निर्मल हो जाए ऐसा है । ज्ञानीपुरुष के वचन सिर्फ मुँह से बोल दें लेकिन उन पर विचार न करें तो किस काम के ? जैसे कि **"हे भगवान ! मैं बहुत भूल गया"** क्या भूल गया ? इसका विचार आए तो ज्ञानीपुरुष को आगे क्या बताना है उसका लक्ष्य होता है । फिर तुरंत कहा कि "मैंने आपके अमूल्य वचनों को लक्ष्य में लिया नहीं ।" (पृ. २०)

मन स्थिर करके मंत्र का जाप करें

'बीस दोहे' बोलते समय मन भटक रहा है, तो बोलना बंद करें । फिर से मन को स्थिर करके बोलें । धर्म न करे और धर्म का दिखावा करे तो वह दंभ है । जो सत्य-सच्चा है वह करना है । मन को स्थिर करके वह करना । आत्मा जितना जुड़ सके उतना लाभ हैं । न हो सके तो गलत को गलत मानना । मुझे वही करना है जो सच्चा है और सच्चा मानना है ऐसे रखना है । (पृ.१२९)

बोधामृत भाग-३ (पत्रसुधा) में से उद्धृत :

हमें चित्रपट के दर्शन करके **बीस दोहा, यमनियम, क्षमापना** वारंवार बोलना है तथा **"सहजात्मस्वरूप परमगुरु"** का वारंवार स्मरण करना है । (प.पृ. १७६)

"हे प्रभु, हे प्रभु, शुं कहुं ? दीनानाथ दयाळ" ये बीस दोहे रूप भक्ति रहस्य और "यमनियम संयम आप कियो" तथा "क्षमापना" का पाठ परमकृपालुदेव के चित्रपट के समक्ष विनय नमस्कार करके 'हे भगवान, आपकी आज्ञा से संत द्वारा कहे गये इन तीन पाठों की नित्यनियम संबंधी आज्ञा अनुसार मैं नित्य भक्ति करूंगा, ऐसी भावना करनाजी । और रोज कोई संतकी आज्ञा से इतना मैं करता हूँ ऐसे भाव रखकर दिन में एक दो तीन जितनी भी बार हो सके उतनी बार भक्ति करने की सलाह है जी । (पृ.१५०)

नित्यनियम प्राणों के समान संभालने योग्य

नित्यनियम प्राणों के समान संभालने योग्य है जी । सत्पुरुष की उपस्थिति में जो वचन या प्रतिज्ञा अंगीकार की हो उसमें कभी चूक न हो इतना माहात्म्य मुमुक्षु के हृदय में होना चाहिए । हाथी के दांत एक बार बाहर निकले तो निकले, वापस अंदर नहीं जाते । उसी प्रकार सज्जन के वचन कभी पलटते नहीं । दुर्जन के वचन, कछुए की गर्दन को कभी बाहर निकाले तो कभी वापिस खींचे, उसके जैसे 'अभी कहा अभी झूठ' हो जाता है; इसलिए अब कभी भी नित्यनियम ना चूके ऐसा ध्यान रखने की सलाह है जी ।

(पृ.३२८)

यथासंभव सत्पुरुष की आज्ञा का आराधन करना

बीस दोहे, क्षमापना का पाठ, यमनियम, मंत्र की अमुक नियम अनुसार माला गिननी, आलोचना आदि जो जो नित्यनियम करते हो वे नियम, स्थल बदलने पर या नए असंस्कारी जीवों के साथ रहना पड़े वहाँ लोकलाज आदि कारणों से छोड़े नहीं; परन्तु विशेष बल रखते हुए तथा इसी आधार पर अपना जीवन सुधारना है ऐसा मानकर, गुप्त रूप से भी प्रतिदिन किए बिना रहना नहीं; और लोग 'भगत' ऐसा उपनाम दें तो उससे ड़रकर या शर्माकर, जो कर रहे हैं उसके प्रति कभी अभाव न लायें; परन्तु विचार करना कि उन लोगों को सत्पुरुष का योग प्राप्त नहीं हुआ है, यह उनका दुर्भाग्य है और धर्म का ध्यान भी नहीं रखते जिससे कर्म बढ़ा रहे हैं...

हमें अपने आत्मा का उद्धार करने के लिए यथासंभव सत्पुरुष की आज्ञा का आराधन करते रहने की आवश्यकता है जी । (पृ.३४९)

स्मरण-मंत्र का अद्‌भुत माहात्म्य

"सहजात्मस्वरूप परमगुरु"

(ब्रह्मचारीजी द्वारा लिखित 'पत्रसुधा' में से)

परम प्रेम से मंत्र आराधन से जीवन सफल

अनंतकृपा करके परमकृपालुदेव का बताया हुआ मंत्र इस कलिकाल में हमें संत की कृपा से मिला है, यह हमारा महान सौभाग्य है। जिस प्रकार कोई कुँए में गिर जाए और उसके हाथ में कोई जंजीर या रस्सी आ जाए तो वह डूबता नहीं, उसी प्रकार मंत्र का स्मरण भी अंत में मृत्यु तक अवलंबन रूप है। सत्पुरुष का एक भी वचन यदि हृदय में परम प्रेम से धारण किया जाए तो यह मनुष्यजन्म सफल हो जाता है और जीव की गति सुधर जाती है ऐसा उसका माहात्म्य है। (प.पृ.७०) स्मरण मंत्र की उपासना उल्लासपूर्वक, दु:ख के समय में और उसके बाद भी बारबार बिना चूके करते रहना। चलते-फिरते, उठते-बैठते मंत्र में वृत्ति रहे ऐसी आदत डालना योग्य है। मृत्यु के समय यह मित्र का काम करेगा। इतना ही नहीं, परन्तु सद्‌गुरु द्वारा दिए गये अमूल्य वचन भी सद्‌गुरु समान ही हैं। (प.पृ. १०३)

सर्वप्रथम परमकृपालुदेव ने प.पू. प्रभुश्रीजी को यह मंत्र दिया

परमकृपालुदेव जब राळज पधारे थे उस समय प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी को परमकृपालुदेव के प्रति जैसे दर्शन के भाव थे वैसे दर्शन न हो सके किन्तु परमकृपालुदेव की आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए वे दर्शन किये बगैर ही राळज की सीमा से आँखों में आँसू लिए वापस खंभात लौट आये। इस प्रेम की स्मृतिरूप अगले दिन पू. सौभागभाई को खंभात भेजा था और प.पू. प्रभुश्रीजी को मंत्र बताने का आदेश दिया। वही मंत्र आज मुझे मिला है वह मेरा महाभाग्य है। (प.पृ.१०७)

मुख को तो मंत्र का काम सौंप देना

यदि कोई कहे कि बारबार मंत्र बोला करें तो खराब दिखता है, किसी को अच्छा लगे ना लगे इसलिए बार बार बोलना उचित नहीं; किन्तु ऐसी बात को मन में लेकर प्रमाद करना योग्य नहीं। चाहे कोई यह कहे कि यह तो पागल हो गया है, पागल माने तो भी यह लत छोड़ने योग्य नहीं है। मुख को मंत्र का काम सौंप दिया हो तो, मन भी जब अवकाश मिले तब, मुख से मंत्र बोला जा रहा हैं उसी में लक्ष्य रखेगा। चाहे मन दूसरी ओर हो और मुख से मंत्र बोल रहे हों तो भी कुछ न करने से तो यह पुरुषार्थ उचित है। (प.पृ. ११३) महामंत्र का आत्मदान हुआ है और जीव इस श्रद्धा को प्रबल करके रात दिन उस स्मरण में चित्त रखने की आदत डाले तो मोक्ष भी सुलभ हो जाए। ऐसे महामंत्र का लाभ जिनको हुआ है ऐसे जीव को अब दुनिया में घबराने जैसी कोई बात चित्त में लाने योग्य नहीं है। (प.पृ.१७४)

मंत्र दिया मानो आत्मा ही दे दिया है

परमकृपावंत प.पू. प्रभुश्रीजी ने मंत्र आदि देने की आज्ञा, परमपुरुष द्वारा प्राप्त हुई है ऐसा बताकर, इस मंत्र का इतना अधिक माहात्म्य वे कहते थे कि मानो 'आत्मा ही दे रहे हैं।' जिस प्रकार दवाई का उपयोग करके रोग का नाश करते हैं, उसी प्रकार इस मंत्र का एकाग्र चित्त से, संसार को विस्मृत कर के, उसमें तन्मय होकर उसका आराधन करने से जन्म मरण का नाश हो जाता है ऐसा प्रबल सामर्थ्य उसमें है। तो भवरोग का नाश करने के लिए, जितनी हमारे में शक्ति है वह सब उसी आज्ञा का पालन करने में लगाने योग्य है। (प.पृ. २१८)

.....आज से अपने आत्मा को परमकृपालुदेव की शरण में सौंपता हूँ और उनके द्वारा बताया मंत्र ही, शादी के समय जिस प्रकार मींढल का धागा हाथ में बाँधते हैं उस प्रकार मेरे हृदय में अभी से रखूँगा और उस परमपुरुष में विश्वास होने से ही अब मैं सनाथ हूँ, मुझे उनका शरण है, तो मृत्यु से भी मुझे भय नहीं है। (प.पृ.२१८)

मन को खाली न रखकर मंत्र में लगाना

जब विषय-कषाय परेशान करें तब रोना यह कोई उपाय नहीं है। किन्तु ज्ञानी पुरुष की आज्ञारूप लकड़ी का स्मरण करके उसमें हृदय को जोड़ देना जिससे विषय रूप श्वान तुरंत भाग जायेगा, खेद करने रूप रोने से वह खिसक जाये ऐसा नहीं हैं, कर्म प्रार्थना सुनें ऐसे नहीं है, वह तो शर्म बिनाके है। इसलिए ज्ञानी की आज्ञा, मंत्र स्मरण, भक्ति आदि में चित्त को अधिक रखने से विषयों की ज्वाला में घुसने का उसे समय नहीं मिलेगा। या तो कोई कार्य या तो स्मरण आदि इस तरह मन को निठल्ला नहि रहने देना। (प.पृ.२७७)

प्रतिदिन चालीस या पचास माला के क्रम तक पहुँचे

जितना भी एकांत समय मिले उतना स्मरण अर्थात् माला फेरने में लगाना। रोज़ कितनी माला फेरते हैं इसका हिसाब भी रखें। उंगलियों की पोर से गिनते रहने से संख्या की गिनती होगी। प्रतिदिन उसमें थोड़ी-थोड़ी वृद्धि करते रहना और प्रतिदिन ४० या ५० माला फेरने के क्रम तक पहुँचो तब मन कैसा रहता है, माला का क्रम बढ़ाने में वृत्ति रहती है या मन ऊब जाता है, यह पत्र द्वारा बताने की सलाह है जी। यदि संभव हो तो रात को भी जब जागें तब माला लेकर बैठना, खड़े होकर माला फेरना या घूमते घूमते भी फेरना; परन्तु नींद कम होती जाए और माला का क्रम बढ़ता जाए ऐसे क्रमश: प्रतिदिन बढ़ाते रहने की जरूरत है। (प.पृ.३३९)

माला फेरते हुए गुण प्रकट हो ऐसी भावना कर्तव्य

अब कितनी माला का स्मरण होता है उसकी गिनती रखने की सलाह है । माला न रखो तो ऊंगलियों के पोर से भी गिनती करके प्रतिदिन कितनी माला होती है, एक निजी नोट में उसकी नोंध रखें । इससे बढ़ रही है, कम हो रही है या उतनी ही माला हो रही है यह समझ में आएगा । माला की शुरूआत से अंत तक पूरी माला फेरने का अवकाश हो तब लक्ष्य स्मरण के उपरांत एक दोष दूर करने के निश्चय का या एकाध गुण प्रकट करने की भावना का रखना, जैसे कि अभी दो-पांच मिनट का अवकाश है तो जरूर एक-दो माला फेर सकते हैं । ऐसा हो तब पहली माला में क्रोध को दूर करने का अर्थात् किसी भी प्राणी के प्रति क्रोध नहीं करना । अभी कोई प्राण लेने आये तो भी उसके प्रति क्रोध करना नहीं ऐसा निश्चय या क्षमा गुण प्रकट करना है, ऐसी भावना रखना ।

.....दूसरी माला फेरते हुए मान को दुर करके विनय गुण बढ़ाने के प्रयत्न में ध्यान केन्द्रित करना । तीसरी में माया का त्याग कर सरलता धारण करने, तथा चौथी में लोभ कम कर संतोष बढ़ाने के लिए मन को मोड़ना । (प.पृ.४०१)

प्रतिदिन ३६ माला का क्रम

चौबीस घण्टो में चाहे जब अनुकूल समय में नित्यनियम, बीस दोहे, यमनियम, क्षमापना का पाठ - इतना एकचित्त से कर लेना । फिर माला द्वारा मंत्र स्मरण करने में भी अमुक माला और कम से कम एक माला तो निर्विघ्न पूर्ण हो ऐसा निश्चय रखना । यदि छत्तीस माला का क्रम रखा हो और आसन बार बार बदलने की जरूरत न पड़ती हो तो उसमें भी अठारह माला एक साथ एक आसन में फेर सकते हों तो आसन जयरूप गुण होने का संभव है जी । यह सब जल्दबाजी में नहीं करना है, लेकिन (क्रमानुसार) आहिस्ता-आहिस्ता किया जा सकता है । (प.पृ.४०३)

मंत्र रटन जिह्वा में हमेशा चलता रहे ऐसी आज्ञा

जन्म-मरण छूटे ऐसा सत्साधन परमकृपालुदेव की कृपा से इस भव में मिला है । तो चलते-फिरते, काम करते, खाना पकाते, सिलाई करते, जागते रहें तब तक परमपुरुष की प्रसादीरूप मंत्र का स्मरण जिह्वा पर रटन चलता ही रहे ऐसी आदत पड़ी हो तो कितनी कमाई होती रहे ! फिक्र, चिंता, क्रोध, अरति, क्लेश, झगड़ा, शोक, दुःख ये सभी आर्तध्यान के कारण श्वान जैसे लकड़ी देखकर भाग जाता है वैसे तुरंत दूर हो जाते हैं । (प.पृ.४४६)

मंत्र की धून मृत्यु के समय

प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी ने देह छोड़ने (छूटने) से पहले कई बार ऐसा कहकर रखा था कि जब ऐसा वक्त आये तब दूसरी सब बातें, वांचन आदि रोक कर "सहजात्मस्वरूप परमगुरु" मंत्र की धून से पूरा कमरा गूंज उठे वैसा वातावरण कर लेना; और देह छूट गया है ऐसा पता चले तो भी थोड़े समय के लिए वैसा ही करते रहना । (प.पृ.४५६)

परमकृपालुदेव की कृपा से जिस मंत्र की प्राप्ति हुई है, वह सर्व प्रसंग में चित्त को शांत रखने के लिए सर्वोत्तम रामबाण औषधि है जी । जितना उसका विस्मरण होता है, उतना कषायक्लेश से आत्मा संताप पाता है । (प.पृ.४७४)

मंत्रस्मरण तेल की धार की तरह अटूट रहा करे ऐसा पुरुषार्थ जीव जो हाथ में ले, शुरु करे तो कुछ न कुछ उस दिशा में प्राप्त कर भी सकता है । स्मरण के लिए न ही विद्वता चाहिए, न ही बल का उपयोग करना पड़ता है, न ही कला-कौशल चाहिए और न ही धन खर्च करना पड़ता है; मात्र छूटने का उत्साह होना चाहिए । (प.पृ.४७६)

परमकृपालुदेव के दिये हुए मंत्र का स्मरण करते करते परमकृपालुदेव की दशा प्राप्त करने के लिए ही अब तो जीवन जीना है । (प.पृ.५०९)

मंत्र में, नवकार आदि अनेक मंत्रों का समावेश

उनकी अभी अत्यंत इच्छा हो तो **"सहजात्मस्वरूप परमगुरु"** मंत्र भी बताना, उसमें नवकार आदि अनेक मंत्रो का समावेश हो जाता है । मृत्यु के समय इस मंत्र में चित्त रखकर कहीं आसक्ति नहीं रखें और सद्गुरु परमकृपालुदेव ने जाना है, अनुभव किया है, वह आत्मा मुझे प्राप्त हो यही भावना रखकर मृत्यु पाने वाले को समाधिमरण प्राप्त होता है; ऐसा श्री लघुराजस्वामी द्वारा बताया हुआ आपको बताया है । (प.पृ.५१६) अपनी शक्ति के अनुसार माला का नियम रखना, परन्तु कम से कम एक माला तो करनी चाहिए । माला के बिना भी हो सके उतना स्मरण में चित्त रखने से धर्मध्यान होता है जी । जो आज्ञा मिली है उसके आधार पर जो पुरुषार्थ होता है, वह धर्मध्यान का कारण है । (प.पृ.५२९)

मंत्र सभी दोषों के नाश का उपाय है

सभी दोषों के नाश का उपाय मंत्र है । उसमें वारंवार वृत्ति रहे, उसमें अविच्छिन अखंडरूप से लक्ष्य रहे, ऐसी भावना कर्तव्य है जी । (प.पृ.५७५)

मंत्र में मन अहोरात्र रहे, ऐसी व्यवस्था अंत समय में हो जाए यह अवश्य कर्तव्य है जी । स्वयं से नहीं बोला जा सके तो जो सेवा में हो उसे **"सहजात्मस्वरूप परमगुरु"** यह मंत्र बीमार व्यक्ति के कान में सुनाई दे उतना तेजी से उच्चारण करना चाहिए । (प.पृ.६३६)

स्मरण निरंतर रहे ऐसी आदत कर दी गई हो तो वह दुःख के समय आर्तध्यान नहीं होने देता और सुख के समय में मान, लोभ, शाता की इच्छा बढ़ने नहीं देता । (प.पृ.६७०)

मंत्र के द्वारा एक सेकंड का भी सदुपयोग

स्मरण मंत्र अत्यंत आत्महित करने वाला है । एक सेकंड का भी सदुपयोग करने का वह साधन है । परमकृपालुदेव ने जैसा आत्मा जाना है वैसा उन्होंने मंत्र में बताया है । (प.पृ.६९४)

मंत्र का स्मरण करना, यह दुविधा के समय दवा के समान है । (प.पृ.७००)

स्मरण को स्वरूप-चिंतवन समझ सकते हैं ? जवाब में कहना है कि जिसकी जितनी योग्यता है उस प्रकार उस शब्द का परिणमन होता है । पाप से तो जीव अवश्य छूटता है तथा पुण्यबंध करता है । परन्तु जिसे स्वरूप का भान हो गया हो उसे स्वरूप-चिंतवनरूप या स्थिरता का कारण होता है और स्वरूप का भान होने के लिए भी स्मरण निमित्त कारण होता है । (प.पृ.७०८)

मंत्र, निश्चय नय से स्वयं का ही स्वरूप

स्मरण है वह मात्र कृपालुदेव का स्वरूप ही है । और निश्चय नय से स्वयं का स्वरूप भी यही है । इसलिए स्मरण में चित्त रखकर आत्मभावना का भाव रखने की सलाह है जी । (प.पृ.७६९)

मंत्र का स्मरण रात दिन रहा करे ऐसा पुरुषार्थ करने के लिए कमर कसकर तैयार हो जाएं कि जिससे यहाँ आना हो तो भी दूसरी उल्टी-सीधी बातों में अपना बहुमूल्य जीवन चला न जाए । यही एक रटन रखने योग्य है जी । (प.पृ.७८४)

बोधामृत भाग-१ में से उद्धृत :

स्मरण यह संसार समुद्र से तारने वाला

'स्मरण' यह अद्‌भुत वस्तु है । स्वरूपप्राप्ति करानेवाला तथा स्वरूप में स्थिरता करानेवाला है । दिनभर उसका रटन करने में आता हो तो भी नित्यनियम की माला गिनने में चूकना नहीं । जिन्हें अमूल्य समय का क्षण मात्र भी व्यर्थ नहीं जाने देना हो उनके लिए 'स्मरण' यह अपूर्व वस्तु है । कुँए में गिरे हुए डूबते मनुष्य के हाथ में रस्सी आ जाए तो वह डूबेगा नहीं, वैसे 'स्मरण' यह संसार समुद्र में से तारनेवाली वस्तु है । (बो.भा.१ पृ.२१)

हमको जो स्मरण मिला है उसे याद नहीं करेंगे और बादमें कहते हैं कि संकल्प विकल्प बहुत आते हैं तो यह भूल अपनी स्वयंकी हैं । इसलिये रोज स्मरण याद रखना । काम करते हुये भी स्मरण करना, काम पूरा होनेके बाद भी स्मरण करना

(बो. भा. १, पृ. ४०)

स्मरण न भूलें ऐसा लक्ष्य रखना । साता-असाता में अथवा कभी भी इसे न भूलना । शास्त्र की उपेक्षा स्मरण में वृत्ति अधिक रखना । (बो.भा.१ पृ.६९)

स्मरण भूले नहीं ऐसी आदत डालने की आवश्यकता

''सहजात्मस्वरूप परमगुरु'' इसमें पाँचो परमेष्ठी आ जाते हैं । चलते-फिरते, काम करते मंत्र का जाप किया करें । इसका रटन निरंतर करने की जरूरत है । काम तो हाथ पैर से करना है किन्तु जुबान तो निवृत्त है न ? स्मरण भूले नहीं ऐसी आदत डालने की जरूरत है । स्मरण की आदत डाली हो तो मृत्यु के समय याद रहता है और समाधिमरण हो जाए ऐसा है ।

(बो.भा.१ पृ.१२१)

कृपालुदेव से प्रेम करना है । मंत्र स्मरण करते हुए मन को कृपालुदेव में लगाएं तो आनंद आता है । मंत्र के गुणों का स्मरण करे तो मन भटकता नहीं । उसके विचार रहे तो शांति रहती है । (बो.भा.१ पृ.१३४)

मंत्र परभव में साथ आता है

मंत्र यह ऐसी वैसी वस्तु नहीं है । यह बीज कहलाता है । इसमें से वृक्ष उत्पन्न होता है । जैसे बरगद का बीज छोटा होता है तो भी उससे विशाल वृक्ष होता है, वैसे ही यह मंत्र है । इसकी आराधना करे तो आत्मा के गुण प्रकट होते है । एक सम्यक्‌दर्शन प्रकट होने से सभी गुण प्रकट होते हैं । **''सर्व गुणांश ते सम्यक्‌त्व''** (वचनामृत पत्र ९५) परभव में यह साथ आए ऐसा है । अभी तो जितना करना हो उतना हो सकता है । इतनी सामग्री फिर नहीं मिलेगी । क्या करने आये हैं ? क्या कर रहे हैं ? धर्म के काम में शिथिल नहीं होना, कर ही लेना । (बो.भा.१ पृ.२१२)

सर्व कर्ममल से रहित वह सहजात्मस्वरूप

मुमुक्षु : सहजात्मस्वरूप का अर्थ क्या है ?

पूज्यश्री : आत्मस्वरूप जैसा है वैसा । स्वयं के स्वभाव में रहना अथवा कर्ममलरहित जो स्वरूप है वह सहजात्म-स्वरूप । जैसे स्फटिक रत्न, अन्य पदार्थ के संयोग से नीला, पीला, लाल आदि जैसा संयोग होता है वैसा दिखता है; वह उसका सहज स्वरूप नहीं है, परन्तु जब अकेला निर्मल स्फटिक रहता है तब वह उसका सहजस्वरूप हे । (बो.भा.१ पृ.२६२)

स्मरण पर ज्यादा महत्व देना । चलते-फिरते भी स्मरण करना । (बो.भा.१ पृ.२६२) मंत्र से मंत्रित हो जाना, दूसरों की बातें भूल कर ज्ञानी के वचन में चित्त रखना, जगत के कामों, का चाहे जो हो, पर हमें तो कृपालुदेव ने जो कहा है उसमें ही रहना है । प्रभुश्रीजी कहते थे पागल हो जाना, स्मरण में रहना । (बो.भा.१ पृ.२६३)

मंत्र से मंत्रित हो जाना

''मंत्रे मंत्र्यो, स्मरण करतो, काल कादुं हवे आ,
ज्यां त्यां जोवुं परभणी भूली, बोल भूलुं पराया;
आत्मा माटे जीवन जीववुं, लक्ष राखी सदाए,
पामुं साचो जीवन-पलटो मोक्ष-मार्गी थवाने।''

-पू. श्री ब्रह्मचारीजी

सात व्यसन और सात अभक्ष्य के बारे में

(पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी लिखित 'पत्रसुधा' तथा 'बोधामृत भाग-१ में से')

प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी ने बताया है कि परमकृपालुदेव की साक्षी से सात व्यसनों का त्याग करना योग्य है। (प.पृ.२१७)

सदाचरण के बिना सभी व्यर्थ है

आज्ञा आराधन करने के लिए योग्य बने इसलिए सदाचरण का सेवन करने की जरूरत है। वह न हो तो सब व्यर्थ है। अतः पहले सात व्यसनों के त्याग की जरूरत है तथा पांच अभक्ष्य फल और शहद, मक्खन त्याग करने योग्य है। (बो.भा.१ पृ.९)

पहले सात व्यसनों का त्याग करने की आवश्यकता

(१) जुआ–लोभ बहुत खराब है। अगर वह छूट जाए तो बहुत ही लाभ हो ऐसा है। एकदम धनवान बनने की कामना से सट्टा, लॉटरी आदि नहीं करना। (जुआ-मेले में लॉटरी, सट्टा, रेस आदि में शर्त नहीं लगाना) **(२-३) मांस-मदिरा** त्यागने लायक है। **(४) चोरी**–चोरी करके तुरंत पैसा आता है वह अच्छा लगता है, परन्तु जिसका परिणाम खराब हो वह दुःखदायक है, ऐसा समझकर किसी को पूछे बिना सब्जी जैसी वस्तु भी नहीं लेना। लाख रुपये की कीमती वस्तु रास्ते में पड़ी हो तो भी नहीं लेना। **"ऐ त्यागवा सिद्धांत के पश्चात् दुःख ते सुख नहीं।"** जिसका परिणाम दुःखदायक है वह काम कभी नहीं करना, ऐसा कृपालुदेव ने कहा है। **(५) शिकार**–किसी भी जीव को जानबूझकर नहीं मारना। बहुत से मनुष्यों की ऐसी आदत होती है कि पिस्सु, मच्छर, खटमल आदि को जानबूझकर मार देते हैं, लेकिन ऐसा करना नहीं। चूल्हा सुलगाते समय भी लकड़ी को भटक कर डालना जिससे जीव हो तो वह मरे नहीं। जूं-लीख को नहीं मारना। **(६) परस्त्री और (७) वेश्यागमन**–इस व्यसन से यह भव और परभव दोनों बिगड़ते हैं, इसलिए इसका सेवन नहीं करना। लोगों में भी यह निंदनीय है अतः इसका त्याग करना। (बो.भा.१ पृ.९)

सात व्यसन, सात अभक्ष्य का प्रभु की साक्षी से त्याग कर्तव्य है

उपरोक्त सात व्यसन; एवं (१) बरगद का फल (२) पीपल का फल (३) पींपला का फल (४) उमरडां (५) अंजीर (६) शहद (७) मक्खन–ये सात अभक्ष्य–ये सत्पुरुष की-परमकृपालुदेव की साक्षी से जीवनपर्यंत त्यागने योग्य ऐसा प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी ने प्रत्येक मुमुक्षु जीव को बताया है। (प.पृ. ३२९)

सात व्यसन और सात अभक्ष्य वस्तुओं में से जितना त्याग हो सके, उतना त्याग हृदय से विचार करके आज से जीवनभर के लिए प्रतिज्ञा लेता हूँ ऐसा दृढ़ निर्णय कर्तव्य है जी। क्योंकि पाप की राह से पीछे हटने के सिवाय सन्मार्ग में स्थिरता होती नहीं जी। (प.पृ. २३४)

शहद की एक बूंद में ७ गाँव जलाने से भी अधिक पाप

आपने शहद की, दवाई में छूट रखने के लिए पत्र में लिखा है, परन्तु सात अभक्ष्य में सबसे अधिक पाप वाला शहद है जी। मधुमक्खी फूल में से रस चूसकर मधुछत्ते में जाकर शरीर के पिछले हिस्से से निकालती है इसलिए शहद मधुमक्खी की विष्ठारूप है। विष्ठा की तरह उसमें निरंतर जीव उत्पन्न होते रहते हैं। जो शहद की एक बूंद चखता है उसे सात गाँव जलाने में जितने मनुष्य, बालक, पशु, जंतु मर जाएं उससे अधिक पाप लगता है...शक्कर की चाशनी शहद के बदले उपयोग में लेते है और लगभग वैसा ही गुण करती है...शहद त्याग से आत्मा को बहुत पाप के बोझ से बचा सकते हैं इसलिए यह लिखा है। (प.पृ. ६९४)

शहद में बहुत दोष हैं। सात गाँव जलाये जाए और जितना पाप लगे उससे अधिक पाप शहद की एक बूंद चखने से लगता है। पूर्व में पाप किए थे जिसके कारण बीमारी आती है और फिर से शहद खाकर पाप करें, तो अगले भव में अधिक बीमारियाँ आयेंगी, अतः शहद का त्याग नहीं किया हो तो आज से त्याग करना चाहिए जी। ऐसा पाप करने की आज्ञा होती नहीं है। (प.पृ.७११)

परमकृपालुदेव के बताये हुए मार्ग में विघ्न करनेवाले ये सात व्यसन है...धर्म की नींव नीति है इसलिए मंत्र लेने से पहले सात व्यसनों का त्याग लेना होता है। (प.पृ.६६९)

सत्पुरुष की आज्ञा
(बोधामृत भाग - १,२,३ में से)

ज्ञानी की एक आज्ञा के आराधन से तीर्थंकर पद की प्राप्ति

सत्पुरुष की आज्ञा यही सच्चा मार्ग है... एक भील ने 'मुझे कौअे का मांस नहीं खाना' इतनी ही आज्ञा का आराधन किया, जिससे मर कर वह देव हुआ। उसके बाद श्रेणिक राजा हुआ। अनाथी मुनि मिले तब समकित प्राप्त किया और महावीर भगवान मिले तब क्षायिक समकित हुआ और तीर्थंकर गोत्र बांधा। (बो.भा.१ पृ.५१)

मुमुक्षु : जब तक स्वरूप को नहीं जानते हैं तब तक किसमें रहना ? पूज्यश्री : ज्ञानीपुरुष की आज्ञा में रहना। (बो.भा.१ पृ.१५६)

ज्ञानी की आज्ञा लेकर अखंडरूप से उसका पालन करनेवाले, ऐसे जीव पूर्व में थे। परन्तु आज के जीवों के लिए तो परमकृपालुदेव कहते हैं की आज्ञा देना यह भयंकर है। **''जब तक आत्मा सुदृढ़ प्रतिज्ञा से वर्तन नहीं करता तब तक आज्ञा देना भयंकर है।''** (बो.भा.१ पृ.२०१)

राग द्वेष नहीं करना यह मुख्य आज्ञा

ज्ञानी की आज्ञा से जीव का कल्याण होता है...किसी महापुण्य के योग से आज्ञा मिलती है और उसकी लगन तथा उत्साह सहित आराधन करे तो जीव छूटता है, अन्यथा नहीं छूटता है...सच्ची आज्ञा तो रागद्वेष नही करने की है। विभाव से छूटकर स्वभाव में आना यही ज्ञानी की आज्ञा है। (बो.भा.१ पृ.३०३)

ज्ञानी की आज्ञा का उल्लंघन करके कुछ नहीं करना। ज्ञानी प्रत्यक्ष हैं तो पूछकर करें और प्रत्यक्ष नहीं है तो उनके चित्रपट के समक्ष जाकर ये प्रत्यक्ष ही हैं ऐसा जानकर, हे भगवान ! आपकी आज्ञा से यह करता हूँ, ऐसी भावना करके व्रत नियम आदि करना। (बो.भा.१ पृ.३५१) ज्ञानी की आज्ञा कोई भी जीव प्राप्त करे यह लक्ष्य रखना। (बो.भा.१ पृ. १८९)

मिथ्यात्व को मिटाने के लिए आज्ञा और चारित्रमोह का छेदन करने के लिए वीतरागता की आवश्यकता

जिनकी आज्ञा के आराधन से कषाय मंद हो, उपशमभाव आये ऐसे पुरुष की खोज करना। दर्शनमोह का छेदन करने के लिए आज्ञा की जरूरत है और चारित्रमोह का छेदन करने के लिए उपशमभाव अथवा वीतरागभाव चाहिए। (बो.भा. २ पृ.४३)

''शास्त्र में कही हुई आज्ञाएँ परोक्ष हैं और वे जीव को अधिकारी होने के लिए कही हैं; मोक्षप्राप्ति के लिए ज्ञानी की प्रत्यक्ष आज्ञा का आराधन करना चाहिए।'' (वचनामृत पृ.२६६)

प्रभुश्रीजी के समय में यह पढ़ा जा रहा था, उस समय यह वाक्य आया तब प्रभुश्रीजी ने कहा कि, 'खिले हुए फूल की तरह पूरा खुलासा कर दिया है, यह भी समझ में न आए, तो यह ग्यारहवाँ आश्चर्य है।' (बो.भा.२ पृ.४६)

आत्मज्ञानी गुरु की आज्ञा से वर्तन करने से मोक्ष

सूयगडांग में 'गुरु के आधार से - आज्ञानुसार वर्तन करने से मोक्ष होता है।' (बो.भा.२ पृ.११७)

ज्ञानी की आज्ञा से मोक्ष है। प्रभुश्रीजी कहते थे कि हमने खीली खीली करने का कह दिया हो, वह मुमुक्षु करे तो भी उसका मोक्ष होता है। माहात्म्य तो ज्ञानी की आज्ञा का है। सच्चे पुरुष की आज्ञा का आराधक हो तो दो घड़ी में ही केवलज्ञान हो जाय। (बो.भा.२ पृ.१४५)

पूज्यश्री : ज्ञानी की आज्ञा मुख्यरूप से तो आत्मा में ही रहने की है। आत्मा में न रह सकते हों तब ज्ञानी की आज्ञा से आत्मा का लक्ष्य रखकर समिति में वर्तन करना पड़े तो प्रवर्तन करें। (बो.भा.२ पृ.३३३)

मैं किसी को 'आज्ञा' नहीं देता। ज्ञानी की 'आज्ञा' कहकर बताता अवश्य हूँ और जो उनकी आज्ञा का पालन करता है उसका कल्याण होता है।

.....''आणाए धम्मो आणाए तवो'' ऐसा आचारांगजी में आदेश है। इसलिए जिन सत्पुरुष की आज्ञा हमें प्राप्त हुई हैं, वह तो मृत्यु के अवसर में भी चूकने योग्य नहीं है। (बो.भा.३ पृ.४३४)

आज्ञा प्राप्त करने के तीन प्रकार

तीन बातें आपने जो लिखी उसका स्पष्टीकरण इस प्रकार हैं :–

(१) ज्ञानीपुरुष के स्वमुख से जो आज्ञा जीव को मिलती है वह पहला प्रकार है। (२) प्रत्यक्ष ज्ञानीपुरुष ने जिसे आज्ञा दी हो उसके द्वारा जीव को आज्ञा मिले और (२) तीसरा प्रकार प्रत्यक्ष ज्ञानीपुरुष के द्वारा प्राप्त हुई आज्ञा का आराधन कोई जीव करता हो उसके पास से उसका माहात्म्य समझकर, उस आज्ञा को आराधक की तरह जो जीव, यह ज्ञानी की आज्ञा है ऐसा जानकर उसे हितकारी मानकर आराधन करता है। ये तीनों प्रकार ज्ञानी की आज्ञा आराधन के हैं और तीनों से कल्याण होता है जी।

प्रथम भेद का दृष्टांत : श्री गौतम स्वामीने भगवान महावीर के पास से रूबरू (प्रत्यक्ष) धर्म प्राप्त किया।

दूसरे भेद का दृष्टांत : भगवान महावीर के निर्वाण के दिन श्री गौतम स्वामी को भगवान ने कहा कि अमुक ब्राह्मण को तुम इस प्रकार से धर्म श्रवण कराना।

तीसरे भेद का उदाहरण : वणागनटवर राजा

लच्छी और मल्ली के नाम के क्षत्रियों (कौरव-पांडव जैसे) के युद्ध में (महावीर स्वामी के समय में) चेडा महाराजा के पक्ष में एक वणागनटवर नामक श्रावक राजा भक्तिभाववाला था। उसे बड़े राजा-चेडा महाराजा का आदेश होने से युद्ध में जाना था। वह दो उपवास करके एक दिन पारणा और फिर दो उपवास, ऐसी तपस्या कर रहा था। पारणे के दिन आदेश मिला तब उसने सोचा कि पारणा करके पाप करने जाने से अच्छा आज तीसरा उपवास करूँ। ऐसा विचार उसने गुरु के समक्ष रखा, तब गुरुने उसे उपवास की सहमति दी और कहा कि युद्ध में ऐसा लगे कि अब शरीर अधिक समय तक रहे ऐसा नहीं है, तब सारथी को बोलकर रथ को एकांत में ले जाकर नीचे उतरकर जमीन पर स्वस्थता से लेटकर मंत्र की आराधना भक्ति करना। वह बात सारथी सुन रहा था। उसने भी सोचा कि जैसा राजा करेगा वैसा मुझे भी अंतिम समय में करना है।

राजा ने किया वैसा सारथिने भी किया

फिर युद्ध में गए। सामने दुश्मन ने पहले वार करने को कहा तब उन्होंने मना करते हुए कहा कि मैं तो मात्र बचाव करनेवाला हूँ। तब सामने वाले व्यक्ति ने शूरवीरता बताने की खातिर पाँच बाण राजा को, पाँच सारथी को और पाँच-पाँच बाण घोड़ों को मारे; परन्तु राजा बचाव न कर सका; और मृत्यु करायें ऐसे उन बाणों को जानकर उसने सारथी को रथ एक तरफ नदी की ओर ले जाने को कहा। सारथी ने उसी प्रकार किया। वहाँ जाकर उतरकर घोड़ों के बाण निकाले, तो वे प्राणरहित हो गए। वैसी ही दशा स्वयं की होगी यह जानकर नदी की रेत में वह राजा सो गया। सारथी भी, राजाने जैसे किया, वैसे करने लगा। फिर उस राजा ने हाथ जोड़कर प्रार्थना शुरू की। दास (सारथी) को वह प्रार्थना आती नहीं थी परन्तु ऐसा भाव किया कि हे भगवान! मैं कुछ नहीं जानता, परन्तु ये राजा ज्ञानी का कहा हुआ कुछ कर रहे हैं और वैसा ही मुझे भी करना है; परन्तु मुझे आता नहीं, तो जो राजा का हो वह मेरा भी हो। ऐसी भावना वह करने लगा। फिर राजा ने अपनी छाती में से बाण खींचकर निकाला, वैसा ही उस दास ने भी किया। और दोनों का देह छूट गया।

राजा से पहले दास का मोक्ष

राजा देवलोक में गये और दास का उतना पुण्य नहीं था, जिससे विदेह क्षेत्र में वह मनुष्य बना। वहाँ उसे ज्ञानी मिले और मोक्ष मार्ग की आराधना करके वह मुक्त हो गया। वह राजा तो अभी तक देवलोक में है। इस तरह भावना करने से जीव का कल्याण होता है, परन्तु ज्ञानी ने जैसे जाना है वैसा आत्मा है, उस लक्ष्य से करना। (बो.भा.३ पृ.५००)

सद्गुरु की आज्ञा का पालन किया होता तो मोक्ष हो गया होता

यदि इस जीव ने किसी भव में सत्पुरुष की आज्ञा का पालन किया होता तो यह जन्म नहीं होता, मोक्ष में चला गया होता। यह बात बहुत गहराई में उतरकर वारंवार विचारने जैसी है। दूसरे सभी साधनों की अपेक्षा ज्ञानीपुरुष की आज्ञा का आराधन यही मोक्ष का उपाय है। यह हृदय में दृढ़ करने योग्य है जी। (बो.भा.३ पृ.५६२)

जिन्होंने आत्मस्वरूप साक्षात् अनुभव किया वे प्रत्यक्ष ज्ञानी

(१) प्रश्न : "मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रत्यक्ष ज्ञानी की आज्ञा का आराधन करना चाहिए।"

(वचनामृत पत्र २००) प्रत्यक्ष ज्ञानी की आज्ञा किसे कहेंगे? और हमारे लिए वह किस प्रकार संभव है?

उत्तर : जिन्होंने आत्मस्वरूप प्रकट करके अनुभव किया है, वे प्रत्यक्ष ज्ञानी हैं। परमकृपालुदेव ने साक्षात् आत्मस्वरूप अनुभव किया है, आत्मस्वरूप हुए हैं, स्वयं देहधारी हैं कि क्या, ये बहुत मुश्किल से विचार करते तब उन्हें स्मरण आता; ऐसे प्रत्यक्ष ज्ञानी की आज्ञा परम पूज्य प्रभुश्रीजी को प्राप्त हुई। उन्हें स्वयं को जिस आज्ञा से लाभ हुआ, वह इस काल में अन्य योग्य जीवों को प्राप्त हो इस उद्देश्य से उनके पास जो जाए उनको वह आज्ञा (प्रत्यक्ष पुरुष की) बतायी और जब वे स्वयं नहीं होंगे, तब योग्य जीवों को बताने के लिए अपने अंतिम समय में मुझे आज्ञा दी। उन प्रत्यक्ष ज्ञानी की आज्ञा आपको प्राप्त हुई है, तो श्रद्धापूर्वक आराधन करने की, प्रमादरहित आराधन करने की सलाह है जी। (बो.भा.३ पृ.७७७)

सत्संग यह सर्व सुख का मूल

(पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी कृत 'पत्रसुधा' में से)

'क्षणमपि सज्जनसंगतिरेका,
भवति भर्वाणवतरणे नौका'

निमेष मात्र का सत्संग भी कोटि कर्मों का नाश करने में समर्थ है ।

सत्संग के लिए कदम उठते ही बेहद पुण्य

जहाँ सत्संग है वहाँ इस भव, परभव दोनों का हित हो ऐसा योग है । कोटि कर्मों का नाश सत्पुरुष के समागम से होता है । यह कमाई ऐसी वैसी नहीं । दो सौ-पाँच सौ रुपयों के लिए जीव परदेस भी चला जाता है, अनेक जोखिम उठाता है और मेहनत करता है परन्तु पुण्य के बिना वह प्राप्त नहीं किया जा सकता; और सत्संग के लिए जब से कदम उठाता है तब से जीव को अपार पुण्य बंधता जाता है । इस बात का भान जीव को मात्र नहीं है, श्रद्धा नहीं हैं । (प.पृ.८९)

सत्संग ये प्रथम में प्रथम और सरल से सरल आत्मकल्याण का कारण है । विशेष क्या लिखना ? जिसका हित होने वाला होगा उसे ये सूझेगा तथा सत्संग से किसी ज्ञानी की आज्ञा मिलने से उसका पालन करके आत्महित कर लेगा उसका मनुष्यभव सफल होगा ये ध्यान में रखने योग्य है जी । (प.पृ.५५९)

ये भव निश्चित ही सत्संग में व्यतीत करना

"इस काल में परमकृपालुदेव ने जिसके लिए वारंवार तीव्र इच्छा की है और जिसका माहात्म्य दर्शाने के लिए अनेक पत्र लिखे हैं ऐसा एक सत्संग नाम का पदार्थ सर्व प्रथम निरंतर उपासने योग्य है, भावना करने योग्य है जी । उसके बिना निःशंक हो सकें यह संभव ही नहीं । इसलिए चाहे जितना भोगना पड़े, परन्तु शरीर की परवाह किये बिना प्रयत्न करके सत्संग के लिए इस भव का उपयोग करना । ऐसा निर्णय होगा तो अवश्य ही आप जो समाधि मृत्यु की धारणा रखते हो, यह उसका अचूक उपाय है जी । (प.पृ.४९७)

"किसी का संग करने योग्य नहीं हैं; फिर भी वैसे न हो सके तो सत्संग करना, क्योंकि वह असंग होने की दवा है।" (बो. भाग-३, पृ. ५४४)

संसार ज़हर को मिटाने के लिए सत्संग जड़ी-बूटी रूप

संसार ज़हरीले नाग जैसा है । मुमुक्षु को नेवले जैसा होना चाहिए । उसे संसार के ज़हर का पता चले तो तुरंत

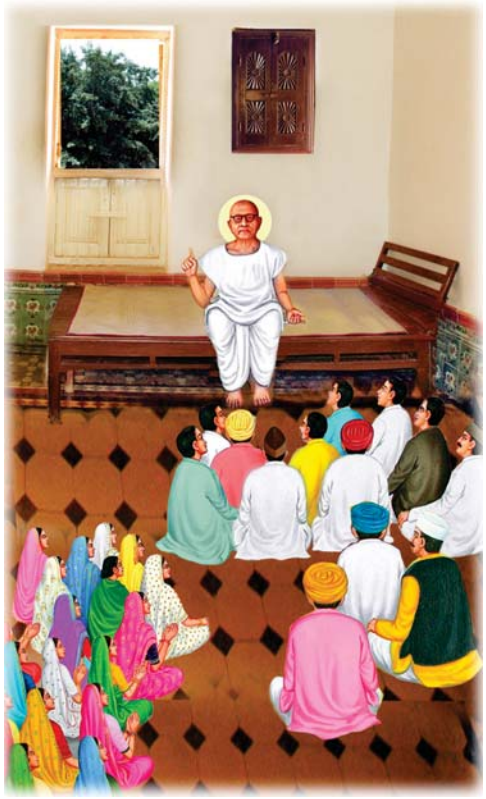

जड़ी-बूटी रूप सत्संग का सेवन करे । (प.पृ.५९६)

'मोक्षमाला' में २४ वाँ पाठ सत्संग के बारे में है । उसमें कुसंग से बचना तथा कुसंग का त्याग करना योग्य है ऐसा कहा है वह यथार्थ है । जब तक स्वयं को यथार्थ विचार करने की दशा न प्रकट हो तब तक अधिक समय सत्संग में बिताने को मिल जाए तो मेरा अहोभाग्य है, ऐसा मानकर सत्संग वारंवार सेवन करने योग्य है । (प.पृ.७०४)

परमकृपालुदेव में परम प्रेम प्रकट हो, उनके वचन अमृततुल्य लगें तथा संसारप्रेम कम करने के लिए; सबका मूल सत्संग है । उसमें न्यूनता उतनी ही सब में न्यूनता । (प.पृ.७१०)

बोधामृत भाग - १ में से :

सत्संग सरल एवं प्रथम करने योग्य

प्रश्न : सत्संग अर्थात् क्या ?

उत्तर : आत्मा को सत्य का रंग चढ़ाए वह सत्संग, एकांत में बैठकर स्वयं का विचार करना वह सत्संग, उत्तम का सहवास वह सत्संग, आत्मा के प्रति वृत्ति रहे वह सत्संग । (बो.भा.१ पृ.५२)

प्रभुश्रीजी जिस दिन नासिक से पधारे उस दिन शाम को बोध दिया था । उसमें अंत में कहा था कि सत्संग करना । सत्संग यह सरल मार्ग है, उसे पहले कर लेना है । सत्संग में स्वयं के दोष दिखते हैं, फिर निकालने हैं । (बो.भा.१ पृ.४७)

अगास आश्रम में श्रीमद् राजचंद्रजी के निवार्ण अर्धशताब्दी महोत्सव की शोभायात्रा में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी को धूप न लगे इसलिए मुमुक्षुओं ने पकड़ के रखी चादर

निर्वाण अर्ध शताब्दी के प्रसंग पर प.पू. प्रभुश्रीजी के स्मारक पर चैत्यवंदन करते हुए

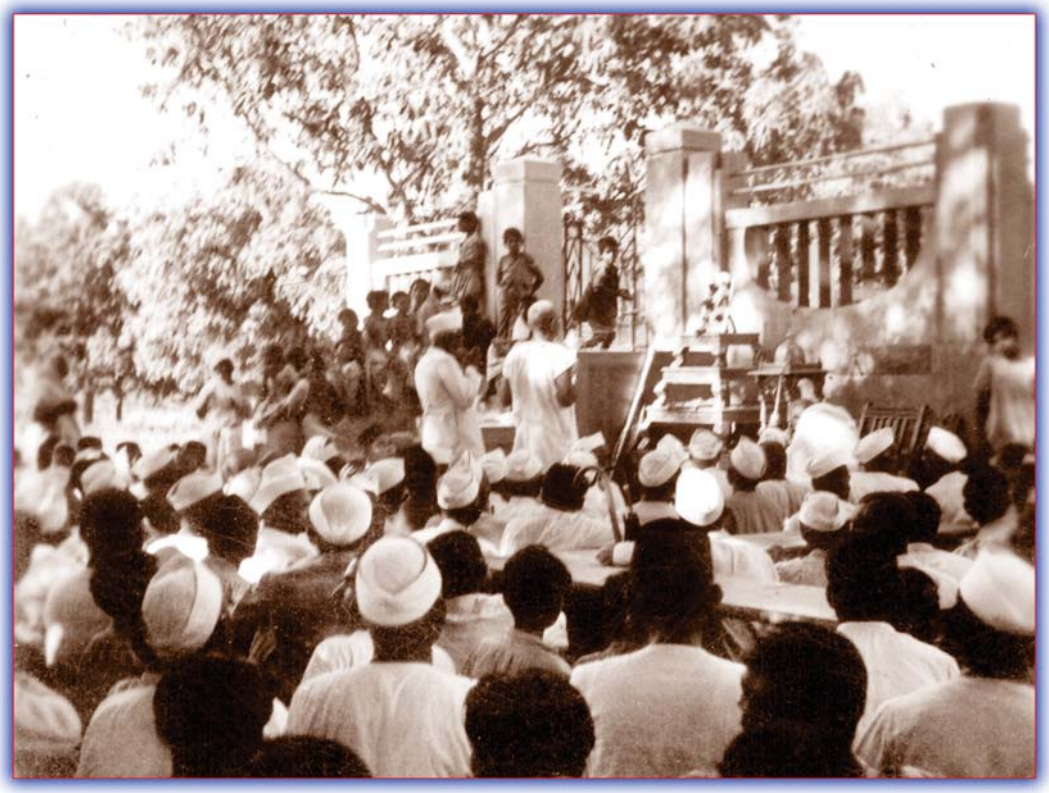

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास

(पू. श्री ब्रह्मचारीजी लिखित 'पत्रसुधा' में से)

आश्रम में ही आयुष्य बिताने योग्य

परमकृपालुदेव का अलौकिक योगबल यहाँ विद्यमान है । जिनका देह इस आश्रम में छूटा है, उन सबकी देवगति हुई है । परमकृपालुदेव के प्रति श्रद्धा बढ़े और आत्महित हो ऐसा अलौकिक यह स्थल बना है । महाभाग्यशाली होगा उसका देह यहाँ छूटेगा । यदि आजीविका की समस्या न हो तो यहीं पर जीवन बिताना योग्य है । धर्म, धर्म और धर्म के ही संस्कार रातदिन पडते रहे हो एसा यहाँ का सभी व्यवहार है । (प.पृ. ७७)

आश्रम में रोज़ पर्युषण

"पर्युषण पर्व बहुत सुंदर तरीके से मनाया गया है जी । परमकृपालुदेव की कृपा से आश्रम में तो प्रतिदिन पर्युषण जैसी ही भक्ति होती रहती है ।" (प.पृ. ११५) "आश्रम में जैसे भक्ति, शांति और सत्संग का योग है, वैसे अन्य कहीं भी हजारों मील दूर (दक्षिण की यात्रा में) जाकर आए, तो भी जानने में नहीं आया । परमकृपालुदेव की परम निष्कारण करुणा से हमें अपूर्व मार्ग दिखानेवाले परमकृपालु श्री प्रभुश्रीजी का योग प्राप्त हुआ है । इसके समान दूसरा कहीं पर जगत में दिखाई नहीं देता ।"

(प.पृ.१६१)

आश्रम में रहने जैसा है

"आश्रम में रहने जैसा है । दूसरी यात्राएं जो लोग बताते हैं उसमें खींचे नहीं जाना । और जहाँ हमें बोध का योग हो, चित्त शांत हो जाए वह तीर्थ है ।" (प.पृ.१७४)

"प.पू.प्रभुश्रीजी ने जहाँ चौदह चातुर्मास किए हैं, ऐसा राजगृही तीर्थ समान अगास आश्रम में आपका आने का विचार है, यह जानकर आनंद हुआ है ।" (प.पृ. ६२९)

प्रभुश्री की दूरदर्शिता से व्यवस्थित भक्ति क्रम

"प.पू. प्रभुश्रीजी ने आश्रम के लिए जो कार्यव्यवस्था बनाई है वह निश्चित ही बहुत दूरदर्शिता से की है । उसमें रुचि ना आए तो उतनी जीव में मुमुक्षुता की न्यूनता है ।" (प.पृ. ७६९) "मेरे आत्मा की देखभाल रातदिन हो जाए ऐसा स्थल श्रीमद् राजचंद्र आश्रम है । वहाँ सदा के लिए रहे ऐसा कब होगा ? ऐसी भावना रोज़ सुबह उठकर करना और अमुक मुदत तक हो जाये जैसा है, ऐसा लगे तब दिन गिनते रहना । जितना जल्दी कुछ हो सके ऐसी व्यवस्था करते रहना योग्य है जी । प.पू. प्रभुश्रीजी ने कहा है कि जिनका देह त्याग आश्रम पर होगा उनका समाधिमरण होगा । एक बार समाधिमरण हो तो मोक्ष जाने तक कर्म के आधीन जितने भव करने पड़ें उन सभी भवों में समाधिमरण अवश्य होता है ऐसा नियम है, तो ये लाभ लेने में चूकना नहीं । ऐसा निश्चय करके शीघ्र या देरी से भी मृत्यु के पहले आश्रम में रहने का योग बने ऐसा कर्तव्य है जी ।" (प.पृ.७८४)

अनेक पापों को धोने का तीर्थ अगास आश्रम

परमकृपालुदेव ने तीव्र इच्छा की है - "वैसा स्थान कहाँ है कि जहाँ जाकर रहें ? अर्थात् वैसे संत कहाँ है कि जहाँ जाकर इस (रागद्वेष रहित) दशा में बैठकर उसका पोषण प्राप्त करें ?" हमारे लिए तो प.पू.प्रभुश्रीजी ने ऐसा स्थान बनाकर समाधिमरण के स्थान की व्यवस्था कर दी । अब जितनी देर करें उतनी स्वयं की खामी है । पूज्यश्री कहते थे कि 'तारी वारे वार, थई जा तैयार ।' (तेरी ही वजह से विलंब हो रहा है, अब हो जा तैयार ।)

"अब सभी बातों को भूलकर अनेक पापों को धोने का तीर्थ प.पू.प्रभुश्रीजीने स्थापित किया है, यहाँ निवास करने की भावना में समय व्यतीत करना । यह भूलना नहीं ।"

(प.पृ.७८४)

अगास आश्रम को दिए गए अनेक विशेषण

पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने आश्रम से लिखे प्रत्येक पत्र के शीर्षक में आश्रम का अद्‌भुत माहात्म्य गाया है । उनमें से दृष्टांत के रूप में कुछ अवतरण 'पत्रसुधा' में से यहाँ दे रहे हैं ।

"तीर्थ शिरोमणि कल्पवृक्ष श्रीमद् राजचंद्र आश्रम" (पत्र ४२)
"तीर्थक्षेत्र सत्शांतिधाम....."(पत्र २०६)
"तीर्थ शिरोमणि सज्जनमन विश्रामधाम....." (पत्र २३८)
"तीर्थ शिरोमणि भवदवत्रासित को शांति प्रेरक.." (पत्र २७३)
"तीर्थ शिरोमणि सद्‌विचार प्रेरक तथा पोषक..." (पत्र ३७९)
"तीर्थ शिरोमणि सत्संगधाम, भक्तिवन....." (पत्र १०१०)
"तीर्थ शिरोमणि सत्संगधाम समाधिमरणप्रेरक.." (पत्र १०२४)

*"श्री सद्गुरु भक्ति रहस्य"

(भक्ति के बीस दोहे - अर्थ सहित)

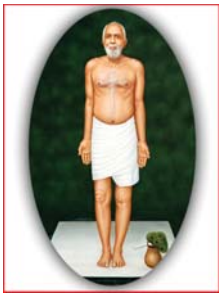

हे प्रभु ! हे प्रभु ! शुं कहुं दीनानाथ दयाळ;
हुं तो दोष अनंतनुं, भाजन छुं करुणाळ। १

हे प्रभु बोलते ही कृपालुदेव की तरफ दृष्टि जानी चाहिए। दीन और अनाथ मिलकर दीनानाथ हुआ है। दीन और अनाथ के प्रति दया रखनेवाले हे प्रभु ! आपको मैं क्या कहुँ ? हे भगवान ! मैं तो अनंत दोषों का पात्र हूँ।

शुद्धभाव मुजमां नथी, नथी सर्व तुजरूप;
नथी लघुता के दीनता, शुं कहुं परमस्वरूप ? २

क्षायिक समकित की प्राप्ति के पश्चात् कृपालुदेव ने यह प्रार्थना लिखी है। शुद्धभाव यह एक बहुत श्रेष्ठ गुण है। **"वीत्यो काल अनंत ते, कर्म शुभाशुभ भाव।"** अनंत काल से जीव शुभाशुभ भाव करते आया है परन्तु शुद्धभाव नहीं आया। यह शुद्धभाव लाने के लिए प्रभु की ओर दृष्टि करके उनके स्वरूप का विचार करना। लघुता अर्थात् अल्पभार (हलकापन) जिस पर आरंभ परिग्रह का भार न हो। दीनता अर्थात् **"सत्पुरुष में ही परमेश्वर बुद्धि, इसे ज्ञानियों ने परम धर्म कहा है। और यह बुद्धि परम दीनता को सूचित करती है।"** (वचनामृत पत्र २५४) ऐसा लघुत्व और दीनत्व भाव मुझमें नहीं है। हे भगवान ! मैं परम स्वरूप को क्या कहूँ ?

नथी आज्ञा गुरुदेवनी, अचल करी उर मांही;
आप तणो विश्वास दृढ़, ने परमादर नाहीं। ३

ऊपर कहा गया परमस्वरूप कैसे समझ में आए ? तो कहते हैं, सद्गुरु की आज्ञा से। सद्गुरु की ऐसी आज्ञा मैंने मेरे हृदय में अचलरूप से धारण नहीं की। सद्गुरु की आज्ञा राग-द्वेष न करने की है। ऐसी आज्ञा कब धारण होगी ? जब प्रभु के प्रति आदर और विश्वासभाव आये तब। अैसा आप प्रभु के प्रति आदर और विश्वासभाव भी मुझमें नहीं है।

जोग नथी सत्संगनो, नथी सत् सेवा जोग;
केवळ अर्पणता नथी, नथी आश्रय अनुयोग। ४

सद्गुरु के प्रति विश्वास और आदरभाव आये उसके लिए सत्संग की आवश्यकता है। ऐसे सत्संग का योग भी मुझे नहीं है। आपकी सेवा का भी मुझे योग नहीं है। सेवाभाव लाने के लिए अर्पणता की जरूरत है। ऐसी अर्पणता भी मुझमें नहीं है। अर्पणता प्राप्त करने के लिए अनुयोग का आश्रय लेना है। ऐसे आश्रय का भी मुझे योग नहीं है। (प्रथमानुयोग अथवा धर्मकथानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग ये चार अनुयोग कहलाते हैं।)

हुं पामर शुं करी शकुं ? एवो नथी विवेक;
चरण शरण धीरज नथी, मरण सुधीनी छेक। ५

मैं पामर हूँ, कुछ कर नहीं सकता; ऐसा विवेक मुझमें नहीं है। पामर का अर्थ है कि मैं कुछ नहीं जानता, अधम हूँ। ऐसा विवेक कैसे आए ? आपके चरणकमल के आश्रय का धीरज, मृत्युपर्यंत हो तो विवेक आए। क्षण क्षण में वृत्तियाँ पलटती हैं तो फिर विवेक कहाँ से आए ? मृत्युपर्यंत तेरी शरण में ही रहूँ, ऐसा भाव हो तब विवेक की प्राप्ति होती है। ऐसा धीरज मुझ में नहीं है।

अचिंत्य तुज माहात्म्यनो, नथी प्रफुल्लित भाव;
अंश न एके स्नेहनो, न मळे परम प्रभाव। ६

आपके माहात्म्य का मुझे उल्लासित भाव नहीं है। ऐसे उल्लसित भाव के लिए आपके प्रति जैसे स्नेह की आवश्यकता है, वैसा स्नेह अंश मात्र भी मुझमें नहीं है। आप पर स्नेह किस तरह से हों ? तो कहते है : परम प्रभाव हो तो। प्रभाव अर्थात् गौतम स्वामी जब महावीर स्वामी के पास आये थे तब बहुत अहंकार से भरे हुए मानों महावीर स्वामी से लड़ने के लिए ही आए हों ऐसा लगता था। परन्तु जब भगवान के समीप पहुँचे तब सारे गलत भाव चले गये; और सत्य मार्ग को पकड़ लिया। यह पुरुष प्रभाव कहलाता है। ऐसे परम प्रभाव की भी अनुभूति मुझे नहीं मिली कि जिससे सद्गुरु के प्रति स्नेह उत्पन्न हो।

* पू. श्री ब्रह्मचारीजीने सुमेरभाईको समझाने के लिये ये अर्थ किये थे। जिसकी नोंध सुमेरभाई ने की थी। ये अर्थ पूज्यश्रीजी के द्वारा छान-बीन किये हुये है।

अचलरूप आसक्ति नहि, नहीं विरहनो ताप;
कथा अलभ तुज प्रेमनी, नहि तेनो परिताप।७

आपके अचलरूप में मेरा मन नहीं लगता। आप पर मुझे आसक्ति नहीं। सद्गुरु के वियोग का मुझे दुःख नहीं लगता और उसका खेद भी नहीं होता। आपके प्रेम की कथा भी मुझे लभ्य नहीं होती। इसके बावजूद उसका खेद या दुःख भी नहीं लगता।

एकबार प्रभुश्रीजी का चातुर्मास खंभात में था। तब परमकृपालुदेव खंभात से तीन गाउ दूर राळज गाँव में विराजमान थे। सभी मुमुक्षु वहाँ जाकर दर्शन करते और प्रशंसा करते। प्रभुश्रीजी को भी दर्शन करने की तीव्र अभिलाषा उत्पन्न हुई। किन्तु चातुर्मास में मुनियों को बाहर जाने की अनुमति नहीं होती। इस कारण से वे मन से बहुत व्यथित थे। एक दिन चलते-चलते परमकृपालुदेव जिस गाँव में थे, उस राळज गाँव के बाहर तालाब के पास आकर खड़े रहे। फिर किसी के द्वारा कहलवाया कि जाकर अंबालालभाई से कहना कि वो मुनि आए हैं। अंबालालभाई को किसी ने कहा इसलिए वे गाँव के बाहर आये और पूछा - आप आज्ञा के बगैर कैसे आ गए? तब प्रभुश्रीजी ने कहा कि आज्ञा लेने के लिए ही यहाँ खड़ा हूँ। फिर श्री अंबालालभाई ने परमकृपालुदेव के पास जाकर सारी हकीकत बताई। परमकृपालुदेव ने संदेश भेजा कि - 'आपको हमारा दर्शन किये बगैर यदि शांति होती है तो वापस चले जाएँ और नहीं होती है तो मैं वहाँ आता हूँ।" प्रभुश्रीजी ने विचार किया कि भले दर्शन न हों परन्तु मुझे परमकृपालुदेव को यहाँ आने का कष्ट तो नहीं देना है। एसे सोचकर वापस लौट गये। जाते जाते बहुत खेद हुआ कि मेरे कैसे अंतराय कर्म है कि सबको परमकृपालुदेव के दर्शन होते हैं और मुझे नहीं होते। परमकृपालुदेव ने सब जानकर अगले दिन श्री सौभागभाई को वहाँ भेजा। श्री सौभागभाई को देखकर प्रभुश्रीजी को बहुत हर्ष हुआ। श्री सौभागभाई ने कहा कि आपको बहुत खेद हो रहा है इसलिए मुझे भेजा है। अब यह मंत्र 'सहजात्मस्वरूप परमगुरु' का स्मरण करना। प्रभुश्रीजी को मंत्र मिलने के बाद शांति हुई। ऐसा विरह का खेद हो, तब सद्गुरु के अचलरूप में आसक्ति होती है।

भक्तिभार्ग प्रवेश नहि, नहीं भजन दृढ़ भान;
समज नहीं निज धर्मनी, नहि शुभ देशे स्थान।८

भक्तिमार्ग में निरंतर रहने जैसा है। सर्वज्ञ ने जो भक्ति का मार्ग बताया है ऐसे मार्ग में मेरा प्रवेश भी नहीं, ऐसे भाव कब होंगे? तो कहते हैं : तेरा भजन में दृढ़ भान हो तब।

परन्तु ऐसा दृढ़ भान भी मुझे नहीं। मेरा धर्म क्या है, उसकी भी मुझे समझ नहीं है। मेरा धर्म अर्थात् जिनेश्वर भगवान ने बताया है, वह जैनधर्म या आत्मा का धर्म। ऐसा धर्म कहाँ उपलब्ध हो? शुभ देश में स्थान हो तो। ऐसा स्थान भी मुझे प्राप्त हुआ नहीं है।

काळदोष कळिथी थयो, नहि मर्यादा धर्म;
तोय नहीं व्याकुळता, जुओ प्रभु मुज कर्म।९

काल बहुत खराब एवं दुषम है। ऐसे काल में मुझे सत्धर्म की प्राप्ति नहीं हुई; और यदि हुई है तो उसकी मर्यादा नहीं है, ऐसा होते हुए भी मन में कोई व्याकुलता नहीं होती। हे प्रभु! मेरे कर्मों को तो देखो? कैसे अहितकारी हैं। मन में व्याकुलता हो तो धर्म की और श्रद्धा उत्पन्न हो।

सेवाने प्रतिकूळ जे, ते बंधन नथी त्याग;
देहेन्द्रिय माने नहीं, करे बाह्य पर राग।१०

जो सेवा में प्रतिकूल है ऐसे बंधन के कारणों का भी मुझे त्याग नहीं। सेवा भाव करना हो तो इन्द्रियों को वश में करना चाहिए। परन्तु ये इन्द्रियाँ तो मानती ही नहीं, और बाह्य पदार्थों पर राग करती है। तो सेवाभाव कहाँ से आए? सेवाभाव से कल्याण होता है। **'पर प्रेम प्रवाह बढे प्रभुसें, सब आगम भेद सुउर बसे; वह केवलको बीज ग्यानि कहे।'** ऐसा प्रेम प्रभु के प्रति हो तो आत्मा का कल्याण होता है।

तुज वियोग स्फुरतो नथी, वचन नयन यम नाहीं;
नहि उदास अनभक्तथी; तेम गृहादिक मांहि।११

तुझ पर प्रेम आया हो तो विरह का वेदन होवे और वियोग अंकुरित होवे। परन्तु ऐसा खेद मुझे नहीं होता अथवा तेरा वियोग भी मनमें स्फुरता नहीं। वचन का और नयन का भी कोई संयम रक्खा नहीं है। अनभक्त अर्थात् जो भक्त नहीं है उनसे उदासीन भाव एवं वैसे ही गृहादिक कार्यों में भी उदासीन भाव नहीं होता।

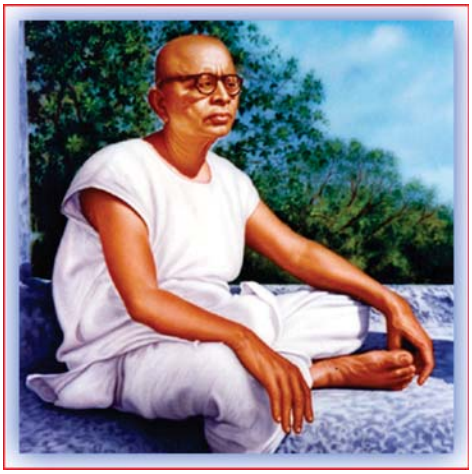

अहंभावथी रहित नहि, स्वधर्म संचय नाहीं;
नथी निवृत्ति निर्मळपणे, अन्य धर्मनी कांई।१२

देह, स्त्री, पुत्रादि ये सब मेरे हैं, जीव ऐसा मान कर बैठा है। इसलिए अहंभाव नहीं जाता। जो मेरा नहीं है उसे मेरा मान बैठना यह अहंभाव है। हे प्रभु! ऐसे अहंभाव से मैं रहित नहीं हूँ। स्वधर्म मतलब आत्मधर्म का भी संचय नहीं है। स्वधर्म का संचय हो तो अहंभाव की मंदता होवे, परन्तु ऐसा हुआ नहीं और अन्य धर्मों के प्रति भी मेरी निवृत्ति निर्मलतापूर्वक नहीं। अन्य धर्म अर्थात् जैन अथवा आत्मधर्म सिवाय के धर्म।

एम अनंत प्रकारथी, साधन रहित हुंय;
नहीं एक सद्गुण पण, मुख बतावुं शुंय?१३

ऐसे अनेक प्रकार के विचार किए परन्तु मुझे सत्साधन नहीं मिला। मैं साधन रहित ही रहा। मुझमें एक भी सद्गुण नहीं है। किस तरह आपको मेरा मुख दिखाऊँ, शर्म आती है। इतने दोष भरे हुए हैं कि मैं कह नहीं सकता।

केवळ करुणामूर्ति छो, दीनबंधु दीनानाथ;
पापी परम अनाथ छुं, ग्रहो प्रभुजी हाथ।१४

हे सर्वज्ञ भगवान! आप केवल दया की मूर्ति हो, दीन के बंधु और नाथ हो। मैं महापापी हूँ और परम अनाथ हूँ। मेरा हाथ पकड़कर मुझे पार कराओ! 'हाथ पकड़ना' अर्थात् क्या? क्या सद्गुरु हाथ पकड़ने आते हैं? 'ग्रहो प्रभुजी हाथ' अर्थात् मुझे बोध देकर मेरी मिथ्या मान्यता दूर हो ऐसा करो। मैं डूब रहा हूँ अतः बोधरूपी हाथ से थामकर - मुझे पकड़कर बाहर निकालो।

अनंतकाळथी आथड्यो, विना भान भगवान;
सेव्या नहि गुरु संतने, मुक्युं नहीं अभिमान।१५

हे प्रभु मैं अनंतकाल से इस संसार में भ्रमण कर रहा हूँ और चार गति में भटक रहा हूँ, मुझे कुछ भान नहीं है। बिना भान के अनंतकाल से भटकता आया हूँ। भान कैसे आए? संत की सेवा करे तो, परन्तु मैंने तो गुरु या संत की सेवा भी नहीं की है। उनकी आज्ञा का पालन नहीं किया; और इसके अलावा अभिमान भी नहीं छोड़ा।

संत चरण आश्रय विना, साधन कर्या अनेक;
पार न तेथी पामियो, ऊग्यो न अंश विवेक।१६

हे प्रभु! मैंने संत चरण अर्थात् सद्गुरु के आश्रय बगैर अनेक साधन किये परन्तु उससे कुछ पार नहीं पाया। एक अंश मात्र भी विवेक जागृत नहीं हुआ।

सहु साधन बंधन थयां, रह्यो न कोई उपाय;
सत् साधन समज्यो नहीं, त्यां बंधन शुं जाय?१७

हे प्रभु! जितने साधन किए उनसे बंधन ही हुए। अब मुझे कोई उपाय नहीं सूझता। जब तक सत् साधन को मैंने समझा नहीं तब तक बंधन किस तरह जाए? सद्गुरु के सिवाय सही मार्ग बताने वाला कोई नहीं। सद्गुरु के कहे अनुसार ही चलना योग्य है।

प्रभु प्रभु लय लागी नहीं, पड्यो न सद्गुरु पाय;
दीठा नहि निज दोष तो, तरिये कोण उपाय?१८

निरंतर मन में 'प्रभु प्रभु' ऐसी लगन लगे तब मुमुक्षुता ही नहीं, मोक्ष भी प्रकट होता है। बनारसीदास ने लिखा है कि, **'भालसो भुवन वास, काल सो कुटुंब काज।'** अर्थात् जिसे प्रभु की लगनी लगी है उसे फिर गृहस्थाश्रम शूल समान लगता है और कुटुंब कार्य काल जैसा लगता है। उसे ही सर्वज्ञ 'तीव्र मुमुक्षुता' कहते हैं। ऐसी पवित्र लगनी लगी नहीं और सद्गुरु का चरणस्पर्श भी अंतःकरण से नहीं किया। जब तक स्वदोष न देखें तब तक सब व्यर्थ है। स्वदोष देखे बिना कैसे तिर सकते हैं?

अधमाधम अधिको पतित, सकल जगतमां हुंय;
ए निश्चय आव्या विना, साधन करशे शुंय?१९

सकल जगत में मैं अधमाधम हूँ, पतित हूँ, जब तक ऐसा निश्चय मन में ना होगा, तब तक है जीव! तू क्या साधन करेगा? स्वदोष देखे बिना सब विपरीत है।

पडी पडी तुज पदपंकजे, फरी फरी मांगु ए ज;
सद्गुरु संत स्वरूप तुज, ए दृढ़ता करी दे ज।२०

उपर की १९ गाथाओं का सारांश भी इसमें आ गया है। भगवान को अंत में प्रार्थना करता है कि हे प्रभु! तेरे चरणकमल में बारबार नमस्कार करके पुनः पुनः यही माँगता हूँ कि सद्गुरु, संत और तेरे स्वरूप की मुझे दृढ़ श्रद्धा हो, उसकी प्राप्ति हो।

*कैवल्य बीज शुं ?

(अर्थ सहित)

(त्रोटक छंद)

यम नियम संजम आप कियो,
पुनि त्याग बिराग अथाग लह्यो,
वनवास लियो, मुख मौन रह्यो,
दृढ़ आसन पद्म लगाय दियो।१

यम : अर्थात् क्या ? और वे कितने हैं ? कोई व्रत जीवनपर्यंत के लिये लेने में आए उसे यम कहते हैं। यम पाँच है - अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ।

नियम : भी पाँच कहलाते है - शौच, संतोष, तप, सज्झाय और ईश्वरध्यान । (१) शौच -लोभ न हो वह । आत्मा को मलिन करनेवाला लोभ है । बाहर से शरीर की पवित्रता रखें वह बाहर की शौच । मन में राग-द्वेष न होने दें वह अभ्यंतर शौच । (२) संतोष अर्थात् लाभ हो उससे प्रसन्न न हों और हानि हो तो शोक न करें । (३) तप अर्थात् कि मन के कहे अनुसार वर्तन न करें परन्तु उसका सामना करें । (४) सज्झाय अर्थात् शास्त्रों का विचार करने के लिये स्वाध्याय करें । (५) ईश्वरध्यान अर्थात् भगवान को भूलें नहीं । एक भगवान में ही लक्ष्य रखें; खाने-पीने से पूर्व भगवान का स्मरण करें । ये पाँच नियम कहलाते हैं ।

संयम : पाँच इंद्रियाँ तथा मन को जीतें और छ:काय जीवों की रक्षा करे, ऐसे बारह प्रकार का संयम हैं । संयम में स्वदया और परदया का पालन करें । कृपालुदेव ने 'अपूर्व अवसर' में कहा है कि 'सर्व भाव थी औदासीन्य वृत्ति करी, मात्र देह ते संयम हेतु होय जो ।' सर्व भावों से विराम पानेरूप संयम है । बाहर भटकती वृत्तियों को रोकना वह भी संयम है । वैराग्य हो तब ऐसा संयम होता है ।

ये सभी यम, नियम, संयम जीव ने **'आप कियो'** अर्थात् स्वच्छंद से किये हैं, अथवा अज्ञानी के आश्रय में किये है । स्वयं की इच्छा से करें अथवा अज्ञानी की आज्ञा से करें तो कोई लाभ नहीं होता ।

त्याग अर्थात् क्या ? **"आत्मपरिणाम से अन्य पदार्थ के तादात्म्य अध्यास से निवृत्त होना, उसे श्री जिनेन्द्र त्याग कहते हैं ।"** श्रीमद् राजचंद्र । तादात्म्य अर्थात् देह को आत्मारूप मानना, देह ही आत्मा है ऐसा मानना । ऐसे अध्यास का त्याग ही सच्चा त्याग है । भगवान ने इसे त्याग कहा है । परन्तु जीव ने ऐसा त्याग नहीं किया । स्वच्छंदी बनकर बाह्य त्याग आदि किया है । यदि सही त्याग किया होता तो संसार में होता ही नहीं ।

विराग अर्थात् क्या पाँच इंद्रियों के विषयों की आसक्ति का त्याग वह वैराग्य है । हो सके उतना त्याग करे और जो छूटता नहीं उसके प्रति वैराग्य रखें । शरीर के प्रति वैराग्य रखें, आसक्ति छोड़ें, ममता न करें । देह वह मैं नहीं, आवश्यकता अनुसार वस्तु रखें परन्तु आसक्ति न होने दें, यह वैराग्य है । परन्तु जीव ने सच्चा वैराग्य नहीं किया । समझ न हो तब तक वैराग्य नहीं, परन्तु द्वेष है । वनवास लिया अर्थात् जहाँ बस्ती न हो ऐसे जंगल में रहा । मुख से मौन रहा अर्थात् किसी से बोला नहीं । निरंतर मौन धारण किया । पद्मासन लगाकर भी बैठ गया । इन सभी साधनों को जीव ने स्वच्छंद से अनेक बार किया है ।

मन पौन निरोध स्वबोध कियो,
हठ जोग प्रयोग सु तार भयो,
जप भेद जपे, तप त्यौंहि तपे,
उरसेंहि उदासी लही सबपें।२

मन अर्थात् मन और पौन अर्थात् पवन = श्वासोच्छ्वास । मन को दूसरे कहीं जाने न दिया और श्वासोच्छ्वास को रोका । मन का निरोध किया परन्तु वह यथार्थ न था । मन को वास्तविक रूप से जाना नहीं, परन्तु उसका दमन किया। मन का स्वरूप क्या है यह जाने बिना किया । कब ये मुझे धोखा देगा, उसकी जानकारी नहीं । **हठयोग** अर्थात् काया, वचन और मन को रोकना, जबर्दस्ती वश में करना । स्वयं को शिक्षा देता है कि पाप करेगा तो नर्क में जाना पड़ेगा । इसलिए पाप नहीं करुँगा । यह **स्वबोध** है । ये सभी प्रयोग जीव ने स्वच्छंद से किये हैं । उसी में तल्लीन हो गया । ये मुझे करना ही है, हठयोग से ऐसा निश्चय कर एकतार हो गया । जप के अनेक भेद हैं, वे सब किये । तप भी किया । जैसे कोई पहले दिन चावल का एक दाना खाए, फिर दूसरे दिन दो दाने खाए, ऐसे करते करते पेट भर जाए तब एक एक दाना कम करने लगे । ऐसे अनेक तप किये है । मन से सर्व बाह्य पदार्थों के प्रति **उदासीनता** से रहा। किसी से बातचीत नहीं की । अकेले घूमता रहा । इस तरह अनेक प्रकार से उदासीनता रखी । ऐसा जीव ने बहुत किया है । परन्तु सब **'आप कियो'** अर्थात् स्वयं की इच्छा से स्वच्छंद से किया ।

* पू. ब्रह्मचारीजी ने श्री सुमेरभाईजी को समझाने लिये यह अर्थ किया था जिसका सुमेरभाई ने नोंध कर लिया था । पूज्यश्री ने इस पर एक नज़र डाली हुयी है ।

सब शास्त्रनके नय धारि हिये,
मत मंडन खंडन भेद लिए,
वह साधन बार अनंत कियो,
तदपि कछु हाथ हजु न पर्यो।३

सर्व शास्त्रों को उनके नयपूर्वक, प्रमाण सहित सीख लिया। पंडित हो गया, वाद विवाद किया। अन्य मतों का खंडन मंडन किया। यह धर्म सच्चा है, यह झूठा है, ऐसे भेद किया। अनंत बार ऐसे साधन किए फिर भी जीव ने मोक्षमार्ग प्राप्त नहीं किया। सब किया परन्तु जन्म-मरण से नहीं छूटा।

अब क्यौं न बिचारत है मनसें,
कछु और रहा उन साधनसें?
बिन सद्गुरु कोय न भेद लहे,
मुख आगल हैं कह बात कहे?४

इतना-इतना स्वयं की इच्छा से किया फिर भी कुछ हाथ न आया। तब ज्ञानीपुरुष इस जीव को संबोधित करते हुए कहते हैं कि मनुष्य भव मिला है तो मन से क्यों विचार नहीं करता कि ऊपर बताये हुए साधनों से भिन्न कुछ और करने जैसा है? **सद्गुरु के बिना कितनी भी माथापच्ची करें तो पार नहीं पड़े ऐसा है।** सद्गुरु मिलें तो आत्मा पास में ही है। दृष्टि बदलनी है। देह को देखता हैं इसके बदले आत्मा को देखने की दृष्टि करनी है। सद्गुरु के बिना ऐसी दृष्टि नहीं होती। जीव समझे तो सहज है, नहीं तो अनंत उपाय से भी हाथ आए नहीं, ऐसा आत्मा है। ज्ञानी कहते हैं परन्तु पकड़े कौन? सद्गुरु के बिना काम हो ऐसा नहीं है। सद्गुरु मिलें तो ही आत्मा समझ में आता है। इसके बिना रहस्य जानने में आए ऐसा नहीं है। 'जब जागेंगे आत्मा तब लागेंगे रंग', सच्चा गुरु तो स्वयं का आत्मा ही है। वह जब जागेगा तब काम होगा। स्वयं अपना शत्रु बनकर वर्तन करता है, उसके बदले स्वयं अपना मित्र बनकर वर्तन करेगा तो काम आएगा। अनाथी मुनि ने श्रेणिक से कहा था कि अपना आत्मा ही नंदनवन समान है; और अपना आत्मा ही नरक में ले जानेवाला है। अपना आत्मा ही मित्र और अपना आत्मा ही शत्रु है। यही कर्म करनेवाला है और यही स्वयं को मोक्षमें ले जानेवाला है। चाबी गुरुदेव के हाथ में है। मान लें तो काम हो जाए।

करुना हम पावत है तुमकी,
वह बात रही सुगुरु गमकी,
पलमें प्रगटे मुख आगलसें,
जब सद्गुरुचर्न सुप्रेम बसें।५

ज्ञानी पुरुषों को संसारी जीवों के प्रति करुणा आती है। जीव का कल्याण सद्गुरु के निमित्त से है। जब सद्गुरु की आज्ञा के प्रति प्रतीति अथवा प्रेम हो जाए तो आत्मा पल में प्रकट हो जाए ऐसा है। सद्गुरु की आज्ञा के प्रति जितना प्रेम हुआ उतना जीव योग्य हुआ। प्रेम हो तो आज्ञा मानने में आती है।

तनसें मनसें धनसें सबसें,
गुरुदेव की आन स्वआत्म बसें;
तब कारज सिद्ध बने अपनो,
रस अमृत पावहि प्रेम घनो।६

तन, मन, धन और दूसरे सभी बाह्यांतर पदार्थों के उपरसे ममता छोड़कर एक सद्गुरु की आज्ञा को जो आत्मा में धारण करे तो कार्य सिद्ध हो जाए, अमृत रस प्राप्त कर ले। देहादि में प्रेम छोड़े तो अमृत रस जैसा अखूट प्रेम प्राप्त कर ले।

वह सत्य सुधा दरशावहिंगे,
चतुरांगुल हे दृगसे मिलहे,
रस देव निरंजन को पिवही,
गहि जोग जुगोजुग सो जीवही।७

सद्गुरु के प्रति प्रेम हो तो सत्य सुधारस समझ में आता है। वह स्वयं के पास ही है। दृष्टि पड़नी चाहिए। सम्यक्दृष्टि हो जाए तो आत्मा पास में ही है। **'परम निधान प्रगट मुख आगले, जगत उल्लंघी हो जाय जिनेश्वर।'** (आनंदघनजी) मुख के पास ही है उसे छोड़ कर पुद्गल में जाता है। **'सत् कुछ दूर नहीं है, परन्तु दूर लगता है।'** अंतर-आत्मा होकर परमात्मा को भजे तो स्वयं परमात्मा हो जाए, निरंजन रस को प्राप्त कर ले। फिर आत्मा की मृत्यु नहीं होती। अमर हो जाए अर्थात् मोक्ष प्राप्त कर ले। दुःख से निवृत्त हो जाए।

पर प्रेम प्रवाह बढ़े प्रभुसें,
सब आगमभेद सुउर बसें,
वह केवलको बीज ग्यानि कहे,
निजको अनुभौ बतलाई दिये।८

उपर का समस्त सार इस गाथा में आ गया है। सर्व पदार्थों के उपर से प्रेम हटाकर एक प्रभु के प्रति परम प्रेम हो जाय तो सर्व आगमों का ज्ञान, बिना पढ़े ही हो जाता है। **'मन महिलानुं रे वहाला उपरे, बीजा काम करंत; तेम श्रुत धर्मे रे मन दृढ़ धरे, ज्ञानक्षेपकवंत।'** यह तो एक सामान्य दृष्टांत है। इससे भी **अनंतगुना अधिक प्रेम आना चाहिए।** सभी आगम इस बात के साक्षीरूप हैं। प्रेमरूपी अग्नि लगे तो सारे कर्म जल जाएँ। पराभक्ति यह केवलज्ञान का बीज़ है। **'प्रभु भक्ति त्यां उत्तम ज्ञान।'**

(श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत का वांचन करते श्री देवशीभाई रणछोड़भाई कोठारी को जो भी प्रश्न उद्‌भव होते उनका समाधान पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के पास से करते थे। यहाँ उनके नोंध परसे संक्षिप्त सारांश दिया गया है। यहाँ मुख्यरूप से शब्दों के भावार्थ ही लिए गए हैं। वचनामृतजी के मूल लेखन को नीचे गाढ़े अक्षरों में तथा पू. श्री ब्रह्मचारीजी के किये हुए विवेचन को सादे अक्षरों में लिया गया है।

पत्र ४० - विशाल बुद्धि : विचारक बुद्धि। जीव वर्तमान काल का अपूर्ण विचार करके वर्तन करता है, वह ऐसा देहदृष्टिवाला संकुचित है। वह नहीं, किन्तु तीनों काल का - भूत, भविष्य और वर्तमान का विवेक करनेवाला, विवेक बुद्धिध्वाला, आत्मविचारक दृष्टिवाला। वर्तमान में मतिज्ञान अल्प हैं, किन्तु श्रुतज्ञान विशाल है।

"बुद्धि क्रिया भवफल दीअेजी, ज्ञानक्रिया शिवअंग;
असंमोह किरिया दीअेजी, शीघ्र मुक्तिफल चंग।"

मध्यस्थता : पक्षपातरहित बुद्धिवाला। ग्रहण-त्याग का विवेक सहित बुद्धिवाला।

सरलता : मायाकपट रहित, जो मन में है वैसा ही कहने वाला, वर्तन करने वाला। मन में कुछ तथा वर्तन में कुछ और, ऐसा नहीं, मन-वचन-काया का विरोध न हो, सरल हृदयी होना। वक्रता नहीं, स्वार्थ-मायाकपट से रहित।

जितेन्द्रियता : मोक्षमाला में पाठ ६८वाँ जितेंद्रियता के बारे में है उसे देखें।

"इंद्रियदमनकुं स्वाद तज, मनदमनकुं ध्यान।"

जितमोह, क्षीणमोह के लिए समयसार में द्रव्येंद्रिय और भावेंद्रिय का स्वरूप दिया है वह देखें।

पत्रांक ५४ - मार्ग के मर्म को पाए बिना : देहाध्यास छूटना वह मर्म है।

"छूटे देहाध्यास तो, नहि कर्ता तुं कर्म;
नहि भोक्ता तुं तेहनो, ए ज धर्मनो मर्म।"

जितना देहाध्यास छूटता है उतना मर्म समझ में आता है।

श्री महावीर जिस मार्ग से तिरे उस मार्ग से श्रीकृष्ण तिरेंगे...वह रास्ता अथवा मार्ग कौन सा ? : ज्ञानीपुरुष की आज्ञारूप मार्ग। 'आणाए धम्मो, आणाए तवो।'

वे आत्मत्व अर्पण करेंगे - उदय क देंगे - तभी वह प्राप्त होगा : सत्पुरुष उस आत्मत्व को अर्पण करेंगे, उदय देंगे, तभी वह प्राप्त होगा। सत्पुरुष के बिना मार्ग नहीं।

पत्र १०३ - एकांतवास से जितना संसार क्षय होने वाला है : त्यागी अवस्था से, सर्वसंग-परित्याग से, असंग-अप्रतिबद्ध दशा से।

अल्पपरिचयी : कम आना-जाना-किसी किसी समय, बिना प्रयोजन जाना नहीं।

अल्प सत्कारी : विशेष हावभाव सहित किसी को सत्कार या मान देना नहीं। सामान्य रूप से योग्य समझ से बर्ताव करना।

अल्पभावना बताना : विशेष मायिक भावना नहीं दर्शाना, जैसे कि माया से-प्रेम से रोना, उदास होना, झूठी माया-ममता दिखाना। ऐसा करना नहीं।

अल्प सहचारी : गहरी मित्रता नहीं ऐसा।

अल्पगुरु : महत्ता नहीं, बड़प्पन नहीं दिखाना, गर्व न करना।

पत्र १७६ - अलख 'लय' में आत्मा से समावेश हुआ है : निर्विकल्प समाधि में।

अवधूत हुए हैं : असंग हुए हैं।

पत्र १८० अमरवरमय ही आत्मदृष्टि हो जाएगी : अभेदभाव हो जाएगा, प्रभु प्रभु की लय लग जाएगी।

राम हृदय में बसे हैं : सम्यक्‌दर्शन सहित आत्मा।

अनादिके दूर हुए हैं : आवरण दूर हुए हैं।

सुरति इत्यादिक खिले हैं : जागृतिमय आत्मलीनता की प्रसन्नता।

पत्र १९७ - सुधाकी धाराके पीछे कितने ही दर्शन हुए हैं : मुख से जो सुधा रस बरस रहा है वह उपयोग की स्थिरता के लिए है। इसके बाद आत्मदर्शन होता है।

पत्र २१० - सबको इतना ही अभी तो करना है कि पुराने को छोड़े बिना तो छूटकारा ही नहीं है; और वह छोड़ने योग्य ही है ऐसा दृढ़ करना : सत्पुरुष को मिलने से पहले ही जो मान्यता है उसे विस्मृत करना । सत्पुरुष का कहा हुआ मान्य करना । लौकिक भाव निकाल देना ।

दूसरा अर्थ : अगृहित मिथ्यात्व है वह पुराना है अर्थात् अनादिकाल से चला आ रहा है उसे छोड़ देना ।

पत्र २४७ - जो रस जगत का जीवन है; कौन सा रस ? चैतन्य ।

पत्र २७१ - ऐसा एक ही पदार्थ परिचय करने योग्य है...वह कौन सा है ? : सत्संग ।

किस प्रकार से हैं ? : छूटने के प्रकार से ।

पत्र २८७ - एक से अनंत है; और जो अनंत है वह एक है : एक है वह अनंत से भिन्न नहीं है । अनंत गुणों का समूह वह आत्मा । आत्मा के आधार से है । **''अेगं जाणई सो सव्वं जाणई ।''** द्रव्यदृष्टि से एक और पर्यायदृष्टि से अनंत ऐसे अलग-अलग कई पहलू हैं ।

पत्र २८८ - नही ंतो सब कुछ नया ही है, और सब कुछ पुराना ही है : इनके लिए तो सब समान है । द्रव्य की अपेक्षा से पुराना है, पर्याय की अपेक्षा से नया है । सोने का दृष्टांत - सोना एक, परन्तु भिन्न-भिन्न आकार से नयी नयी पर्याय होती है ।

पत्र ३०५ - किसी भी प्रकार का दर्शन हो उसे महापुरुषों ने सम्यक्ज्ञान माना है ऐसा नहीं समझना है : कुछ प्रकाश आदि नजर आए तो वह सब कल्पित है, सम्यक्ज्ञान नहीं ।

पदार्थ का यथार्थ बोध प्राप्त हो : वास्तविक आत्मा की पहचान हो वह ।

पत्र ३४० - जो दो कारण हैं उनकी प्राप्ति के बिनाजीव को अनंतकाल से भटकना पड़ा है, जिन दो कारणों की प्राप्ति से मोक्ष होता है । वे कौन से ? **:** सत्पुरुष की पहचान और उनकी आज्ञा का आराधन ।

पत्र ३७१ - 'परम ऐसा जो बोधस्वरूप' अर्थात ? **:** ज्ञानीपुरुष ।

'अनंतकाल में जो प्राप्त नहीं हुआ है' वह क्या ? : समकित । वह सत्पुरुष की कृपा से होता है, सत्पुरुष में भूल नहीं होनी चाहिए । चलो, दूसरे ज्ञानी की खोज करुँ, ऐसा करुँ, वैसा करुँ - ऐसा नहीं होना चाहिए । इससे हानि है ।

पत्र ३७३ - 'मन' : मन के स्वरूप को समझना कठिन है । अलग-अलग पहलू हैं । एक नय से देखें तो आत्मा का स्वरूप या मन का स्वरूप अलग नहीं है । संकल्प-विकल्प करता है तब मन कहलाता है ।

'उसके कारण' : उसके आधार पर । आत्मा के आधार से जो जो होता है वह ।

'यह सब' : पूरा विश्व, जगत आत्मारूप जानने-देखने में आए ।

'उसका निर्णय : ज्ञानी के बगैर निर्णय नहीं होता । (जगत का, विश्व का, आत्मा का) वस्तु समझ में आए तो आत्मज्ञान होता है ।

पत्र ३७५ - 'वह बंधन क्या ? और क्या जानने से वह टूटे ?' : स्वयं जो मानता है वह सब मिथ्या (भ्रांति) है, ऐसा विचार और भेद हुए बिना, सत्य क्या है वह यथार्थ समझ नहीं आता । ज्ञानीपुरुष द्वारा भेद किए बिना यथार्थ समझ में नहीं आता । समझे बिना बंधन टूटता नहीं ।

'यथार्थ बोध' अर्थात् क्या ? : आत्मबोध । वह सत्पुरुष की भक्ति से समझ में आता है तथा सहजता से आत्मबोध होता है । **'सत्पुरुषों ने सद्गुरु की जिस भक्ति का निरूपण किया है...सहज में आत्मबोध हो'** (छ पद का पत्र)

पत्र ३७९ - 'जिसकी प्राप्ति के बाद अनंतकालकी याचकता मिटकर...उसे भजें : जिनकी प्राप्ति के बाद अर्थात् सद्गुरु की प्राप्ति होनी चाहिए । सद्गुरु के योग से वीतरागता प्राप्त होती है । सद्गुरु तरणतारण **(स्वयं तरते है और दूसरों को तार सकते है)** होते हैं । सद्गुरु के योग से निःस्पृहता तथा निष्कांक्षिता आदि समकित के योग्य गुण प्राप्त होकर समकित होता है । सद्गुरु का योग ऐसा अपूर्व है । स्वयं निःस्पृह रहकर निःस्पृह करते हैं ।

अभी तो 'निर्बल होकर श्री 'हरि' को सौंपते हैं : हरि की शरण लेते हैं । कर्म के अनुरूप स्थिति भोगते हैं, उसमें शुद्ध भाव, शुद्ध आत्मा को शरण नहीं छूटता । हे प्रभु ! तू तारना ।

मात्र आत्मरूप मौनस्थिति और उस संबंधी प्रसंग, इस विषय में बुद्धि रहती है : आत्मा में ही लीन रहना है और उस संबंधी सत्संग-प्रसंग, उसके सिवाय कुछ करना नहीं है । आत्मा में समा जाना है । किन्तु कोई पूछे तो जवाब देना पड़ता है ।

श्री देवशीभाई

पत्र ३८४ - 'और उसकी पहचान होनेपर भी स्वेच्छा से व्यवहार करने की बुद्धि वारंवार उदयमें आती है; ऐसा क्यूँ है ? पहचान पहचान में फर्क है । समकित प्राप्त होने के पश्चात् स्वच्छंद आदि दोष नहीं होते । इससे पहले पुरुषार्थ की मंदता से अन्य प्रसंगो में खींचे चले जाते हैं । किसी पुण्ययोग से सत्संग, भक्ति, प्रेम, विश्वास, श्रद्धारूपी पहचान होती है । किन्तु यह यथार्थ पहचान नहीं है । समकित होने के संयोग मिले हों फिर भी जीव आगे नहीं बढ़ सकता, अन्य रुचि-भाव में जुड़ जाता है । इसका कारण है स्वच्छंद का उदय ।

पत्र ३८८ - जगत जिसमें सोता है, उसमें ज्ञानी जागते हैं : जगत सोता है अर्थात् मूर्छित है । कल्याण के समय में असावधान है । वहाँ ज्ञानी जागते हैं, जगत के प्रति अरुचि है, किन्तु आत्मा को भूलते नहीं, जागते हैं ।

जिसमें जगत जागता है, उसमें ज्ञानी सोते हैं : जगत स्वार्थ में जागता है, ज्ञानी स्वार्थ में उदासीन हैं । जो होना हो वो हो जाय, किन्तु आत्मा को आंच नहीं आने देते ।

पत्र ३९१ - 'सत्' एक प्रदेश भी दूर नहीं है, तथापि उसकी प्राप्ति में अनंत अंतराय-लोकानुसार प्रत्येक ऐसे रहे हैं : प्रत्येक अंतराय लोकप्रमाण है और ऐसे अंतराय के कारण जीव मुक्त नहीं हुआ । अनंतकाल से ऐसे अंतराय विघ्न डालते हैं । इसलिए सत्संग आदि सुयोग प्राप्त करके सत्पुरुषार्थ करना ।

पत्र ४१३ - लोककी शब्दादि कामनाओं के प्रति देखते हुए भी उदासीन रहकर जो केवल अपने को ही स्पष्टरूप से देखते हैं, ऐसे ज्ञानी को नमस्कार करते हैं : संपूर्णलोक इच्छासहित है । उसमें रहकर ज्ञानी आत्मा को संभालते हैं । लोग पुद्गल की इच्छा करते हैं, उसके प्रति उदासीन रहकर ज्ञानी आत्मा को भूलते नहीं ।

पत्र ६०७ -

"जंगमनी जुक्ति तो सर्वे जाणीए,
समीप रहे पण शरीरनो नहीं संग जो;
एकांते वसवुं रे एक ज आसने,
भूल पड़े तो पड़े भजनमां भंग जो;
ओधवजी, अबला ते साधन शुं करे ?"

भावार्थ : ओधवजी को उनका अहंकार समझाने के लिए श्रीकृष्ण ने उन्हें गोपियों के पास भेजा । वहाँ गोपियाँ कहती हैं - हे ओधवजी ! हम तो भाव की कृपा से देहधारी साकार परमात्मा (कृष्ण) की भक्ति को, उनकी कला को और उनको पहचानते-जानते हैं । वे परमात्मा कैसे हैं ? जो कि शरीर में रहते हुए भी सर्व प्रकार से असंग, निर्लेप है

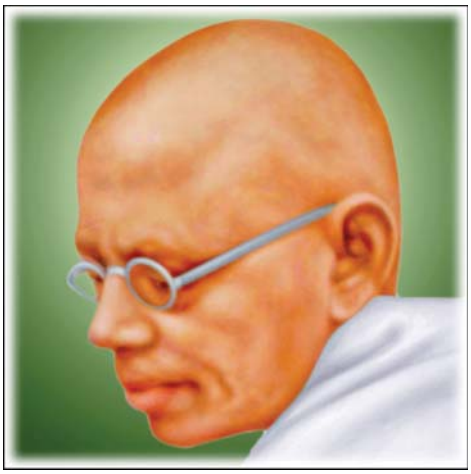

और आप तो कहते हो कि एकांतवास में रहकर, एक ही आसन लगाकर परमात्मा का ध्यान करना वह उनको पहचानने का मार्ग है । किन्तु उस मार्ग में भूल हो तो हमारे लिए तो वह भजन अर्थात् प्रभुप्रेम में भंग पड़ने समान है; यह हमसे कैसे हो ?

पत्र ६०८ - 'रांडी रुए, मांडी रुए पण सात भरतारवाली तो मोढुं ज न उघाड़े' : रांडी रुए अर्थात् जिसके गुरु नहीं है वह संसार की प्रवृत्ति में रोते है अर्थात् दुःखी है । मांडी रुए अर्थात् जिसे गुरु मिले हैं लेकिन योग्यता नहीं, जिससे मूर्छित अवस्था में रहने से कुछ नहीं कर सकते इसलिए वह भी दुःखी है, लाभ नहीं ले सकते । सात पतियों वाली तो मुँह ही नहीं खोलती अर्थात् जिसे आरंभ परिग्रहरूप व्यापक व्यवसाय है उसे तो लक्ष्य ही नहीं, तो वह परमार्थविचार करने का अवकाश ही कहाँ से लाये ? मुँह ही नहीं खोलती अर्थात् सिर भी ऊँचा नहीं कर सकते; व्यवसाय में ही एकरूप रहते है । यह सामान्य लोक कहावत है । हमें इसका परमार्थ ग्रहण करना है ।

पत्र ७७५ - 'यह जीव किस दिशा से आया है' इससे क्या समझना ? **:** एक द्रव्यदिशा और दूसरी भावदिशा । द्रव्यदिशा अर्थात् पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण तथा विदिशा । भावदिशा वह मनुष्य, देव, तिर्यंच, नारकी गतिरूप भावदिशा है । वह कहाँ से आया है ये जातिस्मृतिज्ञान से पता चलता है । यह आत्मा के हित का कारण है ।

उ.छा. (पृ.७०३) "दृढ़ निश्चय करें कि बाहर जाती हुई वृत्तियों का क्षय करके अंतर्वृत्ति करना; अवश्य यही ज्ञानी की आज्ञा है ।" ऐसा किस प्रकार हो सकता है ? **:** समकित के पश्चात् उपयोग रखने से वृत्तिक्षय होती है । परवस्तु पर से रुचि कम हो जाए, आत्मा से सब हीन, तुच्छ लगे, आत्मा से अतिरिक्त अन्य पर पदार्थों का माहात्म्य न लगे तब क्षय होती है ।

श्री राजमंदिर अगास आश्रममें उपर दिखाई दे वह पू.श्री ब्रह्मचारीजीका निवासस्थान

उ. छा. (पृ.७१२) - "इस जीव की अनादिकाल की जो भूल है उसे दूर करना है। दूर करने के लिए जीव की बड़ी से बड़ी भूल क्या है? उसका विचार करे, और उसके मूल का छेदन करने की ओर लक्ष्य रखे।" वह भूल कौन सी है और उसका मूल क्या है ? :

वासना है वही मूल है। वासना थोड़ी भी हो तो उससे और बढ़ जाती है। मूल से बढ़ने लगती है। पोषण मिले तो बढ़ती है और इसी वजह से जो भूल है वह समझ में नहीं आती। संसार की वासना है इसलिए वैराग्य उपशम बढ़ते नहीं।

मुझे किससे बंधन होता है? वासना से बंधन होता है।

उ.छा. (पृ.७२५) - "बहुत से जीव सत्पुरुष का बोध सुनते हैं, परन्तु उसे विचारने का योग नहीं बनता।" वह योग कौन सा और क्या ? : वांचन के बाद मनन योग है। मनन तथा विचार करने का अवकाश जीव लेता नहीं। वांचन के बाद उसे मनन का योग होना चाहिए; तब विचार स्फुरित होकर विचारबल बढ़ता है जिससे सत्पुरुष का बोध समझने का अवकाश प्राप्त होता है। समझ में आए वह मननयोग है।

उ. छा. (पृ.७४५) - "ज्ञानी कहते हैं उस कुँजीरूप ज्ञान का यदि विचार करे तो अज्ञानरूपी ताला खुल जाता है।" कुँजीरूप ज्ञान अर्थात् क्या ? : मूल ज्ञान। देह से भिन्न आत्मा का ज्ञान। देहमंदिर में रहे हुए आत्मा को जानना वह।

(हाथनोंध-२) (पृ.८३९) - हे काम! हे मान! हे संग-उदय! हे वचनवर्गणा! हे मोह! हे मोहदया! हे शिथिलता! आप किसलिए अंतराय करते हैं? परम अनुग्रह करके अब अनुकूल हो जायें। अनुकूल हो जायें।

इन सब को अनुकूल कैसे करना ?

उत्तर : **काम** : जितनी इच्छा, तृष्णा, कामना, वासना पांच इंद्रियों के विषयों के प्रति है उसे पलटकर परमार्थ लिये के अच्छे कार्य करना, करने की भावना रखना। **'अचलरूप आसक्ति नहीं।'** सत्पुरुष के प्रति वृत्तियों का एकाग्र होना वह काम की अनुकूलता है।

मान : मैं सत्पुरुष का शिष्य हूँ। तो मुझसे ऐसे अधम निंदा करने योग्य कार्य नहीं होने चाहिए कि जिससे मेरे सद्गुरु की निंदा हो और मैं अधम कहलाऊँ। मुझसे ऐसे अकार्य नहीं होने चाहिए। मेरा तो सद्वर्तन होना चाहिए।

संगउदय : सभी प्रकार के विभाविक बंधन का उदय मुझे न हो। मुझे तो स्वाभाविक सत्संग और परमार्थ का उदय बनो।

वचनवर्गणा : संसार बढ़ानेवाले विषय-कषाय, राग-द्वेष इत्यादि विभाविक विकथा में वचनों का उपयोग न करते हुए सत्पुरुष के गुणगान, उनकी भक्ति, भजन, वांचन, स्मरण इत्यादि में, सत्पुरुष के बोध-वचनों का स्मरण करके उन्हें बोलने में वचनवर्गणा कार्य करे।

मोह : जितना मोह संसार और संसार के कार्यों के प्रति करता है उतना मोह जीव को परमार्थ और सत्पुरुष के प्रति आया ही नहीं। सत्पुरुष के प्रति प्रेम, प्रीति, भक्ति, मोह करने से निर्मोही हो जाते हैं, क्योंकि वे स्वयं निर्मोही हैं।

मोहदया : घर के स्वजनों, परिवारवालों के प्रति दया दिखाते हैं किन्तु वहाँ मोह होता है और उसे दया कहते हैं; क्योंकि अंतरंग में स्वार्थ का मोह है इसलिए मोहसहित दया है। स्वयं को सत्पुरुष के प्रति जो श्रद्धा हुई है और परमार्थ समझ में आया है वैसी श्रद्धा कुटुंबीजनों इत्यादि सभी को हो, उनके आत्मा का हित हो। इस प्रकार की दया का चिंतवन करना वह मोहदया अनुकूल हुई कहलाती है।

शिथिलता : संसार के कार्यों में समय व्यर्थ न गंवाते हुए, उनको महत्व न देकर वहाँ शिथिलता करके परमार्थ-आत्मकल्याण के कार्यों में प्रेरित होकर पुरुषार्थ करे। वहाँ शिथिलता न करते हुए शिथिलता का सदुपयोग करे। विषयकषायों में मंदता होना वह शिथिलता अनुकूल हुई कहलाती है।

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथ पत्र ७८१ का विवेचन

(पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के अप्रकट बोध में से)

परमपुरुषदशावर्णन

"कीचसौ कनक जाकै, नीचसौ नरेशपद,
मीचसी मिताई, गरुवाई जाकै गारसी;
ज़हरसी जोग जाति, कहरसी करामाति,
हहरसी हौस, पुद्गलछबि छारसी;
जालसौ जगबिलास, भालसौ भुवनवास,
कालसौ कुटुंबकाज, लोकलाज लारसी;
सीठसौ सुजसु जानै, बीठसौ बखत मानै,
ऐसी जाकी रीति ताही, बंदत बनारसी."

पूज्यश्री - यह पत्र सोभागभाई पर लिखा गया है । सोभागभाई को सम्यक्दर्शन होने के बाद लिखा गया है । जीव सम्यक्दर्शन से शिथिल हो कर न लौटे, नीचे की स्थिति में न आए और सम्यक्त्व की दृढ़ता हो, इसलिए यह पत्र लिखा है ।

(१) **"महापुरुष कंचन को कीचड़ के समान जानते हैं ।"** अर्थात् जिस प्रकार पैर पर कीचड़ लग जाए तो कितना खराब लगता है ? वैसे ही कंचन के प्रति घृणा होनी चाहिए । वह तो पुद्गल है, उसमें क्या मोह करना ।

(२) **"राजगद्दी को नीचपद के समान समझते हैं ।"** जो राजा होते हैं वो प्राय: नरक में ही जाते हैं । यह जो राजपद है वह नरक में ले जानेवाला है । इसलिए इसको नीचपद के समान गिनते हैं । मुनियों को राजा के घर से आहार लेने का भी शास्त्र में निषेध है ।

(३) **"किसीसे स्नेह करने को मृत्यु के समान मानते हैं ।"** "क्षण क्षण भयंकर भाव मरणे, कां अहो ! राची रहो !" ऐसा परमकृपालुदेव ने कहा है । इस प्रकार किसी के साथ स्नेह करने से मरण बढ़ता है । आत्मा के लिए मरण बढ़ाने का कारण होने से स्नेह को मरण के समान कहा है ।

(४) **"बड़प्पन को लीपने की गार जैसा समझते है ।"** लीपने की गार (मिट्टी एवं गीले गोबर का लेप) के ऊपर यदि कोई चलने को कहे तो चलेगा ? नहीं चलेगी । ऐसे ही, बड़प्पन से मान आदि बढ़ने से आत्मा का हित नहीं होता । इसलिए ज्ञानीपुरुषों को जैसे-जैसे बड़प्पन प्राप्त होता है वैसे वैसे उसमें उनको बहुत लघुता (नम्रता) होती जाती है । जैसे-जैसे अधिकार बढ़ता है, वैसे वैसे उनको उसमें रुचि नहीं रहती ।

(५) **"कीमिया आदि योग को ज़हर के समान गिनते है ।"** कीमिया अर्थात् लोहे को सोना बनाना आदि कीमिया करने से भवभ्रमण के कारण बढ़ते हैं । पुद्गल पदार्थों का मोह करने से संसार बढ़ता है ।

शुभचंद्र और भर्तृहरि दोनों भाई राज्य छोड़कर चल निकले । शुभचंद्र ज्येष्ठ थे और भर्तृहरि अनुज थे । दोनों राजपुत्र थे । भर्तृहरि ने तापसी दीक्षा ली तथा शुभचंद्र ने जैन दीक्षा ली । भर्तृहरि ने तापसीदीक्षा में १२ वर्ष तक तपस्या करके लोहे का सोना बन जाए, ऐसा रस एकत्रित किया । पश्चात् उन्होंने आधी तुमडी भरकर भाई के लिए भेजी । किन्तु मुनि ने तो उस तुमडी को गिरा दिया । यह समाचार मिलते ही भर्तृहरि को बेहद दु:ख हुआ । इस कारण आधा रस जो स्वयं के पास था उसे लेकर स्वयं जहाँ शुभचंद्र मुनि ध्यान में खड़े थे, वहाँ गए और रस की तुमडी को मुनि के चरणों के पास रखकर नमस्कार कर के बैठे । ध्यान पूर्ण होते ही मुनि ने उस रस को भी पैर से ठोकर मार कर गिरा दिया । इससे भर्तृहरि को बहुत आघात पहुँचा और कहा कि "मेरी १२ वर्ष की मेहनत निष्फल गई ।" उनके मोह को दूर करने के लिए शुभचंद्र मुनि ने कहा कि "यह सोना एकत्रित करने के लिए राज्य छोड़ा था ? सोना तो राज्य में बहुत था ।" बाद में मुनि ने थोड़ी धूल उठाकर एक विशाल पत्थर पर फेंकी तो पूरा पत्थर सोने का हो गया । मुनि ने तापस से कहा कि ले यह सोना । फिर उन्होंने उसे उपदेश दिया कि "पुद्गल पर मोह नहीं करना; परन्तु आत्मा का हित करना ।" मुनि के बोध से प्रतिबोध प्राप्त कर भर्तृहरि भी जैन मुनि बने और अपनी आत्मा का हित किया ।

(६) **"सिद्धि आदि ऐश्वर्य को असाताके समान समझते है ।"** सिद्धि अर्थात् अणिमा आदि आठ प्रकार की जो सिद्धियाँ प्रकट होती हैं उन्हें परमपुरुष असाता समान गिनते हैं । जैसे हमें बुखार आ जाए तो उसकी कितनी चिंता होती है ? वैसे ही उन परमपुरुषों को सिद्धि रिद्धि प्रकट होने पर बुखार जितनी चिंता होती है कि मुझे सिद्धि रिद्धियाँ प्रकट हुई है, उसके मोह में पड़े रहने से मेरा समकित चला जाएगा, ऐसा भय निरंतर रखकर रिद्धियों एवं सिद्धियों को हावी नहीं होने देते ।

(७) **"जगतमें पूज्यता होने आदि की लालसाको अनर्थ के समान मानते है ।"** मैं लोक में पूजनीय बनकर पूजा जाउँ ऐसी भावना को परमपुरुष अनर्थ समान गिनते हैं ।

(८) **"पुद्गल की मूर्तिरूप औदारिकादि काया को राख के समान मानते है ।"** अर्थात् औदारिक, वैक्रिय आदि जो शरीर हैं वे पुद्गल से बने हैं । वे तो राख बन जाने वाले हैं, यह जानकर महान पुरुष उस शरीर में मोह नहीं करते । देहादि को राख की पोटली समान मानते हैं ।

(९) **"जगत के भोगविलास को दुविधारूप जालके समान समझते है।"** अर्थात् जगत में जो भोगविलास हैं उससे व्याकुल (व्यथित) होते हैं और कब मैं इस बंधन से छूटूँ और अपने आत्मा का हित करूँ; ऐसी भावना रहती है। भोगविलास को, कैदी के लिये जैसे जेल है वैसे बंधनरूप मानकर वे पुरुष व्याकुल होते हैं और उससे छूटने का ही विचार करते हैं। अन्य में-परवस्तु में उनकी बुद्धि नहीं होती।

(१०) **"गृहवास को भाले के समान मानते है।"** घर में रहना यह उनको शूली पर रहने जैसा लगता है। जिससे उसमें मन जोड़ते नहीं। किन्तु आत्मा में ही मन रखते हैं।

(११) **"कुटुंब के कार्य को काल अर्थात् मृत्यु के समान गिनते है।"** घर के कार्य है वो आत्मा के लिए मृत्यु के समान है। ऐसा जानकर वे उन कार्यों में उदासीन रहते हैं, उन में खुश नहीं होते। जिससे आत्मा का कार्य बिगड़े उस कार्य को मरण रूप जानते हैं।

(१२) **"लोक में लाज बढ़ाने की इच्छा को मुख की लार के समान समझते है।"** अर्थात् मुख में से लार गिरे तो तुरंत पौंछ लेते हैं, लार को बढ़ाने की इच्छा नहीं करते हैं उसी प्रकार परमपुरुष लोक में लाज़ बढ़ाने की इच्छा नहीं करते हैं।

(१३) **"कीर्ति की इच्छा को नाक के मैल के समान मानते है।"** नाक में से मैल गिरे तो उसे तुरंत पोंछ लेते हैं। उसे बढ़ाने की इच्छा नहीं करते। उसी प्रकार परमपुरुष यश-कीर्ति को बढ़ाने की इच्छा नहीं करते।

(१४) **"पुण्य के उदय को विष्टा के समान समझते है।"**

पत्र ८१९ का विवेचन

(पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के अप्रकट बोध में से)

ॐ (खेद न करते हुए शूरवीरता ग्रहण करके...यह पत्र पढ़ाया)

पूज्यश्री : किसी मुमुक्षु ने अपने खेद को रोकने के लिए पत्र लिखने के लिए कहा, तब परमकृपालुदेव ने उसका जवाब इस पत्र में लिखा है। मुमुक्षु जीव हो उसे ही यदि विषय कषाय आदि विशेष विकार हो जायें तो खेद होता है। जितनी मुमुक्षुता अधिक होती है उतना खेद विशेष होता है। तब ज्ञानीपुरुषों ने उस खेद को रोकने के लिए शूरवीर बनने को कहा है। खेद करे तो उल्टे कर्मबंध होता है। इसलिए खेद न करते हुए शूरवीरता को ग्रहण करके उन विषय-कषायों को पीछे हटाते हैं। जब पाँच इंद्रियों के विषय, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग-द्वेषादि अधिक होते हैं तब शूरवीरता से मुमुक्षु पुरुष, इन विषयादि के प्रति तिरस्कारवृत्ति से देखते हुए, ज्ञानीपुरुषों के वचनो का अवलंबन लेकर, उनके चरित्र का स्मरण कर, स्वयं खुद की बार-बार निंदा करते हैं। जैसे कि हे जीव! यदि तू इसी प्रकार विषयों में फंसा रहेगा तो नर्क के अनंत दुःख भोगने पड़ेंगे। तुझे तो ज्ञानीपुरुष का शरण मिला है। फिर भी तू ऐसे ही वर्तन करेगा तो फिर से अनंत दुःख भोगने पड़ेंगे और तू मोक्षसुख को किस प्रकार प्राप्त कर सकेगा? तेरे पास तो ज्ञानीपुरुष हैं। इसलिए उन्होंने जो आज्ञा दी है उसी को तू मान्य कर जिस प्रकार दो योद्धा लड़ाई में लड़ते हैं उसमें से एक हार जाता है तो उसे खेद होता है और वह फिर से उस दूसरे योद्धा के साथ लड़ कर उससे जीत जाता है, ऐसे ही तू भी उन दुष्ट विषयों को जो तुझे बहुत दुःख देनेवाले हैं, उन्हें जीत ले और मोक्ष के अनंत सुख को प्राप्त कर। यदि तू इसी प्रकार (विषयकषायादि में) वर्तन करेगा तो तुझे ज्ञानीपुरुष मिले भी तो उसका क्या लाभ? आत्मार्थी जीव, ज्ञानीपुरुषों की जो आज्ञा है उसका अखंडरूप से आराधन करके, उन महापुरुषों के चरित्रों का स्मरण करके अर्थात् ऐसे पुरुषों ने किस प्रकार विषय-कषायों पर जीत प्राप्त की है, उसका स्मरण करके तथा उनके वचनों का विचार करके जब तक उन विषय-कषायों को हटा न दें तब तक हिंमत नहीं हारते। इस प्रकार आत्मा को वारंवार शूरवीरता का बोध करके, उसे शूरवीर बनाकर उसे वश में करते हैं। इसी प्रकार आत्मार्थी जीव स्वयं के मन को वश करके अंत में जय प्राप्त करते हैं। जैसे इन विषय विकारों को परास्त करने के लिए स्वयं हिंमत करते हैं, उस प्रकार वे विषय भी बहुत जिद्दी (हठी) हो जाते हैं किन्तु वारंवार ज्ञानी पुरुषों के चरित्रों का विचार कर, उनके वचनों का विचार कर, उन विषयों को हटकार अंत में आत्मा ही जय प्राप्त करता है। क्योंकि कर्म तो आकर चले जाते हैं किन्तु उसमें शांति से बैठा नहीं जाता। हिंमत करके उन्हें हटायें तहीं तब तक पुरुषार्थ करना ही उपाय है। अन्यथा कर्मों की जय हो जाती है। इसलिए आत्मा की जय करने के लिए शूरवीर बनने की आवश्यकता है। तभी मोक्ष प्राप्त होगा।

यह बात मुमुक्षु जीवों को कंठस्थ करके हृदय में अंकित करने योग्य है। जिससे फिर से यह विषय-विकार नहीं उठे ऐसे इस आत्मा को शूरवीर बनाने के लिए वारंवार इस बात का विचार करके, उस प्रसंग में स्वयं का आत्मा न बह जाए ऐसा लक्ष्य रखकर शूरवीर बनना चाहिए।

प्रश्न : सत्पुरुष में परमेश्वर बुद्धि कैसे हो?

पूज्यश्री : जब मोह, मिथ्यात्व आदि संसार के भाव कम हो; वैराग्य बढ़े तब सत्पुरुष का माहात्म्य समझ में आता है तथा सत्पुरुष में परमेश्वर बुद्धि हो जाती है। इसलिए संसार का मोह कम करना। समस्त जीवों से नम्र, अधमाधम होकर रहना। सत्पुरुषों का अत्यंत विनय करना।

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी का अप्रकट बोध

(श्री ॐकार भाई के संग्रह में से)

महात्माओं को वारंवार वंदन हो

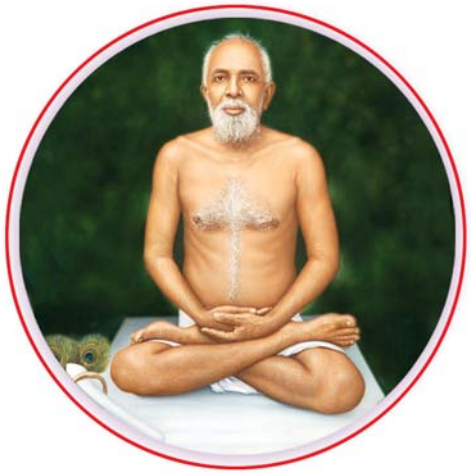

जन्म मरण कैसे मिटे ? (क्षय हो)

प्रश्न : जन्म मरण कैसे मिटे ? (क्षय हो)

पूज्यश्री : सत्पुरुष की आज्ञा का आराधन करे तो जन्म मरण क्षय होता है ।

प्रश्न : सत्पुरुष की आज्ञा क्या है ?

पूज्यश्री : रागद्वेष, मोह छोड़ना वह सत्पुरुष की आज्ञा है ।

प्रश्न : रागद्वेषादि कैसे कम हों ?

पूज्यश्री : संकल्प विकल्प नष्ट होते हैं तो रागद्वेषादि कम होते हैं ।

उपयोग शुद्ध करने के लिए इस जगत के संकल्प विकल्प को भूल जाना ।

अपने दोष अपक्षपातरूप से देखना

पूज्यश्री : जीव में मुमुक्षुता लाने के लिए स्वयं के दोष अपक्षपातरूप से देखते रहना और इन दोषों को दूर करना । सबसे बड़ा दोष तो यह है कि जीव को स्वयं के दोष देखने की वृत्ति नहीं होती । इसलिए पहले इस दोष को दूर करके, प्रति क्षण अपने दोषों को देखकर दूर करना; इससे ही मुमुक्षुता आती है । ज्ञानीपुरुष की आज्ञा क्या है ? और मैं क्या कर रहा हूँ ? यह निरंतर देखते रहना चाहिए और ज्ञानीपुरुष की आज्ञा के अनुसार वर्तन करना चाहिए । समस्त लोक त्रिविध ताप से आकुलव्याकुल है, ऐसा परमकृपालुदेव ने कहा है ।

प्रतिदिन अठारह पापस्थानक का विचार करना

पूज्यश्री : इस मनुष्य भव में हम व्यापार करते हैं । वैसे ही धर्म के नाम पर भी क्रिया करते हैं । किन्तु क्रिया करके घर आते हैं तब चित्त उसमें नहीं रहता । बिना समझे ही सब कुछ करते हैं । समझपूर्वक करें तो मोक्ष का कारण हो जाए । समझपूर्वक प्रतिदिन अठारह पापस्थानक का विचार करें तो एक एक पापस्थानक का विचार करते समय पूरे दिन का विचार करना पड़ता है कि मैंने सुबह से अभी तक क्या-क्या किया ? इस प्रकार अठारह बार पूरे दिन की चर्या का विचार करना पड़ता है । यह भी एक सच्चा प्रतिक्रमण होता है । किन्तु जीव विचार नहीं करना, केवल मुख से बोल देता है । इसलिए समझपूर्वक और विचारपूर्वक करना ।

मनुष्यभवरूपी पूंजी का एक समय भी व्यर्थ नहीं गंवाना

पूज्यश्री : ज्ञानी पुरुषों की आज्ञा है कि रागद्वेष नहीं करना । इस मनुष्यभवरूपी पूंजी का एक समय भी व्यर्थ नहीं गंवाना ।

जैसे व्यापार में थोड़ा नुकसान हो तो कितना दुःख होता है वैसे मनुष्यभवरूपी पूंजी का एक समय व्यर्थ जाए तो उससे भी विशेष दुःख होना चाहिए । मनुष्यभव मिलना अति दुर्लभ है । उसमें उच्च कुल, ज्ञानीपुरुष की आज्ञा मिलनी अति दुर्लभ है । यह सब हमें प्राप्त हुआ तो अब ज्ञानी पुरुष की आज्ञापालन में कोई कमी नहीं आने देना । परमकृपालुदेव के समक्ष खड़े होकर प्रतिज्ञा करें कि हे भगवान ! अब से अमुक अकार्य ना करुँ और फिर जो आज्ञा का अल्लंघन करे तो पुनः चारगति में भटके । आज्ञा के बिना वैराग्य नहीं आता, भक्ति में रस नहीं आता, आत्मा का कुछ भी हित नहीं होता । इसलिए ज्ञानीपुरुष की आज्ञा का ध्यान रखकर आराधन करना चाहिए ।

अच्छी पुस्तकें पढ़ने की आदत डालना

पूज्यश्री : सत्शास्त्र पढ़ने की आदत डालना । कोई बातचीत करता हो, परन्तु हमें मन में **'सहजात्मस्वरूप परमगुरु'** का रटन करते रहना । जिस प्रकार नन्हें बालक को माँ का दूध छुड़ाने के लिए पहले शक्कर और घी चटाते हैं, तब तक बालक उसे वापस मुँह से बाहर निकाल देता है । किन्तु प्रतिदिन देने से धीरेधीरे उस बालक को उसमें स्वाद आने लगता है इसलिए वह ऊँगली भी साथ में चबा लेता है । वैसे ही पहले तो अच्छी पुस्तकें पढ़ने में रुचि नहीं आती, किन्तु धीरे-धीरे आदत डाल लें तो फिर अन्य पुस्तक पढ़ने का मन ही नहीं होता, अच्छी धर्मकी पुस्तकें हि अच्छी लगें । धर्म की अच्छी पुस्तकें पढ़ने की आदत डालना ।

प.पू. प्रभुश्रीजी का बोध अमूल्य धन

प्रभुश्रीजी का हस्तलिखित बोध बताते हुए पूज्यश्री कहते हैं –

यहाँ यह अमूल्य धन इकट्ठा किया है । वहाँ जाकर भी इस पर विचार करना । एक बार पढ़ लेने के बाद, मैंने तो पढ़ लिया है, ऐसा न करना । बार-बार पढ़ने से नए-नए भाव स्फुरायमान होंगे । बार-बार पढ़ने, विचारने की आज्ञा की है । समय मिले तब यह कार्य करना । जो सीखा है उसका पुनः अभ्यास करते रहें । मंदिर में कोई न हो तो हमें भगवान के सामने बोल देना चाहिए । पत्रों को भूलना नहीं ।

करोड़ रुपये दें तो भी मनुष्य भव का आयुष्य बढ़ता नहीं

पूज्यश्री : करोड़ रुपये दें तो भी मनुष्यभव का आयुष्य एक समय भी नहीं बढ़ता । तो फिर संपूर्ण मनुष्यभव का क्या मूल्य हुआ ? विचार करें तो व्यर्थ नहीं गंवायेंगे । कौन जाने और कितना जीना है ! जागृत हो जाएँ ।

मनुष्यभव मिलना अत्यंत दुर्लभ है । यदि मनुष्य की आयु १०० वर्ष की है तो उसमें से ४० वर्ष नींद में जाते है, २० वर्ष बालवय में जाते हैं, २० वर्ष वृद्धावस्था में व्यर्थ जाते है और शेष २० वर्ष युवावस्था के रहे, उसमें मोह का हमला होता है । धन कमाने में, विषयों को भोगने में, विभिन्न प्रकार की इच्छाओं में बह जाते हैं । युवावस्था में ही धर्म, भक्ति आदि करने योग्य है । सुख-दुःख पूर्वोपार्जित अनुसार आते हैं । दुःख बिना प्रयोजन से आता है, उसी प्रकार सुख भी बिना प्रयोजन से आता है । इतनी यदि जीव को श्रद्धा-विश्वास आ जाए तो शांति रहे । किन्तु जीव व्यर्थ में माथा-पच्ची करता है, वहाँ दुःखी होता है ।

आत्मा का कभी नाश नहीं होता

शुभ तथा अशुभ दोनों कर्म हैं । दोनों में सुख नहीं है । सुख भिन्न वस्तु है । जीव को आत्मा का भान नहीं है । आत्मा परमानंद रूप है । जो हो उसे देखते रहना । आत्मा का कभी भी नाश नहीं होता । अनंतकाल से नहीं मरा तो अभी क्या मरेगा ? आत्मा तो देह से अलग-भिन्न है । संयोगो को अपना माना है, वे तो नाशवंत है । आत्मा परमानंद रूप है । देह को पोषण देते हैं । इसे तो छोड़ देना है । अभी तो बिना कमाई के मजदूर जैसी हालत है । शरीर की मजदूरी करता है । मालुम नहीं इसलिए क्या करे ? ज्ञानी ने दया की है ।

चमड़ी में मोह करेगा तो पुनः चमड़ी मिलेगी

पूज्यश्री : इस देह के प्रति जीव मोह करता है, उसे अपना मानता है, उसकी देखभाल करता है । किन्तु उसमें है क्या ? हड्डी, मांस, खून, मल, मूत्रादि से भरा हुआ है । ऐसे दुर्गंध भरे देह के प्रति जीव मोह करके आत्मा का हित नहीं करता । इस चमार के धंधेमें ही अपना अमूल्य मनुष्यभव व्यर्थ गंवा बैठेगा । इस चमड़ी का मोह करेगा तो पुनः चमड़ी ही मिलेगी; और जन्म मरण का दुःख भोगेगा । इसलिए इस चमड़ी वाली गंधाती देह पर मोह छोड़कर एक आत्मा पर प्रेम करना । जिसने आत्मा जाना है ऐसे पुरुष की आज्ञानुसार वर्तन करे, उन पर श्रद्धा करे तो यह जीव भी आत्मा को जान सकता है । जीव स्वयं को भूल गया है इसलिए इस मनुष्यभव को पशुता में न गंवाते हुए यथार्थरूप से मानव देह को सफल करना है । पशु भी पंचेंद्रिय के विषयों में रक्त रहता है और हम भी वैसा ही वर्तन करें तो पशु ही हैं । मानवता समझे वही मनुष्य है । ज्ञानी ने मनुष्य देह में क्या किया ? ऐसे आलंबनो के प्रति जीव को प्रवर्तन करना है । ज्ञानीपुरुष की जो **'सहजात्मस्वरूप परमगुरु'** मंत्र की आज्ञा मिली है, उसका निरंतर स्मरण करना ।

परमकृपालुदेव का स्वरूप सहजात्मस्वरूप वैसा ही मेरा स्वरूप

प्रश्न : **'सहजात्मस्वरूप'** की माला फेरते समय संकल्प विकल्प होता है। उसका क्या करना ?

पूज्यश्री : माला फेरने बैठें तब **'सहजात्मस्वरूप परमगुरु'** में मन को लगाना। अन्य कहीं जाने नहीं देना। उस समय परमकृपालुदेव की दशा का स्मरण करना अर्थात् मैं जानता नहीं, कृपालुदेव ने केवलज्ञानस्वरूप आत्मा देखा है वैसा मेरा आत्मा है। वह केवलज्ञानस्वरूप हो सकता है, ऐसा उत्साह रखना।

निगोद का भयंकर दुःख

पूज्यश्री : सूक्ष्म निगोद का दुःख बताया है। निगोद में जीव एक श्वासोश्वास में साढ़े सत्रह भव करता है। एक सुई की नोक जितनी जगह में असंख्यात गोले हैं। एक-एक गोले में असंख्यात निगोद हैं।

निगोद अर्थात् अनंत जीवों के पिंड का एक शरीर। एक एक निगोद में अनंत अनंत जीव हैं। जितने जीव सिद्ध हुए हैं उसकी अपेक्षा अनंत गुना जीव एक निगोद में हैं।

सातवीं नरक में ३३ सागरोपम का उत्कृष्ट आयुष्य है, उसके जिते समय होते है उतनी बार कोई जीव सातवीं नरक में ३३-३३ सागरोपम का आयुष्य लेकर जन्म लेता है। वे सभी नरक के असंख्यात भव होते हैं। इन असंख्यात भवों में उस जीव को जितना छेदन भेदन का दुःख होता है उससे भी अनंत गुना दुःख सूक्ष्म निगोद का जीव एक समय में भोगता है।

दृष्टांत—मनुष्य की साढ़े तीन करोड़ रोम राशि को यदि कोई देव लोहे की साढ़े तीन करोड़ सुईयों को अग्नि में तपा कर एक साथ रोम-रोम में चिपकाये तब जीव को जैसी वेदना होती है उससे अनंत गुनी वेदना निगोद के जीव को एक समय में होती है।

इस जीवने अनंतकाल तक निगोद में रहकर यह दुःख भोगा है। यदि अब आत्मस्वरूप को नहीं पहचाना तो पुनः वही दुःख भोगेगा। यह मनुष्यदेह किसी महत् पुण्ययोग से मिला है इसलिए इसका एक समय भी व्यर्थ जाने देने योग्य नहीं है। हर एक समय रत्नचिंतामणि समान है इसलिए जैसे हो सके वैसे आत्महित कर लेना, जिससे फिर से निगोद में न जाना पड़े। ज्ञानीपुरुष कृपालुदेव ने जो कहा है, उस प्रकार वर्तन करने से यह निगोद क्षय हो जायेगा।

संसार खारे जल समान है, मोक्ष मीठे जल समान है

पूज्यश्री : 'इस जगत में एकांत दुःख है,' ऐसा ज्ञानीपुरुषों ने कहा है। जैसे किसी गाँव में सभी जगह खारा पानी हो, कहीं भी मीठा पानी ना मिले, तो वहाँ के लोगों को उस पानी की आदत हो जाने से वह खारा नहीं लगता। परन्तु वहाँ किसी दूसरे गाँव का व्यक्ति आये और वह वहाँ का पानी पीये तब सोचता है कि इस गाँव के सभी लोग खारा पानी क्यों पी रहे हैं ? वैसे ही खारे पानी की तरह इस संसार में जीव दुःख को सुख मान बैठा है। किन्तु किसी मीठा जल पीनेवाले को अर्थात् ज्ञानीपुरुष को, इन जीवों को देखकर अत्यंत दुःख होता है और दया आती है। परमकृपालुदेव ने कहा है कि इस जगत में सर्वत्र दुःख है। समस्त लोक त्रिविध ताप से जल रहा है। वैसी हमें श्रद्धा रखनी है। मैं कुछ भी जानता नहीं, किन्तु परमकृपालुदेव ने जिस सुख का अनुभव किया है वही सत्य है। बाकी इस संसार में कहीं भी सुख नहीं है ऐसी श्रद्धा रखनी। धर्म अत्यंत ही महान वस्तु है। मैं कुछ भी नहीं जानता हूँ। परमकृपालुने जिस आत्मा का अनुभव किया है वही मुझे मान्य है। मैं देहादि से भिन्न हूँ, ऐसी श्रद्धा रखनी।

ज्ञानी की आज्ञा में रहनेवाले का कोई बाल भी बांका नहीं करता

पूज्यश्री : आत्मा आनंदस्वरूप है, सुखस्वरूप है, देह से भिन्न है। फिर भी तुच्छ वस्तु के मोह में जीव क्यों पड़ जाता है ! शरीर में हड्डी, मांस, रक्त भरा हुआ है। वह त्यागने योग्य है। अब इतने वर्ष तो बीत गए, आत्मा का कुछ भी कार्य नहीं हुआ; तो जब मृत्यु आएगी तब क्या हाल होगा ? जीव को जो करने योग्य था वह किया नहीं। दूसरों की पंचायत में पड़ता है वहाँ स्वयं का गंवा (खो) बैठता है। अब सत्पुरुष का कहा हुआ करना है। उन्होंने जो कहा है वही करना है। आज्ञा मानकर वर्तन करना उसे समिति कहते हैं। आज्ञा के संबंध में एक दृष्टांत है।

सिपाही का दृष्टांत

एक शहर में राजा के पास एक सिपाही रहता था। वह राजा के आदेश से गाँव के लोगों को बुलाने जाता तब वह लोगों से अशिष्टतापूर्वक बात करता; यह बात लोगों को अच्छी नहीं लगती। इसलिए वे सभी उसे पीटना चाहते थे। एक बार बहुत लोग इकट्ठा हो गए तब सिपाही बुलाने आया और पहले की तरह अशिष्टतापूर्वक बात करने लगा। तब लोगों ने कहा कि तुम राजा का पट्टा लेकर अपशब्द (बुरा) बोलते हो, जिससे हम तुम्हें कुछ नहीं कर सकते, नहीं तो

पीटते। यह सुनकर उस सिपाही ने राजा का पट्टा फेंक दिया। तब लोगों ने उसे पीटा। वह फरियाद राजा के पास पहुँची। राजा ने लोगों से पूछा कि तुमने इसे किसलिए मारा ?

लोगों ने कहा : आपके नाम का पट्टा बाँधकर खराब बोलता था फिर भी हम उसे कुछ नहीं करते थे। किन्तु जब इसने आपका पट्टा निकालकर फेंक दिया तब हमने पीटा। राजा ने कहा : यही करना था।

जब तक राजा का पट्टा था तब तक लोग उसे परेशान नहीं कर सके। जब पट्टा फेंक दिया तब परेशान किया। वैसे ही ज्ञानी की आज्ञा में रहनेवाले का कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता। जब आज्ञा छोड़ते हैं तब कर्म परेशान करते हैं।

श्रीमद् राजचंद्र के अनुयायी या विषयों के अनुयायी

पूज्यश्री कहते—परमकृपालुदेव का नाम बदनाम हो ऐसा आचरण नहीं करना। हम ज्ञानी परमकृपालुदेव की आज्ञानुसार आचरण करें और उसे देखकर दूसरे भी आचरण करें ऐसा कार्य करना। स्वयं कहे कि हम श्रीमद् राजचंद्र के अनुयायी हैं, किन्तु पंचेन्द्रियो के विषयों में लीन रहें तो फिर उनको पंचेन्द्रिय विषयों के अनुयायी कहना या श्रीमद् राजचंद्र के अनुयायी ? किसके अनुयायी कहना ? इसलिए उनकी आज्ञानुसार आचरण करके सच्चे अनुयायी बने। मोह कम करना, ये विशेष ध्यान में रखने योग्य है।

ब्रह्मचर्य

पूज्यश्री : इस संसार में जन्ममरणादि दुःख रहे हैं। उसे दूर करने के लिए कुछ न कुछ व्रत लेना चाहिए। ब्रह्मचर्य का पालन किसलिए करना ? आत्मा के लिए। पाँच इन्द्रियों के विषयभोग के कारण अनंतकाल से जीवने जन्म-मरण किये है। अतः अब जिस दिन ब्रह्मचर्य का पालन करना है उस दिन साधु के जैसे रहना। एक परमकृपालुदेव के अतिरिक्त किसी अन्य की इच्छा करनी नहीं। इस व्रत का पालन वैसे तो शरीर से होता है परन्तु मन भी उसमें लेशमात्र नहीं जाना चाहिए। उस दिन भक्ति, वांचन करके अच्छे भाव रखना। अनंतकाल से इन विषयो में ही रहने से, अनंतकाल से दुःख भोगना पड़ा है। यदि अभी भी उससे विरक्त न होकर उसी में मन रखेंगे तो फिर से अनंत दुःख भोगने पड़ेंगे। इसलिए ब्रह्मचर्यव्रत हो वह शरीर एवं मन से होना चाहिए। यह लक्ष्य में रखने योग्य है। परमकृपालुदेव ने "नीरखीने नवयौवना....." में कहा है : "**पात्र थवा सेवो सदा, ब्रह्मचर्य मतिमान।**" इसलिए जिसे आत्मा का हित करना हो उसे इस ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहिए।

मन से व्रत का पालन करना

यदि इस व्रत का पालन करते हैं तो संसार से छूटना सरल है। क्योंकि अच्छा अच्छा खाना वह भी भोग के लिए, अच्छे कपड़े पहने वह भी भोग के लिए, दूसरा सब भी भोग के लिए ही जीव करता है। यदि भोग से विरक्त हो गए तो संसार में कुछ खानेकी, पीनेकी, ओढ़नेकी सभी इच्छाएं नष्ट हो जाती हैं। यह व्रत हो, फिर भले ही जीव संसार में रहता हो, तो भी वह साधु जैसा ही है। इसलिए मन से इस व्रत का पालन करना चाहिए। जैसे चौविहार करें तो महीने में पंद्रह उपवास का फल मिलता है। वैसा इसमें भी है। यदि दिन में भी ब्रह्मचर्य पालन का नियम हो तो महीने में पंद्रह दिन ब्रह्मचर्य का फल मिलता है। जितना नियम लें सकें उतना लेना, किन्तु पालन यथार्थ होना चाहिए। एक अपने आत्मा का हित हो, इसके लिए एक आत्मार्थ का ही लक्ष्य रखना।

ब्रह्मचर्यव्रत से वांचन विचार में स्थिरता

वांचन-विचार आदि में मन केन्द्रित रहे, इसलिए यह व्रत लेना है। इसलिए उस दिन अच्छे भाव रखने। और इस संसार में मेरे जन्म, जरा, मरणादि का नाश हो वैसा ही इस भव में करना। अन्य प्रवृत्ति से तो बहुत दुःख प्राप्त हुआ है। इसलिए जैसे बन सके वैसे इस संसार से मुक्त हो वैसा ही कार्य करना। बाकी सब कुछ नाशवंत है। एक धर्म है जो साथ में आएगा। इसके लिए 'मोक्षमाला' में जो ब्रह्मचर्य की नौ वाड़ है, उसे भी मुखपाठ कर लेना तथा 'प्रवेशिका' में भी ब्रह्मचर्य के संबंध में शिक्षापाठ है, उसका विचार करना। मोह-राग कम करने के लिए यह व्रत है। यह लक्ष्य में रखकर इस व्रत के दिन भक्ति वांचन में चित्त रखकर, विषयों के प्रति चित्त न जाए, ऐसा लक्ष्य में रखना।

फिर से ऐसा योग मिलना दुर्लभ

कुछ भी पढ़ने का, विचार करने का, याद करने का प्रयत्न करना। समय व्यर्थ नहीं गंवाना। वांचन, मनन और निदिध्यासन करने की भावना करते रहना। यह मनुष्यभव व्यर्थ न जाए। फिर से ऐसा योग मिलना दुर्लभ है। मनुष्यभव, उसमें उच्च कुल, सद्गुरु का योग और बोध सुनने का भी मन हो ऐसा योग दोबारा नहीं मिलता। इसलिए आत्मार्थ के लिए यह मनुष्यभव सफल कर लेने योग्य है।

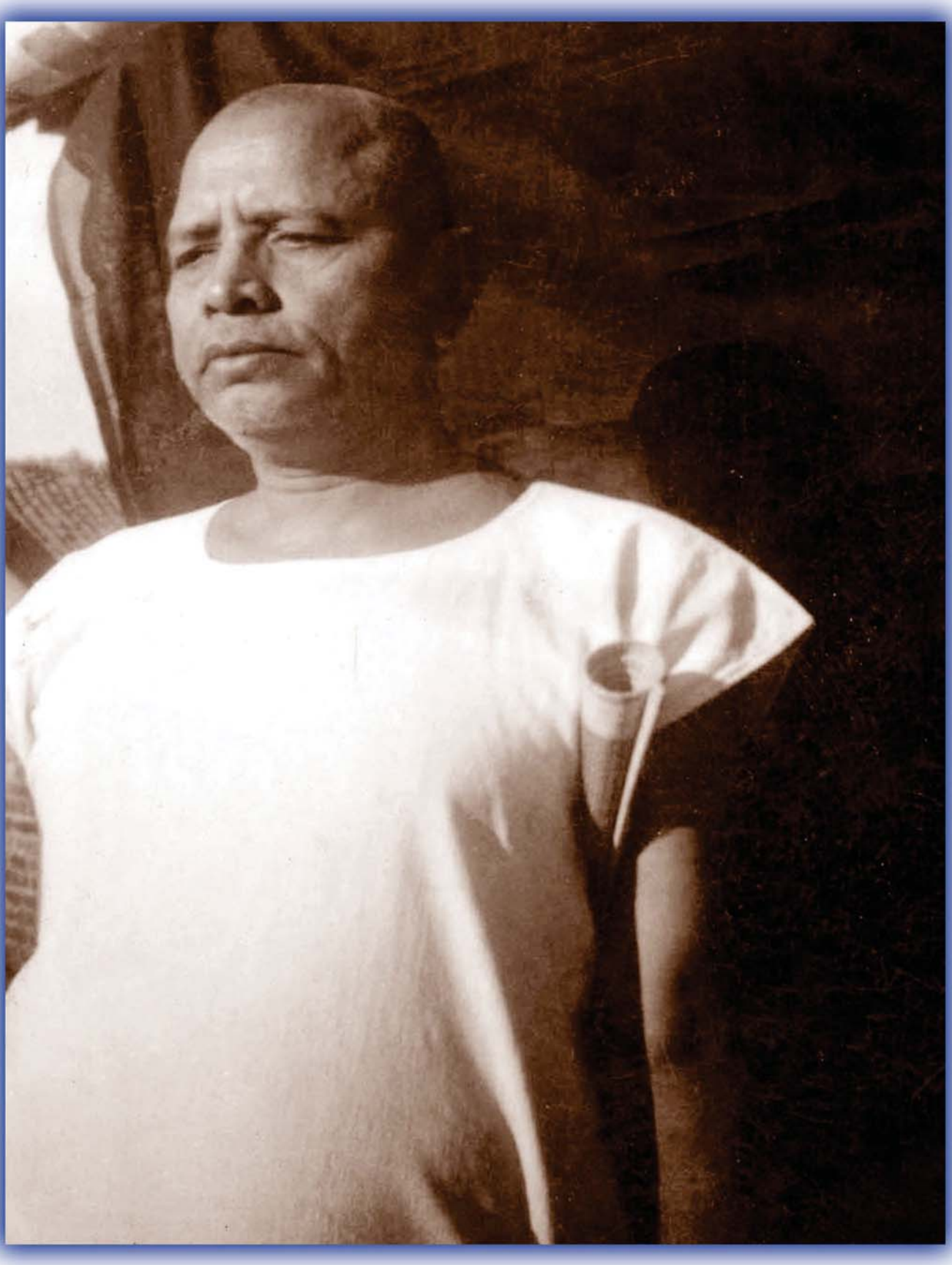

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

मुमुक्षुओं का पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के साथ अगास स्टेशन से यात्रा प्रयाण

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी को विदा करते हुए मुमुक्षुगण

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी की तीर्थयात्रा के संस्मरण

"सद्गुरु चरण जहाँ धरे, जंगम तीरथ तेह;
ते रज मम मस्तक चढो, बालक मांगे एह ।"

सं. १९८१ से प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी ने जिन-जिन तीर्थस्थलों की क्षेत्रस्पर्शना की थी वहाँ-वहाँ पू. श्री ब्रह्मचारीजी साथ में थे । परन्तु सं. १९९२ के वैशाख सुदी ८ के दिन से प्रभुश्रीजी के देहोत्सर्ग के पश्चात् पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने किस वर्ष कहाँ-कहाँ यात्रा के लिए गमन किया उसका क्रमशः विवरण निम्नानुसार है । पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी दो-तीन वर्ष में यात्रा के लिए निकलते । उस समय सौ-दौसौ या कभी-कभी चारसौ पांचसो का संघ साथ में हो जाता था ।

प.पू. प्रभुश्रीजी

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास

पू.श्री ब्रह्मचारीजी

कावि‌ठा

सं. १९९३ के कार्तिक वदी दुज के दिन पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने कावि‌ठा के मुमुक्षु भाईयों की अति आग्रहभरी विनंती से ७०-८० मुमुक्षु भाईयों सहित वहाँ पधारकर तीन दिन की स्थिरता की थी । उनके सानिध्य में 'श्रीमद् राजचंद्र मंदिर' का खादमुहूर्त । (भूमि पूजन) करने में आया था ।

महुडी, आंबे, वड और धोरी भगत की देहरी, जहाँ-जहाँ परमकृपालुदेव ने बोधधारा की वर्षा की, उन सभी जगहों के दर्शन भक्ति का लाभ लिया था । उस समय परमकृपालुदेव की पादुका के लिए तीन हजार रुपयों का योगदान हुआ था ।

कावि‌ठा के मुमुक्षु भाईयों का उत्साह खूब था । उन्होंने पूज्यश्री से कहा कि हमारे लिए अब एक आप ही मार्गदर्शक हो ।

ईडर की यात्रा

सं. १९९३ के माघ सुदी एकम के शुभ दिन पूज्यश्री सिद्धपुर पधारे । वहाँ छः दिन रुक कर सातवें दिन पैदल विहार करके खेरालु, जहाँ प. पू. प्रभुश्रीजी ने चातुर्मास किया था, वहाँ से रात दस बजे विहार कर तारंगाजी पहुँचे । वहाँ तीन दिन ठहरकर ईडर पधारे ।

ईडर आने के पश्चात् आश्रम में समाचार भेजे जिससे करीब सौ मुमुक्षु भाई-बहन वहाँ आ पहुँचे । श्री पुनशीभाई तथा अहमदाबाद से सेठ श्री जेसींगभाई भी वहाँ आए थे । उस समय घंटिया पहाड़ पर रहने की व्यवस्था नहीं थी । पू. श्री ब्रह्मचारीजी सबसे आगे और पीछे पूरा संघ स्मरणमंत्र की धून बोलते हुए घंटिया पहाड़ पर आ पहुँचे । वहाँ श्री सिद्धशिला के समक्ष नमस्कार करके सभी बैठे और भक्ति भजन किया ।

श्री सिद्धशिला

स्वमुख से 'बृहद् द्रव्य संग्रह' - श्रवण कराया

फिर पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने स्वमुख से **'बृहद् द्रव्य संग्रह'** का उच्चारण किया और उसका विवेचन भी किया । सभी मुमुक्षुओं ने मौन रहकर एकाग्रचित्त से उसका श्रवण करके अत्यंत आनंद का अनुभव किया ।

नीचे पुढवी शिला, कणिया महादेव का मंदिर, दूसरे पहाड़ पर श्री शांतिनाथ भगवान का देरासर, दिगंबर मंदिर, रणमल की चौकी, रुठी रानी का महल, भूराबावा की गुफा आदि स्थलों पर, जहाँ-जहाँ परमकृपालुदेव विचरे थे उन उन जगहों के दर्शन भक्ति करके उल्लासित हुए ।

* मुख्यरूप से श्री वस्तीमलजी लिखित नोंध के आधार पर प्राप्त हुआ विवरण ।

गाँव के बाहर तीन छत्रीयाँ हैं। कहा जाता है उनमसे एक छत्री परमकृपालुदेव के पूर्वभव की है। उसके नजदीक स्मशान और एक कुंड तथा साथ में गुफा भी है, जिस गुफा में परमकृपालुदेव एक महीने तक रहे थे। वहाँ **'अपूर्व अवसर'** आदि की अति उल्लासपूर्वक भक्ति करके सभी निवासस्थान वापस आ गए।

चौथे दिन फिर घंटिया पहाड़ पर दर्शन करने गए। उस समय पहाड़ पर कुछ भी निर्माणकार्य नहीं हुआ था। मात्र जंगल ही था। वहाँ निर्माणकार्य सं.१९९६ में हुआ और पादुकाजी की प्रतिष्ठा भी उसी वर्ष में हुई थी।

नरोडा

वर्तमानमें बना हुआ श्रीमद् राजचंद्रका मंदिर, नरोडा

ईडर से पूज्यश्री संघ के साथ नरोडा पधारे। जहाँ परमकृपालुदेव ठहरे थे, उसी धर्मशाला में विशाल मंडप बांधकर चित्रपट की स्थापना करके खूब उल्लासपूर्वक भक्ति की गई।

वहाँ से पैदल विहार करके पूज्यश्री सकल संघ के साथ अहमदाबाद में पंचभाई की पोल तथा सेठ श्री जेसींगभाई के बनाए हुए लाल बंगले में जहाँ चित्रपटों की स्थापना है वहाँ गए और अन्य मंदिरों के दर्शन कर पुनः नरोडा पधारे।

अगले दिन सुबह गाँव के बाहर जिस जगह परमकृपालुदेव विराजे थे वहाँ चबुतरा बना हुआ है; वहाँ सभी ने अति उल्लासपूर्वक भक्ति के पद्य गाये। मुनि श्री चतुरलालजी, सेठ श्री जेसींगभाई, श्री छोटाकाका, सेठानी चंपाबहन इत्यादि साथ में थे। स्टेशन के पास एक बंगला था साथ ही तालाब के पास एक छोटी पहाड़ी थी जहाँ परमकृपालुदेव विचरे थे, वहाँ भी दर्शन के लिए गए थे।

आहोर प्रतिष्ठा

श्री फूलचंदभाई, पू. श्री ब्रह्मचारीजी तथा सकल मुमुक्षु संघ को प्रतिष्ठा के लिए आमंत्रण देने हेतु आहोर से अगास आश्रम पर आये। उस समय पूज्यश्री ने श्री चुनीभाई कारभारी आदि ट्रस्टियों को, साथ ही ज्येष्ठ मुमुक्षुओं को उपर बुला कर कहा कि आहोर के भाईयों ने यहाँ की प्रतिष्ठा में बहुत मदद की है। हमें भी प्रतिष्ठा के प्रसंग में उपस्थित रहना चाहिए।

श्रीमद् राजचंद्रका
पहले बना हुआ मंदिर, आहोर

फिर सं. १९९३ के जेठ सुदी ४ के शुभ दिन पू. श्री ब्रह्मचारीजी २०० मुमुक्षु भाई-बहनों सहित आश्रम से विदा होकर आहोर राजमंदिर की प्रतिष्ठा के निमित्त से पधारे। साथ में मुख्य स्थापना करने हेतु परमकृपालुदेव का चित्रपट भी लाए थे। धूमधाम से गाते बजाते बाजार में से होकर 'सहजात्मस्वरूप टालो भवकूप' का पद्य बोलते हुए राजमंदिर में आदरसहित स्थापना की। सेठ श्री जेसींगभाई, श्री पुनशीभाई सेठ, श्री हीरालाल झवेरी, श्री नाहटा साहेब, श्री मणिभाई कल्याणजी, श्री चुनीभाई, श्री सोभागभाई, श्री वनेचंद शेठ, श्री छोटाकाका, श्री शारदाबहन आदि अनेक मुमुक्षु आहोर के प्रतिष्ठा महोत्सव पर उपस्थित थे।

जेठ सुदी १३ के शुभ दिन पू. श्री ब्रह्मचारीजी के करकमल से चित्रपट की स्थापना उत्तम मुहूर्त में विधिसहित, जयध्वनि के साथ अत्यंत धूमधाम से करने में आई थी।

राणकपुरजी

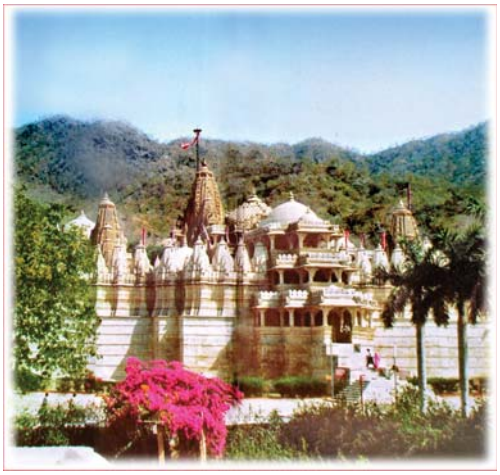

श्री जिनमंदिर, राणकपुर

आहोर से जालोर गढ़ उपर और राणकपुरजी की पंचतीर्थी की यात्रा करके सकल संघ वापस आश्रम लौटा और पूज्यश्री १५-२० मुमुक्षुओं सहित आबू पधारे।

आबू माउन्ट की यात्रा

श्री देलवाडाके मंदिरोंका दृश्य

सुबह आबु माउन्ट पर देलवाड़ा मंदिरों के दर्शन किए। फिर श्री शांतिविजयजी महाराज मिले। पू. श्री ब्रह्मचारीजी को देखकर उन्हें खूब आनंद हुआ। स्वयं के पाट पर पास में बिठाकर प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी के देहत्याग संबंधी वृत्तांत पूछने लगे। पूज्यश्री ने पूरे प्रसंग का वर्णन किया।

श्री अचलगढके मंदिरोंका दृश्य

अचलगढ़

अचलगढ़ में प.पू. प्रभुश्रीजी सं.१९९१ के वर्ष में जिस हॉल में आठ-नौ दिन रहे थे, उसी हॉल में पूज्यश्री आदि ठहरे। सत्पुरुष जहाँ चरण रखते हैं वह भूमि तीर्थरूप है।

आबुमें जहाँ-जहाँ प.पू. प्रभुश्रीजी विचरे थे वे श्रबरी बंगला, वसिष्ठाश्रम, देडकी शिला विगेरेह स्थलोके पूज्यश्री दर्शने करने पधारे थे।

नार

श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, नार

सं.१९९४ के मार्गशीर्ष वदी ८ के दिन पूज्यश्री बड़े संघ के साथ नार एवं वटामण पधारे। वटामण में प.पू. प्रभुश्रीजी के जन्मस्थल के दर्शन कर मुमुक्षुओं को बहुत आनंद और उल्लास हुआ और उस समय वटामण में मंदिर निर्माण के लिए १५०० रुपयों का योगदान जमा हुआ।

वटामण

श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, वटामण

भादरण प्रतिष्ठा

श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, भादरण

सं. १९९४ के माघ सुदी ५ (वसंतपंचमी) के शुभ दिन प्रतिष्ठा के निमित्त से पूज्यश्री अनेक मुमुक्षुओं सहित भादरण पधारे और शुभमुहूर्त में उनकी आज्ञा से विधिसहित चित्रपटों की स्थापना करने में आई ।

सं. १९९४ वैशाख वदी ३ के दिन पूज्यश्री पाँच-सात मुमुक्षु भाईयों सहित फिर से भादरण पधारे और १ माह वहाँ रुके थे । भक्ति का क्रम प्रतिदिन रहता था । अनेक मुमुक्षु भक्ति में भाग लेते और बहुतों ने स्मरणमंत्र भी लिया था ।

वसो की यात्रा

श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, वसो

सं. १९९५ के कार्तिक वदी ५ के दिन आश्रम से करीब पच्चीस मुमुक्षुओं सहित पैदल विहार कर पूज्यश्री संदेशर गाँव गए । वहाँ से मुमुक्षुओं के साथ पैदल विहार कर बांधणी गाँव पधारे । वहाँ रात में आत्मसिद्धि इत्यादि की भक्ति करके आराम किया । दूसरे दिन सुबह पूज्यश्री स्वयं के संसारी अवस्था का जो घर है वहाँ संबंधियो के आग्रह से सभी मुमुक्षुओं के साथ गए और 'बहु पुण्य केरा' का पद्य वहाँ बोले ।

बांधणी से दोपहर के तीन बजे सभी मुमुक्षुओं के साथ पैदल विहार करके शाम सात बजे वसो पधारे । आश्रम से दूसरे भी कई मुमुक्षु गाड़ी में बैठ कर वहाँ आ पहुँचे । दूसरे दिन सुबह गाँव के बाहर स्मशानभूमि, कुँआ ऊपर, रायण के नीचे, गोचरभूमि (चरो) इत्यादि एकांत स्थलों में जहाँ-जहाँ परमकृपालुदेव विचरे थे उन-उन पवित्र स्थलों के दर्शन करने गए । सत्पुरुष जहाँ विचरे होते हैं वह तीर्थभूमि महापुरुषों की स्मृति कराती है ।

सं. १९५४ में परमकृपालुदेव ने इस गाँव में प.पू. प्रभुश्रीजी को आत्मबोध की प्राप्ति कराई थी । जंगल में जहाँ परमकृपालुदेव ने बोध दिया था उसी स्थान पर जाकर पूज्यश्री ने भक्ति के पद्य बोले ।

बाहुबलीजी की यात्रा

सं. १९९५ के जेठ सुदी पूर्णिमा के शुभ दिन आश्रम से संघ के साथ पूज्यश्री बाहुबलीजी की यात्रा के लिए पधारे । बीच में तिरुमल्लई गाँव में रुके थे । वहाँ पहाड़ पर श्री नेमिनाथ भगवान की काउसग्ग मुद्रा की १५ फीट की दिगंबर प्रतिमा है । अंत में पहाड़ी पर श्री समंतभद्राचार्य के चरणपादुका है, बगल में वादिभसिंह आचार्य का समाधिस्थान है । वहाँ के शास्त्रीजी ने बताया कि पांडवो ने स्वयं दर्शन के लिए इस प्रतिमा को तराशा था । चातुर्मास में वे इस पहाड़ पर रहे थे । उत्तर में दुष्काल पड़ने से बारह हजार साधु दक्षिण की ओर आए, उस समय चार हजार साधुओं ने इस पहाड़ पर समाधि प्राप्त की थी ।

मैसूर से सोलह मील दूर गोम्मटगिरि है । वहाँ बाहुबलीजी की तेरह फीट ऊँची काउसग्ग मुद्रा की प्रतिमा है । वहाँ दर्शन भक्ति कर मलियुर गाँव (कनकगिरि) आए । वहाँ पहाड़ पर पूज्यपाद स्वामी के समाधि-स्थान पर पादुकाजी है, पुराने लेख हैं, दस खंड का एक बड़ा मंदिर है । वहाँ दर्शन कर वापस मैसूर आए ।

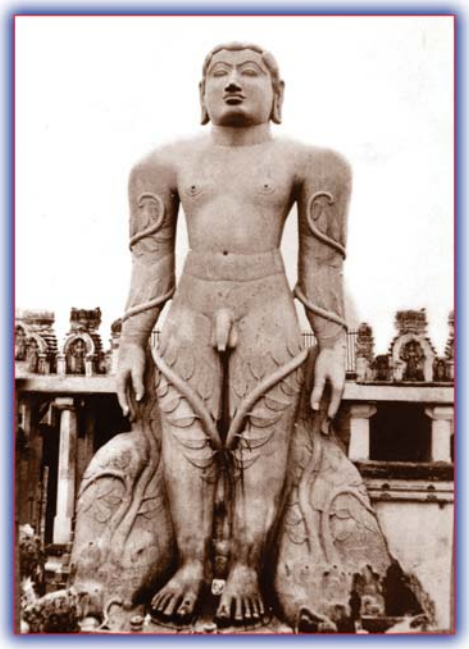

५७ फीट ऊँची बाहुबलीजीकी प्रतिमा

मैसूर से स्पेश्यल मोटर करके शाम के पाँच बजे बाहुबलीजी आ पहुँचे । सुबह में विंध्यगिरि नाम के बाहुबलीजी के पहाड़ पर सभी चढ़े । वहाँ बाहुबलीजी की एक ही पत्थर से तराशी हुई ५७ फीट ऊँची भव्य और शांत प्रतिमा के दर्शन कर सभी को खूब आनंद हुआ । वहाँ भक्ति करके चैत्यवंदन किया ।

वहाँ के पंडित ने यह मूर्ति किसने और किस तरह से बनाई थी । उस संबंधी दंतकंथा निम्न अनुसार बताई–

बाहुबलीजी की इस प्रतिमा को मुनिसुव्रत स्वामी के समय में मंदोदरी ने स्वयं के दर्शन करने हेतु एक विद्याधर के पास से रत्नों से नक्काशी करवाई । राम, सीताजी और रावण ने भी इस प्रतिमाजी के दर्शन किए हैं ।

प्रतिमा अति सुंदर, शांत एवं भव्य

कालांतर से बाहुबलीजी की यह प्रतिमा वहाँ के पहाड़ पर जमीन में दब गई थी । आज से तेरह सौ वर्ष पूर्व श्री चामुंडाराय को इस बाहुबलीजी की मूर्ति संबंधी स्वप्न आया कि सामने भरतजी के पहाड़ पर अमुक स्थल से अमुक दिशा में बाण मारने से बाण जहाँ पड़े वहाँ खुदाई करना, वहाँ से मूर्ति निकलेगी और वहीं मंदिर बनवाना । इस तरह करने से मूर्ति निकली अतः मंदिर बनवाकर श्री चामुंडाराय के हाथ से प्रतिष्ठा करने में आई थी । कमल और मूर्ति दोनों एक पत्थर से तराशे हुये है । प्रतिमा अति सुंदर, शांत एवं भव्य है ।

भरतजी की प्रतिमा

भरतजी के पहाड़ चंद्रगिरि पर १४ मंदिर है । बगल के खुले स्थान में भरतजी की प्रतिमा जांघ तक जमीन तले चली गई है । इस प्रतिमाजी की ऊँचाई १५ फीट की है । भद्रबाहुस्वामी का समाधिस्थान यहीं गुफा में है, वहाँ उनकी भव्य पादुकाजी है । चंद्रगुप्त राजा यहीं से देवलोक गये थे । सभी स्थानों पर दर्शन-भक्ति करके वेणुर गए ।

वेणुर में पाँच मंदिर और बाहुबलिजी की पैंतीस फीट ऊँची खड़ी प्रतिमा के दर्शन कर मूडबिद्रि आए । वहाँ अठारह मंदिर है, जिनमें एक तीन मंजिल का बड़ा मंदिर है । सब जगह दर्शन भक्ति करके वहाँ से सभी कारकल गए । वहाँ चौदह मंदिर हैं और एक छोटी पहाड़ी पर बाहुबलीजी की ४० फीट ऊँची प्रतिमा है । वहाँ दर्शन करके वारंग गए ।

वारंग में तालाब के बीच में बड़ा मंदिर है । नाव में बैठकर वहाँ गए । सभी भक्ति चैत्यवंदन आदि करके वापस मूडबिद्रि आये और सिद्धांतमंदिर के दर्शन करने गये । वहाँ शास्त्रीजी ने प्रथम 'धवल', 'जयधवल', 'महाधवल' आदि शास्त्रों के दर्शन कराए । फिर हीरा, माणिक आदि रत्नों की ३५ प्रतिमाओं को एक के बाद एक हाथ में रखकर पीछे दीपक लेकर बताया और प्रत्येक रत्न के गुणधर्म की समझ दी । प्रत्येक रत्न के माहात्म्य का वर्णन करते समय साथ में यह भी कहते थे कि भगवान की दृष्टि में तो यह सब पत्थर ही है, कि जिसे हम बहुत महत्त्व देते हैं । परन्तु महापुरुषों के गुणों की स्मृति लाने के लिए यह आकार है । आत्मा के प्रति दृष्टि कर के दर्शन-लाभ लेना है ।

दक्षिण की यात्रा इस प्रकार सुखपूर्वक पूर्ण हुई ।

राजकोट

श्रीमद् राजचंद्र नवीन समाधि मंदिर

सं. १९९६ के माघ सुदी १३ को प्रतिष्ठा के निमित्त से पूज्यश्री मुमुक्षुओं सीहत राजकोट पधारे । वहाँ आजी नदी के किनारे स्मशानभूमि के बगल में स्थित परमकृपालुदेव के समाधिमंदिर में पू. श्री ब्रह्मचारीजी के शुभ हाथों से परमकृपालुदेव के चित्रपट की स्थापना अति उल्लासपूर्वक जयध्वनि के साथ करने में आई ।

सं. १९९६ के वैशाख सुदी ३ के शुभ दिन सडोदरा में चित्रपटों की स्थापना पूज्यश्री के सानिध्य में हर्षोल्लासपूर्वक करने में आई थी ।

सडोदरा प्रतिष्ठा

वर्तमानमें बना हुआ श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, सडोदरा

ईडर

सिद्धशिलाके उपर परमकृपालुके पादुकाजीकी स्थापना की हुई थी। वर्तमानमें उसके उपर स्थापित की गई प्रतिमाजी

श्रीमद् राजचंद्र विहारभवन, ईडर

सं. १९९६ में पूज्यश्री मुमुक्षुओं सहित प्रतिष्ठा के निमित्त से ईडर पधारे। वहाँ विहारभवन में सिद्धशिला पर परमकृपालुदेव की पादुकाजी की स्थापना अत्यंत उल्लास भाव से जय जयकार के उच्चारण के साथ हुई थी।

खंभात

श्रीमद् राजचंद्र खंभातमें रहे थे वह मकान

श्रीमद् राजचंद्र खंभातमें रहे थे वह मकान

सं. १९९७ के चैत्र माह में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ४०-५० मुमुक्षुभाई-बहनो के साथ खंभात पधारे। खंभात में एक दिन रुककर अनेक मंदिरो के दर्शन किये।

वडवा

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, वडवा

फिर वडवा जाकर एक दिन की स्थिरता करके, भक्ति भजन करके वापस अगास आश्रम में आ पहुँचे।

धामण प्रतिष्ठा

पहलेका श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, धामण

सं. १९९८ के मार्गशीर्ष सुदी दशम को प्रतिष्ठा के निमित्त से आश्रम से पूज्यश्री सकल संघ सहित धामण पधारे।

मार्गशीर्ष सुदी १० के शुभ दिन को चित्रपटों की स्थापना सभामंडप में पूज्यश्री के हस्तकमल से बहुत धूमधाम से करने में आयी।

धामण में अनेक भाई-बहन भक्ति वांचन में आते और स्मरणमंत्र भी लेते। उन लोगों का उत्साह और साथ ही उन्हें धर्म के मार्ग में प्रवेश होता देखकर पूज्यश्री को उल्लास होता। उस समय पूज्यश्री के समागम से बहुत से जीवों ने सत्धर्म का अलौकिक लाभ लिया।

राजकोट - समाधिभवन

श्रीमद् राजचंद्र समाधिभवन

सं. १९९८ के माघ सुदी ११ के दिन आश्रम से मुमुक्षु भाईयों के साथ पूज्यश्री राजकोट पधारे। परमकृपालुदेव का देहविलय जिस मकान में हुआ उसी मकान में पाँच दिन रहे। वहीं पर भक्ति करते। अंतिम दिन में जवलबहन के आग्रह से पूज्यश्री ववाणिया पधारे। वहाँ परमकृपालुदेव के जन्मस्थान पर सभामंडप का काम चल रहा था वहाँ भक्ति की।

प्रकाशपुरी, जूनागढ़

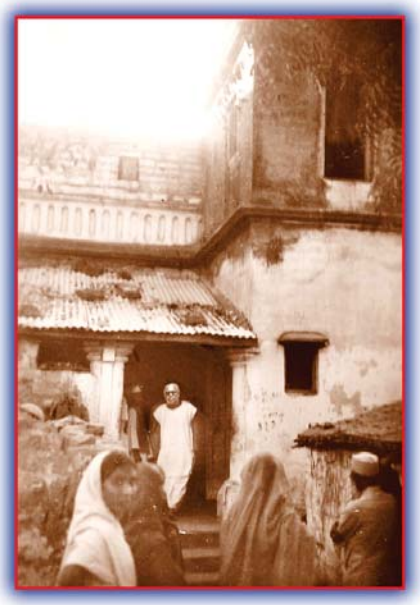

प.पू. प्रभुश्रीजीका निवासस्थान प्रकाशपुरी, जूनागढ

ववाणिया से पूज्यश्री जूनागढ़ गये। वहाँ सभी टुकों के दर्शन कर जहाँ प.पू. प्रभुश्रीजी ने सं. १९७२ का चातुर्मास किया था वहाँ 'प्रकाशपुरी' में जाकर दर्शन भक्ति की। वहाँ से मुमुक्षुओं के साथ पूज्यश्री पालिताना पधारे।

जूनागढ़ के पहाड़ पर स्थित मंदिर

पालिताना

पालिताना, कदंबगिरि, हस्तगिरि, तळाजा, भावनगर, घोघा बंदर, बोटाद, वढवाण केम्प, ईडर, विजयनगर, केसरियाजी, उदयपुर, चितौड़गढ़, रतलाम होकर इंदौर पधारे।

इंदौर से उज्जैन, मक्षीजी, सिद्धवरकूट, बड़वानी, मांडवगढ़, बाघ, भोपावर, राजपुर, कुक्षी, लक्षमणीजी आदि स्थलों की यात्रा कर वापस आश्रम आये।

सिद्धवरकूट

मांडवगढ़

बड़वानी (बावनगजा)

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी

सूरत

वर्तमानमें बना हुआ श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, सुरत

सं. १९९९ के पोष सुदी पूनम के दिन श्री मनहरभाई के घर चित्रपट की स्थापना करने हेतु पूज्यश्री सूरत पधारे। वहाँ विधिसहित स्थापना करके धामण, सडोदरा, भुवासण इत्यादि स्थलों पर जाकर वहाँ से सीधे आहोर पधारे।

आहोर

वर्तमानमें बना हुआ श्री राजमंदिर, आहोर

वहाँ राजमंदिर के पासवाले मकानमें पू. श्री ब्रह्मचारीजीके ठहरने की व्यवस्था थी। मुमुक्षु भाई-बहनोसे पूरा राजमंदिर भर जाता था। और अत्यंत उल्लासभावसे भक्ति वांचन आदि होते थे। २१ दिन आहोरमें स्थिरता करके पूज्यश्री ईड़र पधारे।

ईडर प्रतिष्ठा

वर्तमानमें बनी हुई श्री चंद्रप्रभुकी दहेरी

ईडर में सिद्धशिला के सामने छोटी पहाड़ी पर श्री चंद्रप्रभुस्वामी के पादुकाजी की स्थापना के अवसर पर आना हुआ।

पूज्यश्री तथा मुमुक्षुभाई-बहने ग्यारह दिन वहाँ रुककर, जहाँ जहाँ परमकृपालुदेव विचरे थे उन सब पवित्र स्थानों में प्रतिदिन दर्शन करने जाते तथा अत्यंत उल्लासभाव से भक्ति के पद्य बोलते। वहाँ से नरोडा आये।

नरोडा

जहाँ परमकृपालुदेव बिराजे थे वहाँ वर्तमानमें बनी हुई दहेरी, नरोडा

नरोडा में दो दिन ठहरे। गाँव के बाहर जहाँ परमकृपालुदेव विराजे थे उस स्थान पर चबूतरा बनाया गया है। वहाँ सब बैठे। फिर पूज्यश्री ने श्री वस्तीमलजी को **'अपूर्व अवसर'** बोलने की आज्ञा की और अन्य सभी लोगों को मौन रहकर ध्यान में बैठने के लिए कहा। उस समय जिस उल्लासभाव से **'अपूर्व अवसर'** बोला गया था उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। नरोडा से मुमुक्षु आश्रम में आये।

पूज्यश्री तीन मुमुक्षुओं के साथ अहमदाबाद में श्री जेसींगभाई सेठ के घर तीन दिन ठहरे। सेठजी को अत्यंत उल्लास एवं आनंद हुआ था। उनके बंगले पर ही भक्ति तथा स्वाध्याय हुआ करता। वहाँ से सीधे आश्रम में आना हुआ। इस बार सूरत जिला, राजस्थान तथा ईडर आदि मिलाकर कुल तीन महीनों की यात्रा सुखपूर्वक पूर्ण हुई।

ववाणिया प्रतिष्ठा

पहले बना हुआ श्रीमद् राजचंद्र जन्मभवन, ववाणिया

सं. २००० के कार्तिक सुदी १० के दिन पूज्यश्री संघ सहित श्री ववाणिया तीर्थ पर प्रतिष्ठा के निमित्त से पधारे। पूज्यश्री का मुकाम उपाश्रय में था। भक्ति का कार्यक्रम मंडप में होता था। मोरबी के राजा ने भी वहाँ आकर बहुत मदद की थी।

श्री भगवानभाई

परमकृपालुदेव के दामाद श्री भगवानभाई ने जहाँ परमकृपालुदेव का जन्मस्थल है उस स्थल पर बड़ा सभामंडप बनाकर उसमें जिनप्रतिमा तथा बगल में श्रीमद् राजचंद्र प्रभु की प्रतिमा की स्थापना हो इस हेतु दो विभाग किये थे। वहाँ खूब धूमधाम से जय जयकार की ध्वनि सहित गाते बजाते अलौकिक रीत से पू. श्री ब्रह्मचारीजी के सानिध्य में विधिसहित, अपूर्व उल्लास से कार्तिक सुदी पूनम के दिन स्थापना हुई थी।

कच्छ की यात्रा

संवत् २००० के कार्तिक वदी २ के दिन श्री पुनशीभाई सेठ के आग्रह से पू. श्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षुओं के साथ ववाणिया से कच्छ की यात्रा के लिए पधारे।

भद्रेश्वर

यह तीर्थ जगडुशा सेठ ने बंधवाया है। वहाँ बावन जिनालय के बड़े मंदिर में भव्य प्रतिमाओं के दर्शन किये। छः दिन वहाँ ठहरकर मुंद्रा में दर्शन करके भुजपुर आये।

भुजपुर

भुजपुर में वेलजी मेघराज के घर पर निवास किया था। वेलजी मेघराज ने अमुक गुणस्थानकों पर काव्य रचा था। वह पूज्यश्री को गाकर सुनाया। उसके जवाब में पूज्यश्री ने कहा : "आज्ञा के बिना अथवा अपनी कल्पना से विष पीने समान है। अनादिकाल से यह जीव भटक रहा है। वह किस वजह से ? इसी तरह जीव स्वच्छंद से सब करता आया है परन्तु कल्याण नहीं हुआ।"

मोटी (बड़ी) खाखर

भुजपुर से मोटी खाखर आये। वहाँ तीन मंदिर हैं। रोज दर्शन करने जाते। आठ दिन वहाँ रहकर नानी (छोटी) खाखर में मंदिर के दर्शन करके बीदडा आये।

नानी (छोटी) खाखर

अगले दिन सेठ प्रेमजी लधा मोटर लेकर बीदडा आ पहुँचे। पूज्यश्री तथा मुमुक्षु भाईयों को फिर से नानी (छोटी) खाखर लेकर गये। सेठ प्रेमजी लधा अत्यंत उल्लासभाव से पूज्यश्री का बहुमान तथा विनय करते और रोज़ परिवार सहित बोध सुनने आते। महापुरुष हमारे घर पधारे है उसका सेठजी और उनके परिवारवालों को अत्यंत आनंद और उल्लास था। पूज्यश्री चार दिन रुके थे।

बीदडा

बीदडा में मंदिर के दर्शन किये। वहाँ श्री वेलसीभाई का आश्रम है। भक्ति में पूज्यश्री की आज्ञा से श्री शंकर भगत "जीव को मार्ग मिला नहीं है इसका क्या कारण ?" यह पत्र बोले फिर पूज्यश्री ने इस पत्र का विवेचन किया। वह सुनते ही वेलजीभाई को बहुत आश्चर्य हुआ और वे बोले - ऐसी बात मुझे कहीं सुनने को नहीं मिली। उसका क्या कारण होगा ?

पूज्यश्री ने कहा : "महापुण्य का योग हो तब ही ऐसे अपूर्व वचन सुनने का भाग्य प्राप्त होता है। जीव अनादि-काल से इस संसार में भटक रहा है। परन्तु किसी वक्त पुण्य का उदय होता है तब ही सत्पुरुष के वचन कान में पड़ते है।" इस तरह का बोध मिलने से वेलसीभाई को अत्यंत उल्लास हुआ था। दो दिन वहाँ रुककर सब कोडाय पधारे।

कोडाय

इस गाँव में तीन बड़े देरासर है। ब्रह्मचारी बहनों का आश्रम श्री कमुबहन के नाम से प्रसिद्ध है।

परमकृपालुदेव को शिक्षा के लिए काशी भेजने हेतु इस गाँव के श्री हेमराजभाई, नळिया के श्री मालशीभाई दोनों साथ में राजकोट आये थे। इन दोनों भाईयों को परम-कृपालुदेव का अलौकिक माहात्म्य अनुभव हुआ था तब से इस गाँव में परमकृपालुदेव की श्रद्धा रखनेवाले अनेक मुमुक्षु हुए। यह गाँव काशीपुरी के नाम से भी पहचाना जाता है। यहाँ जैन शास्त्रों का भंडार भी है।

वहाँ मुनि श्री पद्मविजयजी ने पूज्यश्री के वांचन का अच्छा लाभ लिया और कहा कि आप यहाँ पधारे हो तो अनेक लोग भक्ति में आते हैं, अन्यथा कोई नहीं आता।

कोडाय में पूज्यश्री ने जो बोध दिया वह सुनकर एक साध्वीजी ने कहा कि "यह बोध मेरे हृदय को स्पर्श कर गया है। ऐसा बोध किसी साधु के पास से हमने सुना नहीं है। आज से परमकृपालुदेव को मैं पूजनीय मानती हूँ।" पूज्यश्री के पास से उन्होंने अपूर्व वस्तु की प्रसादीरूप स्मरणमंत्र तथा 'तत्त्वज्ञान' लिया था। पूज्यश्री ने उन्हें आठ दृष्टि की सज्झाय का विवेचन करके अच्छी तरह से समझाया था। अलौकिक बोध हुआ था। साध्वीजी के लिए अति उल्लास तथा श्रद्धा का कारण बना था।

रायण

सेठ श्री पुनशीभाई के घर पर ही पूज्यश्री आदि का मुकाम था। भक्ति वांचन भी उनके वहाँ ही होता था। रायण में तीन देरासर हैं। पाँच दिन वहाँ रुकना हुआ था। सेठ श्री पुनशीभाई की भावना अति उत्तम थी।

नवावास

देरासर में चैत्यवंदन आदि करके **"निःशंकता से निर्भयता उत्पन्न होती है; और उससे निःसंगता प्राप्त होती है।"** (वचनामृत पत्र २५४) यह पत्र बोलने की पूज्यश्री ने श्री मोहनभाई को आज्ञा दी। वहाँ उपस्थित श्री अविचलश्रीजी तथा श्री गुणश्रीजी इन दो साध्वीजी को यह पत्र सुनते ही मन में महसूस हुआ कि यह कोई अलौकिक मार्ग है। फिर पूज्यश्री के समागम से, उन्हें ऐसी श्रद्धा हो गयी की परमकृपालुदेव सही में सद्गुरु भगवान ही है, उनकी शरण ग्रहण करने से आत्मा का कल्याण अवश्य होगा।

इसके बाद वे अक्सर आश्रम में आते। सं. २००४ का चातुर्मास भी उन्होंने आश्रम में किया था। पत्रों द्वारा पूज्यश्री का समागम भी उन्हें बहुत मिला था। अविचलश्रीजी का देहत्याग चातुर्मासी प्रतिक्रमण करते हुए काउसग्ग में हुआ था।

वहाँ से मेराऊ, मापर, संधाण, सुथरी, अरिखाण, सिंधोडी, लाला, जखौ, जसापुर, नळिया, तेरा, कोठारा, डुमरा, जामनगर आदि स्थलों में मंदिरों के दर्शन करके बगसरा आये।

बगसरा

बगसरा में सं.१९७३ का चातुर्मास प.पू. प्रभुश्रीजी ने जिस हॉल में किया था उसी हॉल में पू. श्री ठहरे थे। वहाँ पू.श्री का अति वैराग्यपूर्वक वांचन होता था। तीन दिन वहाँ रुककर फिर बोटाद पधारे।

बोटाद

सेठ वीरचंद भूराभाई घर पर ठहरने की व्यवस्था थी। बोटाद में परमकृपालुदेव जहाँ रहे थे उस मकान में पूज्यश्री आदि मुमुक्षुओं ने भक्ति, भजन किया। वहाँ से वढवाण केम्प होते हुए आश्रम पर पधारे।

सं. २००१ के कार्तिक वदी ७ को मंगलवार के शुभ दिन पू. श्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षु भाई-बहनों सहित आश्रम से शिवगंज पधारे, वहाँ पाँच दिन ठहरकर आहोर पधारे। आहोर में एक माह तक स्थिरता की थी। उस समय अनेक मुमुक्षुओं ने स्मरणमंत्र लिया था।

नाकोडा

आहोर से जालोर गढ़ पर दर्शन करके नाकोडा तीर्थ पधारे। उस समय पूज्यश्री की दशा अद्भुत वैराग्यमय थी। शरीर के प्रति मूर्छा तो जैसे पूर्ण क्षीण हो गयी हो ऐसा लगता था। नाकोडा तीर्थ में ९ दिन रहकर पाली आये। पाली में एक पहाड़ पर मंदिर है। वहाँ दर्शनभक्ति करके इंदौर पधारे।

इंदौर में काविठा के श्री सोमाभाई प्रभुदासकी तरफ से श्री समेतशिखरजी यात्रासंघ ले जाने का तय किया। यह समाचार आश्रम भेजे जिससे अन्य मुमुक्षु भी इंदौर आ पहुँचे।

श्री समेतशिखरजी की यात्रा

इंदौर से सं. २००१ के पौष सुदी ९ के शुभ दिन श्री समेतशिखरजी की यात्रा के लिए प्रयाण कर बनारस आये। वहाँ भेलुपुर में पार्श्वनाथ भगवान के चार कल्याणक हुए हैं।

भदैनी घाट गंगातीर पर श्री सुपार्श्वनाथ भगवान के चार कल्याणक का स्थान है। चंद्रपुरी (चंद्रावती) वहाँ से बीस मील दूर है। वहाँ चंद्रप्रभस्वामी के चार कल्याणक हुए थे।

सारनाथ (सिंहपुरी) में श्री श्रेयासनाथ भगवान के चार कल्याणक हैं। इन सभी स्थलों पर दर्शन भक्ति करके पटना (पाटलीपुत्र) गये।

एक प्रतिमा चौथे आरे की

पटना नंदराजा एवं चंद्रगुप्त राजा की राजधानी थी। वहाँ सात देरासर हैं। इनमें एक प्रतिमा चौथे आरे की है। श्री सुदर्शन शेठ जिस स्थान से मोक्ष गये वहाँ पादुकाजी की स्थापना है।

एक मंदिर के सामने श्री स्थूलिभद्रजी कोशा तवायफ के महल में चातुर्मास हेतु ठहरे थे वहाँ पादुकाजी की स्थापना है।

पटना से राजगृही आकर श्वेतांबर धर्मशाला में ठहरे।

श्री राजगृही तीर्थ

श्री राजगृहीमें आए हुए पाँच पहाड

गाँव से एक मील दूर पाँच पहाड़ आते हैं । (१) विपुलाचल, (२) रत्नागिरि, (३) उदयगिरि, (४) सोनागिरि (श्रमणगिरि), (५) वैभारगिरि

चार हजार वर्ष पुरानी भव्य प्रतिमा

विपुलाचल पर्वत पर श्री महावीर भगवान आदि के मंदिर है । रत्नागिरि पर मुनिसुव्रतस्वामी का मंदिर है । उदयगिरि पर श्री पार्श्वनाथ भगवान की चार हजार वर्ष पुरानी भव्य प्रतिमा है । वैभारगिरि पर महावीरस्वामी अनेक बार पधारे थे ऐसा शास्त्रों में वर्णन है । इस पहाड़ पर श्री मुनिसुव्रतस्वामी के चार कल्याणक के स्थान है । वहाँ मंदिर है । यहीं से श्री धन्नाभद्र तथा श्री शालीभद्र अनशन करके मोक्ष गये थे । इस स्थान पर उनकी मूर्तियाँ हैं ।

वैभारगिरि की चोटी पर श्री गौतमस्वामी की देहरी है, वहाँ जाकर चैत्यवंदन किया । वहाँ से वापस लौटते समय रास्ते में मंदिर के आगे नीचे दो गुफा है । वो रोहिणिया चोर की गुफाएँ कहलाती है । वो गुफाएँ एक छोटे गाँव के जितनी विशाल है ।

पूज्यश्री को मुमुक्षुओं ने करवाया स्नान

वैभारगिरि पहाड़ के तल पर गरम पानी के छः कुंड है । उसका पानी गंधक या ऐसी ही कोई धातुमिश्रित होने से प्राकृतिक रूप से गरम होता है । यह पानी रोग निवारक है । लकवा, संग्रहणी आदि रोग के लिए अति उपयोगी कहलाता है । हजारों मनुष्यो उसका उपयोग करते हैं । इस स्थान पर पूज्यश्री को श्री मगनभाई, श्री धर्मचंदभाई तथा श्री वस्तीमलभाई ने मिलकर १०८ कलश से स्नान करवाया था । राजगृही में कुल मिलाकर ९ दिन रहे थे । वहाँ से नालंदा कुंडलपुर आये । वह

श्री मगनभाई

श्री धर्मचंदजी

ब्र. श्री वस्तीमलजी

महावीर स्वामी की जन्मभूमि है । वहाँ श्वेतांबर, दिगंबर के मंदिर हैं । उनके दर्शन कर शाम को राजगृही वापस आ पहुँचे ।

पावापुरी - श्री महावीर स्वामी का मोक्षस्थान

भगवान महावीर स्वामीके अग्निसंस्कार स्थान पर जलमंदिर

राजगृही से पावापुरी गये । वहाँ श्री महावीर स्वामी के मोक्षस्थान तथा अग्निसंस्कार के स्थल पर तालाब के बीच जलमंदिर बना है । वह सुंदर एवं रमणीय है । मंदिर में जाने के लिए सेतु भी बांधा हुआ है ।

जलमंदिर से एक मील दूर श्री महावीर स्वामी की अंतिम देशना के स्थान पर समवसरण की रचना के आकार का सुंदर रमणीय मंदिर बना है । इसे बाबु का मंदिर कहते है ।

अब संघ पावापुरी से गुणियाजी आया । वहाँ गौतम स्वामी के निर्वाणस्थान पर सुंदर जलमंदिर बनाया है । वहाँ दर्शन भक्ति करके समेतशिखरजी के लिए प्रयाण किया ।

मधुवन - श्री समेतशिखरजी तीर्थ

जहाँसे बीस तीर्थंकर मोक्षमें पधारे

महा सुदी पूर्णिमा के दिन सुबह ८ बजे सभी मधुवन-समेतशिखरजी आ पहुँचे। श्वेतांबर धर्मशाला में ठहरे। वहाँ मंदिर में भक्ति, पूजा, स्वाध्याय में वह दिन व्यतीत हुआ। महा सुदी पूर्णिमा के रात ३ बजे अर्थात् महा वदी एकम के प्रातःकालमें समेतशिखरजी के पहाड़ पर चढ़ने के लिए प्रयाण किया। सूर्योदय के समय श्री गौतमस्वामी के प्रथम टुक पर पहुँचे। वहाँ दर्शन करके आलोचना बोलकर वहाँ से आगे पैंतीस टुक हैं वहाँ दर्शन करने गये। सभी पवित्र स्थानों के दर्शन कर जलमंदिर पर आकर चैत्यवंदन स्तवन आदि कार्यक्रम पूर्ण करके नौ बजे साथ में लाये हुए नाश्ते का उपयोग किया। फिर पार्श्वनाथ भगवान की अंतिम टुक है, वहाँ जाकर 'पंचकल्याणक', 'मूळ मारग' आदि बोलकर दोपहर के ढाई बजे नीचे धर्मशाला आ पहुँचे।

श्री जंबुस्वामी की निर्वाण भूमि

अगले दिन अयोध्या गये। वहाँ श्वेतांबर तथा दिगंबर मंदिरो के दर्शन करके मथुरा अयो; वहाँ श्वेतांबर मंदिर में दर्शन भक्ति करके वहाँ से डेढ़ मील दूर श्री जंबुस्वामी की निर्वाणभूमि है, वहाँ जाकर दर्शन किये। वहाँ दिगंबर मंदिर और ब्रह्मचर्याश्रम भी है। मथुरा से रवाना होकर संघ अगास आश्रम आ पहुँचा। इस तरह श्री समेतशिखरजी की यात्रा सुखपूर्वक पूर्ण हुई।

ववाणिया की यात्रा

सं. २००२ के कार्तिक वदी ७ के दिन आश्रम से पूज्यश्री ४०-५० मुमुक्षुओं के साथ ववाणिया पधारे। पूज्यश्री के साथ ४-५ मुमुक्षु ववाणिया ठहरे। शेष मुमुक्षु तीन दिन रहकर पालीताना आदि की यात्रा के लिए गये।

परमकृपालुदेव जहाँ ध्यान करते थे ऐसी नौ तलैया

परमकृपालुदेव ध्यान करते थे उनमेंसे एक तलैया

ववाणिया में नौ तलैया हैं। सभी तलैयों पर परमकृपालुदेव अनेक बार जाते थे इसलिए वे पूजनीय मानी जाती है। प्रतिदिन एक-एक तलैया पर जाकर हम सब भक्ति करते।

एक दिन पूज्यश्री के साथ बहुत से मुमुक्षु काली तलैया पर भक्ति कर रहे थे, तब वहाँ एक सांप निकला। पूज्यश्री ने कहा : "कोई घबराना नहीं। वह अपने आप घूमकर चला जायेगा।" थोड़ा इधर-उधर घूमकर, भक्ति पूर्ण होने आयी इतने में वह सांप चला गया। उस वक्त पूज्यश्री ११ दिन ववाणिया ठहरे थे। पूज्यश्री आये थे इसलिए श्री जवलबहन भी वहीं रुके थे।

श्री राजकोट

वर्तमानमें बना हुआ श्रीमद् राजचंद्र ज्ञानमंदिर, राजकोट

ववाणिया से प्रस्थान कर के दो दिन राजकोट रहे थे।

क्षेत्र स्पर्शना से अनेक मुमुक्षुओं के घर आगमन

बाद में वढवाण केम्प में चार दिन, अहमदाबाद में श्री जेसींगभाई के घर दो दिन, वहाँ से सीधा सूरत दो दिन, धुलीया छः दिन, व्यारा एक दिन रुककर बारडोली, सरभाण, भुवासण, धामण, सडोदरा, पथराडिया, देरोद, आस्ता आदि स्थलों में घूमकर वापसी में सूरत तीन दिन ठहरकर, वहाँ से पालेज में तीन दिन स्थिरता करके आश्रम पधारे ।

सं. २००३ के कार्तिक वदी ७ के दिन पूज्यश्री काविठा गये । वहाँ सवा महिना स्थिरता की । फिर सीमरडा ग्यारह दिन रहे । वहाँ से डभासी दो दिन, भादरण बारह दिन, सीसवा तीन दिन रहकर बोरसद होकर आश्रम आये ।

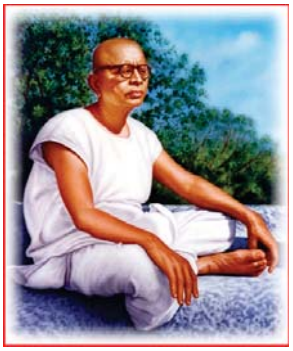

वैशाख वदी ग्यारस के दिन आँखो की जाँच के लिए पूज्यश्री का मुंबई जाना हुआ था । वहाँ से वापस लौटते समय ऊभराट पच्चीस दिन रहे थे ।

सं. २००४ के कार्तिक वदी ७ के दिन पूज्यश्री पैदल विहार करके संदेशर गये । वहाँ से बांधणी नौ दिन, सुणाव एक माह और दो दिन, दंताली सोलह दिन, सीमरडा बारह दिन, आशी एक माह रहकर आश्रम वापस आये थे ।

काविठा गाँव में प्रतिष्ठा

वर्तमानमें सभामंडपके साथ श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, काविठा

सं. २००४ के वैशाख सुदी ९ के दिन पूज्यश्री मुमुक्षुओं के साथ पैदल विहार करके प्रतिष्ठा हेतु काविठा पधारे । वहाँ आठ दिनका अट्ठाई महोत्सव रखा था । इसलिए निकट एवं दूर के अनेक मुमुक्षु वहाँ उपस्थित रहते थे ।

प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी की प्रतिमाजी

वैशाख सुदी तेरस के शुभ दिन पूज्यश्री के सानिध्य में ऊपरी भागमें तीर्थंकर भगवान की प्रतिमा, नीचे के भाग में परमकृपालुदेव की प्रतिमा और गर्भगृह के बाहर एक ओर प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी की प्रतिमा की स्थापना हुई थी ।

देरासर के आगे चौक मे दो हजार सदस्य बैठ सकें उतना बड़ा सुंदर विशाल मंडप बांधा गया था । भक्ति के सब कार्यक्रम वहाँ होते थे । वांचन में पूज्यश्री का विवेचन इतना प्रभावशाली होता था कि कई जीवों के लिए वैराग्य के कारण बना था ।

शोभायात्रा की शान कुछ अलौकिक लगती थी । जैसे सितारों में चाँद प्रकाशित होता है वैसे पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी संघ के मध्य में शोभित हो रहे थे । भक्ति के पद्य और गरबीयां (गुजराती गीत) अति उल्लास से सभी गाये जाते थे ।

आबू माउन्ट में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षु भाईयों के साथ

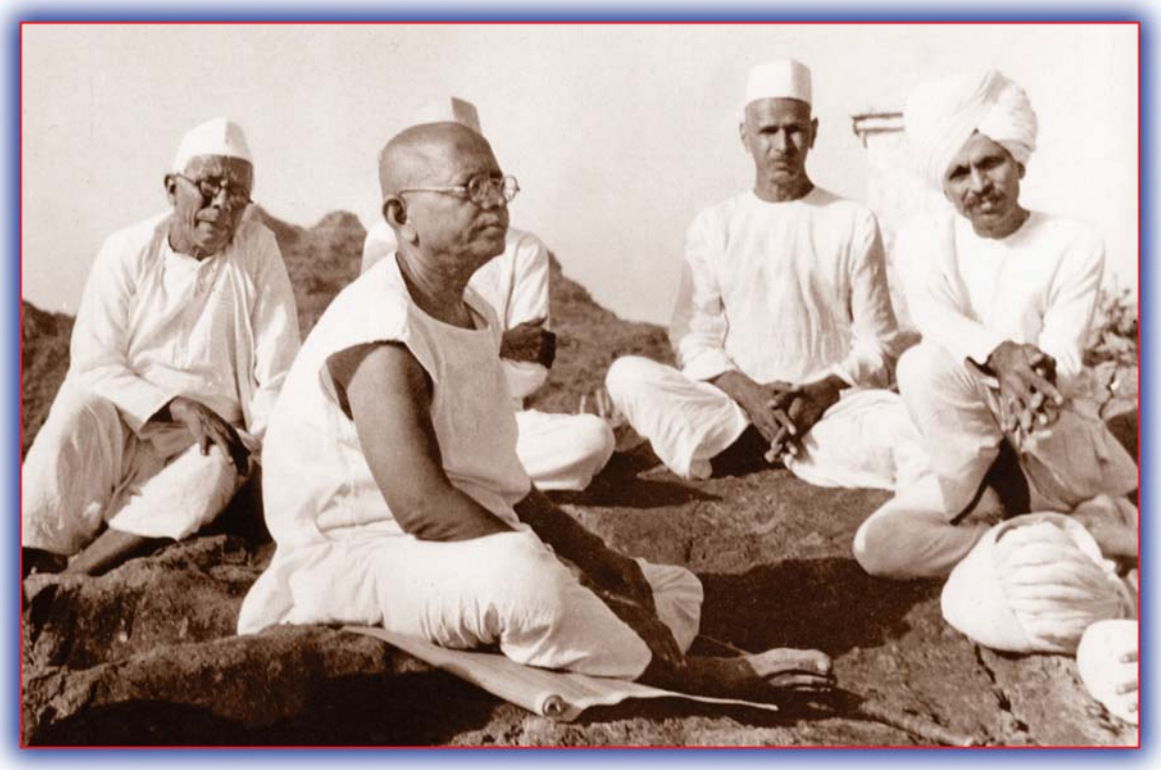

कोदरा बांध पर पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षु-भाईबहनों के साथ

संवत् २००५ वैशाख सुदी १३ के दिन श्री चुनीलाल मेघराज के निवेदन से आश्रम से पूज्यश्री मुमुक्षुओं सहित आबू माउन्ट पधारे । एक माह और दस दिन वहाँ रुके थे ।

आबू माउन्ट में ट्रावरस्टाल पर पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षु भाई-बहनों सहित

वरिष्ठाश्रम से आते हुए पू. श्री ब्रह्मचारीजी तथा वापरा सुपरा पॉइन्ट पर मुमुक्षुओं सहित भक्ति करते हुए

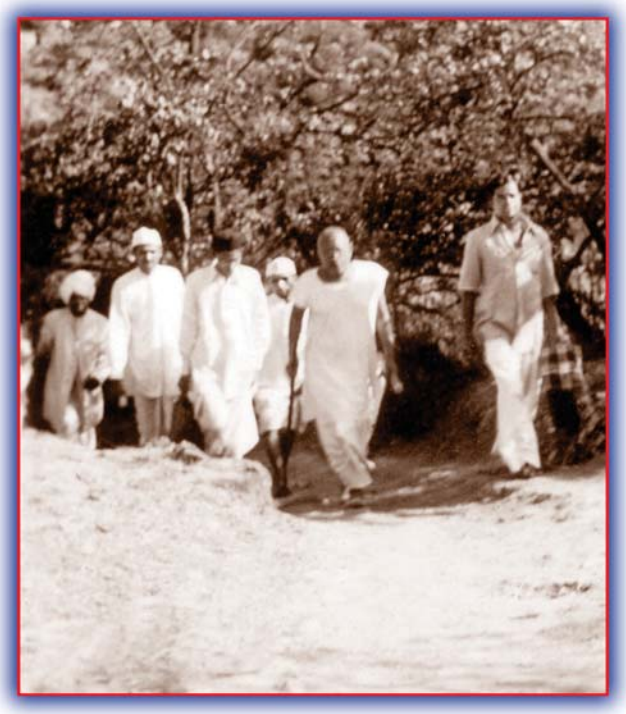

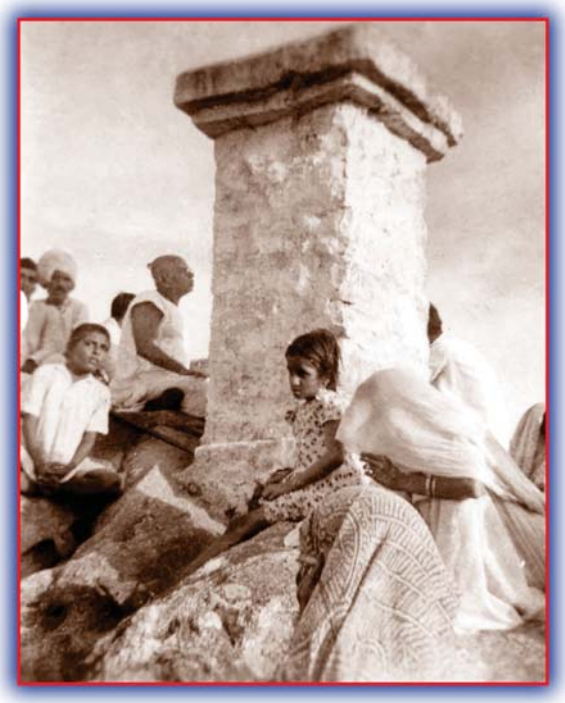

सं. १९९१ के साल में प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजी आबू पधारे उस समय जिस जिस स्थान की उन्होंने स्पर्शना की थी उन सभी उत्तम स्थानों में पूज्यश्री घूमने जाते । वहाँ भक्ति करके वापस निवास पर आते, उन स्थानों के नाम इस प्रकार हैं :–

अनादरा पॉइन्ट पर पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षु भाईयों के साथ

वापर सुपरा पॉइन्ट पर पू. श्री ब्रह्मचारीजी
तथा श्री रणछोडभाई

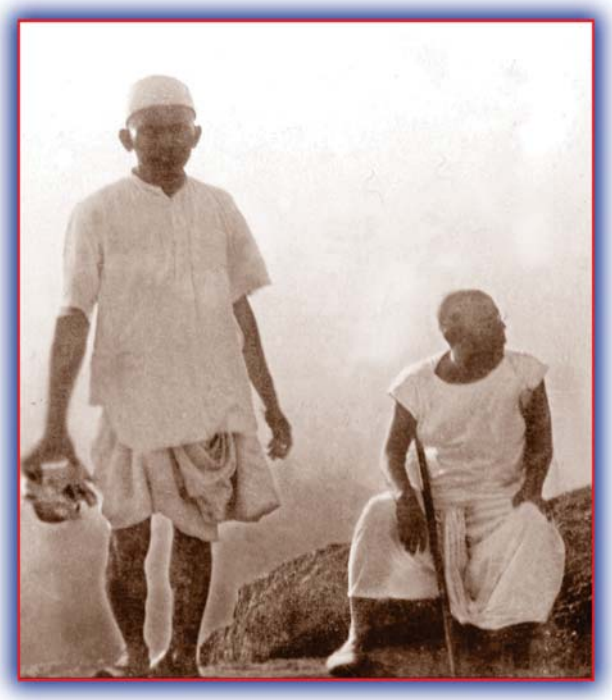

बांध पर से जाते हुए पू. श्री ब्रह्मचारीजी
तथा अन्य मुमुक्षु भाई

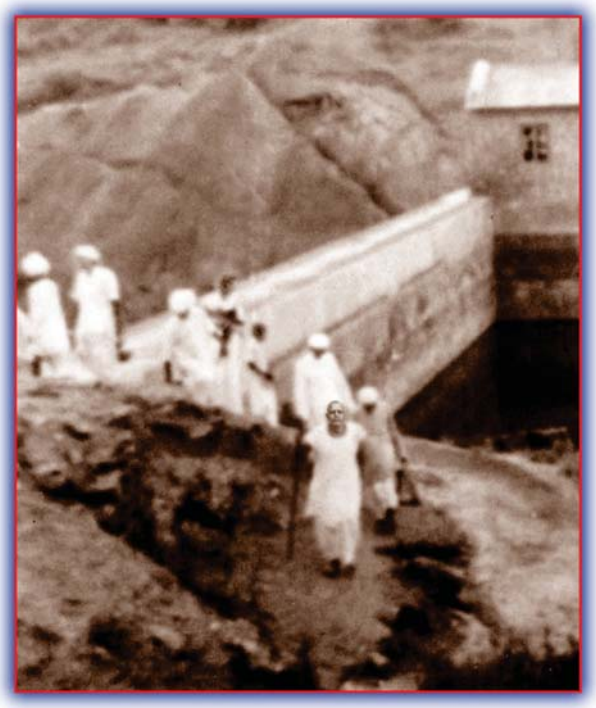

देलवाडा के मंदिर, क्रेग पोइन्ट, वसिष्ठ आश्रम, अनादरा पोइन्ट,
शांतिविजयजी की गुफा, देडकी शिला, अचलगढ़, टेन तालाब, नखी तालाब आदि जगहों पर भक्ति की थी ।

आबू माउन्ट में पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षु भाई एवं बहनों के साथ

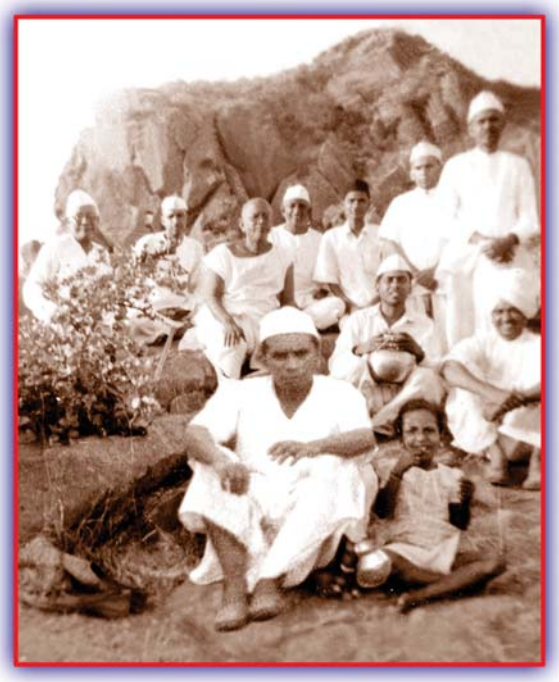

आबू माउन्ट में पू. श्री ब्रह्मचारीजी

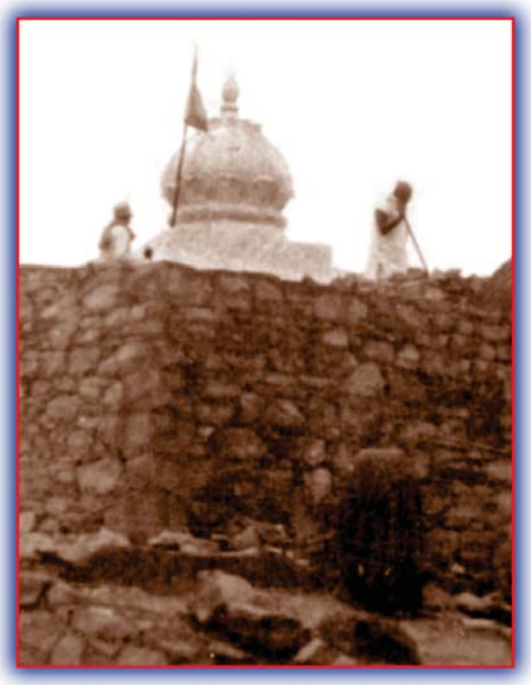

आबू माउन्ट में पू. श्री ब्रह्मचारीजी का निवासस्थान

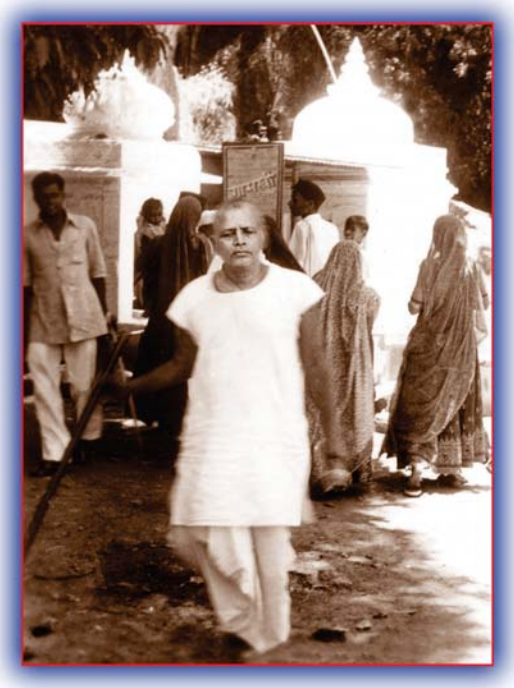

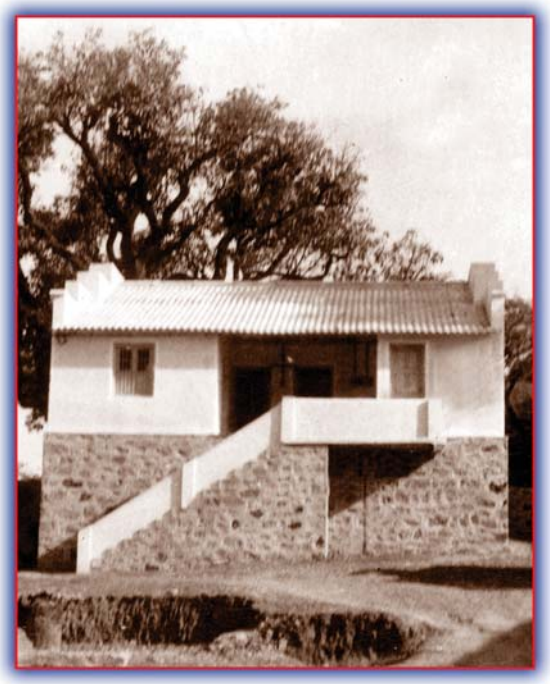

पू. श्री ब्रह्मचारीजी आबू रहे तबतक आचारांग सूत्र का पठन किया। भक्ति के दौरान श्री मोहनभाई वचनामृत पढ़ते थे और पूज्यश्री उस पर विवेचन करते थे। लगभग वचनामृत का पूर्ण विवेचन वहाँ हुआ था। वहाँ जंगल में अकेले जाकर पूज्यश्री एकांत में ध्यान में बैठते या काउसग्ग मुद्रा में खड़े रहते। आश्रम के ट्रस्टीओं ने पूज्यश्री को तार भेजकर आबू से आश्रम बुलवाया था।

सीमरडा

वर्तमानमें जिनमंदिरके साथ बना हुआ श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, सीमरडा

आश्रम आने के पश्चात् पूज्यश्री पर भारी उपसर्ग हुए। उन्होंने समभाव से सब सहन किये। जब ट्रस्टियों ने पूज्यश्री से कहा कि अबसे आप किसीको मंत्र प्रदान नहीं करेंगे। उस दिन शाम को स्टेशन जाकर एक मुमुक्षु भाई को मंत्र दिया और अगले दिन अर्थात् सं. २००६ को पौष सुदी ६ के दिन अंतःस्फूरणा होने से प्रातः साढ़े चार बजे आश्रम से पैदल विहार करके पूज्यश्री सीमरडा पधारे। साथ में मात्र एक बैठने के लिए चटाई थी, जो प.पू. प्रभुश्रीजी ने उनको दी थी।

उस वक्त पूज्यश्री साड़े तीन माह सीमरडा में रहे। उस समय के दौरान आश्रममें आनेवाले मुमुक्षु सीमरडा जाकर दर्शन समागम का लाभ लेते थे।

बाद में श्री अमृतलाल परीख, श्री मनहरभाई, श्री पदमशीभाई, श्री रावजीभाई देसाई इत्यादि आश्रम के ट्रस्टीगण सीमरडा जाकर चैत्र वदी ३ की सुबह पूज्यश्री को सविनय आश्रम पर ले आये थे।

जो कार्य तीन वर्षों में न हो सके वह तीन महिनों में

इन उपसर्गो से पूज्यश्री का खूब आत्मविकास हुआ। आश्रम में आने के पश्चात् किसी प्रसंग में भी मोहनभाई को पूज्यश्री ने कहा था कि **"जो कार्य तीन वर्षों में न हो सके वह इन तीन महिनों में हुआ है।"** दिन प्रतिदिन उनका आत्मप्रभाव हमने चढ़ते परिणामसे बढ़ते हुये देखा है। यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है, परन्तु जो लोग समागम में आये उनका यह व्यक्तिगत अनुभव है।

ईडर

सं. २००६ के चैत्र वदी ८ के दिन पूज्यश्री ४०-५० मुमुक्षुभाई-बहनो सहित तीन दिन की ईडर यात्रा पर गये। सभी जगहों पर दर्शन भक्ति करके वापस लौटे।

इंदौर

वर्तमानमें बना हुआ श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, इन्दोर

सं. २००६ के वैशाख सुदी ११ के दिन अगास आश्रम से ५०-६० मुमुक्षुओं सहित पूज्यश्री चित्रपट की स्थापना हेतु इंदौर पधारे।

वहाँ के मुमुक्षुओं ने भक्ति के लिए मकान के उपरवाले हॉल में वैशाख सुदी १३ के दिन पूज्यश्री के शुभ हाथों से चित्रपटों की स्थापना करवाई। वहाँ से बनेडियाजी आदि स्थलों की यात्रा करके वापस इंदौर आए।

इंदौर मुकाम पर जाते हुए, नसीआ धर्मशाला में जहाँ प.पू. प्रभुश्रीजी सं. १९७६ के साल में ठहरे थे, वहाँ 'आत्मसिद्धि' और 'मूळ मारग' आदि की अत्यंत उल्लास-पूर्वक भक्ति की। बाद में सब अगास आश्रम आए।

मोरबी

वर्तमानमें बनाया हुआ श्रीमद् राजचंद्र स्मृति मंदिर, मोरबी

सं. २००७ को कार्तिक वदी ३ के दिन आश्रम से पूज्यश्री लगभग ५० मुमुक्षुओं के संग मोरबी पधारे।

ववाणिया में श्रीमद् राजचंद्रजी को जातिस्मृति ज्ञान हुआ
उस वृक्ष के पास पू. श्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षु भाई-बहनों सहित

मारबा क दशन करक ववााणया आए । श्रा जवलबहन आर बुाद्धधनभाइ आाद वहा पर थ ।

सुबह की भक्ति कर लेने के बाद सभी तलैयों पर घूमने गये । बाद में जहाँ परमकृपालुदेव को जातिस्मृति ज्ञान हुआ था उस बबुल के पेड़ के पास बैठ के भक्ति की तथा बहनों ने गरबे गाये । दूसरे दिन तलैया पर पद्य बोलके बैठे फिर पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने बताया कि "यात्रा में शरीर जितना कष्ट सहन करे उतना अच्छा है ।" स्वयं अति उल्लास में थे । उसी दिन थोड़े समय में एक सुंदर भजन तैयार किया ।

"अंतर अति उल्लसे हो कि जन्मभूमि नीरखी, मुमुक्षु मनने हो कल्याणक सरखी ।"

यह भजन श्री वस्तीमलभाई को भक्ति में बोलने की आज्ञा दी । सर्व मुमुक्षुओं ने प्रेमसहित साथ में गाकर खूब आनंद का अनुभव किया था । ववाणिया छः दिन रुककर राजकोट पधारे । राजकोट में जहाँ परमकृपालुदेव का समाधिस्थल है वहाँ दर्शन भक्ति करके फिर जिस बंगले में परमकृपालुदेव का देहविलय हुआ था उस स्थान पर दर्शन के लिए गए ।

श्री जुनागढ़-गिरनार के गढ़ पर
श्री नेमिनाथ प्रभु के निर्वाणस्थल पर भक्ति करते हुए पू. श्री ब्रह्मचारीजी तथा मुमुक्षु भाई-बहनें

राजकोट से जुनागढ़ पधारे। गाँव के मंदिरों और तलहटी के मंदिरों में दर्शन करके पूजा भक्ति की। तीसरे दिन गढ़ पर चढ़े। सभी टूकों पर दर्शन भक्ति की और मुख्य मंदिर में चैत्यवंदन किया। शामको राजुल की गुफा देखी। बाद में चिदानंदजी की गुफा पर गए। उस गुफा में रात को कोई रह नहीं सकता था। सं. १९६० के साल में प.पू. प्रभुश्रीजी और मुनिश्री मोहनलालजी महाराज इस गुफा में तीन दिन रहे थे। व्यंतर के कारण उपद्रव भी हुए थे। वहाँ दर्शन करके गढ़ के ऊपर स्थित निवासस्थान पर आए। रात को भक्ति करके गढ़ पर सो गये। दूसरे दिन सुबह में सहसाम्रवन (शेषावन) जाकर पंचकल्याणक बोलकर पुराने रास्ते से होकर सब गाँव में आ पहुँचे।

श्री पालीताना गढ़ के मंदिरों का दर्शन

श्री हस्तगिरि तीर्थ

श्री मोतीशा की टूंक, पालीताना गढ़ पर

श्री कदंबगिरि तीर्थ

जुनागढ़ से पालीताना पधारे। पहले दिन गाँव के देरासरो में दर्शन किये। दूसरे दिन गढ़ पर चढ़के सब टूंको के दर्शन करके आदिश्वर भगवान के समक्ष चैत्यवंदन करके नीचे उतरे। पूज्यश्री ४-५ मुमुक्षुओं सहित सोनगढ़ गए। वहाँ सब जगह घूम कर समवसरण की रचना तथा देरासरों के दर्शन करके वापस पालीताना आए। वहाँ से ७-८ मुमुक्षुओं सहित पूज्यश्री बोटाद पधारे और शेष सभी मुमुक्षु पालीताना से सीधे आश्रम के लिए रवाना हुए।

श्री बाहुबलीजी की यात्रा

सं. २००८ के कार्तिक वदी ११ के दिन आश्रम में लगभग १०० मुमुक्षु भाई-बहनों के संघ सहित पूज्यश्री बाहुबलीजी की यात्रा के लिए पधारे। आश्रम से परमकृपालुदेव का लाइफ साइज का चित्रपट साथ में लिया था। वह लेकर हुबली स्टेशन पर उतरे। वहाँ श्री घेवरचंदजी, श्री ओटरमलजी आदि मुमुक्षु अति उल्लास में, बैंडबाजे के साथ लेने आए थे। गाते बजाते गाँव में प्रवेश हुआ। दिगंबर श्वेतांबर मंदिरों के दर्शन करने गए। वहाँ 'कौन उतारे पार', 'पंथ परमपद बोध्यो' तथा 'मूळ मारग' के पद्य बोले थे।

वर्तमानमें नया बनाया हुआ श्रीमद् राजचंद्र ज्ञान मंदिर, हुबली

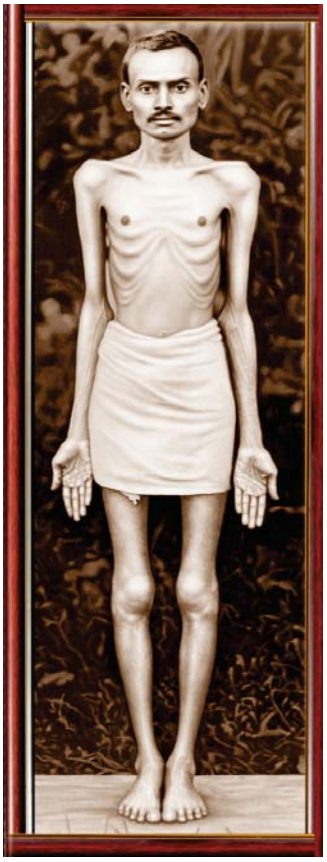

श्रीमद् राजचंद्र चित्रपट

प.पू. प्रभुश्रीजी ने सं. १९८० का चातुर्मास पूना में किया था और वहाँ से बाहुबलीजी की यात्रा पर जाते हुए हुबली स्टेशन के पास एक बंगले में तीन दिन रुके थे। उसी बंगले में पूज्यश्री सर्व मुमुक्षु भाई-बहनों सहित पधारे। वहाँ 'मंगलाचरण', 'बीस दोहे', 'जड़ ने चैतन्य बन्ने', 'बहु पुण्य केरा' के पद्य बोले थे। बंगले में रहनेवाले सेठने कहा कि धन्य भाग्य है मेरे कि आज ऐसे पुरुष के पवित्र चरण मेरे घर पड़े। (आज मेरे घर पर ऐसे पुरुष का आगमन हुआ।)

पूज्यश्री ने कहा "इस बंगले में एक आत्मज्ञानी पुरुष आये थे। जाने-अनजाने में भी आपको घर बैठे तीर्थ समान घर मिला है। महापुरुषों की चरणरज से पवित्र हुए स्थान जीव के लिए कल्याणदायक है।" इसपर पूज्यश्री ने एक दृष्टांत दिया कि, "भरत चक्रवर्ती को जिस शीशभवन में केवलज्ञान हुआ था उसी भवन में उनके बाद अनेक राजाओं ने केवलज्ञान प्राप्त किया था। महापुरुषों के पुद्गल भी ऐसे होते हैं कि लंबे समय तक उनका प्रभाव रहता है।" हुबली में तीन दिन रुक कर बेंग्लोर पधारे।

हुबलीमें प.पू. प्रभुश्रीजी रहे थे वह मकान

पू. प्रभुश्रीजी ने निवास किया था उसी हॉल में पूज्यश्री का मुकाम

बेंग्लोर में सं. १९८१ में प.पू. प्रभुश्रीजी चिकपेट के श्री आदिनाथ जैन मंदिर के जिस व्याख्यान हॉल में ठहरे थे उसी हॉल में पूज्यश्री का मुकाम था। वहाँ आहोर के श्री चंदनमलजी तथा श्री जुगराजजी ने सब व्यवस्था की थी। दो दिन वहाँ ठहरकर मैसूर पधारे। मैसूर में पूज्यश्री का मुकाम श्री मिश्रीमलजी के यहाँ था। उनके घर चित्रपटों की स्थापना की तथा आत्मसिद्धि की पूजा के दरमियान श्री निर्मलाबहन को यावत्जीवन चौथे व्रत की प्रतिज्ञा विधिसहित दी थी।

मैसूर में तीन दिन रुक कर १५० मुमुक्षु भाई-बहनों के संघ सहित बाहुबलीजी दर्शन हेतु प्रयाण किया।

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी तथा मुमुक्षु भाई-बहनें श्री बाहुबलीजी के पहाड़ पर चढ़ते हुए

विंध्यगिरि पहाड़ पर बाहुबलीजी की ५७ फीट ऊँची प्रतिमा है। उनके दर्शनार्थ पूज्यश्री सबसे आगे और पीछे पूरा संघ जय जयकार सहित चढ़ने लगा।

बाहुबलीजी के पहाड़ पर चढ़ते समय विश्राम

श्री बाहुबलीजी की प्रतिमा के समक्ष दर्शन करते हुए पू. श्री ब्रह्मचारीजी और मुमुक्षु आदि

प्रतिमा के दर्शन करके चारों ओर प्रदक्षिणा करते हुए 'कौन उतारे पार'
पद्य बोलकर प्रतिमा के समक्ष आकर बैठे ।

भरतजी के पहाड़ पर दिये बोध से मुमुक्षुओं की आँखो मे अश्रु

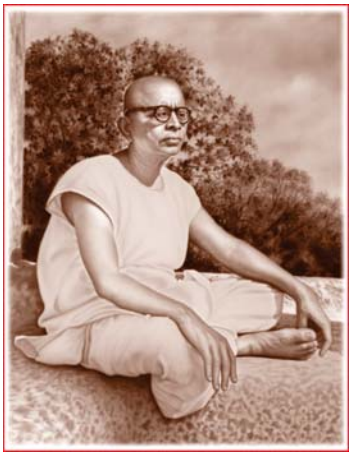

वहाँ पू. श्री ब्रह्मचारीजी ने 'प्रज्ञावबोध' में से श्री ऋषभदेव भगवान के पाठ में आए हुए बाहुबलीजी और भरतजी के युद्ध का संवाद संदेशर के श्री अंबालालभाई को गाने के लिए कहा था। साथ में पूज्यश्री ने उसका विवेचन किया। वह सुनकर खूब आनंद हुआ था।

दूसरे दिन चंद्रगिरि पहाड़ पर गए। वहाँ दर्शन करके, भरतजी की प्रतिमा जो आधी जमीन में गड़ी हुई है, वहाँ बैठे।

'प्रज्ञावबोध' में से पहले दिन गाये हुए पाठ को जारी रखते हुए उसके आगे का भाग जो भरतजी के वैराग्य संबंध का है वह गाने के लिए कहा और पूज्यश्री ने उसका विवेचन किया। वह सुनकर मुमुक्षुओं की आँखो में अश्रु आ गये।

पू. श्री ब्रह्मचारीजी भरतजी के पहाड़ पर सत्संग करते हुए मुमुक्षु भाई-बहनों सहित

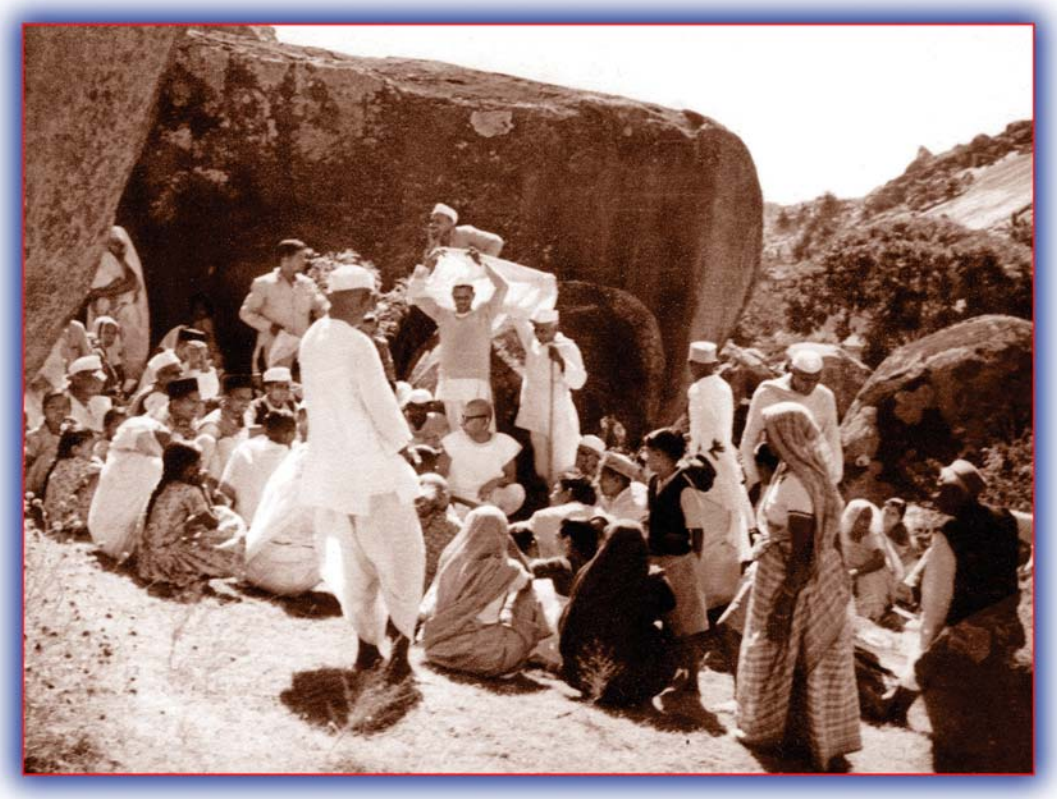

दोपहर को गाँव के मंदिर में भट्टारकजी ने स्फटिकमणि आदि विविध रत्नों से बनी प्रतिमाओं के दर्शन कराए थे।

वहाँ से वेणुर, मुडबिद्रि और कारकल में दर्शन भक्ति करके वापस हुबली पधारे। वहाँ से अनेक मुमुक्षु आश्रम वापस आ गये थे और पूज्यश्री थोड़े मुमुक्षुओं सहित हुबली से बल्लारी जाकर रायचूर आये। रायचूर में सीताबहन के वहाँ तीन दिन मुकाम था। रायचूर से एक मील दूर टेकरी पर श्री भद्रबाहुस्वामी के पादुकाजी हैं, वहाँ दर्शन करके 'अपूर्व अवसर' बोला और तालाब के किनारे दो छोटे मंदिर है वहाँ भक्ति की थी।

श्री कुलपाकजी

रायचूर से हैदराबाद होकर कुलपाकजी आए। मंदिर में प्रतिमायें चमत्कारी है। कुलपाकजी से तीन मील दूर एक पहाड़ की तलहटी में तीन प्रतिमायें है। वहाँ दर्शन करके वापस कुलपाकजी आए।

कुलपाकजी से पूज्यश्री गुडिवाडा पधारे। श्री धर्मचंदजी आदि मुमुक्षुओं का उल्लास खूब था। स्टेशन से बैंडवाजे सहित गाते बजाते पूज्यश्री को धर्मशाला ले गये। निकट में जिन मंदिर है। वहाँ दर्शन भक्ति की। मंदिर के मूल नायक पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा चमत्कारी है।

श्री धर्मचंदभाई के मकान में चित्रपटों की स्थापना पूज्यश्री के हस्तकमल से की गई। छः दिन निवास कर विजयवाड़ा, भांडुकतीर्थ होकर अंतरीक्ष पार्श्वनाथ आये।

वहाँ से पूज्यश्री धूलिया पधारे। उसके उल्लास में श्री मगनभाई लक्ष्मीदास आदि तीन भाईयों ने प.पू. प्रभुश्रीजी का बोध मुद्रित करने के लिए एक हजार रूपयों का ड्राफ्ट तैयार कर आश्रम पर भेजा। छः दिन धूलिया रुककर अंजड आए। वहाँ श्री चीमनभाई अति उल्लास से बैंडवाजे सहित पूज्यश्री को अपने घर ले गये और उनके हस्तकमल से चित्रपटों की स्थापना करवाई। इंदौर में मंगलदास शेठ तथा श्री साकरबहन आदि अंजड आये थे।

श्री बावनगजा में पू. श्री ब्रह्मचारीजी
मुमुक्षु भाई-बहनों सहित

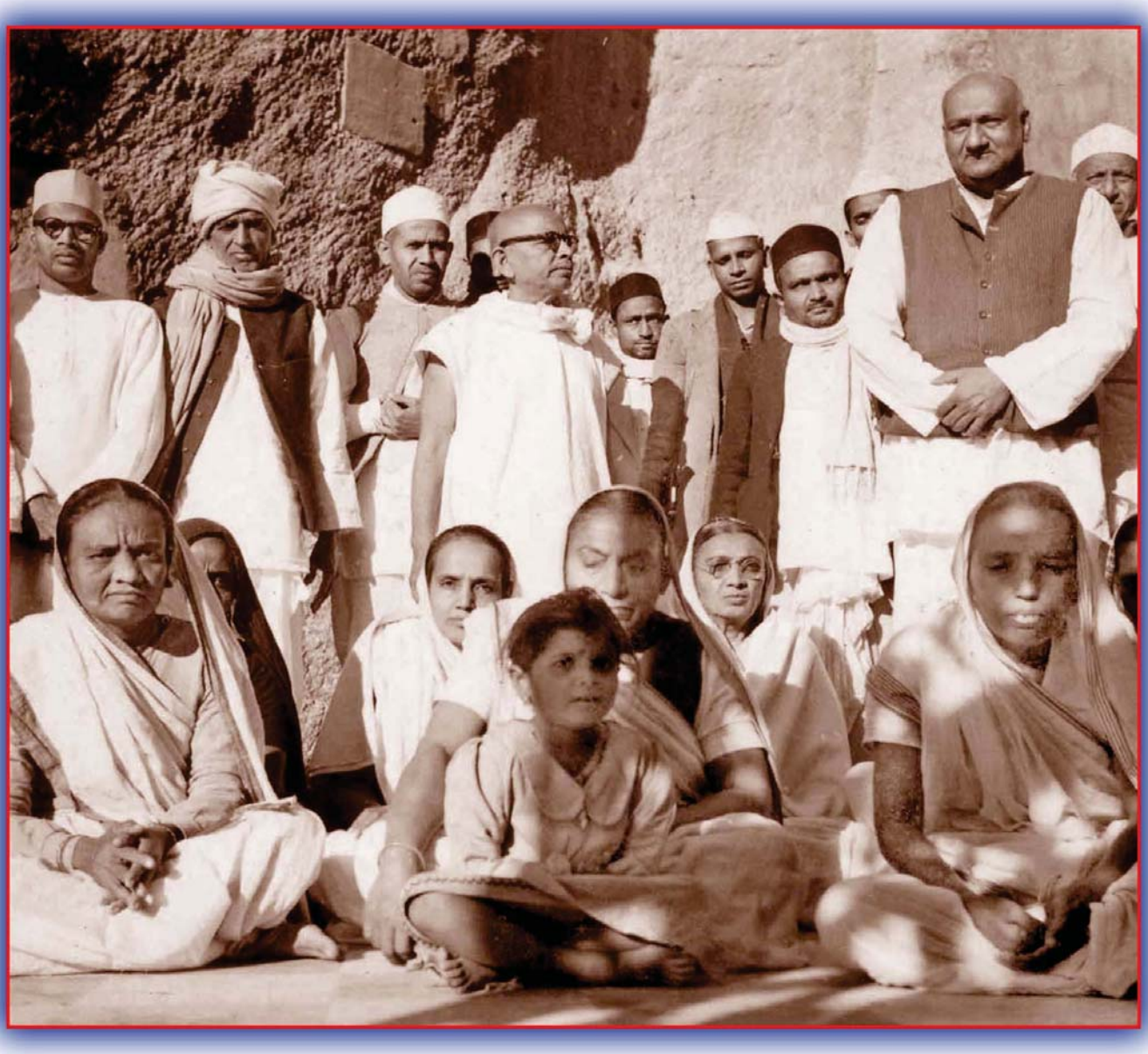

बावनगजा

वहाँ से बावनगजा गये। वहाँ सातपुडा पर्वतो की कतार है। एक पर्वत में ८४ फीट ऊँची श्री आदिनाथ भगवान की कायोत्सर्ग मुद्रा की प्रतिमा आधी नक्काशी हुई है। गाँव का नाम बड़वानी है। वहाँ से बावनगजा छः मील दूर है। वहॉ दर्शन करके इंदौर आये।

इंदौर

इंदौर में जहाँ परमकृपालुदेव के चित्रपटों की स्थापना की हुई थी वहाँ पूज्यश्री का मुकाम था । इंदौर में श्री हुकमीचंद सेठ का काँच का बड़ा देरासर प्रसिद्ध है । वहाँ दर्शन करने गये । सेठ श्री हुकमीचंदजी के पास आधा घण्टा बैठे और 'अपूर्व अवसर' का पद्य बोले । सेठ को आनंद हुआ था ।

उस समय पूज्यश्री बाईस दिन इंदौर में ठहरे थे । एक के बाद एक ३० मंदिरों के दर्शन किये । मांडवगढ़ और बनेडियाजी के दर्शन करके आए और इंदौर से ७५-८० मुमुक्षु भाई-बहनों सहित सिद्धवरकूट भी गये । वहाँ पांच मंदिरो के दर्शन किये । खूब आनंद हुआ । प.पू. प्रभुश्रीजी भी इंदौर से बनेडियाजी गये थे और सिद्धवरकूट पधारे थे । वहाँ सिद्धवरकूट में पूज्यश्री आठ दिन ठहरे थे ।

राजस्थान की यात्रा

पूज्यश्री इंदौर से अजमेर पधारे । वहाँ दस-बारह मंदिर हैं । आगममंदिर, समवसरण की रचना और भगवान के पंचकल्याण की रचना उत्तम प्रकार से की हुई है । वहाँ से पुष्पकराज, ब्यावर होकर शिवगंज पधारे । वहाँ चार दिन रुककर आहोर आना हुआ था ।

आहोर में चार दिन रुककर उमेदपुर होके राणकपुर के पंचतीर्थ में मुछाला, महावीर, घाणेराव, नाडलाई, नाडोल, वरकाना में दर्शन भक्ति करके जोधपुर पधारे ।

जोधपुर से रात को १० बजे जेसलमेर जाने के लिए ट्रेन में बैठना था । तब पूज्यश्री को देखते ही स्टेशन के दो मास्टरों को ऐसी भावना हुई के उनके पाससे हम कुछ सुनें । पूज्यश्री ने आधा घण्टा उनको परमार्थ संबंधित समझ दी । दोनों मास्टरों ने नित्यक्रम की पुस्तक ली ।

जेसलमेर तीर्थ

जेसलमेर के किले में आसपास ही ७ देरासर आते हैं । उनमें छः हजार प्रतिमाएं है । वहाँ दर्शन-पूजा-भक्ति की । यहाँ का शास्त्रभंडार प्रसिद्ध है । वह देखकर तीन दिन वहाँ रुककर लोदरवाजी आए । लोदरवाजी में पार्श्वनाथ भगवान की सहस्त्रफेन की सुंदर चमत्कारी प्रतिमा है । उनके दर्शन करके जेसलमेर के चारों और यात्रा के लिए घूमकर पूज्यश्री नाकोडा तीर्थ पधारे ।

नाकोडा तीर्थ

नाकोडाजीमें पू.श्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षुभाईओंके साथ

नाकोडाजी में चार दिन स्थिरता की थी । रोज़ रात को वांचन होता था । उसमें पूज्यश्री अलौकिक भावमय विवेचन करते थे । वहाँ से सिवाना आए ।

गढ़ सिवाना

श्रीमद् राजचंद्र मंदिर, सिवाना

सिवाना में दो दिन रुकना हुआ । वहाँ भक्ति वांचन में करीब ४०-५० लोगों का आना होता था । वहाँ से जालोर पधारे । गढ़ पर चढ़कर दर्शन करके नीचे उतरे । वहाँ से साथ आये हुए मुमुक्षु भाई बहन अगास आश्रम आने के लिए रवाना हुए और ब्रह्मचारीजी आहोर पधारे । उन्नीस दिन निवास किया । उस समय श्री मोहनभाई, श्री मगनभाई और श्री रणछोडभाई साथ में थे ।

सं. २००९ महा सुदी एकम के दिन शारीरिक स्वस्थता हेतु पूज्यश्री का नासिक पधारना हुआ । साथ में श्री शांतिभाई, श्री रणछोडभाई तथा श्री पुखराजजी उनकी सेवा में थे ।

डुमस का जिनमंदिर

सं. २००९ के चैत्र वदी ८ के दिन आश्रम से पूज्यश्री संघ सहित पथराडिया, सरभाण, खरवासा, बारडोली, खोज, पारडी, शामपुरा, भुवासण, धामण, देरोद, रूंढी, कामरेज, ननसाड होकर सडोदरा पधारे। वहाँ से कुचेद, अंभेटी होकर धामण पधारे। वहाँ तीन दिन ठहरकर सं. २००९ के प्रथम वैशाख सुदी १३ के दिन डुमस पधारे। वहाँ सेवा में श्री सुमेरभाई और श्री रणछोडभाई थे। पंद्रह दिन वहाँ ठहरकर जीथरडी होकर आश्रम पधारे।

दूसरे वैशाख सुदी १३ के दिन पूज्यश्री आश्रम से सीधे डुमस पधारे। सेवा में श्री रणछोडभाई थे। करीब पच्चीस दिन वहाँ रुककर आश्रम आना हुआ था।

अगास आश्रम में सं. २००९ के आसो वदी २ के दिन प.पू. प्रभुश्रीजी के रंगीन चित्रपट की स्थापना श्री राजमंदिर में संगमरमर के झरोखे में पूज्यश्री के हाथों की गयी। उसके बाद स्वमुख से भक्तामर स्तोत्र बोले थे।

सं. २०१० के कार्तिक सुदी ७ के दिन शाम को पांच बजकर चालीस मिनिट पर परम पूज्य ब्रह्मचारीजी अगास आश्रम के श्री राजमंदिर में परमकृपालुदेव के चित्रपट समक्ष काउसग्ग मुद्रा में स्थित आत्मसमाधि में लीन होकर इस नश्वरदेह का त्याग करके उत्तम गति को प्राप्त हुए।

वंदन हो पवित्र पुरुषों के चरणकमल में।

पू. श्री ब्रह्मचारीजी

उत्तरसंडा तीर्थक्षेत्र

एकबार पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी उत्तरसंडा पधारे थे। इस भूमि के दर्शन करते ही पूज्यश्री ने पद्यों की रचना की। "कोड अनंत अपार प्रभु मने कोड अनंत अपार" तथा दूसरा पद्य "नयन सफल हुए आज प्रभु मेरे नयन सफल हुए आज।"

पू.श्री ब्रह्मचारीजी मुमुक्षुओंके साथ

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के देहोत्सर्ग अर्ध शताब्दी महोत्सव निमित्त से अगास आश्रम में शोभायात्रा के दृश्य

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के देहोत्सर्ग अर्ध शताब्दी महोत्सव के निमित्त बनाई गई प्रदर्शनी के दृश्य

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम अगास में
बनायी हुई प्रदर्शनी

रात को पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी के स्मारक के
समक्ष भक्ति

पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी ने ध्यानस्थ मुद्रा में किया देहत्याग